स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

(उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्गत अधिनियम संख्या 10, 1999 द्वारा स्थापित)

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.Com-07
कम्पनी विधि

प्रथम खण्ड : कंपनी और उसका गठन

द्वितीय खण्ड : मुख्य प्रलेख

तृतीय खण्ड : पूँजी और प्रबंध

चतुर्थ खण्ड : सभाएँ एवं समापन

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, इलाहाबाद - 211013

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-07

कम्पनी विधि

खंड

1

कंपनी और उसका गठन

इकाई 1

कंपनियों की प्रकृति और प्रकार 5

इकाई 2

सार्वजनिक तथा निजी कंपनी 26

इकाई 3

प्रवर्तक 39

इकाई 4

कंपनी का गठन 50

खंड 1 कंपनी और उसका गठन

आप जानते हैं कि आधुनिक व्यवसाय को चलाने के लिए बहुत बड़ी मात्रा में धन की आवश्यकता पड़ती है तथा व्यवसाय अत्यंत जटिल होता जा रहा है। इन्हीं कारणों से व्यवसाय संगठन का कंपनी रूप अत्यंत लोकप्रिय हो गया है। कंपनियों में बहुत बड़ी संख्या में लोग अपना धन लगाते हैं जिन्हें 'अंशधारी' कहा जाता है जो देश के कौने-कौने के होते हैं। उनके हितों की रक्षा के लिए आवश्यक हो जाता है कि कंपनियों के कारोबार के संचालन को विनियमित किया जाए। इसीलिए भारत सरकार ने कंपनी अधिनियम बनाया। भारत में सबसे पहला कंपनी विधान 1850 ई. में पारित किया गया और उसके बाद 1857, 1866, 1933 और 1956 में कंपनी अधिनियम बने। कंपनी अधिनियम 1956 भाभा समिति की सिफारिशों पर आधारित था जिसने कंपनी अधिनियम 1913 में बहुत कुछ परिवर्तन करने की सिफारिश की थी। 1956 के अधिनियम में भी समय-समय पर संशोधन किए गए जिससे निवेशकों की दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके और कंपनी का प्रबंध कुशलतापूर्वक और ईमानदारी से किया जा सके। अभी हाल ही में 1888 ई. में इसमें संशोधन किया गया जिसका आधार सच्चर समिति की सिफारिशें थीं। आशा की जाती है कि 1991 ई. में भी इस अधिनियम में संशोधन किया जाएगा जिसके लिए कार्यवाहियों की शुरुआत की जा चुकी है।

कंपनी विधि के अंतर्गत जिन विषयों के संबंध में व्यवस्था की जाती है वे हैं कंपनी के गठन की प्रक्रिया, उसके उद्देश्य तथा क्षेत्र, आंतरिक प्रबंध संबंधी नियम, पूंजी ढांचा, निदेशकों की शक्ति और उनके कर्तव्य, कंपनी की बैठकें, कंपनी के लेखों का रख-रखाव और उनका अंकेक्षण, कंपनी के कामकाज के संबंध में जांच-पड़ताल, और अनुसंधान तथा उसके समापन की विधियां।

इस परिचायक खंड में जिन विषयों पर चर्चा की गई है वे हैं कंपनियों की प्रकृति और प्रकार, निजी लिमिटेड कंपनी की स्थिति, प्रवर्तकों की भूमिका और कंपनी के गठन की प्रक्रिया। इसमें चार इकाइयां हैं।

इकाई 1 में कंपनी की प्रकृति, कंपनी और साझेदारी के बीच अंतर और गठित की जा सकने वाली विभिन्न प्रकार की कंपनियों के संबंध में बताया गया है।

इकाई 2 में निजी कंपनी के अर्थ, निजी कंपनी और सार्वजनिक कंपनी के बीच अंतर, इसके विशेषाधिकार तथा सार्वजनिक कंपनी में इसके रूपांतरण के संबंध में बताया गया है।

इकाई 3 में किसी प्रवर्तक की विधिक स्थिति को स्पष्ट किया गया है। इसमें उसके कार्यों, दायित्वों तथा पारिश्रमिक के संबंध में विवेचन किया गया है। इसमें यह भी बताया गया है कि कोई प्रवर्तक जब कंपनी की ओर से कोई प्रारंभिक अनुबंध करता है तब उसकी क्या स्थिति होती है।

इकाई 4 में कंपनी के गठन की प्रक्रिया के संबंध में बताया गया है, इस प्रक्रिया की चार अवस्थाएं होती हैं—(i) प्रवर्तन, (ii) आवश्यक कागजातों को फाइल करना, (iii) निगमन (पंजीयन) और (iv) व्यवसाय का प्रारंभ। इस इकाई में इनका विस्तृत वर्णन दिया गया है।

इकाई 1 कम्पनियों की प्रकृति और प्रकार

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 कम्पनी की परिभाषा
1.3 कम्पनी की प्रमुख विशेषताएं
1.4 एक-जन कम्पनी
1.5 निगमन का आवरण हटाना
1.5.1 अभिव्यक्त सांविधिक प्रावधानों के अन्तर्गत
1.5.2 न्यायिक व्याख्याओं के अन्तर्गत
1.6 कम्पनी और साझेदारी में भेद
1.7 कम्पनियों के प्रकार
1.7.1 निगमन के आधार पर
1.7.2 दायित्व के आधार पर
1.7.3 नियंत्रण के आधार पर
1.8 संस्था जिसका उद्देश्य 'लाभ' नहीं है
1.9 अवैध संस्थाएं
1.9.1 अर्थ
1.9.2 अपवाद
1.9.3 परिणाम
1.10 सारांश
1.11 शब्दावली
1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.13 स्वपरख प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- कम्पनी की परिभाषा दे सकें
- एक कम्पनी की विशेषताएं बता सकें
- 'निगमन का आवरण', की संकल्पना को स्पष्ट कर सकें
- कम्पनी और साझेदारी में भेद कर सकें
- विभिन्न प्रकार की कम्पनियों का वर्णन कर सकें
- एक गैर-कानूनी संस्था का वर्णन कर सकें।

1.1 प्रस्तावना

कम्पनी अधिनियम, 1956; अप्रैल 1, 1956 से लागू हुआ। इसकी पूर्णता के बावजूद इसमें समय-समय पर संशोधन किये गये ताकि निवेशकों को सुरक्षा प्रदान करने की बढ़ती हुई आवश्यकता को पूरा किया जा सके और कम्पनियों के कार्यों प्रबंध में कुशलता और ईमानदारी सुनिश्चित हो सके। इन संशोधनों की शृंखला में नवीनतम संशोधन कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 Companies (Amendment Act, 1988) है। इस अधिनियम में भारत में कम्पनियों के गठन और उनके प्रशासन के सम्बन्ध में विस्तृत नियम दिये गये हैं। इस इकाई में आप कम्पनी की परिभाषा, इसकी विशेषताएं और एक कम्पनी व साझेदारी में भेद के बारे में तथा भारत में गठित की जाने वाली विभिन्न प्रकार की कम्पनियों के बारे में पढ़ेंगे।

1.2 कम्पनी की परिभाषा

'कम्पनी' शब्द से तात्पर्य कुछ व्यक्तियों की एक सामान्य उद्देश्य या उद्देश्यों के लिए बनाई गयी एक संस्था से है। वास्तव में, लोगों की विविध प्रकार के उद्देश्यों के लिए सहयोग करने की इच्छा हो सकती है लेकिन 'कम्पनी' शब्द का प्रयोग केवल तब किया जाता है जब विभिन्न व्यक्ति आर्थिक उद्देश्य के लिए संगठित होते हैं यानि एक व्यवसाय से लाभ अर्जित करने के लिए। साझेदारियां बहुधा स्वंय को 'क ख ग एंड कम्पनी' के नाम से वर्णित करती हैं। लेकिन ऐसा नाम देने से फर्म विधिक रूप में एक कम्पनी नहीं बन जाती, यह नाम केवल इस बात को दर्शाता है कि संगठन में अन्य व्यक्ति भी हैं।

विधिक शब्दावली में, एक कम्पनी का अर्थ कम्पनी अधिनियम, 1956 या पहले के कम्पनी अधिनियमों में से किसी अधिनियम के अन्तर्गत निगमित या पंजीकृत कम्पनी है। कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 3(1)(i) के अनुसार कम्पनी का अर्थ है, **अधिनियम के अन्तर्गत संगठित और पंजीकृत की गयी कम्पनी या एक विद्यमान कम्पनी।** विद्यमान कम्पनी का अर्थ है पिछले किसी कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत संगठित व पंजीकृत कम्पनी। लेकिन यह परिभाषा एक सम्पूर्ण परिभाषा नहीं है क्योंकि इससे एक कम्पनी की विशेषताएं पता नहीं चलतीं।

कम्पनी को 'निगमित निकाय' (body corporate) कहते हैं क्योंकि निगमन के फलस्वरूप इसके सदस्यों की बड़ी संख्या वैध रूप से एक निकाय में विलीन कर दी जाती हैं और इस निकाय का अपना एक पृथक् अस्तित्व होता है। विधिक रूप में कम्पनी विधि द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति (artificial person) है। इसका इसके सदस्यों से पृथक् अपना अस्तित्व होता है। किसी भी अन्य सामान्य मनुष्य की भांति इस विधिक कृत्रिम व्यति के अपने अधिकार व दायित्व होते हैं।

लार्ड जस्टिस लिंडले ने एक कम्पनी की परिभाषा इन शब्दों में की है: "कम्पनी से अभिप्राय उन अनेक व्यक्तियों की संस्था से होता हैं जो किसी सामान्य स्टॉक (common stock) में अपनी धन या उसके मूल्य की वस्तु लगाते हैं और उसका प्रयोग वे किसी व्यापार या व्यवसाय में करते हैं तथा उससे होने वाले लाभ या हानि (जैसे भी स्थिति हो) को आपस में बाँट लेते हैं। इस प्रकार बनाया गया सामान्य स्टॉक धन के रूप में होता है और इसे कम्पनी की पूँजी कहा जाता है। जो लोग इसमें धन लगाते हैं और जो इसके स्वामी होते हैं उन्हें सदस्य कहा जाता है। प्रत्येक सदस्य जिस अनुपात में इस पूँजी का स्वामी होता है उसे उसका शेयर कहा जाता है। शेयर सदा ही हस्तांतरणीय होते हैं, हालांकि हस्तांतरणीयता के संबंध में कुछ न कुछ प्रतिबंध भी लगे होते हैं।"

एक अन्य अच्छी परिभाषा **चीफ जस्टिस मार्शल** ने दी है। उनके अनुसार: "कम्पनी वह व्यक्ति है जो कृत्रिम, अदृश्य और अमूर्त होती है तथा जो केवल कानून की नजर में ही विद्यमान होती है। कानून द्वारा सर्जित होने के नाते इसमें केवल वे ही विशेषताएं होती हैं जिसे इसे बनाने वाला चार्टर इसको देता है, स्पष्ट रूप से या इसके अस्तित्व के संदर्भ में।"

लार्ड हैने (Lord Haney) के अनुसार: **"कम्पनी एक निगमित संस्था है जो कानून द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति जिसका अपना अलग अस्तित्व होता है और जिसमें शाश्वत उत्तराधिकार और सार्व मुद्रा (common seal) होती है।**

ऊपर दी गयी परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि कम्पनी का एक सामुहिक व विधिक व्यक्ति होता है। यह एक कृत्रिम है जिसका केवल विधिक अस्तित्व होता है। इसका एक स्वतंत्र विधिक अस्तित्व, एक सार्वमुद्रा (common seal) और शाश्वत उत्तराधिकार होता है।

1.3 कम्पनी की प्रमुख विशेषताएं

'कम्पनी' शब्द की विभिन्न विधिक व न्यायिक परिभाषाओं का विश्लेषण यह दर्शाता है कि कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत गठित व पंजीकृत कम्पनी की कुछ ऐसी खास विशेषताएं हैं जिनके कारण यह संगठनों के अन्य रूपों से भिन्न है। कम्पनी की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं:

1) **कानून द्वारा निर्मित (Creation of Law):** कम्पनी ऐसे व्यक्तियों की संस्था है जो एक कम्पनी का गठन करने के लिए और लाभ हेतु एक वैध व्यवसाय चलाने के लिए इसके सदस्य या अंशधारी बनने

को सहमत हुए हैं। यह अस्तित्व में तभी आती है जब इसका कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकरण हो जाता है।

2) **स्वतंत्र विधिक अस्तित्व (Separate Legal Entity) :** कानूनी दृष्टि से कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत गठित व पंजीकृत कम्पनी का पृथक् विधिक अस्तित्व होता है। पंजीकरण के बाद कम्पनी को एक कृत्रिम व्यक्ति माना जाता है, क्योंकि यथार्थ में ऐसा कोई प्राकृत व्यक्ति (natural person) नहीं होता है। यह अदृश्य अमूर्त और बिना किसी भौतिक या प्राकृतिक अस्तित्व के होती है। यद्यपि कम्पनी एक विधिक व्यक्ति है जिसका अधिवास व राष्ट्रीयता तो होती है लेकिन यह एक नागरिक नहीं होती है।

कम्पनी की वैधानिक स्थिति की भारतीय उच्चतम न्यायालय ने **टाटा इंजीनियरिंग एण्ड लोकोमोटिव कं.लि. बनाम बिहार राज्य** (Tata Engineering & Locomotive Co. Ltd. Vs. State of Bihar) मुकदमे में एक अच्छी व्याख्या दी जो नीचे दी गयी है :

> "कानून की नजर में कम्पनी एक प्राकृत व्यक्ति के समान होती है तथा इसका अपना कानूनी अस्तित्व होता है। कम्पनी का अस्तित्व उसके शेयर धारियों के अस्तित्व से बिल्कुल पृथक् होता है; इसके पास अपना नाम और अपनी मुद्रा होती है; इसकी परिसंपत्तियां इसके सदस्यों की परिसम्पत्तियों से पृथक् और भिन्न होती है; अपने कार्यों के लिए यह किसी पर मुकदमा कर सकती है और कोई इस पर मुकदमा कर सकता है"।

यद्यपि कम्पनी का भौतिक अस्तित्व नहीं होता लेकिन कानून के प्रयोजन के लिए इसे एक स्वतंत्र विधिक व्यक्ति माना जाता है जिसका अपना व्यक्तित्व होता है और जो उन सदस्यों से भिन्न होता है जिनसे कम्पनी बनती है। इसलिए कम्पनी अपने किसी भी सदस्य के साथ अनुबंध कर सकती है। एक व्यक्ति इसका अंशधारी हो सकता है और लेनदार भी। एक व्यक्ति कम्पनी की सारी शेयर पूँजी का धारक होने पर भी कम्पनी के कार्यों और ऋणों के लिए उत्तरदायी नहीं हो सकता। कम्पनी के प्रचलन के दौरान या इसके समापन पर कोई भी सदस्य व्यक्तिगत या संयुक्त रूप से कम्पनी की परिसम्पत्तियों में स्वामित्व के अधिकार का दावा नहीं कर सकता। इसी प्रकार कम्पनी के लेनदार केवल कम्पनी के ही लेनदार होते हैं और वे कम्पनी के सदस्यों के विरुद्ध कार्यवाही नहीं कर सकते।

जहाँ केवल एक अंशधारी के पास ही कम्पनी के लगभग सभी शेयर हैं, वहां भी कम्पनी का एक पृथक्विधिक अस्तित्व होता है और यह ऐसे अंशधारी से भिन्न होता है। **सोलोमन बनाम सोलोमन एण्ड कं.लि.** (Solomon Vs. Solomon & Co. Ltd.) के मुकदमे के द्वारा इस बात को अच्छी तरह समझा जा सकता है। श्री सोलेमन इंग्लैंड में जूते का व्यवसाय करते थे। उन्होंने 'Solomon and Co. Ltd.' नामक कम्पनी का गठन किया। इसमें स्वयं सोलोमन, उनकी पत्नी, चार पुत्र और एक लड़की शामिल थे। सोलोमन का जूतों का अपना व्यवसाय कम्पनी को 30,000 पौंड में बेच दिया गया। सोलोमन ने क्रय मूल्य के रूप में कम्पनी से एक-एक पौंड के 20,000 पूर्ण प्रदत्त शेयर और 10,000 पौंड के ऋणपत्र, जिनका कम्पनी की परिसम्पत्तियों पर अस्थायी अथवा चल प्रभार (floating charge) था, प्राप्त किया। सोलेमन के परिवार के प्रत्येक सदस्य ने 1 पौंड के एक-एक शेयर के लिए नगद अंशदान किया। सोलेमन कम्पनी का प्रबंध संचालक था। व्यवसाय में कम्पनी कुछ अरक्षित ऋणों (unsecured loans) के लिए दायी बन गयी। कुछ समय बाद कम्पनी को वित्तीय कठिनाईयों ने घेर लिया और एक साल में इसका समापन कर दिया गया। समापन पर, इसकी परिसम्पत्तियों से 6,000 पौंड वसूल हुए। 10,000 पौंड सोलोमन को और 7,000 पौंड आरक्षित लेनदारों को देने थे। ऋणपत्र धारक (सोलोमन) को भुगतान करने के बाद कम्पनी के पास आरक्षित लेनदारों को देने के लिए कुछ नहीं बचा। लेनदारों ने दावा किया कि ऋणपत्रों की तुलना में उन्हें प्राथमिकता मिलनी चाहिए क्योंकि सोलोमन और सोलोमन एण्ड कं.लि. एक ही व्यक्ति है और कम्पनी तो निर्दोष लेनदारों को धोखा देने का एक दिखावा है। अतः सीलोमन को एक रक्षित लेनदार (secured creditor) नहीं माना जाना चाहिए। हाऊस ऑफ लार्ड्स (House of Lords) ने निर्णय दिया कि कम्पनी विधिवत् गठित हुई है और इसका इसके सदस्यों से अलग एक स्वतंत्र अस्तित्व है। इसलिए सोलोमन अपनी राशि पहले प्राप्त करने का अधिकारी है क्योंकि वह एक रक्षित लेनदार है। यह कहा गया है कि व्यवसाय कम्पनी का है, सोलोमन का नहीं। कम्पनी और सोलोमन का पृथक् विधिक अस्तित्व है। इस तथ्य से कम्पनी की वैधता पर कोई आंच नहीं आती कि इसके सदस्य एक ही परिवार के हैं।

टी.आर. प्रैट (बम्बई) लि. बनाम् ई.डी. सैसून एण्ड कं.लि. (T.R. Pratt (Bombay) Ltd. Vs. E.D. Sasoon and Co. Ltd.) के मुकदमे में यह कहा गया कि कानून के अन्तर्गत एक निगमित कम्पनी का पृथक्

अस्तित्व होता है और चाहे कम्पनी के सारे शेयर व्यावहारिक रूप में एक ही व्यक्ति द्वारा नियंत्रित हों फिर भी कानून कम्पनी का एक पृथक् अस्तित्व होता है। इसी प्रकार **अब्दुल हक़ बनाम दास मल** के मुकदमे में कम्पनी के एक कर्मचारी ने कम्पनी के एक संचालक पर अपने वेतन की राशि, जो देय थी, के लिए दावा किया। यह निर्णय दिया गया कि वह इस दावे में सफल नहीं हो सकता क्योंकि इसका उपचार तो कम्पनी कर सकती है, उसका संचालक या सदस्य नहीं।

एक पृथक् विधिक अस्तित्व होने से कम्पनी अपने सदस्यों के साथ अनुबंध कर सकती है और सदस्य कम्पनी के साथ अनुबंध कर सकते हैं। इस प्रकार एक अंशधारी कम्पनी का लेनदार भी हो सकता है।

3) **सीमित दायित्व (Limited Liability) :** कम्पनी का एक प्रमुख लाभ यह है कि इसके सदस्यों का दायित्व सीमित होता है। आगे चलकर आप पढ़ेंगे कि दायित्व के आधार पर कम्पनियों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है : (i) शेयरों द्वारा सीमित कम्पनियां, और (ii) गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनियां। पहली प्रकार की कम्पनी में कम्पनी के प्रत्येक सदस्य का दायित्व उसके द्वारा अभिदत्त शेयरों की राशि तक ही सीमित होता है। यदि सदस्य ने अपने द्वारा अभिदत्त शेयरों का पूरा अंकित मूल्य दे दिया है तो उसका दायित्व शून्य होगा और उसे और अंशदान करने के लिए नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार, गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी की स्थिति में, एक सदस्य द्वारा जितनी राशि की गारंटी दी गयी है उसका दायित्व उसी तक सीमित होगा।

4) **शाश्वत उत्तराधिकार (Perpetual Succession) :** 'शाश्वत उत्तराधिकार' शब्द का अर्थ है निरंतर विद्यमान रहना। कम्पनी का अस्तित्व इसके सदस्यों के दिवालियापन, मृत्यु, पागलपन जैसे कारणों से प्रभावित नहीं होता। कम्पनी का एक शाश्वत उत्तराधिकार होता है। सदस्य आते रहते हैं, जाते रहते हैं लेकिन कम्पनी चलती रहती है। यदि कम्पनी के सभी सदस्यों की मृत्यु हो जाये तब भी कम्पनी का विधिक अस्तित्व समाप्त नहीं होता। गौवर (Gower) ने यह बात बड़े दिलचस्प तरीके से कही। उन्होंने कहा कि हाईड्रोजन बम भी एक कम्पनी को नष्ट नहीं कर सकता। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि कम्पनी का कभी अन्त नहीं हो सकता। आपने पढ़ा है कि एक कम्पनी विधि द्वारा निर्मित की जाती है। विधि की प्रक्रिया द्वारा ही इसका अन्त भी किया जाता है।

5) **शेयरों की हस्तांतरणीयता (Transferability of Shares) :** एक सार्वजनिक सीमित कम्पनी के शेयर निर्बाधरूप से हस्तांतरणीय हैं। अन्य सदस्यों की सहमति के बिना कोई भी शेयरहोल्डर अपने शेयरों का हस्तांतरण कर सकता है। संस्था के अन्तर्नियमों के अंतर्गत एक सार्वजनिक सीमित कम्पनी भी शेयरों के अन्तरण पर कुछ पाबंदियाँ लगा सकती है लेकिन उन्हें पूर्णतया नहीं रोक सकती। एक सार्वजनिक सीमित कम्पनी का एक अंशधारी जिसके पास पूर्णतया प्रदत्त शेयर हो, अपने शेयर किसी को भी हस्तान्तरित करने को स्वतंत्र है लेकिन यह संस्था की अन्तर्नियमावली के प्रावधानों के अनुसार होना चाहिए। परन्तु एक निजी सीमित कम्पनी को अपने शेयरों की हस्तांतरणीयता पर कुछ पाबंदी लगानी आवयक है।

6) **सार्व मुद्रा (Common Seal) :** क्योंकि कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति होती है और अनुबंध पर अपने नाम के हस्ताक्षर नहीं कर सकती, इसलिए प्रत्येक कम्पनी की अपनी एक सार्व मुद्रा होना आवश्यक है। कम्पनी की सार्व मुद्रा का बहुत महत्त्व है। यह कम्पनी के अधिकारिक हस्ताक्षर का कार्य करती है। प्रत्येक कम्पनी की एक सार्व मुद्रा होनी चाहिए जिस पर उसका नाम अंकित होना चाहिए। यह मुद्रा कम्पनी के हस्ताक्षर का कार्य करती है। धातु की बनी मुद्रा का प्रयोग किया जाना चाहिए। कोई भी ऐसा दस्तावेज जिस पर कम्पनी की मुद्रा न हो कम्पनी पर बाध्य नहीं है।

7) **वाद योग्यता (May Sue or be Sued) :** एक न्यायिक व्यक्ति के रूप में कम्पनी अपने ही नाम से वाद ला सकती है और इस पर वाद लाये जा सकते हैं। इसका कारण यह है कि कम्पनी का एक वाद पृथक् विधिक अस्तित्व है। कम्पनी अनुबंध कर सकती है और अनुबंधिक अधिकारों को दूसरों के विरुद्ध प्रवर्तित कर सकती है और यदि यह अनुबंधों का उल्लंघन करती है तो इस पर दूसरों द्वारा वाद लाये जा सकते हैं।

1.4 एक-जन कम्पनी (One Man Company)

जिस कम्पनी की सारी या वस्तुतः सारी शेयर पूँजी का धारक एक ही व्यक्ति होता है उसे 'एक-जन कम्पनी' कहते हैं। इसमें अन्य सदस्य भी हो सकते हैं लेकिन ये प्रायः उस एक व्यक्ति के रिश्तेदार, मित्र या उसके

द्वारा नामांकित व्यक्ति होते हैं। यह प्रमुख व्यक्ति प्रायः कम्पनी का प्रबंध संचालक होता है और इसका कम्पनी पर पूर्ण नियंत्रण होता है। ऐसा निगमित हैसियत (corporate status) और कंपनी की सीमित देयता से होने वाले लाभ को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। यद्यपि ऐसा कम्पनी में एक ही व्यक्ति सभी कार्य-संचालन करता है, फिर भी इस प्रकार की कम्पनियां वैध होती हैं। एक जन कम्पनियों का निर्माण लेनदारों के लिए हानिकारक होता है क्योंकि वे इसके असली मालिक के विरुद्ध कार्यवाही नहीं कर सकते। जैसा कि आपने इस इकाई के 1.3 में पढ़ा, सोलोमन के मामले ने 'एक-जन कम्पनी' की संकल्पना को प्रतिपादित किया।

बोध प्रश्न क

1) कम्पनी की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

....

2) कम्पनी की प्रमुख विशेषताएं बताइये।

....

....

....

....

3) 'एक-जन कम्पनी' की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

....

4) बताइये कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) कम्पनी का विधि द्वारा निर्माण किया जाता है।

ii) कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है।

iii) क्योंकि कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है इसलिए यह कोई गलती नहीं कर सकती और न ही इस पर कोई वाद लाया जा सकता है।

iv) साझेदारी की भांति, कम्पनी के किसी शेयरधारी की मृत्यु से कम्पनी का अन्त हो जाता है।

v) यद्यपि कम्पनी एक निगमित व्यक्ति है फिर भी यह एक नागरिक नहीं है।

vi) 'एक-जन कम्पनी' एक ऐसी कम्पनी होती है जिसमें एक ही व्यक्ति वस्तुतः कम्पनी के सभी शेयरों का धारक होता है।

vii) एक सदस्य का दायित्व उसके शेयरों के अंकित मूल्य तक ही सीमित होता है।

viii) कम्पनी द्वारा किये गये सभी अनुबंधों पर इसकी मुद्रा लगी होनी चाहिए।

1.5 निगमन का आवरण हटाना (Lifting the Corporate Veil)

आपने पढ़ा कि एक कम्पनी का अपने सदस्यों से स्वतंत्र और भिन्न अपना एक पृथक् विधिक अस्तित्व होता है। पृथक् विधिक अस्तित्व का नियम सोलोमन बनाम सोलोमन एण्ड कं.लि. के वाद में अच्छी तरह से स्थापित हुआ। निगमन के समय कम्पनी और इसके सदस्यों को अलग करने वाली एक रेखा खींची जाती है

या एक आवरण डाला जाता है। वास्तव में, कम्पनी व्यक्तियों की संस्था है और ये व्यक्ति ही कम्पनी की सारी सम्मिलित सम्पत्ति के वास्तविक लाभकारी स्वामी होते हैं। कम्पनी के निगमन के पीछे जो असली व्यक्ति होते हैं, कम्पनी का गठन होने और उसका विधिक अस्तित्व हो जाने के बाद, उनकी उपेक्षा कर दी जाती है। पृथक् विधिक अस्तित्व के फलस्वरूप कम्पनी को बहुत से लाभ मिलते हैं जिनके बारे में आपने इस इकाई के पिछले भाग में पढ़ा है। लेकिन जब कम्पनी अनुचित व्यवहार के लिए छल-कपट को संरक्षण देने या गलतियों को उचित सिद्ध करने के लिए निगमन के आवरण का प्रयोग करना शुरू कर देती है तो कानून इस निगमन के आवरण की उपेक्षा करता है और इसके पीछे जो व्यक्ति हैं उनका पता लगाता है और कम्पनी तथा इसके सदस्यों को एक ही व्यक्ति मानता है। **जब न्यायालय कम्पनी की उपेक्षा करता है और कम्पनी के सदस्यों में दिलचस्पी लेता है तब यह कहा जाता है कि निगमन के आवरण को हटा दिया गया है।** प्रो. गौवर के अनुसार, "जब कानून निगमित अस्तित्व (corporate entity) की उपेक्षा करता है और इस विधिक मोहरे के पीछे जो व्यक्ति हैं उन पर ध्यान देता है तब इसे निगमित व्यक्तित्व का आवरण हटाना कहते हैं।" लेकिन, यह ध्यान रखें कि न्यायालय का निगमन के आवरण को हटाने का अधिकार पूर्णतया विवेकाधीन है। न्यायालय निगमन का आवरण तभी हटाता है जब ऐसा करना सार्वजनिक हित में होता है। जिन परिस्थितियों और मामलों में निगमन का आवरण हटाया जाएगा उन्हें मोटे तौर पर दो शीर्षकों के अन्तर्गत वर्गीकृत किया जाता है। ये शीर्षक निम्नलिखित हैं:

1) अभिव्यक्त सांविधिक प्रावधानों के अन्तर्गत, और

2) न्यायिक व्याख्याओं के अन्तर्गत

आइये, अब इन पर विस्तार से विचार करें।

1.5.1 अभिव्यक्त सांविधिक प्रावधानों के अन्तर्गत (Under Express Statutory Provisions)

कम्पनी अधिनियम, 1956 में ही ऐसे कुछ मामलों के लिए प्रावधान है जिनमें कम्पनी के संचालक या सदस्य व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराये जा सकते हैं। ऐसे मामलों में यद्यपि कम्पनी का पृथक् अस्तित्व तो रखा जाता है परन्तु कम्पनी के साथ-साथ संचालकों या सदस्यों को भी व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराया जाता है। ये मामले निम्नलिखित हैं:

i) **जब सदस्यों की संख्या सांविधिक न्यूनतम संख्या से कम हो:** अधिनियम की धारा 45 के अनुसार यदि किसी भी समय कम्पनी के सदस्यों की संख्या सांविधिक आवश्यकता से कम हो जाती है और कम्पनी इस कम संख्या की स्थिति में अपना व्यवसाय 6 महीने से अधिक समय तक जारी रखती है तो प्रत्येक वह व्यक्ति, जो उस समय कम्पनी का सदस्य था जब इसने उन 6 महीनों के बाद अपना व्यवसाय जारी रखा और जिसे इस तथ्य का पता था, उस अवधि में कम्पनी द्वारा अनुबंधित सभी ऋणों के लिए अलग-अलग उत्तरदायी होगा। यह ध्यान रखें कि सदस्यों का व्यक्तिगत दायित्व, सदस्यों की हुई संख्या के साथ व्यवसाय को 6 महीने तक चलाने के बाद ही शुरू होता है और यह दायित्व केवल उन ऋणों के लिए होता है जो उन 6 महीनों के बाद अनुबंधित किये गये हों।

   इससे आपको स्पष्ट हो गया होगा कि यद्यपि कम्पनी का अपना पृथक् व्यक्तित्व तो रहता है लेकिन कम्पनी के सदस्यों के सीमित दायित्व की महत्वपूर्ण विशेषता समाप्त हो जाती है। ऐसी स्थिति लेनदारों को कम्पनी के पृथक् अस्तित्व की अवहेलना करने का अधिकार देती है और लेनदार प्रत्यक्ष रूप से सदस्यों के विरुद्ध कार्यवाही कर सकते हैं।

ii) **प्रतिनिधिक हैसियत प्रकट न करना:** नियमानुसार जब कम्पनी का एक अधिकारी या उसकी ओर से कोई व्यक्ति किसी विनिमय पत्र, हुण्डी, वचन-पत्र, पृष्ठांकन, चैक या मुद्रा या वस्तुओं के लिए आदेश पर कम्पनी की ओर से हस्ताक्षर करता है या हस्ताक्षर करने के लिए प्राधिकृत करता है तो ऐसे व्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि वह स्पष्ट रूप से उस कम्पनी का नाम बताये जिसके लिए वह कार्य कर रहा है। यदि अधिकारी या प्राधिकृत व्यक्ति अपनी प्रतिनिधिक हैसियत बताने में असफल रहता है तो ऐसा अधिकारी या व्यक्ति देय राशि के लिए दायी होगा, यदि कम्पनी उसका भुगतान करने से मना कर देती है। उदाहरण के लिए यदि एक कम्पनी पर लिखा गया एक विनिमय पत्र उसके एक प्रबंधक ने अपनी व्यक्तिगत हैसियत से स्वीकार किया, यानि बिना यह बताये कि वह कम्पनी की ओर से विनिमय पत्र स्वीकार कर रहा है, तब ऐसा प्रबंधक इस विनिमय पत्र के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा।

iii) **नियंत्रक और नियंत्रित कम्पनी:** जब एक कम्पनी किसी दूसरी कम्पनी के संचालक मंडल का नियंत्रण करती है या इसके अधिकांश शेयरों की धारक होती है तो ऐसी कम्पनी को नियंत्रक कम्पनी कहते हैं और जिस कम्पनी पर इसका नियंत्रण होता है उसे नियंत्रित कम्पनी कहते हैं। सामान्यतया एक नियंत्रित कम्पनी का बिल्कुल पृथक् अस्तित्व माना जाता है और नियंत्रक कम्पनी इसके कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं होती। लेकिन अधिनियम की धारा 212 के अन्तर्गत प्रत्येक नियंत्रक कम्पनी को अपने शेयर होल्डरों को अपनी नियंत्रित कम्पनियों को लेखे प्रकट करने होते हैं। इस धारा के अन्तर्गत प्रत्येक नियंत्रित कम्पनी के तुलन पत्र, लाभ-हानि खाते संचालकों की रिपोर्ट और अंकेक्षक की रिपोर्ट की प्रतिलिपियां नियंत्रक कम्पनी के तुलन पत्र के साथ लगाना आवश्यक है। इस प्रकार, इस नियम के बावजूद कि प्रत्येक नियंत्रित कम्पनी का एक पृथक् विधिक अस्तित्व होता है, एक ही समूह के अन्तर्गत की सभी कम्पनियों का एक ही अस्तित्व माना जाता है।

iv) **सम्बन्धित कम्पनियों के मामलों की छानबीन के लिए:** अधिनियम की धारा 239 के अनुसार यदि कम्पनी के मामलों की छान बीन करने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा निरीक्षक नियुक्त किया जाता है तो उसे उसी प्रबंध के अन्तर्गत सम्बन्धित (नियंत्रित) कम्पनियों के मामलों की छान-बीन करने का अधिकार होगा। इस प्रकार यह अधिकार निगमन के आवरण को हटाता है।

v) **किसी कम्पनी के स्वामित्व की छान-बीन के लिए:** जब केन्द्रीय सरकार यह जानने के लिए कि किसी कम्पनी की सफलता या असफलता में वित्तीय रूप से दिलचस्पी लेने वाले असली व्यक्ति कौन हैं या यह जानने के लिए कि कम्पनी की नीति की नियंत्रित कौन कर रहे (करते रहे) हैं, कम्पनी के सदस्यों के बारे में और अन्य सम्बन्धित मामलों में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक समझती है तब वह इस उद्देश्य के लिए एक या अधिक निरीक्षक नियुक्त कर सकती है जो इसकी छान-बीन करें और इन पर एक रिपोर्ट प्रस्तुत करें (धारा 247)। यह कार्य निगमन के आवरण को हटाकर किया जाएगा ताकि कम्पनी को नियंत्रित करने वाले असली व्यक्तियों का पता लगाया जा सके।

vi) **व्यवसाय का छल-कपटपूर्ण आचरण:** अधिनियम की धारा 542 के अन्तर्गत यदि किसी कम्पनी के समापन करने के दौरान यह प्रतीत होता है कि कम्पनी का व्यवसाय लेनदारों को या अन्य व्यक्तियों को धोखा देने के लिए चलाया गया था तो ऐसी स्थिति में वे व्यक्ति, जो जानबूझकर ऐसे कार्यों में सहयोगी थे व्यक्तिगत रूप से ऋणों और कम्पनी के अन्य देयताओं के लिए दायी होंगे। ऐसी स्थिति में न्यायालय कम्पनी के विधिक अस्तित्व की अवहेलना कर सकता है और ऐसे कपट करने वाले व्यक्तियों को व्यक्तिगत रूप से कम्पनी के ऋणों के लिए दायी बना सकता है।

1.5.2 न्यायिक व्याख्याओं के अन्तर्गत (Under Judicial Interfractions)

ऊपर बतायी गयी परिस्थितियों के अतिरिक्त, न्यायालयों ने कराधान कानूनों, संपदा-शुल्क कानूनों, सम्पत्ति कर कानूनों आदि के प्रबन्ध के लिए व कुछ अन्य परिस्थितियों में भी निगमन के आवरण को हटाने की अनुमति दी है। आइये, अब ऐसे कुछ मामलों का अध्ययन करें जहां निगमन का आवरण हटाया गया।

i) **कम्पनी के स्वरूप का निर्धारण करने के लिए:** कभी-कभी खास तौर से युद्ध के दौरान कुछ कम्पनियों का स्वरूप ज्ञात करना आवश्यक हो जाता है। ऐसे समय में विदेशी दुश्मन द्वारा नियंत्रित कम्पनी के निगमन का न्यायालयों द्वारा आवरण हटाना उचित है। इस प्रकार भारत में पंजीकृत कम्पनी को, यह पता लगने पर कि ऐसी कम्पनी का नियंत्रण करने वाले व्यक्ति दुश्मन देश के नागरिक हैं, विदेशी दुश्मन घोषित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए **डेमलर कम्पनी लिमिटेड बनाम कॉन्टिनेन्टल टायर एण्ड रबर कम्पनी लिमिटेड (Daimler Co. Ltd. Vs. Continental Tyre & Rubber Co. Ltd.)** के बाद में एक कम्पनी कॉन्टिनेन्टल टायर एण्ड रबर कम्पनी लिमिटेड के नाम से इंग्लैंड में पंजीकृत की गयी। इस कम्पनी का उद्देश्य जर्मनी में एक जर्मन कम्पनी द्वारा निर्मित टायरों को इंग्लैंड में बेचना था। इसके अधिकांश शेयर जर्मन नागरिक के पास थे। इसके अतिरिक्त, इस कम्पनी के सभी संचालक जर्मन निवासी थे। जब प्रथम विश्व युद्ध हुआ तो कम्पनी ने ऋण की वसूली के लिए एक वाद दायर किया। न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यह एक दुश्मन कम्पनी थी क्योंकि इसका प्रभावी नियंत्रण जर्मन लोगों के हाथ में था जो दुश्मन थे। अतः कम्पनी के दावे को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि विदेशी दुश्मन को निगमन के आवरण का प्रयोग करके व्यापार करने की अनुमति देना सार्वजनिक नीति के विरुद्ध है।

ii) **धोखा या अनुचित आचरण रोकने के लिए:** यदि कम्पनी का उद्देश्य विधिक दायित्वों से बचना या

लेनदारों को धोखा देना है तो न्यायालय निगमन के आवरण को हटाने की अनुमति देगा। **गिलफर्ड मोटर कम्पनी लिमिटेड बनाम होर्न (Gilford Motor Co. Ltd. Vs. Horne)** के वाद में होर्न को गिलफर्ड मोटर कम्पनी का इस शर्त पर प्रबंध संचालक नियुक्त किया कि जब तक वह कम्पनी का कर्मचारी है तब तक और बाद में भी वह कम्पनी के ग्राहकों को फुसलायेगा या तोड़ेगा नहीं। कम्पनी छोड़ने के बाद होर्न ने एक नयी कम्पनी का गठन किया जिसे वही व्यवसाय करना था। होर्न ने गिल्फर्ड मोटर कम्पनी लिमिटेड के ग्राहक तोड़े। गिल्फर्ड मोटर कम्पनी ने होर्न के विरुद्ध उसे ग्राहक तोड़ने से रोकने के लिए एक वाद दायर किया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि होर्न ने कम्पनी का गठन अपनी नियोक्ता कम्पनी के ग्राहकों को तोड़ने के लिए अपने हित के लिए किया। न्यायालय ने होर्न और उसकी नयी कम्पनी के विरुद्ध निषेधादेश जारी किया और निर्णय दिया कि नयी कम्पनी प्रतिवादी द्वारा अपने अनुबंध का उल्लंघन करने का एक बहाना मात्र थी और इसका भी बहाना मात्र थी कि वह अपनी नियोक्ता कम्पनी के ग्राहकों को नहीं तोड़ेगी। इसी प्रकार जहां एक नाम मात्र की (dummy) कम्पनी विधिक दायित्वों से बचने के लिए गठित की गयी हो तो न्यायालय निगमन का आवरण हटा देता है। इसी तरह, यदि एक कम्पनी धोखा देने के लिए गठित की गयी हो तो न्यायालय निगमन का आवरण हटा देगा और कम्पनी के असली स्वामित्व का पता लगायेगा।

iii) **राजस्व बचाने के लिए:** यदि न्यायालय की राय में कम्पनी का गठन कर दायित्व से बचने के लिए या कर का अपवंचन करने के लिए किया गया है तो वह निगमन के आवरण को हटाने की अनुमति देगा। ऐसी स्थिति में न्यायालय कम्पनी के निगम अस्तित्व की अवहेलना करेगा और व्यक्तिगत सदस्यों को राजस्व दायित्वों को पूरा करने के लिए दायी ठहरायेगा। **री सर दिनशा मानेकजी पेटिट** के मुकदमें में, निर्धारिती सर दिनशा, जो एक अमीर व्यक्ति था, लाभांश और ब्याज आय के रूप में बहुत बड़ी राशि अर्जित कर रहा था। उसने चार निजी कम्पनियों का गठन किया और प्रत्येक कम्पनी के साथ करार किया कि वे उसके एजेंट के रूप में निवेश का एक ब्लाक रखेंगी। इस व्यवस्था के अन्तर्गत उसे जो आय प्राप्त होती थी वह कम्पनी के खाते में क्रेडिट कर दी जाती थी और कम्पनी उसे यह पैसा ऋण के रूप में वापस दे देती थी (ये ऋण कभी अदा नहीं किये गये)। इस तरह कर दायित्व को कम करने के लिए उसने अपनी आय को चार भागों में बांट दिया। न्यायालय ने इन कम्पनियों के निगमित दिखावे (corporate fecade) की उपेक्षा की और यह निर्णय दिया कि ये कम्पनियां स्वयं निर्धारिकी ही है। सर दिनसा को सारी आय का स्वामी माना गया और उसे कर का भुगतान करने के लिए दायी ठहराया गया।

iv) **जहां कम्पनी अपने सदस्यों के एजेंट के रूप में कार्य करने के लिए गठित की जाती है:** यह एक सामान्य नियम है कि कोई कम्पनी अपने शेयरहोल्डरों या दूसरी कम्पनी की एजेंट नहीं है। लेकिन कुछ परिस्थितियों में कम्पनी को अपने सदस्यों या अन्य कम्पनी की एजेंट या ट्रस्टी माना जा सकता है। लेकिन ऐसी स्थिति में कम्पनी द्वारा किये गये कार्यों के लिए सदस्य उत्तरदायी होंगे, कम्पनी नहीं। **री.एफ.जी. फिल्मस लिमिटेड** के मामले में, एक अमेरिकन कम्पनी ने भारत में 'मानसून' के नामक फिल्म का निर्माण किया, पैसा भी इसी कम्पनी ने लगाया। लेकिन तकनीकी रूप में यह फिल्म इंग्लैंड में निगमित एक कम्पनी के नाम से बनायी गयी थी। इस ब्रिटिश कम्पनी की पूँजी केवल एक-एक पौण्ड के 100 शेयर यानि 100 पौंड थीं। इसमें से 90 शेयर अमरीकन कम्पनी के प्रेसीडेंट के पास थे। **बोर्ड ऑफ ट्रेड** (Board of Trade) ने फिल्म को एक ब्रिटिश फिल्म के रूप में पंजीकृत करने से इंकार कर दिया। न्यायालय ने बोर्ड ऑफ ट्रेड के मत की पुष्टि की। न्यायालय ने निर्णय दिया कि फिल्म की सच्ची निर्माता अमरीकन कम्पनी थी और ब्रिटिश कम्पनी से तो केवल उसके एजेन्ट के रूप में कार्य किया।

v) **कल्याणकारी कानूनों का परिहार:** जब कम्पनी के स्वतंत्र पद का कल्याणकारी कानूनों के प्रावधानों जैसे कि कर्मियों को बोनस देना, को असफल करने के लिए प्रयोग किया जा रहा हो तो न्यायालय ने कम्पनी के पृथक् विधिक व्यक्तित्व की अवहेलना की है। **वर्कमैन एम्पलायेड इन एसोसियेटिड रबर इंडस्ट्रीज लिमिटेड भाव नगर बनाम दी एसोसियेटिड रबर इंडस्ट्रीज लिमिटेड, भावनगर ऐण्ड अदर्स** (Workmen employed in Associated Rubber Industries Ltd., Bhavnagar Vs. The Associated Rubber Industries Ltd., Bhavnagar and others) के मुकदमें में, एक नयी कम्पनी का गठन किया गया था। इसकी अपनी कोई परिसम्पत्ति नहीं थी। सिवाय उस परिसम्पत्ति के जो प्रधान कम्पनी ने इसे हस्तांतरित की थी। नयी कम्पनी का अपना कोई व्यवसाय भी नहीं था। प्रधान कम्पनी द्वारा हस्तांतरित किये गये शेयरों पर इसे लाभांश प्राप्त होता था। इस प्रकार प्रधान कम्पनी अपने सकल लाभों को कम करने में सफल हुई और इससे मजदूरों को देय बोनस की राशि घटा दी गयी। उच्चतम न्यायालय ने नयी कम्पनी के स्वतंत्र पद को खारिज किया और यह निर्देश दिया कि

नयी कम्पनी को दी गयी लाभांश की राशि भी मुख्य कम्पनी के सकल लाभों का निर्धारण करते समय, शामिल की जाएगी। न्यायालय ने निर्णय दिया कि "हर उस मामले में जहां प्रवीणता से कर अपवंचन और कल्याणकारी कानूनों के अपवंचन की संभावना हो, वहां न्यायालय निगमन के आवरण को हटाकर सच्ची स्थिति का पता लगायेगा।"

1.6 कम्पनी और साझेदारी में भेद

आपने पढ़ा कि कम्पनी विधि द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति है और सीमित दायित्व व शाश्वत उत्तराधिकार इसकी प्रमुख विशेषताएं हैं। आइये अब यह अध्ययन करें कि एक कम्पनी और साझेदारी में क्या भेद हैं। इन दोनों में अन्तर के मुख्य मुद्दे निम्नलिखित हैं :

1) **गठन (Formation) :** कम्पनी रजिस्ट्रार द्वारा निगमन का प्रमाण पत्र देने पर कम्पनी की स्थापना होती है। यह प्रमाण पत्र तब दिया जाता है जब रजिस्ट्रार संतुष्ट हो कि कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के अनुसार कम्पनी के पंजीकरण के सम्बंध में सभी औपचारिकताएं पूरी कर ली गयी हैं। जैसा कि आपने पहले पढ़ा है, साझेदारी का गठन साझेदारों में किये गये करार द्वारा होता है। भारतीय साझेदारी अधिनियम 1932 के अन्तर्गत साझेदारी फर्म का पंजीकरण अनिवार्य नहीं है।

2) **सदस्यता (Membership) :** निजी और सार्वजनिक कम्पनी के सदस्यों की न्यूनतम संख्या क्रमशः दो व सात होनी आवश्यक है। निजी कम्पनी के सदस्यों की अधिकतम संख्या (इसके भूतपूर्व व वर्तमान कर्मचारियों को छोड़कर) पचास है और सार्वजनिक कम्पनी के सदस्यों की अधिकतम संख्या पर कोई सांविधिक सीमा नहीं है। लेकिन साझेदारी में न्यूनतम संख्या दो है। यदि साझेदारी फर्म बैंकिंग व्यवसाय करती है तो अधिकतम संख्या 10 तक सीमित है अन्यथा यह संख्या 20 है।

3) **विधिक हैसियत (Legal status) :** निगमन के पश्चात्, कानून की दृष्टि में एक कम्पनी को एक पृथक् विधिक व्यक्तित्व के रूप में मान्यता दी जाती है जो उन सदस्यों से भिन्न है जो इसे बनाते हैं जबकि साझेदारी की कोई न्यायिक हैसियत नहीं होती और यह पंजीकरण के बाद भी व्यक्तियों की एक संस्था ही रहती है। सरल शब्दों में साझेदार और फर्म एक बने रहते हैं।

4) **दायित्व (Liability) :** जैसा कि आपने इस इकाई के पिछले भागों में पढ़ा है, एक कम्पनी की स्थिति में इसके सदस्यों का दायित्व उनके पास शेयरों के मूल्य तक या उनके द्वारा दी गयी गारण्टी की राशि तक ही सीमित होती है। कम्पनी के लेनदार संदस्य की निजी सम्पत्ति के विरुद्ध कार्यवाही नहीं कर सकते। लेकिन साझेदारी की स्थिति में साझेदार का दायित्व असीमित तथा संयुक्त और पृथक् होता है। व्यवसाय के सामान्य संचालन से जो ऋण उत्पन्न हुए हैं उनकी वसूली के लिए फर्म के लेनदार किसी भी साझेदार की व्यक्तिगत सम्पत्ति के विरुद्ध कार्यवाही कर सकते हैं।

5) **शेयरों का हस्तांतरण (Transfer of Shares) :** सार्वजनिक कम्पनी के शेयर निर्बाध रूप से हस्तांतरणीय होते हैं। लेकिन साझेदारी में, एक साझेदार फर्म में अपने हिस्से का हस्तांतरण अन्य साझेदारों की सहमति के बिना नहीं कर सकता।

6) **शाश्वत उत्तराधिकार (Perpetual Succession) :** एक कम्पनी के पास शाश्वत उत्तराधिकार होता है। इसके एक या अधिक सदस्यों की मृत्यु होने, पागल होने या दिवालिया होने से कम्पनी के जीवन का अन्त नहीं होता। लेकिन साझेदारी में, जब तक अन्यथा कोई करार न हुआ हो, उनमें से किसी भी घटना के घटने पर साझेदारी फर्म का अन्त हो जाता है।

7) **प्रबंध (Management) :** कम्पनी के कार्यों का प्रबंध एक संचालक मंडल करता है। कम्पनी के कार्यों के प्रबंध में इसके सदस्यों की कोई भूमिका नहीं होती। साझेदारी में, व्यवसाय के प्रबंध में प्रत्येक साझेदार को भाग लेने का अधिकार होता है।

8) **एजेन्सी सम्बंध (Agency Relationship) :** शेयर होल्डर कम्पनी के एजेन्ट नहीं होते जबकि प्रत्येक साझेदार फर्म का एक एजेंट होता है और उसे अन्य साझेदारों को उनके द्वारा सामान्य व्यवसाय-संचालन में किये गये कार्यों से बाध्य करने का निहित अधिकार होता है।

9) **सम्पत्ति (Property) :** कम्पनी की स्थिति में कम्पनी की सम्पत्ति कम्पनी के नाम में होती है और वही इसकी स्वामी होती है। यह कम्पनी के किसी व्यक्तिगत शेयर होल्डर की नहीं होती। कम्पनी के जीवन

काल में किसी भी शेयर होल्डर का कम्पनी की किसी भी सम्पत्ति में कोई विधिक या न्यायोचित हित नहीं होता। लेकिन साझेदारी की स्थिति में साझेदार फर्म की सम्पत्ति के संयुक्त स्वामी होते हैं।

10) **सांविधिक अपेक्षाएं (Statutory Requirements) :** एक कम्पनी के लिये विभिन्न सांविधिक औपचारिकताएं पूरा करना आवश्यक है, जैसे कि सांविधिक मीटिंग बुलाना और कंपनियों के रजिस्ट्रार को सांविधिक रिपोर्ट देना लेकिन साझेदारी फर्म का ऐसा कोई सांविधिक दायित्व नहीं है।

11) **विघटन (Dissolution) :** कम्पनी के निगमित अस्तित्व का अन्त केवल कम्पनी अधिनियम 1956 के प्रावधनों के अनुसार ही किया जा सकता है। साझेदारी के निर्माण का आधार एक करार होता है इसलिये एक करार द्वारा इसे कभी भी विघटित किया जा सकता है।

12) **विनियमन विधान (Governing Legislation) :** कम्पनी अधिनियभ, 1956 द्वारा विनियमित की जाती है जबकि साझेदारी, भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932 द्वारा विनियमित की जाती है।

बोध प्रश्न ख

1) निगमन के आवरण का क्या अर्थ है ?

....

....

....

....

2) ऐसी चार परिस्थितियों का उल्लेख कीजिये जिनमें निगमन का आवरण हटाया जा सकता है।

....

....

....

....

3) कम्पनी और साझेदारी में तीन प्रमुख अंतर बताइये।

....

....

....

....

4) रिक्त स्थानों को भरिये।

i) निगमन के कारण कम्पनी को एक .... व्यक्ति माना जाता है।

ii) निजी सीमित कम्पनी की स्थिति में जब सदस्यों की संख्या .... से कम हो जाती है, और सार्वजनिक सीमित कम्पनी की स्थिति में जब सदस्यों की संख्या .... से कम हो जाती है तो निगमन के आवरण को हटाया जा सकता है।

iii) यदि कम्पनी का एक अधिकारी, कम्पनी की ओर से अनुबंध करते समय अपनी .... हैसियत नहीं बताता तो वह ऐसे अनुबंधों पर व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो जाता है।

iv) जब दो देशों में युद्ध हो रहा हो तो कम्पनी .... यह ज्ञात करने के लिए निगमन का आवरण हटाया जा सकता है।

v) न्यायालय के हस्तक्षेप से और .... के अन्तर्गत निगमन का आवरण हटाया जा सकता है।

vi) प्रत्येक साझेदार का दायित्व .... होता है।

5) बताइये निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :

i) कम्पनी की स्थापना उसके पंजीकरण पर होती है।

ii) कम्पनी का पंजीकरण वांछनीय तो है लेकिन अनिवार्य नहीं है।

iii) पंजीकरण के बाद एक साझेदारी व्यक्तियों की एक संस्था नहीं रहती है और इसे न्यायिक हैसियत प्राप्त हो जाती है।

iv) अपनी ऋणों की वसूली के लिये कम्पनी का लेनदार एक सदस्य की निजी सम्पत्ति के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है।

v) निजी कम्पनी को छोड़कर किसी भी अन्य कम्पनी का सदस्य स्वतंत्र रूप से अपने शेयरों को किसी भी व्यक्ति को हस्तांतरित कर सकता है।

vi) एक शेयर होल्डर कम्पनी का एजेन्ट नहीं होता।

vii) एक व्यक्ति एक ही समय पर कम्पनी का सदस्य और लेनदार दोनों ही हो सकता है।

1.7 कम्पनियों के प्रकार

कम्पनियों के वर्गीकरण करने के विभिन्न आधार हैं जो निम्नलिखित हैं:

1) निगमन (incorporation) के आधार पर

2) दायित्व (liability) के आधार पर

3) नियंत्रण (control) के आधार पर

विभिन्न प्रकार की कम्पनियों के व्यापक सर्वेक्षण के लिए चित्र 1.1 को ध्यानपूर्वक देखिए।

1.7.1 निगमन के आधार पर

निगमन की पद्धति के आधार पर संयुक्त पूँजी कम्पनियों को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में बांटा जाता है:

i) **चार्टरित कम्पनी (Chartered Company) :** वह कंपनी, जिसका निगमन इंग्लैंड के राजा या रानी द्वारा अनुमत विशेष चार्टर के अन्तर्गत किया जाता है, चार्टरित कम्पनी कहलाती है। इस कम्पनी का विनियमन इसके चार्टर के द्वारा होती है और इस पर कम्पनी अधिनियम लागू नहीं होता है। चार्टर ही कम्पनी के व्यवसाय की प्रकृति और इसके अधिकार को भी नियत करता है। चार्टरित कम्पनी के जाने पहचाने उदाहरण इस्ट इंडिया कम्पनी और बैंक ऑफ इंग्लैंड हैं। **ऐसी कम्पनी अब भारत में गठित नहीं की जा सकती।**

चित्र 1.1 कम्पनियों के प्रकार

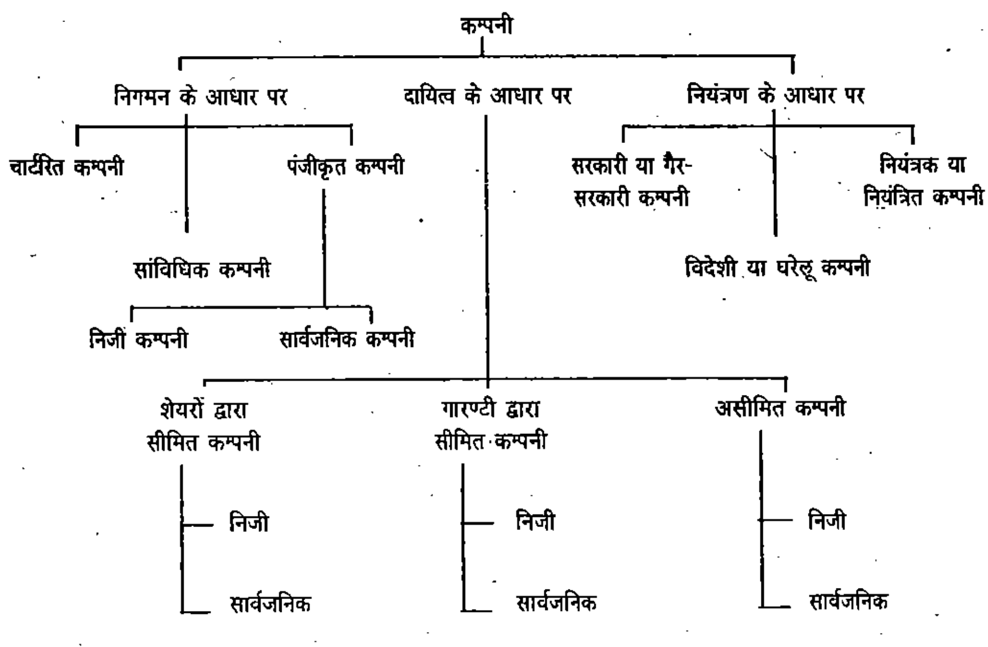

ii) **सांविधिक कम्पनी (Statutory Company) :** सांविधिक कम्पनी वह कम्पनी है जिसका निर्माण संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल के विशेष अधिनियम द्वारा किया जाता हैं। ऐसी कम्पनियां प्रायः सार्वजनिक उपयोगिताओं से सम्बन्धित उद्देश्य को पूरा करने के लिए गठित की जाती हैं। जिस विशेष अधिनियम के अन्तर्गत इनका निर्माण होता है उसी में ऐसी कम्पनियों की प्रकृति और अधिकार भी दिये होते हैं। इन पर कम्पनी अधिनियम के प्रावधान भी उस हद तक लागू होते हैं जहां तक वे विशेष अधिनियम के प्रावधानों से सामंजस्य रखते हैं। ऐसी कम्पनियों का सीमानियम (Memorandum of Association) होना आवश्यक नहीं है। एक सांविधिक कम्पनी का पृथक् विधिक अस्तित्व भी होता है और इनके लिए अपने नाम के बाद 'सीमित' शब्द का प्रयोग करना आवश्यक नहीं है। ऐसी कम्पनियों का अंकेक्षण भारत के आडिटर जनरल के नियंत्रण और पर्यवेक्षण के अन्तर्गत किया जाता है और उनके कार्य की वार्षिक रिपोर्ट संसद या राज्य विधान-मंडल, जैसी भी स्थिति हो, में रखनी होती है। ऐसी कम्पनियों के सुविदित उदाहरण भारत का रिजर्व बैंक, यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया, भारतीय जीवन बीमा निगम, राज्य व्यापार निगम, भारतीय खाद्य निगम, और स्टेट बैंक ऑफ इंडिया आदि हैं।

iii) **पंजीकृत या निगमित कम्पनी (Registered or incorporated Company) :** एक पंजीकृत कम्पनी वह है जो कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के अनुसार पंजीकृत हुई है। इसमें मौजूदा कम्पनियां भी शामिल की जाती हैं। मौजूदा कम्पनी से तात्पर्य उस कम्पनी से है जिसका गठन व पंजीकरण पहले से किसी अधिनियम के अन्तर्गत हुआ है। एक पंजीकृत कम्पनी अस्तित्व में तभी आती है जब इसे निगमन का प्रमाण पत्र प्राप्त हो जाता है। पंजीकृत कंपनियां कम्पनी अधिनियम द्वारा विनियमित होती हैं।

एक पंजीकृत कम्पनी निजी सीमित कम्पनी या सार्वजनिक सीमित हो सकती है। एक निजी सीमित कम्पनी वह होती है जो अपने अंतर्नियमों (Articles of Association) द्वारा (i) शेयरों के हस्तांतरण के अधिकार को सीमित करती है, (ii) अपने सदस्यों की संख्या (वर्तमान व भूतपूर्व कर्मचारियों को शामिल किये बिना) 50 तक सीमित रखती है और (iii) जनता को कम्पनी के शेयरों या ऋणपत्रों के लिए अभिदान करने के लिए नियंत्रित करने को निषेध करती है। दूसरी ओर, एक सार्वजनिक कम्पनी वह होती है जो निजी कम्पनी नहीं है। एक निजी कम्पनी के गठन के लिए सदस्यों की न्यूनतम संख्या दो है जबकि सार्वजनिक कम्पनी के लिए न्यूनतम संख्या 7 है। इनके बारे में आप इकाई 2 में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

1.7.2 दायित्व के आधार पर

दायित्व के आधार पर एक निगमित कम्पनी या तो (i) शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी हो सकती है, या (ii) गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी हो सकती है, या (iii) असीमित कम्पनी हो सकती है।

i) **शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी (Company Limited by Shares) :** वह कम्पनी, जिसमें इसके सदस्यों का दायित्व उनके शेयरों पर अदत्त राशि, यदि कोई है, के आधार पर निर्धारित होता है, 'शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी' कहलाती है। ऐसी कम्पनियों को आमतौर पर सीमित दायित्व वाली कम्पनियों के रूप में जाना जाता है। सदस्यों का दायित्व उनके पास शेयरों के अंकित मूल्य तक सीमित होता है। यदि किसी सदस्य ने शेयरों की पूरी राशि का भुगतान कर दिया है तो उसका दायित्व शून्य होगा। आइये एक उदाहरण द्वारा इस बात को स्पष्ट करें। मान लीजिए आप किसी कम्पनी के 100 शेयर खरीदते हैं। प्रत्येक शेयर का अंकित मूल्य 10 रु. है। इस कम्पनी में आपका दायित्व केवल 1000 रु. की राशि तक सीमित है। यदि आप कम्पनी को (जब कम्पनी ने मांगे) 600 रु. देते हैं तो अब आप कम्पनी को केवल 400 रु. देने के दायी हैं, यह राशि आपके शेयरों पर अदत्त राशि है। जब आप 1,000 रु. की पूरी राशि (यानि आपके शेयर पूर्णतया दत्त है) दे देते हैं तो आपका दायित्व शून्य होगा। दायित्व को कम्पनी के सदस्यों के विरुद्ध कम्पनी के जीवन काल में या समापन के दौरान प्रवर्तित किया जा सकता है।

ii) **गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी (Company Limited by Guarantee) :** अधिनियम की धारा 12 (12) (b) के अनुसार जिस कम्पनी के सदस्यों का दायित्व उसके सीमानियम के द्वारा उस राशि तक सीमित किया जाता है जो वे कम्पनी के समापन (winding up) की स्थिति में कम्पनी की परिसम्पत्तियों को अंशदान करने का वचन देते हैं, को गारंटी द्वारा सीमित कंपनी कहा जाता है। ऐसी कम्पनियां सामान्यतया कला, विज्ञान, खेल, संस्कृति के संवर्धन के लिए गठित की जाती हैं।

ऐसी कम्पनियों की स्थिति में एक ध्यान रखने योग्य रोचक बात यह है कि इनमें एक सदस्य को उसके

द्वारा दी गयी गारण्टी की राशि का भुगतान केवल तब करना होगा जब उसके सदस्य रहते हुए या उसके सदस्य न रहने से एक वर्ष के अन्दर कम्पनी का समापन हो। इस प्रकार सदस्यों को कम्पनी के जीवन काल में गारण्टी दी गयी राशि का भुगतान करने के लिए नहीं कहा जा सकता। गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी के सीमानियम में यह लिखा होना चाहिए कि कम्पनी के समापन की स्थिति में कम्पनी का प्रत्येक सदस्य कम्पनी की परिसम्पत्तियों को अंशदान करने का उत्तरदायित्व लेता है। यह ध्यान रखें कि सदस्य से, उसके द्वारा जितनी राशि की गारण्टी दी गयी है, उससे ज्यादा राशि देने को नहीं कहा जा सकता।

ऐसी कम्पनी के पास शेयर पूँजी होनी जरूरी नहीं है। यदि गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी का गठन बिना शेयर पूँजी के किया जाता है तो सदस्य केवल गारण्टी की गयी राशि के लिए ही दायी है और वह भी तब जब कम्पनी का समापन (liquidation) हो।

लेकिन यदि गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी का गठन शेयर पूँजी के साथ किया जाता है तो सदस्य अपने शेयरों पर अदत्त राशि देने के लिए दायी है। लेकिन गारण्टी की गयी राशि केवल कम्पनी के परिसमापन के समय मांगी जा सकती है।

iii) **असीमित कम्पनी (Unlimited Company) :** जिस कम्पनी के सदस्यों का दायित्व असीमित होता है यानि उनके दायित्व की कोई सीमा नहीं होती, उस कम्पनी को एक 'असीमित कम्पनी' कहा जाता है। ऐसी कम्पनियों के सदस्यों को कम्पनी की हानियों को अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति से देना पड़ सकता है। क्योंकि ऐसी कम्पनियों का पृथक् विधिक अस्तित्व होता है इसलिए लेनदार प्रत्यक्ष रूप से सदस्यों पर वाद नहीं ला सकते। लेनदारों को न्यायालय में कम्पनी के परिसमापन के लिए आवेदन देना होगा और इसके बाद परिसमापक सदस्यों को कम्पनी के देयताओं का भुगतान करने के लिए कम्पनी की परिसम्पत्ति में अंशदान करने का निर्देश देगा।

जैसा कि गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी की स्थिति में होता है, यहां भी एक असीमित कम्पनी के पास शेयर पूँजी होना आवश्यक नहीं है। यदि कम्पनी के पास शेयर पूँजी है तो कम्पनी के अंतर्नियमों **(Articles of Association)** उस शेयर पूँजी की राशि निर्दिष्ट होनी चाहिए जिससे कम्पनी पंजीकृत हुई है। ऐसी कम्पनी के अपने सीमानियम और अंतर्नियम अवश्य होने चाहिए। अंतर्नियम में कम्पनी के पंजीकरण के समय की सदस्य संख्या भी निर्दिष्ट होनी चाहिए।

1.7.3 नियंत्रण के आधार पर

आइये अब नियंत्रण के आधार पर कम्पनियों के वर्गीकरण का अध्ययन करें। इस आधार पर कम्पनियों को निम्नलिखित वर्गों में बांटा जाता है:

i) सरकारी कम्पनी और गैर-सरकारी कम्पनी,

ii) विदेशी कम्पनी और घरेलू कम्पनी,

iii) नियंत्रक कम्पनी और नियंत्रित कम्पनी।

i) **सरकारी कम्पनी (Government Company) :** अधिनियम की धारा 617 के अनुसार एक सरकारी कम्पनी का अर्थ है: "कोई भी वह कम्पनी जिसमें कम से कम 51% प्रदत्त शेयर पूँजी केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार या सरकारों या अंशतः केन्द्रीय सरकार और अंशतः राज्य सरकार या सरकारों के पास है तथा इसमें वह कम्पनी भी शामिल की जाती है जो इस प्रकार की परिभाषित सरकारी कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी है।" इंडियन टेलीफोन इन्डस्ट्री और हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड सरकारी कम्पनियों के उदाहरण हैं। सरकारी कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी को भी सरकारी कम्पनी माना जाता है इस अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत सरकारी कम्पनी एक असांविधिक कम्पनी होती है और यह सरकार की एजेंट नहीं होती। इसके अतिरिक्त, अन्य कम्पनियों की भांति यह कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों द्वारा विनियमित होती है। लेकिन धारा 620 के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार राज-पत्र **(Official Gazette)** अधिसूचना द्वारा यह आदेश दे सकती है कि अधिनियम का कोई भी वह प्रावधान जो इस अधिसूचना में शामिल है:

क) किसी सरकारी कम्पनी पर लागू नहीं होगा, या

ख) उन अपवादों, संशोधनों और रूपान्तरों के साथ लागू होगा जो अधिसूचना में निर्दिष्ट किये गये हैं।

ऐसी अधिसूचना की एक प्रतिलिपि संसद के सामने रखी जायेगी। अधिनियम की धाराओं 618, 619 और 619 A में छूट नहीं दी जा सकती क्योंकि ये धाराएं विशेषतया सरकारी कम्पनियों के बारे में ही हैं।

वह कम्पनी, जिसे धारा 617 की परिभाषा के आधार पर सरकारी कम्पनी नहीं कहा जा सकता, एक गैर-सरकारी कम्पनी (non-government company) होती है।

ii) **विदेशी कम्पनी (Foreign Company) :** विदेशी कम्पनी वह कम्पनी है जिसका निगमन विदेश में उस देश की विधि के अन्तर्गत हुआ है लेकिन जिसने भारत में व्यवसाय का स्थान स्थापित कर लिया है। भारत से बाहर निगमित कम्पनी भारत में व्यापार कर सकती है और इसके लिए व्यवसाय को स्थापित करना भी आवश्यक नहीं है, उदाहरण के लिए एजेंटों के माध्यम से। भारत में व्यवसाय स्थापित करने के बाद, स्थापना की तिथि से 30 दिन के अन्दर कम्पनी के रजिस्ट्रार को निम्नलिखित दस्तावेज देने आवश्यक हैं :

i) उस चार्टर या कानून की प्रमाणित प्रतिलिपि जिसके अन्तर्गत कम्पनी का निगमन किया गया है या कम्पनी के अंग्रेजी में अनुवादित सीमा नियम और अंतर्नियम।

ii) कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय का पूरा पता।

iii) कम्पनी के निदेशकों और सचिव की सूची।

iv) भारत में रहने वाले उस व्यक्ति का नाम व पता जो कम्पनी की ओर कोई नोटिस या विधिक प्रक्रिया के अन्तर्गत कोई दस्तावेज प्राप्त करने के लिए प्राधिकृत हो।

v) भारत में कम्पनी के व्यवसाय के मुख्य स्थान का पूरा पता।

एक विदेशी कम्पनी का यह दायित्व भी है कि उसे प्रत्येक उस प्रविवरण में, उस देश का नाम देना होगा जहां उसका निगमन हुआ है, जिसके द्वारा यह भारत में अपने शेयरों और ऋणपत्रों में अभिदान के लिए आवेदन आमंत्रित करती है। कम्पनी को प्रत्येक कार्यालय या स्थान जहां भी यह भारत में व्यवसाय करती है, के बाहर कम्पनी का नाम तथा निगमन के देश का नाम अंग्रेजी में तथा स्थानीय भाषा में दर्शाना होगा। कम्पनी का नाम तथा निगमन के देश का नाम अंग्रेजी भाषा में प्रत्येक व्यवसायिक पत्र, बिल, नोटिस और कम्पनी के अन्य अधिकारिक प्रकाशनों पर होना चाहिए।

जिस कम्पनी को कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार विदेशी कम्पनी नहीं कहा जा सकता, वह **घरेलू कम्पनी** (domestic company) मानी जाएगी। (18) /

एक विदेशी कम्पनी को भारत में व्यवसाय के प्रमुख स्थान पर भारत में व्यवसाय से सम्बन्धित मुद्रा प्राप्ति और व्यय, क्रय व विक्रय और परिसम्पत्तियों और देयताओं के बारे में लेखा पुस्तकें रखनी होती हैं।

कम्पनी के रजिस्ट्रार को वार्षिक विवरणी देने के बारे में अधिनियम की धारा 159 में जो प्रावधान हैं वे विदेशी कम्पनी पर भी लागू होते हैं।

iii) **नियंत्रक और नियंत्रित कम्पनी (Holding and Subsidiary Company) :** बोल चाल की भाषा में, जब एक कम्पनी दूसरी कम्पनी को नियंत्रित करती है तो नियंत्रण करने वाली कम्पनी को 'नियंत्रण कम्पनी' (holding company) और जिस कम्पनी पर नियंत्रण किया जाता है उसे 'नियंत्रित कम्पनी' (subsidiary company) कहते हैं।

अधिनियम की धारा 4 (4) में एक नियंत्रक कम्पनी की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है "एक कम्पनी दूसरी की नियंत्रक कम्पनी मानी जाएगी यदि वह दूसरी कम्पनी इसकी नियंत्रित कम्पनी हो।" एक कम्पनी (मान लीजिए यह S कम्पनी है) दूसरी कम्पनी (मान लीजिए ये H है) की केवल निम्नलिखित स्थितियों में नियंत्रित कम्पनी मानी जाएगी :

i) जब वह कम्पनी (कम्पनी H) दूसरी कम्पनी (कम्पनी S) के निदेशक मंडल के संघटन को नियंत्रित करती है;

ii) जब कम्पनी H के पास अंकित मूल्य के रूप में कम्पनी S की आधे से अधिक ईक्विटी शेयर

पूँजी है। इस बात को ध्यानपूर्वक समझिये कि अधिकांश शेयरों के धारक होने का अर्थ है कि कम्पनी H कम्पनी S में कुल वोटों के अधिकार के आधे से अधिक भाग को नियंत्रित करती है।

iii) जब कम्पनी S एक अन्य कम्पनी T की नियंत्रित कम्पनी है और कम्पनी T कम्पनी H की नियंत्रित कम्पनी है।

केवल ऊपर बतायी गयी स्थितियों में ही कम्पनी S कम्पनी H की नियंत्रित कम्पनी मानी जाएगी।

जैसा कि आपने अभी पढ़ा, एक नियंत्रक कम्पनी प्रायः अपनी नियंत्रित कम्पनी की एक प्रमुख शेयर होल्डर होती है और कानून की दृष्टि में दोनों का पृथक् विधिक अस्तित्व होता है। जब तक दोनों कम्पनियों में कोई विशिष्ट अनुबंध न हो, इनमें से कोई भी दूसरी का एजेन्ट नहीं कही जा सकती। एक नियंत्रित कम्पनी को नियंत्रक कम्पनी का एक अंग भी नहीं कहा जा सकता है।

1.8 संस्था जिसका उद्देश्य 'लाभ' नहीं है (Association not for Profit)

आपने यह पढ़ा कि सीमित कम्पनियों को अपने नाम के अन्तिम शब्द के रूप में 'सीमित' शब्द का प्रयोग करना होता है। परन्तु इस बारे में धारा 25 में एक अपवाद का प्रावधान है। इस धारा के अनुसार केन्द्रीय सरकार लाइसेंस के द्वारा एक संस्था को अपने नाम के भाग के रूप में 'सीमित' या 'निजी सीमित' शब्दों को प्रयोग किये बिना एक सीमित दायित्व वाली कम्पनी के रूप में पंजीकृत किये जाने की अनुमति दे सकती है। ऐसा लाइसेंस केवल 'संस्था जिसका उद्देश्य लाभ नहीं है' की स्थिति में दिया जाएगा। दूसरे शब्दों में केन्द्रीय सरकार केवल तभी लाइसेंस देगी जब वह संतुष्ट हो कि:

क) जिस संस्था का एक सीमित कम्पनी के रूप में गठन होने जा रहा है वह व्यापार, कला, विज्ञान, धर्म, दान या अन्य उपयोगी उद्देश्य के संवर्धन के लिए गठित की जा रही है;

ख) यदि इसे कोई लाभ होता है तो यह इसका प्रयोग इन कार्यों के संवर्धन के लिए करना चाहती है;

ग) यह अपने सदस्यों को लाभांश के भुगतान का निषेध करती है।

ऐसी कम्पनियां सार्वजनिक या निजी हो सकती हैं और शेयर पूँजी वाली या बिना शेयर पूँजी वाली हो सकती हैं।

केन्द्रीय सरकार लाइसेंस देते समय कोई भी शर्तें, जो वह उचित समझे लगा सकती है और ये संस्था पर बाध्य होंगी। सरकार, किसी भी समय, अपने आशय का नोटिस देने के बाद, संस्था को दिये गये लाइसेंस रद्द कर सकती है। लेकिन सरकार संस्था को लाइसेंस रद्द करने के विरुद्ध अपनी बात रखने की अनुमति देगी।

1.9 अवैध संस्थाएं (Illegal Associations)

1.9.1 अर्थ

बड़ी व्यापारिक संस्थाएं जब अपंजीकृत निकाय के रूप में कार्य करती हैं तो उससे जो क्षति होती है, विधि उसे रोकना चाहती है, क्योंकि यदि ऐसे निकायों द्वारा व्यवसाय किया जाता है तो ऐसे व्यापारिक संस्थानों से व्यापार करने वाले व्यक्ति यह नहीं जान पाएंगे कि वे किन के साथ अनुबंध कर रहे हैं। इस अनभिज्ञता के कारण वे बहुत विपत्ति में पड़ सकते हैं। कम्पनी अधिनियम की धारा 11 का उद्देश्य इस सार्वजनिक क्षति को रोकना है। इसके अनुसार, **बैंकिंग व्यवसाय करने के लिए दस से अधिक व्यक्तियों और कोई अन्य व्यवसाय करने के लिए बीस से अधिक व्यक्तियों की किसी कम्पनी, संस्था या साझेदारी का गठन नहीं किया जाएगा जब तक कि यह इस अधिनियम के अन्तर्गत एक कम्पनी के रूप में पंजीकृत न करायी गयी हो या जब तक यह किसी अन्य भारतीय विधि के अनुसार गठित न की गयी हो।**

अतः ऊपर दिये गये विवरण से यह स्पष्ट है कि यदि बैंकिंग व्यवसाय करने के लिए एक संस्था का गठन किया जाता है तो इसके सदस्यों की अधिकतम संख्या 10 से अधिक नहीं होनी चाहिए। यदि ऐसी संस्था का गठन करने वाले व्यक्तियों की संख्या 10 से अधिक है तो यह संस्था कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत होनी चाहिए या किसी अन्य भारतीय विधि के अन्तर्गत गठित होनी चाहिए। इसी प्रकार यदि कोई

संस्था लाभ के उद्देश्य से कोई अन्य व्यवस्था चलाने के लिए गठित की जाती है और इसमें 20 से अधिक व्यक्ति हैं तो एक विधिक संस्था बनने के लिए इसका पंजीकरण आवश्यक है। यदि ऊपर बताये गये तरीके से इसका पंजीकरण नहीं कराया जाता है तो इसे एक 'अवैध संस्था' माना जाएगा, भले ही जिन उद्देश्यों के लिए इसका गठन किया गया है वे अवैध न हों।

अब ऐसी स्थिति की कल्पना कीजिए जहां 9 सदस्यों की एक संस्था का बैंकिंग व्यवसाय करने के लिए गठन किया जाता है। बाद में दो और व्यक्ति संस्था में सदस्य के रूप में शामिल हो जाते हैं। इन व्यक्तियों के संस्था में शामिल होने का क्या प्रभाव होगा? आपका उत्तर होगा कि यह संस्था उस क्षण से अवैध हो जाएगी जब से इसके सदस्यों की संख्या 10 से अधिक हुई है। व्यक्ति की संख्या की गणना के लिए संस्था या साझेदारी जिन व्यक्तियों से बनी है उनमें से प्रत्येक की केवल एक के रूप में गणना की जाएगी। **व्यक्ति से हमारा तात्पर्य एक व्यक्ति है व्यक्तियों का निकाय नहीं।** अब मान लीजिए तीन साझेदारी फर्मों A, B और C द्वारा एक संस्था का गठन किया जाता है। फर्म A और B प्रत्येक में चार साझेदार हैं और फर्म C में 3 साझेदार हैं। क्या इस संस्था पर धारा 11 लागू होगी और इसका पंजीकरण आवश्यक होगा। हां, संस्था का पंजीकरण आवश्यक है क्योंकि सदस्यों की कुल संख्या दस से अधिक है।

ऊपर दिये गये विवरण से आप यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि सदस्यों की अधिकतम संख्या पर सीमा केवल तभी लागू होती है जब संस्था को लाभ के लिए व्यवसाय करना हो। यह प्रतिबंध लागू नहीं होता यदि संस्था का गठन गैर-व्यवसायिक उद्देश्य के लिए किया गया है जैसे कि धर्म, विज्ञान, कला या परोपकार आदि के लिए गठित संस्थाएं।

1.9.2 अपवाद

निम्नलिखित स्थितियों में धारा 11 लागू नहीं होती :

i) **संयुक्त हिन्दू परिवार :** एक संयुक्त हिन्दू परिवार किसी भी भारतीय विधि के अन्तर्गत पंजीकृत हुए बिना, सदस्यों की किसी भी संख्या के साथ कोई भी व्यवसाय, चाहे वह लाभ अर्जित करने के लिए ही हो, कर सकता है और फिर भी यह संस्था अवैध नहीं होगी। लेकिन यदि दो संयुक्त हिन्दू परिवार मिलकर व्यवसाय करते हैं तो धारा 11 लागू होगी। लेकिन ऐसी संस्था के सदस्यों की गणना करते समय परिवार के अवयस्क सदस्यों को शामिल नहीं किया जाएगा।

ii) **स्टाक एक्सचेंज :** स्टाक एक्सचेंज पर धारा 11 लागू नहीं होती क्योंकि इसका गठन कोई व्यवसाय करने के लिए नहीं किया जाता।

iii) **लाभ न अर्जित करने वाली संस्थाएं :** वे सभी धार्मिक, परोपकारी, साहित्यिक, सामाजिक, खेल-कूद और अन्य संस्थाएं जिनका उद्देश्य लाभ कमाना नहीं है, धारा 11 के अन्तर्गत नहीं आतीं।

1.9.3 परिणाम

एक अवैध संस्था के परिणाम निम्नलिखित हैं:

1) ऐसे व्यवसाय से उत्पन्न सभी दायित्वों के लिए प्रत्येक सदस्य व्यक्तिगत रूप से दायी होगा।

2) एक अवैध संस्था अपने किसी भी ऋण या किसी अन्य सम्पत्ति को वसूल करने के लिए वाद नहीं चला सकता। इसी प्रकार एक अवैध संस्था को दिये गये पैसे को वसूल करने के लिए उसके विरुद्ध वाद नहीं चलाया जा सकता। लेकिन एक अवैध संस्था के प्रत्येक सदस्य के विरुद्ध वाद चलाया जा सकता है। यदि संस्था बाद में एक कम्पनी के रूप में पंजीकृत करा भी ली गयी हो तभी भी वाद नहीं चलाया जा सकता।

3) ऐसी संस्था के प्रत्येक सदस्य को एक हजार रु. तक जुर्माने की सजा हो सकती है।

4) अवैध संस्था का कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत समापन नहीं किया जा सकता।

5) इसके किसी सदस्य द्वारा इसके विभाजन या विघटन के लिए वाद नहीं लाया जा सकता।

6) क्योंकि एक अवैध संस्था का कोई विधिक अस्तित्व नहीं होता अतः यह कोई अनुबंध नहीं कर सकती।

7) अवैध संस्था की अवैधता को इसके सदस्यों को संख्या को बाद में घटाकर दूर नहीं किया जा सकता।

बोध प्रश्न ग

1) एक सांविधिक कम्पनी क्या होती है?

....

....

....

....

2) एक पंजीकृत कम्पनी का क्या अर्थ है?

....

....

....

....

3) गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी का क्या अर्थ है?

....

....

....

....

4) सरकारी कम्पनी क्या होती है?

....

....

....

....

5) 'अवैध संस्था' से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

....

6) रिक्त स्थानों को भरिये :

i) एक निगमित कम्पनी की स्थापना एक चार्टरित कम्पनी के रूप में, एक सांविधिक कम्पनी के रूप में, और एक .... कम्पनी के रूप में की जा सकती है।

ii) गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी में, एक सदस्य को गारण्टी की गयी राशि का भुगतान केवल तब करना होता है जब उसके सदस्य रहते हुए या उसके सदस्य न रहने के बाद .... वर्ष के भीतर कम्पनी का समापन किया जाता है।

iii) एक सरकारी कम्पनी वह है जिसमें केन्द्रीय सरकार के पास प्रदत्त शेयर पूँजी का .... प्रतिशत से कम न हो।

iv) एक सरकारी कम्पनी के अंकेक्षक की नियुक्ति केन्द्रीय सरकार द्वारा .... की सलाह से की जाती है।

v) एक विदेशी कम्पनी को, जो भारत में व्यवसाय के स्थान की स्थापना कम्पनी अधिनियम, 1956 के लागू होने के बाद करती है, कम्पनी के रजिस्ट्रार को पंजीकरण के लिए आवश्यक दस्तावेज भारत में व्यवसाय के स्थान की स्थापना के .... दिन के भीतर देने होते हैं।

vi) अधिनियम की धारा .... के अन्तर्गत, कोई संस्था जिसका निर्माण लाभ के लिए नहीं किया गया हो, केन्द्रीय सरकार से छूट प्राप्त कर सकती है और अपने नाम के अन्तिम शब्द के रूप में 'सीमित' शब्द का प्रयोग किये बिना पंजीकृत की जा सकती है।

vii) लाभ हेतु 'कोई अन्य व्यवसाय' चलाने के लिए, गठित की गयी संस्था के सदस्यों की संख्या .... से अधिक नहीं होनी चाहिए।

7) बताइये कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :

i) एक बार यदि एक कम्पनी का पंजीकरण एक असीमित कम्पनी के रूप में हो जाता है तो इसका विघटन किये बिना इसे एक सीमित कम्पनी के रूप में परिवर्तित नहीं किया जा सकता।

ii) एक सरकारी कम्पनी, कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों से विनियमित नहीं होती।

iii) एक सरकारी कम्पनी में कम्पनी की प्रदत्त शेयर पूँजी अंशतः केन्द्रीय सरकार के पास हो सकती है और अंशतः एक या अधिक राज्य सरकारों के पास।

iv) एक विदेशी कम्पनी भारत में व्यवसाय का स्थान स्थापित किये बिना भी भारत में व्यवसाय कर सकती है।

v) एक विदेशी कम्पनी वह है जो भारत में पंजीकृत है और विदेश में अपना व्यवसाय चलाती है।

vi) नियंत्रक कम्पनी का और नियंत्रित कम्पनी का पृथक्-पृथक् विधिक अस्तित्व होता है।

vii) एक निजी कम्पनी जो व्यवहार में एक सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी है, उसे एक सार्वजनिक कम्पनी की भांति माना जाएगा।

viii) बैंकिंग व्यवसाय चलाने के लिए अधिकतम 20 सदस्यों की संख्या के साथ एक संस्था का गठन किया जा सकता है।

ix) एक साझेदारी फर्म एक संस्था का सदस्य हो सकती है।

x) एक अवैध संस्था का कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं होता।

1.10 सारांश

कम्पनी शब्द का अर्थ है किसी सामूहिक उद्देश्य के लिए व्यक्तियों की संस्था, जो लाभ हेतु व्यवसाय चलाने के लिये या किसी परोपकारी उद्देश्य के लिए हो सकती है। कम्पनी अधिनियम, 1956 ने कम्पनी की परिभाषा इस प्रकार दी है "अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत कम्पनी या एक विद्यमान कम्पनी।" एक 'विद्यमान कम्पनी' का अर्थ है एक कम्पनी जिसका गठन और पंजीकरण पहले के किसी कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत हुआ हो।

कम्पनी की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :

i) यह विधि द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति है।

ii) इसका स्वतंत्र विधिक अस्तित्व होता है।

iii) कम्पनी के सदस्यों का दायित्व उनके पास शेयरों के अदत्त मूल्य तक या उनके द्वारा दी गयी गारण्टी की राशि तक सीमित होता है।

iv) कम्पनी का शाश्वत उत्तराधिकार होता है यानि कम्पनी का अस्तित्व एक शेयर होल्डर की मृत्यु या पागलपन से प्रभावित नहीं होता।

v) इसके शेयर निर्बाध रूप से हस्तांतरणीय हैं।

vi) कम्पनी एक न्यायिक व्यक्ति है इसलिए इसकी एक सार्व मुद्रा होनी चाहिए।

vii) कम्पनी अपने नाम में सम्पत्ति रख सकती है और उसे बेच सकती है। यद्यपि शेयर होल्डर कम्पनी के स्वामी हैं लेकिन पैसा और सम्पत्ति सदस्यों की होती है, शेयर होल्डरों की नहीं।

viii) कम्पनी स्वयं के नाम से वाद चला सकती है और इस पर वाद चलाया जा सकता है।

इस प्रकार एक कम्पनी साझेदारी फर्म से विभिन्न प्रकार से भिन्न होती है। एक जन कम्पनी या पारिवारिक कम्पनी वह है जिसकी लगभग सारी शेयर पूँजी एक ही व्यक्ति के पास होती है जो सदस्यों की न्यूनतम संख्या के सम्बंध में अधिनियम की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कुछ नाम मात्र के **(dummy)** सदस्य बना लेता है।

कम्पनी अपने सदस्यों से भिन्न एक विधिक व्यक्ति है। कम्पनी व इसके सदस्यों के बीच एक आवरण होता है, जिसे निगमन का आवरण कहते हैं। कभी-कभी इस आवरण को हटाकर कम्पनी के पीछे जो व्यक्ति हैं उन्हें जानना आवश्यक होता है। इसे 'निगमन का आवरण हटाना' कहते हैं। वे मामले और परिस्थितियां जिनमें निगमन का आवरण हटाया जा सकता है उन्हें दो शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

क) अभिव्यक्त सांविधिक प्रावधानों के अन्तर्गत, और

ख) न्यायिक व्याख्या के अन्तर्गत।

क) अभिव्यक्त सांविधिक प्रावधानों के अन्तर्गत

i) जब सदस्यों की संख्या सांविधिक न्यूनतम संख्या से कम हो।

ii) जब कम्पनी के लिए कार्य करने वाला व्यक्ति अपनी प्रतिनिधिक हैसियत बताने में असफल होता है।

iii) जब एक नियंत्रक कम्पनी और नियंत्रित कम्पनी के बीच सम्बन्ध स्थापित करना हो।

iv) सम्बन्धित कम्पनियों के मामलों की छान-बीन करने के लिए।

v) कम्पनी के स्वामित्व की छान-बीन करने के लिए।

vi) यह जानने के लिए कि क्या व्यवसाय का आचरण छल-कपट वाला है।

ख) न्यायिक व्याख्या के अन्तर्गत

i) कम्पनी का स्वरूप निर्धारित करने के लिए।

ii) कपट और अनुचित आचरण को रोकने के लिए।

iii) राजस्व की सुरक्षा के लिए।

iv) जहाँ कम्पनी का गठन इसके सदस्यों के एजेंट के रूप में किया गया है।

v) कल्याणकारी कानूनों के परिहार के लिए।

कम्पनियों के प्रकार: कम्पनियों को निम्नलिखित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है—(1) चार्टरित कम्पनियां (2) सांविधिक कम्पनियां, और (3) पंजीकृत कम्पनियां। एक पंजीकृत कम्पनी शेयरों द्वारा या गारण्टी द्वारा सीमित हो सकती है या एक असीमित कम्पनी हो सकती है। ये कम्पनी निजी या सार्वजनिक हो सकती हैं। विदेशी कम्पनियां वे हैं जो भारत के बाहर निगमित हुई हैं लेकिन भारत में उनका व्यापार का स्थान है। एक कम्पनी को दूसरी कम्पनी की नियंत्रक कम्पनी माना जाता है यदि वह दूसरी कम्पनी इसकी नियंत्रित कम्पनी है। एक कम्पनी दूसरी कम्पनी की एक नियंत्रित कम्पनी केवल तब मानी जाती है जब:

i) दूसरी कम्पनी इस कम्पनी के निदेशक मंडल के संघटन को नियंत्रित करती है।

ii) दूसरी कम्पनी इसकी ईक्विटी शेयर पूँजी के अंकित मूल्य के आधे से अधिक की धारक है।

iii) यह किसी अन्य कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी है और वह कम्पनी स्वयं नियंत्रक कम्पनी की एक नियंत्रित कम्पनी है।

अवैध संस्थाएं: एक संस्था जिसका गठन बैंकिंग व्यवसाय के लिए 10 से अधिक व्यक्तियों के साथ किया है या अन्य किसी व्यवसाय के लिए 20 से अधिक व्यक्तियों के साथ किया गया लेकिन जिसका कम्पनी अधिनियम 1956 के अन्तर्गत पंजीकरण नहीं हुआ है, वह एक अवैध संस्था मानी जाएगी लेकिन एक व्यवसाय करने वाला संयुक्त हिन्दू परिवार, सट्टा बाजार, संस्थाएं जो लाभ-हेतु नहीं हैं, अवैध संस्थाए नहीं हैं। एक अवैध संस्था का प्रत्येक सदस्य ऐसे व्यवसाय के सभी दायित्वों के लिए व्यक्तिगत रूप से दायी होगा।

1.11 शब्दावली

कम्पनी (Company) : कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत व्यक्तियों की एक संस्था। यह विधि द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति है जिसका विशिष्ट नाम, एक सामान्य मुद्रा और इसके सदस्यों का शाश्वत उत्तराधिकार होता है।

सांविधिक कम्पनी (Statutory Company) : एक कम्पनी जो संसद या राज्य विधान मंडल के विशेष अधिनियम द्वारा निर्मित की जाती है।

शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी (Company Limited by Shares) : एक कंपनी जिसके सदस्यों का दायित्व उनके शेयरों के मूल्य तक सीमित होता है।

गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी (Company Limited by Guarantee) एक कम्पनी जिसके सदस्यों का दायित्व उस राशि तक सीमित है जो वे कम्पनी के समापन होने की स्थिति में कम्पनी की परिसम्पत्तियों में देने का उत्तरदायित्व लेते हैं।

सरकारी कम्पनी (Government Company) : वह कम्पनी जिसकी प्रदत्त पूँजी में सरकार का भाग 51% से कम नहीं होता।

निजी सीमित कम्पनी (Private Limited Company) : एक कम्पनी जो अपनी अन्तर्नियमावली द्वारा (क) अपने शेयरों के हस्तांतरण के अधिकार को सीमित करती है (ख) इसके सदस्यों की संख्या को 50 तक सीमित करती है (इसके कर्मचारियों को छोड़कर) और (ग) जनता को इसके शेयरों या ऋणपत्रों के लिए अभिदान को निमंत्रित करने पर रोक लगाती है।

सार्वजनिक सीमित कम्पनी (Public Limited Company) : एक कम्पनी जो निजी सीमित कम्पनी नहीं है।

असीमित कम्पनी (Unlimited Company) : एक कम्पनी जिसके सदस्यों का दायित्व असीमित होता है।

शाश्वत उत्तराधिकार (Perpetual Succession) : अपने सदस्यों के जीवन या विवेक पर ध्यान किये बिना कंपनी का अस्तित्व निरंतर बने रहना।

विदेशी कम्पनी (Foreign Company) : भारत से बाहर निगमित कम्पनी लेकिन जिसका भारत में व्यवसाय का स्थान है।

निगमन का आवरण (Corporate Veil) : एक सीमा रेखा या आवरण जो कम्पनी और इसके सदस्यों के बीच खींचा जाता है।

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 4 i) सही ii) सही iii) गलत iv) गलत v) सही vi) सही vii) सही viii) सही

ख 4 i) स्वतंत्र विधिक ii) 2; 7 iii) प्रतिनिधिक iv) दुश्मन देश की है या नहीं v) अभिव्यक्त सांविधिक प्रावधानों vi) असीमित।

5 i) सही ii) गलत iii) गलत iv) गलत v) सही vi) सही vii) सही

ग 6 i) पंजीकृत ii) एक iii) 51 iv) आडिटर जनरल ऑफ इंडिया v) तीस vi) 25 vii) 20

7) i) गलत ii) गलत iii) सही iv) सही v) गलत vi) सही vii) सही viii) गलत ix) सही x) सही।

1.13 स्वपरख प्रश्न

1) 'कम्पनी शाश्वत उत्तराधिकार वाली और विधि द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति है और जिन सदस्यों से यह बनती है उनके व्यक्तित्त्व से भिन्न होती है'। टिप्पणी कीजिए।

2) निगमन के आवरण की संकल्पना का विवेचन कीजिए। किन परिस्थितियों में यह आवरण हटाया जा सकता है?

3) कम्पनी और साझेदारी में भेद कीजिए।

4) कम्पनी की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

5) उन परिस्थितियों का विवेचन कीजिए जिनमें आवरण हटाना विवेकपूर्ण है?

6) कम्पनियां कितने प्रकार की होती हैं और कौन सी कम्पनियों का कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत निगमन किया जा सकता है?

7) सरकारी कम्पनी पर एक विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

8) एक विदेशी कम्पनी से सम्बन्धित विशेष प्रावधानों का वर्णन कीजिए।

9) नियंत्रक कम्पनी और नियंत्रित कम्पनी में भेद कीजिए। किसी कंम्पनी को दूसरी कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी कब कहा जा सकता है? उदाहरण दीजिए।

10) एक अवैध संस्था की प्रमुख विशेषताएं बताइये। ऐसी संस्था बनाने के क्या परिणाम होते हैं?

नोट: इन प्रश्नों में आपको इस इकाई को और अच्छी तरह से समझने में सहायता मिलेगी। उनके उत्तर देने का प्रयास कीजिए। लेकिन अपने उत्तर विश्वविद्यालय को मत भेजिए। ये सिर्फ आपके अपने अभ्यास के लिए दिए गए हैं।

इकाई 2 सार्वजनिक तथा निजी कम्पनी

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 निजी कम्पनी का अर्थ
2.3 सार्वजनिक कम्पनी का अर्थ
2.4 निजी कम्पनी और सार्वजनिक कम्पनी में अन्तर
2.5 निजी कम्पनी के विशेषाधिकार
2.6 स्वतन्त्र निजी कम्पनी के विशेषाधिकार
2.7 निजी कम्पनी पर प्रतिबन्ध
2.8 निजी कम्पनी का सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तन
2.9 सार्वजनिक कम्पनी का निजी कम्पनी में परिवर्तन
2.10 सारांश
2.11 शब्दावली
2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.13 स्वपरख प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- निजी और सार्वजनिक कम्पनी की परिभाषा कर सकें
- निजी और सार्वजनिक कम्पनी में अन्तर स्पष्ट कर सकें
- निजी कम्पनी के विशेषाधिकारों का वर्णन कर सकें
- निजी कम्पनी पर लगाए गये प्रतिबन्धों की व्याख्या कर सकें
- निजी कम्पनी का सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तन और इसके विपरीत परिवर्तन का वर्णन कर सकें तथा
- उन परिस्थितियों का वर्णन कर सकें जिनमें निजी कम्पनी को सार्वजनिक कम्पनी मान लिया जाता है।

2.1 प्रस्तावना

आप इकाई 1 में पढ़ चुके हैं कि शेयरों द्वारा अथवा सीमित गारंटी द्वारा सीमित पंजीकृत कम्पनी, सार्वजनिक कम्पनी अथवा निजी कम्पनी हो सकती है। इस इकाई में आप निजी कम्पनी का अर्थ पढ़ेंगे तथा यह भी पढ़ेंगे कि निजी कम्पनी किसी सार्वजनिक कम्पनी से किस प्रकार भिन्न होती है। आप निजी कम्पनी के विशेषाधिकारों तथा कानून द्वारा उन पर लगाए गये प्रतिबन्धों के विषय में भी अध्ययन करेंगे। निजी कम्पनी का सार्वजनिक कम्पनी में और सार्वजनिक कम्पनी का निजी कम्पनी में परिवर्तन कैसे होता है, इसकी भी चर्चा की गई है। इकाई के अन्त में उन परिस्थितियों का संक्षेप में वर्णन किया गया है जब निजी कम्पनी को सार्वजनिक कम्पनी मान लिया जाता है।

2.2 निजी कम्पनी (Private Company) का अर्थ

कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 3 (1) (ii) के अन्तर्गत निजी कम्पनी की परिभाषा इस प्रकार की गई है: निजी कम्पनी ऐसी कम्पनी होती है जो अपने अन्तर्नियम द्वारा

क) शेयरों (यदि कोई हैं तो) के हस्तांतरण के अधिकार को प्रतिबन्धित करती हैं;

ख) अपने सदस्यों की संख्या को पचास तक सीमित रखती है; तथा

ग) आम जनता को अपने शेयरों या ऋण-पत्रों में धन लगाने के लिए निमन्त्रण देने पर प्रतिबन्ध लगाती है।

आइए अब हम सविस्तार अध्ययन करते हैं कि इन प्रत्येक प्रतिबन्धों का क्या अर्थ है।

क) **सदस्यों के शेयर हस्तांतरण के अधिकार पर प्रतिबन्ध :** निजी कम्पनी के अन्तर्नियम में इस सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से प्रावधान होना चाहिए जिसके अन्तर्गत सदस्यों के शेयर (यदि कोई हैं तो) का हस्तांतरण करने के अधिकार पर प्रतिबन्ध लगाया जा सके। इसका यह अर्थ हुआ कि सार्वजनिक कम्पनी के समान निजी कम्पनी के शेयर स्वतन्त्र रूप से हस्तांतरित नहीं किए जा सकते। परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि निजी कम्पनी के शेयरों को हस्तांतरित किया ही नहीं जा सकता। निजी कम्पनी के अन्तर्नियमों में यह प्रावधान होता है कि जब कभी भी कोई सदस्य अपने शेयर हस्तांतरित करना चाहता है, तो वह संचालकों द्वारा निर्धारित मूल्य पर उन शेयरों को विद्यमान शेयरधारियों को ही बेचने का प्रस्ताव करेगा। यह प्रतिबन्ध इसलिए लगाया गया है जिससे कि कम्पनी के सदस्यों की पारिवारिक प्रकृति को बनाए रखा जा सके। इसी कारण से निजी कम्पनी को कभी-कभी 'बन्द निगम' भी कहा जाता है। परन्तु कम्पनी अधिनियम में स्पष्ट तौर से इन प्रतिबन्धों को लगाने के ढंग की कोई विशिष्ट व्यवस्था नहीं की गई है। यहां आप देखेंगे कि शेयर पूँजी के बिना वाली निजी कम्पनी के अन्तर्नियम में इन प्रतिबन्धों को शामिल करना आवश्यक नहीं है।

ख) **सदस्यों की अधिकतम संख्या पर प्रतिबन्ध :** निजी कम्पनी अपने सदस्यों की अधिकतम संख्या को पचास तक सीमित रखती है। अतः इसका अर्थ यह हुआ कि निजी कम्पनी में सदस्यों की संख्या दो से पचास तक हो सकती है। निजी कम्पनी के निर्माण के लिए कम-से-कम दो सदस्यों का होना सांविधिक आवश्यकता है। सदस्यों की संख्या की गिनती करते समय निम्नलिखित को शामिल नहीं किया जाता :

i) ऐसे व्यक्ति जो कम्पनी में नौकरी करते हैं तथा कम्पनी में कार्यरत होने की वजह से वे कम्पनी के सदस्य हैं, तथा

ii) ऐसे व्यक्ति, जो कम्पनी में नौकरी करते समय उसके सदस्य थे तथा नौकरी समाप्त होने के बाद भी वे कम्पनी के सदस्य बने रहे हैं।

इस बात का भी प्रावधान है कि यदि दो या अधिक व्यक्ति कम्पनी के एक या अधिक शेयरों को संयुक्त रूप से रखते हैं, तो सदस्यों की गिनती करते समय उन्हें केवल एक सदस्य माना जाएगा।

ग) **जनता को निमंत्रित करने पर प्रतिबन्ध :** इस प्रतिबन्ध का यह अर्थ हुआ कि निजी कम्पनी आम जनता को अपने शेयरों या ऋणपत्रों में धन लगाने के लिए, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई निमन्त्रण नहीं दे सकती तथा वह प्रविवरण जारी नहीं कर सकती। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि यह किस प्रकार ज्ञात किया जाएगा कि कम्पनी ने सार्वजनिक निमन्त्रण दिया है अथवा नहीं। आम जनता में, जनता के किसी विशेष वर्ग को शामिल किया जा सकता है चाहे उन्हें कम्पनी के शेयरधारियों या ऋणपत्रधारियों के रूप में या प्रविवरण जारी करने वाले व्यक्ति के ग्राहक के रूप में या किसी अन्य रूप में चुना गया हो। जब सब परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह निमन्त्रण देने वाले और नियन्त्रण प्राप्त करने वाले के बीच निजी या घरेलू मामला हो तो ऐसे निमन्त्रण को सार्वजनिक निमन्त्रण नहीं माना जा सकता।

सरल शब्दों में, इसका यह अर्थ निकला कि निजी कम्पनी जनता से अभिदान निमन्त्रित नहीं कर सकती, इसे अपनी पूंजी या ऋण की राशि के लिए स्वयं ही अपनी निजी व्यवस्था करनी होगी।

आपको यह स्मरण रखना चाहिए कि निजी कम्पनी के अन्तर्नियमों में उपर्युक्त तीन प्रतिबन्ध अवश्य ही शामिल किए जाने चाहिए, अतः निजी कम्पनी को अपने अन्तर्नियम बनाना अत्यन्त आवश्यक है। यदि निजी कम्पनी सीमित दायित्व वाली कम्पनी है, तो इसे अपने नाम के अन्त में 'प्राइवेट लिमिटेड' शब्द अनिवार्य रूप से जोड़ने होंगे। निजी कम्पनी (क) शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी, (ख) गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी, तथा (ग) असीमित कम्पनी हो सकती है। यदि कोई निजी कम्पनी अन्तर्नियम के इन तीन प्रतिबन्धों में से किसी का भी पालन नहीं करती, तो निजी कम्पनी को उपलब्ध विशेषाधिकार उसे प्राप्त नहीं हो सकते।

2.3 सार्वजनिक कम्पनी (Public Limited Company) का अर्थ

कम्पनी अधिनियम की धारा 3 (I) (iv) के अनुसार प्रत्येक ऐसी कम्पनी जो, निजी कम्पनी नहीं है, सार्वजनिक कम्पनी कहलाती है। पिछले 2.2 में आप निजी कम्पनी के प्रतिबन्धों के बारे में पढ़ चुके हैं। इस

प्रकार सरल शब्दों में यह कह सकते हैं कि सार्वजनिक कम्पनी ऐसी कम्पनी होती है जिसके अन्तर्नियम में निजी कम्पनी के तीन प्रतिबन्ध विद्यमान नहीं होते हैं। इस प्रकार सार्वजनिक कम्पनी वह होती है जिसमें सदस्यों के शेयर हस्तांतरण करने के अधिकार पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाता, जिसमें सदस्यों की अधिकतम संख्या को सीमित नहीं किया जाता तथा जो जनता को अपने शेयरों में धन लगाने के लिए आमन्त्रित करती है। अतः सामान्य जनता का कोई भी व्यक्ति सार्वजनिक कम्पनी के शेयर या ऋणपत्र खरीद सकता है। केवल सार्वजनिक कम्पनी के शेयरों को ही स्टॉक-एक्सचेंज में खरीदा-बेचा जा सकता है। इसके अतिरिक्त, सार्वजनिक कम्पनी में सदस्यों की न्यूनतम संख्या सात होती है।

निजी कंपनी के ही समान सार्वजनिक कम्पनी निम्न प्रकार की हो सकती है:

क) शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी;

ख) गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी; तथा

ग) असीमित कम्पनी।

2.4 निजी कम्पनी और सार्वजनिक कम्पनी में अन्तर

निजी एवं सार्वजनिक कम्पनियों का अर्थ पढ़ चुकने के पश्चात् अब आप इन दोनों के अन्तर को स्पष्ट कर सकेंगे। निजी कम्पनी तथा सार्वजनिक कम्पनी में निम्नलिखित मुख्य अन्तर हैं:

1) **न्यूनतम संख्या :** सार्वजनिक कम्पनी के निर्माण के लिए कम-से-कम सात सदस्यों का होना आवश्यक है, जबकि निजी कम्पनी की स्थापना के लिए दो सदस्यों का होना ही पर्याप्त है।

2) **अधिकतम संख्या :** सार्वजनिक कम्पनी में सदस्यों की अधिकतम संख्या की कोई सीमा नहीं होती है, परन्तु निजी कम्पनी में सदस्यों की अधिकतम संख्या पचास से अधिक नहीं हो सकती।

3) **नाम :** शेयरों या गारंटी द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी के नाम के अन्त में 'लिमिटेड' शब्द अवश्य होना चाहिए, जबकि निजी कम्पनी, चाहे वह शेयरों द्वारा सीमित हो या गारंटी द्वारा, के नाम के अन्त में 'प्राइवेट लिमिटेड' शब्द अवश्य जोड़ा जाना चाहिए।

4) **शेयरों की हस्तान्तरणीयता :** सार्वजनिक कम्पनी के शेयर स्वतन्त्रतापूर्वक हस्तान्तरित किए जा सकते हैं जबकि निजी कम्पनी के शेयरों के हस्तांतरण पर अन्तर्नियम द्वारा प्रतिबन्ध लगाया जाता है।

5) **जनता को निमन्त्रण :** सार्वजनिक कम्पनी प्रविवरण जारी करके या प्रविवरण के स्थान पर विवरण ज़ारी करके अपने शेयरों या ऋणपत्रों में धन लगाने के लिए जनता को आमन्त्रित करती है। परन्तु निजी कम्पनी अपने शेयरों या ऋणपत्रों में पूँजी लगाने के लिए जनता को आमन्त्रित नहीं कर सकती है क्योंकि निजी कम्पनी के अन्तर्नियम में जनता को निमन्त्रण देने पर प्रतिबन्ध होता है।

6) **व्यापार आरम्भ करना :** निजी कम्पनी, निगमन का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के बाद तुरन्त व्यापार आरम्भ कर सकती है, परन्तु सार्वजनिक कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने के लिए निगमन प्रमाण-पत्र के अतिरिक्त एक और अन्य प्रमाण-पत्र प्राप्त करना होता है जिसे 'व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र' कहते हैं।

7) **दस्तावेज़ :** सार्वजनिक कम्पनी के सीमानियम व अन्तर्नियम पर सात सदस्यों के हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं, जबकि निजी कम्पनी की स्थिति में उन पर केवल दो सदस्यों के हस्ताक्षर होना ही पर्याप्त है। यदि कोई सार्वजनिक कम्पनी अपने लिए अलग से अन्तर्नियम नहीं बनाती है बल्कि वह कम्पनी अधिनियम की तालिका **'A'** को अपनाना चाहती है, तो वह ऐसा कर सकती है। परन्तु निजी कम्पनी के लिए अपने अन्तर्नियम बनाना अनिवार्य है क्योंकि इस प्रलेख के द्वारा ही निजी कम्पनी सांविधिक प्रतिबंध लगाती है।

8) **शेयरों का आबटन :** कोई भी सार्वजनिक कम्पनी तब तक शेयरों का आबंटन नहीं कर सकती जब तक कम्पनी को न्यूनतम अभिदान राशि नकद प्राप्त न हो गयी हो। निजी कम्पनी की दशा में इस प्रकार का कोई प्रतिबन्ध नहीं है। निजी कम्पनी, निगमन के तुरन्त ही पश्चात् शेयर आबंटित कर सकती है।

9) **शेयर वारंट :** सार्वजनिक कम्पनी शेयर वारंट ज़ारी कर सकती है जिसके अनुसार उसका वाहक (bearer) वारंट में निर्दिष्ट शेयरों का स्वामी होता है। परन्तु निजी कम्पनी शेयर वारंट जारी कर ही नहीं सकती।

10) **सांविधिक सभा (Statutory Meeting) :** सार्वजनिक कम्पनी के लिए निर्धारित समय के भीतर सांविधिक सभा बुलाना तथा रजिस्ट्रार के पास सांविधिक रिपोर्ट फाइल करना अनिवार्य है, जबकि निजी कम्पनी को न तो सांविधिक सभा बुलानी आवश्यक है और न ही रजिस्ट्रार के पास सांविधिक रिपोर्ट फाइल करनी।

11) **निदेशक (Directors) :** सार्वजनिक कम्पनी में कम-से-कम तीन संचालक (निदेशक) होना अनिवार्य है, जबकि निजी कम्पनी में केवल दो संचालकों का होना ही पर्याप्त है। सार्वजनिक कम्पनी के संचालकों को इस पद पर कार्य करने के सम्बन्ध में अपनी लिखित सहमति रजिस्ट्रार को भेजनी चाहिए। उसे सीमानियम पर हस्ताक्षर करने चाहिए तथा योग्यता शेयर खरीदने के लिए अनुबन्ध करना चाहिए, जबकि निजी कम्पनी के संचालकों को ऐसा कुछ भी नहीं करना पड़ता। सार्वजनिक कम्पनी में संचालकों की कुल संख्या के दो-तिहाई संचालक बारी-बारी से रिटायर होने चाहिए, जबकि निजी कम्पनी के संचालकों को बारी-बारी से रिटायर होना आवश्यक नहीं है, वे स्थायी आजीवन संचालक हो सकते हैं। सार्वजनिक कम्पनी के संचालकों को केन्द्र सरकार की अनुमति के बिना कोई ऋण नहीं दिया जा सकता, परन्तु निजी कम्पनी के संचालक केन्द्र सरकार की अनुमति के बिना अपनी कम्पनी से ऋण ले सकते हैं।

सार्वजनिक कम्पनी का कोई भी संचालक, संचालक मंडल की ऐसी सभा की कार्यवाही में भाग नहीं ले सकता जिसमें किसी ऐसे विषय पर बहस हो रही हो जिसमें उसका व्यक्तिगत स्वार्थ हो, वह उस विषय पर मतदान भी नहीं कर सकता। इसके विपरीत निजी कम्पनी का संचालक न केवल ऐसी सभा की कार्यवाही में भाग ले सकता है, बल्कि उसे मतदान करने का भी अधिकार होता है।

12) **विशेषाधिकार (Special Privileges) :** निजी कम्पनी को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं, परन्तु सार्वजनिक कम्पनी को ऐसे कोई विशेषाधिकार नहीं होते।

13) **कोरम (Quorum) :** सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित पांच सदस्य अवश्य होने चाहिए जबकि निजी कम्पनी में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित दो सदस्य ही पर्याप्त हैं।

14) **प्रबन्धकीय पारिश्रमिक (Managerial Remuneration)** सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में कुल प्रबन्धकीय पारिश्रमिक, शुद्ध लाभ के 11 प्रतिशत से अधिक नहीं हो सकता। निजी कम्पनियों पर ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं होता।

बोध प्रश्न क

1) निजी कम्पनी की परिभाषा कीजिए।

....

....

....

....

2) सार्वजनिक कम्पनी क्या होती है?

....

....

....

3) सार्वजनिक एवं निजी कम्पनी के चार अन्तर बताइए।

....

....

....

....

4) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   i) निजी कम्पनी में कम-से-कम .... सदस्य तथा अधिक-से-अधिक .... सदस्य होने चाहिए।

ii) निजी कम्पनी अपने सदस्यों को ············ जारी नहीं कर सकती।

iii) सार्वजनिक कम्पनी को अपने निगमन के छः माह के भीतर ············ सभा बुलानी अनिवार्य है।

iv) व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के बाद ही कोई ············ कम्पनी व्यापार आरम्भ कर सकती है।

v) सार्वजनिक कम्पनी के कम से कम ············ संचालक बारी-बारी से रिटायर होने चाहिए।

5) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत:

i) सार्वजनिक कम्पनी में सदस्यों की न्यूनतम संख्या सात होती है।

ii) सार्वजनिक कम्पनी के लिए शेयर ज़ारी करने से पहले प्रविवरण या प्रविवरण के स्थान पर विवरण जारी करना आवश्यक नहीं है।

iii) सार्वजनिक कम्पनी का पंजीयन अन्तर्नियमों के बिना भी हो सकता है।

iv) शेयर आबंटन करने से पहले निजी कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र अवश्य प्राप्त करना चाहिए।

v) निजी कम्पनी के सीमानियम पर दो सदस्यों के हस्ताक्षर ही पर्याप्त हैं।

vi) कोई कम्पनी निजी कम्पनी इसलिए कहलाती है क्योंकि यह शेयरों की हस्तांतरणीयता पर प्रतिबन्ध लगाती है।

vii) सार्वजनिक कम्पनी में कम-से-कम पांच संचालक होने चाहिए।

viii) निजी कम्पनी के लिए सांविधिक सभा बुलाना आवश्यक नहीं है।

2.5 निजी कम्पनी के विशेषाधिकार (Special Privileges of a Private Limited Company)

सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में आम जनता का धन कम्पनी में लगा होता है, अतः उनके हितों की रक्षा करना अधिक आवश्यक है, इसीलिए कड़े नियम बनाए गए हैं। परन्तु निजी कम्पनी की स्थिति में कम्पनी की सदस्यता प्रायः प्रवर्तकों, उनके मित्रों एवं रिश्तेदारों तक ही सीमित होती है। निजी कम्पनी बहुत ही सीमित संख्या में सदस्यों से पूंजी एकत्रित करती है। आम जनता की ऐसी कम्पनियों में कोई विशेष रुचि नहीं होती। अतः कम्पनी अधिनियम के कई प्रावधान निजी कम्पनियों पर लागू नहीं होते हैं इस प्रकार निजी कम्पनी को कुछ छूटें या विशेषाधिकार प्रदान किए गये हैं। जब निजी कम्पनी किसी कारणवश निजी कम्पनी नहीं रहती, तब उसे प्राप्त ये विशेषाधिकार समाप्त हो जाते हैं।

समस्त निजी कम्पनियों को निम्नलिखित छूटें या विशेषाधिकार उपलब्ध हैं:

1) **सदस्य संख्या:** केवल दो सदस्यों द्वारा निजी कम्पनी का निर्माण किया जा सकता है।

2) **व्यापार आरम्भ करना:** निजी कम्पनी निगमन के पश्चात् तुरन्त व्यापार आरम्भ कर सकती है।

3) **न्यूनतम अभिदान राशि:** निजी कम्पनी न्यूनतम अभिदान राशि प्राप्त होने की प्रतीक्षा किए बिना ही शेयरों का आबंटन कर सकती है।

4) **प्रविवरण:** शेयरों के आबंटन से पहले, निजी कम्पनी को प्रविवरण या प्रविवरण के स्थान पर विवरण ज़ारी करने अथवा उसे रजिस्ट्रार के पास फाइल करने की आवश्यकता नहीं होती।

5) **शेयरों को क्रय करने के लिए सहायता देना:** निजी कम्पनी अपने भावी सदस्य या सदस्यों को अपने ही शेयर खरीदने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान कर सकती है।

6) **नये शेयर जारी करना:** निजी कम्पनी को नये शेयर विद्यमान शेयरधारियों को ज़ारी करना आवश्यक नहीं है अर्थात् वह नये शेयर अन्य व्यक्तियों को भी ज़ारी कर सकती है।

7) **सांविधिक सभा एवं रिपोर्ट:** निजी कम्पनी को न तो सांविधिक सभा बुलानी पड़ती है और न ही सांविधिक रिपोर्ट तैयार करनी तथा रजिस्ट्रार के पास उसे भेजनी पड़ती है।

8) **संचालकों सम्बंधी प्रावधान:** निजी कम्पनी में केवल दो संचालकों का होना पर्याप्त है। उन्हें संचालक के रूप में कार्य करने सम्बन्धी अपनी सहमति रजिस्ट्रार के पास नहीं भेजनी पड़ती तथा उन्हें योग्यता शेयर रखना भी आवश्यक नहीं है।

9) **कोरम:** जब तक अन्तर्नियम में इसके बारे में कोई विपरीत प्रावधान नहीं हो, निजी कम्पनी के शेयरधारियों की साधारण सभा में दो सदस्यों के व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने से कोरम पूरा माना जाता है अर्थात् सभा की कार्यवाही की जा सकती है।

10) **मतदान की मांग:** यदि निजी कम्पनी की किसी बैठक में किसी प्रस्ताव पर चर्चा हो रही है तथा उस सभा में सात या उससे कम सदस्य व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हैं तो व्यक्तिगत रूप से या प्रॉक्सी द्वारा उपस्थित एक सदस्य मतदान की मांग कर सकता है। यदि सभा में सात सदस्यों से अधिक सदस्य उपस्थित हैं, तो दो सदस्यों द्वारा मतदान की मांग की जा सकती है।

11) **प्रबन्धकीय पारिश्रमिक:** निजी कम्पनी पर प्रबन्धकीय पारिश्रमिक की 11 प्रतिशत की अधिकतम सीमा लागू नहीं होती।

(31)(1)

2.6 स्वतन्त्र निजी कम्पनी के विशेषाधिकार (Exemptions Available to an Independent Private Company)

उपर्युक्त 2.5 में जिन विशेषाधिकारों का वर्णन किया गया है, वे प्रत्येक निजी कम्पनी को उपलब्ध होते हैं, चाहे यह निजी कम्पनी किसी सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित (subsidiary) कम्पनी हो, या वह 'सार्वजनिक कम्पनी समझी' जा सकती हो (आगे 2.9 में वर्णन किया गया है)। परन्तु ऐसी कम्पनियों को कई ऐसे विशेषाधिकार या छूटें प्राप्त नहीं हैं जो कि एक स्वतन्त्र निजी कम्पनी को उपलब्ध होती हैं। स्वतन्त्र निजी कम्पनी को निम्नलिखित अतिरिक्त विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं:

1) **शेयरों के प्रकार:** स्वतन्त्र निजी कम्पनी किसी भी प्रकार के शेयर ज़ारी कर सकती है और उसके लिए वह जैसा उचित समझे मनचाहा मताधिकार निश्चित कर सकती है। निजी कम्पनी शेयरों के साथ असमानुपातिक (disproportionate) मताधिकार भी प्रदान कर सकती है।

2) **साधारण सभा:** निजी कम्पनी, यदि चाहे तो, साधारण सभा सम्बन्धी कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों को स्वयं पर लागू होने से बच सकती है। यह अन्तर्नियमों में आवश्यक प्रावधान करके, साधारण सभाओं से सम्बन्धित नियम अपने लिए बना सकती है। ये प्रावधान सभा की सूचना, कोरम, सभापति, प्रॉक्सी, मतदान आदि के सम्बन्ध में हो सकते हैं।

3) **प्रबन्धकीय पारिश्रमिक:** स्वतन्त्र निजी कम्पनियों के संचालकों पर कम्पनी अधिनियम के प्रबन्धकीय पारिश्रमिक सीमित करने से सम्बन्धित प्रावधान लागू नहीं होते हैं तथा संचालकों के पारिश्रमिक में वृद्धि करने के लिए इसे केन्द्र सरकार की अनुमति लेने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती।

4) **फर्म या निगमित निकाय का लाभ के पद पर नियुक्ति:** किसी फर्म या निगमित निकाय को कम्पनी में किसी लाभ के पद पर नियुक्त करने के सम्बन्ध में प्रावधान स्वतन्त्र निजी कम्पनी पर लागू नहीं होते हैं।

5) **संचालकों की संख्या में वृद्धि:** सार्वजनिक कम्पनी तथा इसकी नियंत्रित निजी कम्पनी यदि अन्तर्नियम में निर्दिष्ट संचालकों की अधिकतम संख्या में वृद्धि करना चाहती है, तो उसे ऐसी वृद्धि करने से पहले केन्द्र सरकार की अनुमति प्राप्त करनी होगी। परन्तु स्वतन्त्र निजी कम्पनी को ऐसी कोई अनुमति लेना आवश्यक नहीं है।

6) **आकस्मिक रिक्त स्थानों की पूर्ति:** संचालक मंडल में आकस्मिक रिक्त स्थान को भरने के सम्बन्ध में कम्पनी अधिनियम के प्रावधान स्वतन्त्र निजी कम्पनी पर लागू नहीं होते।

7) **संचालकों की अयोग्यताएं:** स्वतन्त्र निजी कम्पनी अपने अन्तर्नियम में संचालकों की अयोग्यताओं के संबंध में विशेष आधार बना सकती है।

8) **योग्यता शेयर:** सार्वजनिक कम्पनियों तथा सार्वजनिक कम्पनियों के नियमित कम्पनियों के संचालकों को अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, संचालक के पद पर नियुक्त होने के छः माह के भीतर योग्यता शेयर प्राप्त कर लेने चाहिए। यह प्रावधान तथा योग्यता शेयर की अधिकतम राशि (5,000 रु.) सम्बन्धित नियम स्वतन्त्र निजी कम्पनी पर लागू नहीं होते।

9) **कम्पनियों की संख्या :** एक व्यक्ति कितनी भी स्वतन्त्र निजी कम्पनियों का संचालक हो सकता है। कम्पनी अधिनियम का वह नियम जिसके अनुसार एक संचालक 20 कम्पनियों से अधिक का संचालक नहीं बन सकता, स्वतन्त्र निजी कम्पनी पर लागू नहीं होता।

10) **ऋण सम्बन्धी प्रतिबन्ध :** कम्पनी अधिनियम के वे प्रावधान जिनके अनुसार कम्पनी के संचालकों को ऋण देने या उनके द्वारा लिए गए ऋणों की गारंटी देने या उनके लिए प्रतिभूति देने के सम्बन्ध में प्रतिबन्ध, स्वतन्त्र निजी कम्पनी पर लागू नहीं होते अर्थात् निजी कम्पनी संचालकों को ऋण दे सकती है, उनके ऋण की गारंटी दे सकती है।

11) **अन्तर्कम्पनी ऋण (Inter Company Loans) :** स्वतन्त्र निजी कम्पनी अपने ही ग्रुप की अन्य कम्पनियों को ऋण आदि प्रदान कर सकती है।

12) **अन्तर्नियम शेयरों का क्रय (Inter Corporate Purchase of Shares) :** किसी कम्पनी द्वारा उसी प्रबन्ध के अधीन कम्पनियों के शेयर खरीदने से सम्बन्धित प्रावधान स्वतन्त्र निजी कम्पनी पर लागू नहीं होते हैं।

13) **संचालक मंडल सम्बन्धित केन्द्र सरकार के अधिकार :** कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत, केन्द्र सरकार को यह अधिकार है कि वह संचालक मंडल में किए जाने वाले ऐसे परिवर्तन को रोक दे जो कम्पनी के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला हो। स्वतन्त्र निजी कम्पनियों पर यह प्रावधान लागू नहीं होता है।

इस सम्बन्ध में आपको यह याद रखना चाहिए कि उपर्युक्त छूटें या विशेषाधिकार स्वतन्त्र निजी कम्पनी को केवल उस समय तक ही उपलब्ध होते हैं जब तक वह इस प्रकार स्वतन्त्र निजी कम्पनी बनी रहती है। जैसे ही कोई निजी कम्पनी अपने अन्तर्नियम में दिए गये तीन प्रतिबन्धों में से किसी का भी पालन करने में त्रुटि करती है अथवा वह किसी सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी बन जाती है, वैसे ही उपर्युक्त विशेषाधिकार समाप्त हो जाते हैं।

बोध प्रश्न ख

1) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत:

   i) निजी कम्पनी में कम-से-कम तीन संचालक अवश्य होने चाहिए।

   ii) निजी कम्पनी के शेयरों का आबंटन करने से पांच सप्ताह पहले रजिस्ट्रार के पास प्रविवरण की प्रति फाइल करना आवश्यक होता है।

   iii) निजी कम्पनी निगमन के पश्चात् तुरन्त व्यापार आरम्भ कर सकती है।

   iv) स्वतन्त्र निजी कम्पनी अपने संचालकों को दिए जाने वाले प्रबन्धकीय पारिश्रमिक की राशि पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाती।

   v) निजी कम्पनी केवल ईक्विटी तथा पूर्वाधिकारी शेयर ही ज़ारी कर सकती है।

2) सबसे उपयुक्त उत्तर बताइए:

   क) निजी कम्पनी शेयरों का आबंटन कर सकती है

      i) प्रविवरण फाइल करने के पांच सप्ताह के भीतर,

      ii) प्रविवरण के स्थान पर विवरण फाइल करने के तीन दिन के भीतर,

      iii) प्रविवरण या उसके स्थान पर विवरण ज़ारी किए बिना।

   ख) संचालक मंडल में परिवर्तन को रोकने के सम्बन्ध में केन्द्र सरकार के अधिकारों से सम्बन्धित प्रावधान किस पर लागू नहीं होते:

      i) सार्वजनिक कम्पनी,

      ii) ऐसी निजी कम्पनी जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी है,

      iii) स्वतन्त्र निजी कम्पनी।

2.7 निजी कम्पनी पर प्रतिबन्ध (Restrictions on a Private Company)

यद्यपि निजी कम्पनी को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त हैं, परन्तु साथ ही उस पर कुछ प्रतिबन्ध भी लगाए गये हैं। निजी कम्पनी का अर्थ पढ़ते समय आप पढ़ चुके हैं कि निजी कम्पनी के अन्तर्नियम द्वारा उस पर तीन महत्त्वपूर्ण प्रतिबन्ध लगाए जाते हैं। एक बार फिर उन प्रतिबन्धों को दोहरा दें जो निजी कम्पनी के अन्तर्नियम द्वारा लगाए जाते हैं, ये निम्नलिखित हैं:

क) शेयरों के हस्तांतरण पर प्रतिबन्ध,

ख) सदस्यों की अधिकतम संख्या पचास तक सीमित रखना, तथा

ग) शेयरों तथा ऋणपत्रों के खरीदने के लिए जनता को निमन्त्रण देने पर प्रतिबन्ध।

उपर्युक्त प्रतिबन्धों के अतिरिक्त, निजी कम्पनी पर निम्नलिखित प्रतिबन्ध भी लागू होते हैं:

i) निजी कम्पनी वाहक को देय (payable to bearer) शेयर वारंट ज़ारी नहीं कर सकती।

ii) धारा 159 के अन्तर्गत निजी कम्पनी को अपने सदस्यों की वार्षिक सूची तथा कुछ विषयों के बारे में संक्षिप्त विवरण रजिस्ट्रार के पास भेजना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, निजी कम्पनी को इस वार्षिक विवरण के साथ यह प्रमाण-पत्र भी भेजना पड़ता है कि पिछले विवरण को भेजने के पश्चात् कम्पनी ने अपने शेयर या ऋणपत्रों में धन लगाने के लिए जनता को कोई सार्वजनिक निमन्त्रण नहीं दिया है। जब कम्पनी के सदस्यों की संख्या पचास से बढ़ जाती है, तो इस वार्षिक विवरण के साथ कम्पनी को यह भी प्रमाणित करना पड़ता है कि आधिक्य में वे व्यक्ति शामिल हैं जिनको 50 की गणना करते समय शामिल नहीं करना है।

iii) निजी कम्पनी को प्रतिवर्ष रजिस्ट्रार के पास यह भी प्रमाण-पत्र भेजना पड़ता है कि पिछली वार्षिक साधारण सभा के बाद

   क) कम्पनी की प्रदत्त शेयर पूँजी का 25 प्रतिशत या इससे अधिक किसी निगमित निकाय के पास नहीं है।

   ख) किसी सार्वजनिक कम्पनी की प्रदत्त शेयर पूँजी का 25 प्रतिशत या इससे अधिक स्वयं इस निजी कम्पनी के पास नहीं है।

   ग) पिछले लगातार तीन वर्षों के दौरान कम्पनी की औसत वार्षिक विक्रय राशि दस करोड़ रुपये से अधिक नहीं हुई, तथा

   घ) निजी कम्पनी ने कोई भी सार्वजनिक जमा न तो स्वीकार की है और न ही उसका नवीनीकरण किया है।

iv) निजी कम्पनी के सदस्य, कम्पनी की सभा में भाग लेने या मतदान करने के लिए एक से अधिक प्रॉक्सी नियुक्त नहीं कर सकते।

2.8 निजी कम्पनी का सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तन

कोई कम्पनी अपने ऊपर कितने प्रतिबन्ध लगाना चाहती है या कितने विशेषाधिकार प्रदान प्राप्त करना चाहती है, इसके आधार पर वह सार्वजनिक या निजी कम्पनी बनती है। निगमन के पश्चात्, निजी कम्पनी अपनी इच्छा से किसी भी समय सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित हो सकती है या धारा 3 (1) (iii) में बताए गए प्रतिबन्धों का पालन न करने पर वह सार्वजनिक कम्पनी बन जाती है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य परिस्थितियां भी हैं जब धारा 3 (1) (iii) के प्रतिबन्धों का पालन करने पर भी कानून के प्रवर्तन के द्वारा निजी कम्पनी को सार्वजनिक कम्पनी मान लिया जाता है। आइए अब हम उन विधियों का वर्णन करते हैं जिनसे अपनी इच्छा से या त्रुटि करने पर, निजी कम्पनी, सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित हो जाती है।

अपनी इच्छा से परिवर्तन: कोई निजी कम्पनी स्वेच्छा से सार्वजनिक कम्पनी बन सकती है। इस प्रकार के परिवर्तनों की विधि कम्पनी अधिनियम की धारा 44 में बताई गयी है। यह विधि इस प्रकार है:

i) कम्पनी को अपने संचालक मंडल की सभा बुलानी चाहिए और उस सभा में कम्पनी को सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित करने के प्रस्ताव पर विचार करके, एक प्रस्ताव पास करना चाहिए।

ii) संचालक मंडल के निर्णय के अनुसार कम्पनी को सदस्यों की साधारण सभा बुलानी चाहिए जिसमें अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने के सम्बन्ध में विशेष प्रस्ताव पास करना चाहिए। अन्तर्नियमों में इस प्रकार से परिवर्तन किया जाना चाहिए कि अब उनमें धारा 3 (1) (iii) के प्रतिबन्ध न रहें तथा उनमें ऐसा कोई भी प्रावधान नहीं रहना चाहिए जो सार्वजनिक कम्पनी की आवश्यकताओं के प्रतिकूल हो। कम्पनी के नाम में भी परिवर्तन करना चाहिए, नाम के अन्त में 'निजी' शब्द को हटा दिया जाना चाहिए।

iii) साधारण सभा की बैठक, जिसमें अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने का विशेष प्रस्ताव पास किया गया था, की तारीख से 30 दिन के भीतर कम्पनी को रजिस्ट्रार के पास निम्नलिखित दस्तावेज़ फाइल कर देना चाहिएं:

क) अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने वाले विशेष प्रस्ताव की एक प्रति,

ख) परिवर्तित अन्तर्नियम की एक प्रति, तथा

ग) प्रविवरण की एक प्रति जिसमें कम्पनी अधिनियम की अनुसूची II के भाग I व II में दी गई विषय-सामग्री या निर्धारित फार्म में प्रविवरण के स्थान पर विवरण फाइल करना चाहिए।

iv) यदि निजी कम्पनी के सदस्यों की संख्या सात से कम है, तो उन्हें यह बढ़ाकर सात करनी चाहिए। इसी प्रकार संचालकों की संख्या को बढ़ाकर कम-से-कम तीन कर देना चाहिए।

v) विशेष प्रस्ताव की प्रति तथा प्रविवरण या उसके स्थान पर विवरण की एक-एक प्रति रजिस्ट्रार के पास फाइल करने के पश्चात् कम्पनी को रजिस्ट्रार से एक नया निगमन प्रमाण-पत्र ज़ारी करने के लिए आवेदन करना चाहिए। इस प्रकार के परिवर्तन से तुरन्त पहले प्रायः कम्पनी प्रबन्धकीय व्यक्तियों के साथ नये अनुबन्ध करती है।

परिवर्तन सम्बन्धी विशेष प्रस्ताव पास करने की तारीख से वह कम्पनी सार्वजनिक कम्पनी बन जाती है। परन्तु, कम्पनी के नाम में परिवर्तन केवल तभी से माना जाता है जब नया निगमन प्रमाण-पत्र ज़ारी कर दिया जाता है। यहां यह ध्यान रहें कि इस प्रकार के परिवर्तन से किसी नई कम्पनी का जन्म नहीं होता है तथा इस प्रकार के परिवर्तन से कम्पनी के कानूनी अस्तित्व में भी कोई परिवर्तन नहीं होता है जो पहले जैसा ही बना रहता है। इस परिवर्तन से कम्पनी का दायित्व किसी प्रकार से समाप्त नहीं हो जाता अर्थात् उसका दायित्व पहले जैसा ही रहता है।

चूक (default) के कारण परिवर्तन: आप पढ़ चुके हैं कि निजी कम्पनी के अन्तर्नियम इस कम्पनी पर कुछ प्रतिबन्ध लगाते हैं। यदि कोई निजी कम्पनी धारा 3 (1) (iii) के प्रावधानों (तीन प्रतिबन्धों) का पालन करने में किसी प्रकार की चूक करती है, तो वह निजी कम्पनी नहीं रह जाती बल्कि स्वतः ही सार्वजनिक कम्पनी बन जाती है तथा निजी कम्पनी के विशेषाधिकार भी समाप्त हो जाते हैं। परिवर्तन के बाद उस पर सार्वजनिक कम्पनी के सभी प्रावधान ऐसे लागू हो जाएंगे जैसे कि वह सार्वजनिक कम्पनी ही थी। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वह इस बात से सन्तुष्ट हो जाए कि धारा 3 (1) (iii) के प्रावधानों का पालन करने में हुई चूक आकस्मिक मात्र थी यानि स्वेच्छापूर्वक नहीं थी, तो वह उसे छूट दे सकता है अर्थात् उसे सार्वजनिक माने जाने से छूट दे सकता है।

निजी कम्पनी को सार्वजनिक कम्पनी मान लेना (Deemed to be Public Company): भारतीय कंम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत निजी कम्पनियों को मुख्यतः इस आधार पर कुछ विशेषाधिकार दिए गए हैं कि वे कुछ व्यक्तियों की ही निगमित निकाय हैं जिसमें केवल कुछ व्यक्तियों का ही धन लगा हुआ होता है। क्योंकि ऐसी कम्पनियों में आम जनता का धन नहीं लगा होता। इसलिए कानून निजी कम्पनी के मामले में इतने कड़े अंकुश नहीं लगाता जितने कि सार्वजनिक कम्पनी पर लगाए जाते हैं क्योंकि वहां जनता का धन लगा हुआ होता है।

परन्तु ऐसा सम्भव है कि कुछ समय के पश्चात्, निजी कम्पनी अपने उद्यम तथा निवेश के बल पर व्यापार का बहुत अधिक विस्तार कर ले तथा वास्तव में वह कुछ सार्वजनिक कम्पनियों पर नियन्त्रण करने की स्थिति में हो जाए। कई बार अन्य निजी तथा सार्वजनिक कंम्पनियां ऐसी निजी कम्पनी में अपना धन लगातीं हैं। इस प्रकार, अप्रत्यक्ष रूप से जनता का धन इन निजी कम्पनियों में लगाया जाता है। अतः इन कम्पनियों को निजी कम्पनियों को उपलब्ध विशेषाधिकार देना उचित नहीं है। ऐसी संभावित परिस्थितियों से निपटने के लिए कम्पनी अधिनियम में विशेष व्यवस्था की गई है। इस सम्बन्ध में मुख्यतः धारा 43-A में प्रावधान किया गया है। **धारा 43-A में प्रावधान किया गया है कि यदि कोई निजी कम्पनी बहुत बड़े पैमाने पर कार्य करती है या किसी भी रूप में जनता के धन का उपयोग करती है, तो उसे सार्वजनिक कम्पनी माना जाता**

है। तब कम्पनी अधिनियम के सार्वजनिक कम्पनियों पर लागू होने वाले सभी प्रावधान इस प्रकार की कम्पनी पर भी लागू हो जाते हैं। परन्तु ऐसी कम्पनी यदि चाहे तो वह अपने अन्तर्नियमों में धारा 3 (1) (iii) के तीन प्रतिबन्ध बने रहने दे सकती है तथा इसके सदस्यों की संख्या सात से कम रह सकती है। कम्पनी अधिनियम की धारा 43-A के अनुसार निम्नलिखित परिस्थितियों में निजी कम्पनी को सार्वजनिक कम्पनी मान लिया जाता है :

i) जब किसी निजी कम्पनी की प्रदत्त शेयर पूँजी का 25 प्रतिशत या इससे अधिक भाग किसी एक या अधिक निगमित निकायों के पास होता है तब निजी कम्पनी को उसी तारीख से, जिस तारीख पर उपर्युक्त प्रतिशत ऐसी निगमित निकायों के पास होता है, सार्वजनिक कम्पनी माना जाएगा। प्रदत्त पूँजी के प्रतिशत की गणना करते समय, बैंक के पास ट्रस्टी के रूप में या किसी मृत सदस्य के निष्पादक (executor) के रूप में रखे गये शेयरों की गणना नहीं की जाती। धारा 43-A के स्पष्टीकरण के अनुसार 'निगमित निकाय' से आशय ऐसी सार्वजनिक या निजी कम्पनियों से है जो इस धारा के अन्तर्गत सार्वजनिक कम्पनी बन गई हैं।

ii) जब किसी निजी कम्पनी की निरन्तर पिछले तीन वर्षों के दौरान "औसत वार्षिक विक्रय राशि" दस करोड़ रुपये या इससे अधिक है तो ऐसी कम्पनी तीसरे वित्तीय वर्ष के अन्तिम दिन से तीन माह बाद सार्वजनिक कम्पनी मानी जाएगी। 'विक्रय राशि'. शब्द से अर्थ किसी वित्तीय वर्ष के दौरान कम्पनी द्वारा विक्रय किए गए माल या प्रदान की गई सेवाओं के मूल्य के योग से है।

iii) जब कोई निजी कम्पनी, किसी सार्वजनिक कम्पनी की प्रदत्त शेयर पूँजी का 25 प्रतिशत या अधिक भाग पर अपना अधिकार कर लेती है, तो वह उस तारीख से सार्वजनिक कम्पनी बन जाएगी जिस तारीख को निजी कम्पनी को उक्त प्रतिशत पहली बार प्राप्त हुआ।

iv) जब कोई निजी कम्पनी अपने सदस्यों, संचालकों या रिश्तेदारों के अतिरिक्त जनता से जमा के रूप में धन आमन्त्रित करती है, स्वीकार करती है या उनका नवीनीकरण करती है, तब भी वह सार्वजनिक कम्पनी बन जाएगी। 1988 से अधिनियम में एक नई-उपधारा (1-C) धारा 43-A में जोड़ी गई है। इसके अनुसार यदि विज्ञापन द्वारा निमन्त्रण दे कर कोई निजी कम्पनी जनता से धन जमा के रूप में स्वीकार या नवीनीकरण करती है, तो ऐसी निजी कम्पनी जमा स्वीकार करने या नवीनीकरण की तारीख से सार्वजनिक कम्पनी बन जाएगी। उस तारीख के पश्चात् धारा 43-A के सभी नियम ऐसी मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी पर लागू होंगे।

ऐसी निजी कम्पनी जो धारा 43-A के प्रावधानों के अनुसार सार्वजनिक कम्पनी बनती है, उसे "मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी" कहते हैं। ऐसी कम्पनी केवल दो संचालकों तथा सात सदस्यों से कम से व्यापार करती रह सकती है। ऐसी मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी तब तक सार्वजनिक कम्पनी रहती है जब तक कि वह अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार तथा केन्द्र सरकार की अनुमति से, फिर से निजी कम्पनी नहीं बन जाती।

धारा 43-A में यह भी व्यवस्था की गई है कि जब कभी भी कोई निजी कम्पनी इस धारा के अन्तर्गत मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी बनती है तो तीन माह के भीतर उसे इस आशय की सूचना रजिस्ट्रार को देनी चाहिए। इस प्रकार की सूचना प्राप्त होने पर रजिस्ट्रार कम्पनी के नाम से 'प्राइवेट' शब्द काट देता है। वह कम्पनी को दिए गये निगमन प्रमाण-पत्र तथा सीमानियम में भी आवश्यक परिवर्तन कर देता है। यदि कम्पनी इस प्रावधान का पालन करने में त्रुटि करती है तो कम्पनी और उसके प्रत्येक दोषी अधिकारी पर त्रुटि के प्रत्येक दिन के लिए 500 रु. तक जुर्माना किया जा सकता है।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि धारा 43-A एक विशेष प्रकार की सार्वजनिक कम्पनी (मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी) का निर्माण करती है। इस प्रकार की सार्वजनिक कम्पनी की विशेषताएं ये हैं कि इसके सदस्यों की संख्या सात से कम हो सकती है तथा इसके अन्तर्नियमों में धारा 3 (1) (iii) के प्रतिबन्ध बने रह सकते हैं। यदि केन्द्र सरकार इस सम्बन्ध में आदेश दे, तो ऐसी कम्पनी द्वारा रजिस्ट्रार को भेजे गये लाभ-हानि खाते सार्वजनिक निरीक्षण के लिए उपलब्ध नहीं होते। अन्य निजी कम्पनियों की तरह, मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी में भी दो संचालक हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, जब तक ऐसी कम्पनी जनता से धन एकत्रित नहीं करती, तब उसे रजिस्ट्रार के पास प्रविवरण के स्थान पर विवरण फाइल करना भी आवश्यक नहीं होता। अन्य सब बातों के लिए 'मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी' को सार्वजनिक कम्पनी की ही तरह माना जाता है।

2.9 सार्वजनिक कम्पनी का निजी कम्पनी में परिवर्तन

आप पढ़ चुके हैं कि कुछ परिस्थितियों में एक निजी कम्पनी सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित हो जाती है। इसी तरह, एक सार्वजनिक कम्पनी भी निजी कम्पनी में परिवर्तित हो सकती है। यद्यपि कानून ने सार्वजनिक कम्पनी को निजी कम्पनी में परिवर्तित करने की कोई सुनिश्चित विधि निर्धारित नहीं की है, परन्तु यह इस प्रकार के परिवर्तन पर कोई प्रतिबन्ध भी नहीं लगाता। कोई सार्वजनिक कम्पनी अपने अन्तर्नियमों में इस प्रकार परिवर्तन करके कि धारा 3 (1) (iii) के तीनों प्रतिबन्ध शामिल हो जाएं, अपने आपको निजी कम्पनी में परिवर्तित कर सकती है। अन्तर्नियम में इस प्रकार का परिवर्तन करने के लिए कम्पनी की साधारण सभा में विशेष प्रस्ताव पास किया जाना चाहिए। कम्पनी के नाम में परिवर्तन करने के लिए भी ऐसे प्रस्ताव की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार, निजी कम्पनी से सम्बन्धित नियमों को भी अन्तर्नियम में शामिल करने के लिए आवश्यक परिवर्तन करने चाहिए।

अधिनियम की धारा 31 में स्पष्ट रूप से व्यवस्था की गई है कि सार्वजनिक कम्पनी को निजी कम्पनी में परिवर्तित करने के सम्बन्ध में अन्तर्नियमों में किया जाने वाला कोई भी परिवर्तन केवल तभी प्रभावशाली होगा जब केन्द्र सरकार की उस पर अनुमति प्राप्त हो जाए। जब अन्तर्नियम में परिवर्तन सम्बन्धी विशेष प्रस्ताव को केन्द्र सरकार की अनुमति मिल जाती है, तो अनुमति प्राप्त होने की तारीख के एक माह के भीतर परिवर्तित अन्तर्नियम की छपी हुई एक प्रति रजिस्ट्रार के पास फाइल कर देनी चाहिए।

सार्वजनिक कम्पनी को इस प्रकार से निजी कम्पनी में परिवर्तित करने पर इसे अपने सदस्यों की संख्या को कम करना होगा तथा अपने नाम के अन्त में 'प्राइवेट' शब्द जोड़ना होगा। जब इस प्रकार से सार्वजनिक कम्पनी का यथाविधि निजी कम्पनी में परिवर्तन हो जाता है तो इसे निजी कम्पनी को उपलब्ध सभी विशेषाधिकार प्राप्त हो जाते हैं।

बोध प्रश्न ग

1) निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर पर (√) का चिह्न लगाइए:

   क) मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी ऐसी कम्पनी होती है

      i) ऐसी निजी कम्पनी जो कम्पनी अधिनियम की धारा 3 (1) (iii) में निर्धारित प्रतिबन्धों का पालन नहीं करती है।

      ii) ऐसी निजी कम्पनी जो स्वेच्छा से सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित हो जाती है।

      iii) ऐसी निजी कम्पनी जो धारा 43-A के कारण सार्वजनिक कम्पनी बन जाती है।

      iv) उपर्युक्त में से कोई भी नहीं।

   ख) निजी कम्पनी के सदस्य

      i) कम्पनी की सभा में भाग लेने व मतदान करने के लिए प्रॉक्सी को नहीं भेज सकते।

      ii) कम्पनी की सभा में भाग लेने व मतदान करने के लिए वे जितने चाहे उतने प्रॉक्सी भेज सकते हैं।

      iii) कम्पनी की सभा में भाग लेने व मतदान करने के लिए केवल एक प्रॉक्सी भेज सकते हैं।

   ग) निजी कम्पनी का स्वेच्छा से सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तन होने पर

      i) कम्पनी के दो संचालक तथा सात से कम सदस्य हो सकते हैं।

      ii) कम्पनी को अपने सदस्यों की संख्या कम-से-कम सात तक बढ़ानी चाहिए परन्तु इसके दो संचालक ही रह सकते हैं।

      iii) कम्पनी को संचालकों की संख्या बढ़ाकर तीन करनी चाहिए परन्तु इसके सदस्य सात से कम हो सकते हैं।

2) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

   i) सार्वजनिक कम्पनी को निजी कम्पनी में परिवर्तित करने के लिए अधिनियम में कोई विशिष्ट विधि निर्धारित नहीं की गई है।

ii) निजी कम्पनी को सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित करने के लिए अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने के लिए विशेष प्रस्ताव साधारण सभा में ही पास किया जा सकता है।

iii) अन्तर्नियम में परिवर्तन करने सम्बन्धी विशेष प्रस्ताव की एक प्रति प्रस्ताव पास करने के तीन माह के भीतर रजिस्ट्रार के पास भेजनी चाहिए।

iv) स्वेच्छा से परिवर्तन की स्थिति में, निजी कम्पनी, सार्वजनिक कम्पनी उस तारीख को बनती है जिस दिन नया निगमन प्रमाण-पत्र जारी किया जाता है।

v) यदि किसी निजी कम्पनी की प्रदत्त शेयर पूँजी का 30 प्रतिशत भाग किसी सार्वजनिक कम्पनी के पास है, तो यह सार्वजनिक कम्पनी बन जाती है।

vi) जैसे ही कोई निजी कम्पनी, सार्वजनिक कम्पनी बन जाती है, उसे अपने सदस्यों की संख्या बढ़ाकर कम-से-कम सात अवश्य करनी होगी।

vii) सार्वजनिक कम्पनी बनने के तीन माह के भीतर, निजी कम्पनी को इस बात की सूचना रजिस्ट्रार को अवश्य दे देनी चाहिए।

viii) मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी धारा 3 (1) (iii) के प्रतिबन्धों को बनाए रख सकती है।

ix) मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी को परिवर्तन के बाद नाम बदलना आवश्यक नहीं होता।

x) निजी कम्पनी का सार्वजनिक कम्पनी में और सार्वजनिक कम्पनी का निजी कम्पनी में परिवर्तन होने से कम्पनी के विधिक अस्तित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

2.10 सारांश

सामान्य जनता के दृष्टिकोण से तथा सदस्यों की संख्या के आधार पर कम्पनी सार्वजनिक या निजी हो सकती है। निजी कम्पनी ऐसी कम्पनी होती है जो अपने अन्तर्नियम द्वारा सदस्यों के शेयर हस्तांतरण करने के अधिकार पर प्रतिबन्ध लगाती है, सदस्यों की अधिकतम संख्या 50 तक सीमित करती है तथा कम्पनी के शेयरों या ऋण-पत्रों में धन लगाने के लिए जनता को निमन्त्रित करने पर प्रतिबन्ध लगाती है।

अधिनियम ने निजी कम्पनियों को कुछ विशेषाधिकार प्रदान किए हैं। निजी कम्पनी पर उतना कड़ा कानूनी नियन्त्रण नहीं होता जितना कि सार्वजनिक कम्पनियों पर होता है। स्वतन्त्र निजी कम्पनियों को कुछ अतिरिक्त विशेषाधिकार प्रदान किए गये हैं। निजी कम्पनी इन विशेषाधिकारों का लाभ तब नहीं उठा सकती जब वह किसी सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी होती है या वह सार्वजनिक कम्पनी मानी जाती है।

एक कम्पनी जो आरम्भ में निजी कम्पनी के रूप में पंजीकृत हुई थी, बाद में सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित हो सकती है। ऐसा परिवर्तन स्वेच्छा से, चूक करने पर या कानूनी प्रक्रिया से हो सकता है। जब किसी निजी कम्पनी का धारा 43-A के अन्तर्गत सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तन होता है, तो उसे 'मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी' कहते हैं। जब निजी कम्पनी, सार्वजनिक कम्पनी बन जाती है तो इसके विशेषाधिकार समाप्त हो जाते हैं।

जिस प्रकार एक निजी कम्पनी, सार्वजनिक कम्पनी बन सकती है, उसी तरह कोई सार्वजनिक कम्पनी अपने अन्तर्नियमों में परिवर्तन करके और केन्द्र सरकार की अनुमति से निजी कम्पनी बन सकती है। परन्तु निजी कम्पनी से सार्वजनिक कम्पनी और सार्वजनिक कम्पनी से निजी कम्पनी में परिवर्तन होने से कम्पनी के विधिक अस्तित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

2.11 शब्दावली

निजी कम्पनी (Private Company) : ऐसी कम्पनी, जो अपने अन्तर्नियम द्वारा (क) सदस्यों द्वारा शेयरों के हस्तांतरण पर प्रतिबंध लगाती है (ख) सदस्यों की अधिकतम संख्या 50 तक सीमित करती है तथा (ग) जनता द्वारा कम्पनी के शेयर या ऋण-पत्र लेने पर प्रतिबन्ध लगाती है।

सार्वजनिक कम्पनी (Public Company) : ऐसी कम्पनी जो निजी कम्पनी नहीं है।

शेयर (Share) : कम्पनी की कुल पूँजी जिन इकाईयों में बंटी होती है।

शेयर वारंट (Share Warrant) : ऐसा दस्तावेज़ जिसका वाहक वारंट में निर्दिष्ट शेयरों का स्वामी होता है।

कोरम (Quorum) : सभा की कार्यवाही चलाने के लिए उपस्थित सदस्यों की न्यूनतम संख्या।

प्रॉक्सी (Proxy) : ऐसा अधिकार जिसके अनुसार कोई व्यक्ति सभा में किसी दूसरे का प्रतिनिधित्व तथा उसकी ओर से मतदान कर सकता है।

2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 4) i) दो, पचास ii) शेयर वारंट iii) सांविधिक iv) सार्वजनिक v) दो तिहाई

5) i) सही ii) गलत iii) सही iv) गलत v) सही vi) सही vii) गलत viii) सही

ख 1) i) गलत ii) गलत iii) सही iv) सही v) गलत

2) क) iii ख) iii

ग 1) क) iii ख) iii ग) i

2) i) सही ii) सही iii) गलत iv) गलत v) सही vi) गलत vii) सही viii) सही ix) गलत x) सही।

2.13 स्वपरख प्रश्न

1) निजी कम्पनी की परिभाषा कीजिए। निजी कम्पनी तथा सार्वजनिक कम्पनी में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
2) निजी कम्पनी को उपलब्ध विशेषाधिकारों की व्याख्या कीजिए। कानून में विशेषाधिकार निजी कम्पनी को क्यों प्रदान करता है?
3) निजी कम्पनी पर कानून द्वारा लगाए गए प्रतिवन्धों को सूचीवद्ध कीजिए।
4) निजी कम्पनी को सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित करने की विधि वताइए।
5) सार्वजनिक कम्पनी की परिभाषा कीजिए। सार्वजनिक कम्पनी को निजी कम्पनी में परिवर्तित करने की विधि का वर्णन कीजिए।
6) कम्पनी अधिनियम की धारा 43-A एक नई प्रकार की कम्पनी मानी जाने वाली सार्वजनिक कम्पनी का निर्माण करती है। निजी कम्पनी किन परिस्थितियों में सार्वजनिक कम्पनी मानी जाती है? वर्णन कीजिए।
7) निजी कम्पनी को प्रविवरण ज़ारी करना आवश्यक नहीं है? क्यों ?

> **नोट :** इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को और अच्छी तरह से समझने में सहायता मिलेगी। उनके उत्तर देने का प्रयास कीजिए। लेकिन अपने उत्तर विश्वविद्यालय को मत भेजिए। ये सिर्फ आपके अपने अभ्यास के लिए दिए गए हैं।

इकाई 3 प्रवर्तक (PROMOTER)

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 प्रवर्तक : अर्थ एवं महत्त्व
3.3 प्रवर्तकों के कार्य
3.4 प्रवर्तकों की कानूनी स्थिति
3.5 प्रवर्तकों के कर्तव्य
3.6 प्रवर्तकों के दायित्व
3.7 प्रवर्तकों का पारिश्रमिक
3.8 प्रारंभिक अनुबन्धों की स्थिति
3.9 सारांश
3.10 शब्दावली
3.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.12 स्वपरख प्रश्न

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- प्रवर्तक के अर्थ तथा महत्त्व का वर्णन कर सकें
- प्रवर्तक के कार्यों को सूचीबद्ध कर सकें
- प्रवर्तक के कर्तव्यों एवं दायित्वों को गिना सकें
- प्रवर्तकों को देय पारिश्रमिक का वर्णन कर सकें
- आरंभिक अनुबन्धों की स्थिति का वर्णन कर सकें।

3.1 प्रस्तावना

इकाई 1 में आप कम्पनियों के विभिन्न प्रकार के संबंध में पढ़ चुके हैं। कम्पनी के गठन का कार्य एक लम्बी प्रक्रिया है, जिसके विभिन्न चरण होते हैं। कम्पनी के गठन का पहला चरण 'प्रवर्तन' (promotion) होता है। इस चरण में एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह, जिसे प्रवर्तक (promoter) कहते हैं, के द्वारा किसी व्यापार के संचालन के विचार की परिकल्पना की जाती है। कम्पनी का गठन करने के लिए अनेक औपचारिकताओं का पालन करना पड़ता है। प्रवर्तक इन औपचारिकताओं को पूर्ण करके कम्पनी का गठन करते हैं। इस इकाई में आप प्रवर्तकों का अर्थ एवं कार्यों, उनकी कानूनी स्थिति तथा उनके कर्तव्यों के बारे में पढ़ेंगे। अन्त में आप निगमन के पूर्व के अनुबन्धों के विषय में भी पढ़ेंगे।

3.2 प्रवर्तक : अर्थ एवं महत्त्व

आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी कानून के द्वारा निर्मित एक कृत्रिम व्यक्ति होती है। यथाविधि से इसका निगमन होने पर ही इसका जन्म होता है। कम्पनी का गठन करने के लिए विभिन्न प्रकार के दस्तावेज तैयार करने पड़ते हैं तथा अनेक अन्य औपचारिकताएं पूर्ण करनी पड़ती हैं। ये समस्त कार्य प्रवर्तकों के द्वारा किए जाते हैं। जर्सटनबर्ग (Gerstenberg) ने प्रर्वतन की परिभाषा इस प्रकार की है, **व्यावसायिक अवसरों की खोजना, तत्पश्चात् उससे लाभ अर्जित करने के लिए व्यावसायिक इकाई का रूप देने के लिए धन, परिसम्पत्तियां एवं प्रबन्धकीय योग्यता का संगठन करना।** विचार की परिकल्पना करने के पश्चात्, उस व्यवसाय के कमजोर तथा मजबूत पक्षों को जानने के लिए प्रर्वतक विस्तृत जांच-पड़ताल करते हैं, आवश्यक

पूँजी की राशि निर्धारित करते हैं और कार्यकारी व्ययों का अनुमान लगाकर सम्भावित आय का अनुमान लगाते हैं। जब प्रवर्तक विचार की लाभप्रदता के विषय में पूर्णतः सन्तुष्ट हो जाते हैं, तब वे कम्पनी के निगमन के लिए आवश्यक कार्यवाही आरम्भ करते हैं।

कम्पनी अधिनियम में 'प्रवर्तक' शब्द की कहीं भी परिभाषा नहीं की गई है उसमें केवल प्रवर्तकों के दायित्वों का वर्णन किया गया है। विभिन्न न्यायिक निर्णयों ने प्रवर्तक शब्द की परिभाषा की है। **एल.जे. बोवेन के** अनुसार, "प्रवर्तक शब्द कानून का शब्द नहीं है बल्कि व्यवसाय का शब्द है, इस एक शब्द में वे समस्त व्यावसायिक प्रक्रियाएं सम्मिलित होती हैं जिनके द्वारा कम्पनी का निर्माण किया जाता है।"

लार्ड ब्लेकबर्न द्वारा दी गई एक अन्य परिभाषा के अनुसार, "प्रवर्तक शब्द उन व्यक्तियों के लिए प्रयोग किए जाने वाला संक्षिप्त तथा सुविधाजनक शब्द है, जो उस प्रक्रिया को आरम्भ करते हैं जिसके द्वारा वे अधिनियम के अन्तर्गत कम्पनी के निगमन के योग्य होते हैं।"

जस्टिस सी. कॉकबर्न ने प्रवर्तक की व्याख्या इस प्रकार की है, "ऐसा व्यक्ति जो किसी परियोजना से सम्बन्धित कम्पनी का गठन करता है और उसे आरम्भ करता है, और जो इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक कार्यवाही करता है।"

कम्पनी के एक से अधिक प्रवर्तक हो सकते हैं। प्रवर्तक एक व्यक्ति, फर्म, व्यक्तियों का समूह या निगमित निकाय (body corporate) हो सकती है । यहाँ तक कि यदि किसी व्यक्ति ने प्रवर्तन प्रक्रिया में मामूली सा भी भाग लिया हो, तो उसे भी प्रवर्तक माना जाता है। परन्तु यदि किसी व्यक्ति ने सीमानियम के अंत में हस्ताक्षर किये हैं अथवा उसने कम्पनी के गठन से सम्बन्धित व्ययों के लिए धन जुटाया है, तो इतने से ही वह प्रवर्तक नहीं बन जाता है।

इस सम्बन्ध में आपको यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जो कम्पनी के गठन के कार्य से सम्बन्धित है, प्रवर्तक नहीं कहलाता है। उदाहरण के लिए, एक कानूनी सलाहकार (सालिसिटर) को, जो अपने पेशे की स्थिति में प्रस्तावित कम्पनी के लिए आवश्यक दस्तावेज़ तैयार करता है, कानून की दृष्टि में प्रवर्तक नहीं होता है। इसी प्रकार एक इंजीनियर को, जो स्थान का चयन करने में सलाह देता है अथवा मूल्यांकक (valuer) को, अनुमानित खर्च तैयार करने में सहायता देता है, प्रवर्तक नहीं कहा जा सकता। धारा 62 (6) में यह स्पष्ट किया गया है कि पेशेवर व्यक्ति, जैसे कानूनी सलाहकार (सालिसिटर), लेखाकार तथा अन्य विशेषज्ञ, जो अपने पेशे की हैसियत से प्रवर्तकों की सहायता करते हैं, प्रवर्तक नहीं होते हैं।

उपर्युक्त विवरण से आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि प्रवर्तक एक ऐसा व्यक्ति है जो कम्पनी को अस्तित्व में लाने के लिए प्रारंभिक कर्तव्यों का पालन करता है। इस प्रकार, यह निर्णय करने के लिए कि कौन व्यक्ति प्रवर्तक है, हमें यह देखना चाहिए कि क्या वह कम्पनी का गठन करने का इच्छुक है तथा इसके लिए आवश्यक कदम उठाने के लिए तैयार है या नहीं। कोई व्यक्ति किसी कम्पनी का प्रवर्तक है अथवा नहीं, यह एक तथ्य का प्रश्न है एवं स्थिति-विशेष की परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

कम्पनी के गठन कार्य में, प्रवर्तक वास्तव में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सेवाएं प्रदान करते हैं। वे समाज की सेवा करते हैं तथा देश के औद्योगिक विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं। प्रवर्तक को 'धन का जनक' तथा 'आर्थिक मसीहा' कहा जाता है । प्रवर्तक बहुत जोखिमपूर्ण कार्य करते हैं क्योंकि यदि उनकी परिकल्पना गलत निकलती है तो जो भी धन व समय उन्होंने उसमें लगाया है, वे सब व्यर्थ हो जाते हैं।

3.3 प्रवर्तकों के कार्य

आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी के गठन में प्रवर्तक का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। आपने यह भी पढ़ा कि व्यक्ति, संस्था या कम्पनी प्रवर्तक हो सकती है। प्रवर्तक की हैसियत से कम्पनी का निगमन करने तथा इसका कार्य आरम्भ करने के लिए, प्रवर्तक निम्नलिखित कार्य करते हैं:

i) **कम्पनी के गठन की योजना की परिकल्पना:** प्रवर्तक ही सामान्यतः वे पहले व्यक्ति होते हैं जो व्यवसाय करने के विचार की योजना बनाते हैं। वे इस बात की आवश्यक जांच-पड़ताल का कार्य करते हैं कि क्या कम्पनी का गठन सम्भव तथा लाभप्रद होगा? तत्पश्चात्, वे आवश्यक साधनों को संगठित करके अपने विचारों को वास्तविक रूप देने के लिए कम्पनी गठित करते हैं। इस अर्थ में, प्रवर्तक ही कम्पनी के गठन की योजना बनाने वाले पहले व्यक्ति होते हैं।

ii) **परियोजना से जुड़ने के लिए तैयार आवश्यक संख्या में व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त करना :** निजी कम्पनी का गठन करना है अथवा सार्वजनिक कम्पनी का, उसी के अनुसार प्रवर्तक आवश्यक संख्या में व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। यह तो आप पढ़ चुके हैं कि सार्वजनिक कम्पनी के निर्माण के लिए सदस्यों की न्यूनतम संख्या सात तथा निजी कम्पनी की दशा में यह संख्या दो होती है। कम्पनी के स्वरूप के अनुसार, प्रवर्तक प्रारम्भिक सदस्यों की संख्या तय करते हैं।

iii) **कम्पनी के प्रथम निदेशकों के रूप में कार्य करने के लिए सहमत व्यक्तियों को खोजना एवं उनकी सहमति प्राप्त करना :** आप इकाई 1 में पढ़ चुके हैं कि कम्पनी में प्रतिनिधित्व प्रबन्ध प्रणाली का चलन होता है तथा इसका प्रबन्ध ऐसे व्यक्तियों द्वारा किया जाता है जिन्हें संचालक (निदेशक) कहते हैं। साधारणतः कम्पनी के प्रवर्तक ही प्रथम संचालकों की नियुक्ति करते हैं। प्रवर्तक कुछ ऐसे व्यक्तियों की सहमति प्राप्त करते हैं जो उनके विचार में इस कार्य के लिए उपर्युक्त हैं और ऐसे व्यक्तियों को ही प्रस्तावित कम्पनी का प्रथम संचालक नियुक्त किया जाता है।

iv) **कम्पनी के नाम के विषय में निर्णय करना :** कम्पनी के नाम का चयन करने के लिए प्रवर्तकों को कम्पनियों के रजिस्ट्रार से अनुमति प्राप्त करनी पड़ती है। आम तौर से प्रवर्तक कम्पनी के लिए प्राथमिकता के आधार पर तीन नामों का सुझाव देते हैं। नाम का चयन करते समय प्रवर्तकों को यह ध्यान रखना चाहिए कि कम्पनी का प्रस्तावित नाम पहले से ही चल रही किसी कम्पनी के नाम जैसा या उससे मिलता-जुलता न हो।

v) **प्रस्तावित कम्पनी के दस्तावेज तैयार करवाना :** आप अगली इकाई में पढ़ेंगे कि कम्पनी का पंजीयन कराने तथा इसे अस्तित्व में लाने के लिए कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास कुछ आवश्यक दस्तावेज़, जैसे कम्पनी के सीमानियम (Memorandum of Association) एवं अन्तर्नियम (Articles of Association) जमा कराने पड़ते हैं। जैसा कि आप जानते ही हैं कि निगमन से पूर्व कम्पनी का कोई अस्तित्व नहीं होता है इन दस्तावेजों को तैयार करवाने का कार्य भी प्रवर्तक ही करते हैं। कानूनी सहालकारों की सहायता से प्रवर्तक सीमानियम एवं अन्तर्नियम तैयार करने व छपाई कराने का कार्य करते हैं। यदि प्रस्तावित कम्पनी सार्वजनिक कम्पनी है जो समामेलन के बाद अपने शेयर ज़ारी करेगी, तब प्रवर्तकों को प्रविवरण (prospectus) भी तैयार करने व छपाई कराने की व्यवस्था करनी चाहिए।

vi) **कम्पनी के लिए बैंकर, दलाल तथा कानूनी सलाहकारों की नियुक्ति :** कम्पनी के निगमन के लिए अनेक कानूनी औपचारिकताओं का पालन करना पड़ता है। गठन से सम्बन्धित अनेक विषयों के लिए प्रवर्तकों को कानूनी सलाहकारों की सहायता लेनी पड़ती है। अतः कम्पनी के गठन की प्रक्रिया में सहायता प्राप्त करने के लिए वे कानूनी सलाहकार (सालिसिटर) नियुक्त करते हैं।

कम्पनी का गठन किसी व्यवसाय को चलाने के लिए किया जाता है अतः इसे धन के प्रबन्ध का भी कार्य करना होता है। अतः प्रवर्तकों को बैंकर की नियुक्ति अवश्य ही करनी चाहिए जो कि शेयरों के प्रार्थना-पत्र की राशि को प्राप्त करें। यदि प्रस्तावित कम्पनी सार्वजनिक कम्पनी है तो प्रवर्तकों को कम्पनी के प्रथम पूँजी निर्गमन को सफल बनाने के लिए अभिगोपक (underwriters) तथा दलालों की भी नियुक्ति करनी चाहिए।

vii) **परिसम्पत्तियों को प्राप्त करने के लिए प्रारंभिक करार करना :** कम्पनी की फैक्टरी के लिए प्रवर्तकों को उपर्युक्त स्थान को क्रय करना होता है, प्लांट एवं मशीनरी की व्यवस्था करनी होती है तथा महत्वपूर्ण पदों पर कार्य करने के लिए व्यक्तियों की नियुक्तियां भी करनी होती है। कई बार कम्पनी के कारोबार को ठीक से चलाने के लिए किसी चल रहे व्यवसाय की परिसम्पत्तियों को खरीदने का कार्य भी करना पड़ता है। ऐसी परिसम्पत्तियों या व्यवसाय को उचित शर्तों पर खरीदने का कार्य भी प्रवर्तक ही करते हैं।

viii) **विक्रेताओं के साथ प्रारम्भिक अनुबन्ध करना :** कम्पनी के लिए आवश्यक परिसम्पत्तियां खरीदने के लिए प्रवर्तकों को विक्रेताओं से अनुबन्ध करने के लिए शर्तों को तय करने का कार्य भी करना पड़ता है। ऐसे अनुबन्धों को प्रारम्भिक अनुबन्ध कहते हैं। इनके सम्बन्ध में हम इसी इकाई के अन्त में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

ix) **रजिस्ट्रार के पास आवश्यक दस्तावेज़ों को जमा कराने की व्यवस्था करना :** कम्पनी के गठन के लिए प्रवर्तकों को स्टाम्प शुल्क, दस्तावेज़ जमा कराने की फीस तथा अन्य व्ययों का भुगतान करना पड़ता है। प्रवर्तकों को ही इस बात का पूरा-पूरा ध्यान करना पड़ता है कि कम्पनी के गठन से सम्बन्धित समस्त कानूनी औपचारिकताओं का पालन कर दिया गया है।

3.4 प्रवर्तकों की कानूनी स्थिति

आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी के गठन के लिए प्रवर्तक ही उत्तरदायी होते हैं। इस दृष्टि से कम्पनी के गठन कार्य में प्रवर्तकों का स्थान अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है तथा उन्हें व्यापक अधिकार भी प्राप्त होते हैं। परन्तु इस सम्बन्ध में एक दिलचस्प बात यह है कि इस बारे में कहीं भी कोई कानूनी प्रावधान नहीं है।

कम्पनी के प्रवर्तक की कानूनी स्थिति बड़ी विचित्र है। कम्पनी के प्रवर्तकों की कानूनी स्थिति यह है कि वे जिस कम्पनी का प्रवर्तन करते हैं वे उसके न तो एजेंट होते हैं और न ही न्यासी। वे एजेंट इसलिए नहीं होते क्योंकि अभी उनके प्रधान का कोई अस्तित्व नहीं है। यदि आप एजेंसी कानून से सम्बन्धित नियमों का ध्यान करें तो आपको याद होगा कि एजेंसी का वैध अनुबन्ध होने के लिए प्रधान तथा एजेंट, दोनों का ही अस्तित्व होना आवश्यक है। इसी तर्क के आधार पर प्रवर्तकों को कम्पनी का न्यासी **(trustee)** भी नहीं कहा जा सकता।

परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रस्तावित कम्पनी से प्रवर्तकों का कोई कानूनी सम्बन्ध ही नहीं है। प्रवर्तकों की सही कानूनी स्थिति का वर्णन करने के लिए हम यह कह सकते हैं कि कम्पनी तथा उसके प्रवर्तकों का वैश्वासिक (fiduciary) सम्बन्ध होता है। **Erdanger Vs. New Sembrero Phosphate Co.** के मामले में न्यायाधीश **Lord Cairns** ने प्रवर्तक की स्थिति का सही वर्णन इस प्रकार किया है, "कम्पनी के प्रवर्तकों की स्थिति निःसंदेह वैश्वासिक होती है। उनके हाथों में ही कम्पनी का निर्माण है तथा वे ही कम्पनी का भविष्य तय करते हैं। वे ही इस बात का निर्णय करते हैं कि कम्पनी कब और कैसे बनेगी, उसकी क्या आकृति होगी तथा वह कैसे और किसके निरीक्षण में कार्य करेगी?" वास्तव में प्रवर्तक, जिस कम्पनी का प्रवर्तन करते हैं, उसके साथ उनका सम्बन्ध वैश्वासिक है। यही नहीं बल्कि वे जिन शेयरधारियों को कम्पनी के शेयर खरीदने के लिए प्रेरित करते हैं, उनके साथ भी प्रवर्तकों का सम्बन्ध वैश्वासिक ही होता है।

आपने एजेंसी व सोझेदारी अनुबन्धों में पढ़ रखा है कि वैश्वासिक सम्बन्ध से तात्पर्य ऐसे सम्बन्ध से है जो पूर्ण विश्वास एवं सद्विश्वास पर आधारित होता है तथा जहां समस्त महत्त्वपूर्ण तथ्यों को प्रकट कर दिया जाना चाहिए। वैश्वासिक स्थिति होने के कारण, प्रवर्तकों को कम्पनी की कीमत पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई भी गुप्त लाभ प्राप्त नहीं करना चाहिए। यदि वे कुछ लाभ अर्जित करना चाहते हैं तो उनका कर्तव्य हो जाता है कि वे सभी महत्त्वपूर्ण तथ्यों की सूचना कम्पनी को दे दें।

बोध प्रश्न क

1) प्रवर्तक कौन होता है?

....

....

....

2) प्रवर्तक के चार महत्त्वपूर्ण कार्यों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

3) 'वैश्वासिक सम्बन्ध' से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

4) तीन पंक्तियों में प्रवर्तक की कानूनी स्थिति बताइए?

....

....

....

5 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत:

i) प्रवर्तक एक व्यक्ति, व्यक्तियों का समूह अथवा कम्पनी हो सकती है।

ii) कम्पनी अधिनियम में 'प्रवर्तक' शब्द की परिभाषा की गई है।

iii) कम्पनी के गठन कार्य में प्रवर्तन पहला चरण है।

iv) कम्पनी के गठन कार्य से संबंधित सभी व्यक्ति कम्पनी के प्रवर्तक होते हैं।

v) प्रवर्तक ऐसा व्यक्ति है जो कम्पनी को अस्तित्व में लाता है।

vi) प्रवर्तक को गुप्त लाभ अर्जित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती।

vii) प्रवर्तक जिस कम्पनी का प्रवर्तन करता है, उसके साथ उसका वैश्वासिक सम्बन्ध होता है।

viii) प्रवर्तक, वास्तव में, उस कम्पनी के एजेंट के रूप में कार्य करते हैं जिसका निर्माण किया जा रहा है।

3.5 प्रवर्तकों के कर्तव्य

उपर्युक्त अनुच्छेद में आपने पढ़ा कि जिस कम्पनी का प्रवर्तन किया जा रहा है उसके साथ प्रवर्तकों की स्थिति पूर्ण विश्वास और भरोसे की होती है। इस वैश्वासिक स्थिति में प्रवर्तकों के निम्नलिखित दो मुख्य कर्तव्य हैं।

1) **गुप्त लाभ न कमाने का कर्तव्य:** कम्पनी के प्रवर्तन के दौरान प्रवर्तकों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई लाभ प्राप्त नहीं करना चाहिए। क्योंकि प्रवर्तक न्यासी की स्थिति में होता है, अतः उसका कर्तव्य है कि वह पूरी इमानदारी से कार्य करे तथा न्यासी की अपनी स्थितिं की गरिमा को बनाए रखे। यहां यह स्मरण रहे कि कानून द्वारा प्रवर्तकों को लाभ कमाने से रोका नहीं गया है। कानून के द्वारा उन्हें केवल गुप्त लाभ कमाने से रोका गया है अर्थात् ऐसे लाभ जिन्हें प्रवर्तकों ने कम्पनी को बताया न हो। कम्पनी के प्रवर्तकों को लाभ कमाने की पूर्ण स्वतन्त्रता है परन्तु इसके लिए केवल एक शर्त यह है कि वे इस तथ्य की जानकारी एक स्वतन्त्र संचालक मंडल को दे दें। यदि कोई स्वतन्त्र संचालक मंडल नहीं है तब भी प्रवर्तकों को इस तथ्य की जानकारी भावी शेयरधारियों को दे देनी चाहिए। यदि कोई प्रवर्तक गुप्त लाभ अर्जित करता है, तो कम्पनी को उसके विरुद्ध निम्नलिखित उपचार उपलब्ध हैं:

   क) **अनुबन्ध निरस्त करना:** गुप्त लाभ की सूचना प्राप्त होने पर, कम्पनी प्रवर्तक द्वारा किए गए उस अनुबन्ध को समाप्त कर सकती है जिससे उसे गुप्त लाभ हो रहा है।

   ख) **लाभ लौटाने का आदेश:** कम्पनी प्रवर्तक से गुप्त लाभ की समस्त रकम लौटाने के लिए आदेश दे सकती है।

   ग) **कर्तव्य भंग के लिए दावा:** कम्पनी, प्रवर्तक के विरुद्ध अपकरण (misfeasance) या छल-कपट के लिए मुकदमा दायर कर सकती है, क्योंकि प्रवर्तकों ने गुप्त लाभ कमा कर कम्पनी के प्रति अपने कर्तव्य को भंग किया है।

2) **कंपनी को महत्वपूर्ण तथ्यों को प्रकट करने का कर्तव्य:** वैश्वासिक सम्बन्धों को ध्यान में रखते हुए प्रवर्तकों का यह कर्तव्य है कि वह कम्पनी के समक्ष समस्त तथ्य प्रकट कर दे। यदि प्रवर्तक स्वयं अपनी सम्पत्ति कम्पनी को बेचकर लाभ अर्जित करते हैं अथवा उनका कम्पनी के किसी व्यवहार में कोई हित है, तो प्रवर्तकों को यह तथ्य प्रकट कर देने चाहिए। आपको यह स्मरण रखना चाहिए कि प्रकटीकरण करते समय प्रवर्तकों को पूर्ण तथ्य प्रकट कर देने चाहिए। यदि वह पूर्ण तथ्य प्रकट किए बिना अपनी सम्पत्ति कम्पनी को बेचता है, तो कम्पनी या तो उस अनुबन्ध को समाप्त कर सकती है या फिर अनुबन्ध को बनाए रखते हुए प्रवर्तकों से लाभ लौटाने के लिए कह सकती है। आइए अब प्रवर्तकों की इस वैश्वासिक स्थिति को एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करते हैं।

   A किसी सूखी भूमि का स्वामी था। उसने और उसके मित्रों ने माईक्रोचिप्स निर्माण करने के उद्देश्य से

एक कम्पनी गठित करने का निर्णय किया। उन्होंने कम्पनी के प्रथम संचालकों को नियुक्त कर दिया। A ने अपनी भूमि उसके वास्तविक मूल्य से कहीं अधिक मूल्य पर कम्पनी को बेच दी। कम्पनी के गठन के पश्चात्, शेयरधारियों की सभा में यह भूमि खरीदने के करार की अनुमति दे दी गई परन्तु सभा में यह तथ्य प्रकट नहीं किया गया कि वह भूमि A की है तथा इस व्यवहार से A ने लाभ कमाया है। कुछ समय बाद कम्पनी का समापन (**liquidation**) करना पड़ा तो समापक ने भूमि के विक्रय के सौदे से हुए लाभ को लौटाने के लिए A पर मुकदमा कर दिया। इस उदाहरण में आपने गौर किया होगा कि A ने पूर्ण तथ्यों को प्रकट करने के अपने कर्तव्य का पालन नहीं किया तथा प्रवर्तन के दौरान A ने गुप्त लाभ अर्जित किया। क्योंकि प्रवर्तक ने गुप्त लाभ के तथ्य को प्रकट नहीं किया अतः कम्पनी इस अनुबन्ध को समाप्त कर सकती है। यदि A ने कम्पनी के संचालकों शेयरधारियों के समक्ष पूर्ण तथ्य प्रकट कर दिए होते तो वह इस लाभ को अपने पास रख सकता था।

3) **लेन-देन का लाभ कम्पनी को देना चाहिए :** प्रवर्तक का यह कर्तव्य है कि प्रवर्तक की स्थिति में वह जो लेन-देन या करार करता है, उससे उत्पन्न लाभ कम्पनी को ही दे। उदाहरण के लिए, यदि उसने कम्पनी के लिए निश्चित मूल्य पर बेचने के लिए कोई सौदा किया है, तो उस निश्चित मूल्य पर ही वह भूमि कम्पनी को बेचनी चाहिए। यदि वह निश्चित मूल्य से अधिक मूल्य पर भूमि बेचता है, तो कम्पनी को इस बात की जानकारी मिलने पर इस अनुबन्ध को समाप्त कर सकती है। यदि किसी कारण से उस अनुबन्ध को समाप्त नहीं किया जा सकता हो, तो कम्पनी प्रवर्तकों से हर्जाने की मांग कर सकती है तथा हर्जाने की रकम प्रवर्तक को मिले हुए लाभ की रकम के बराबर होगी। परन्तु यह ध्यान रहे कि सम्पत्ति के विक्रय से उत्पन्न लाभ को प्रवर्तक से केवल तभी वापस मांगा जा सकता है जब यह क्रय-विक्रय उस समय हुआ हो जब वह प्रवर्तक के रूप में कार्य कर रहा था। भावी कम्पनी तथा बाहरी व्यक्तियों के साथ लेन-देन करते समय अपने दायित्व से बचने के लिए प्रवर्तकों को पूर्ण ईमानदारी व निष्ठा से कार्य करना चाहिए।

4) **भावी आवंटितियों के प्रति कर्तव्य :** प्रवर्तकों का कम्पनी के प्रति विश्वास का सम्बन्ध है। इसका यह अर्थ नहीं है कि उनका यह सम्बन्ध केवल कम्पनी के प्रति है बल्कि भावी आवंटितियों के प्रति भी प्रवर्तकों का यही सम्बन्ध है। अतः प्रवर्तकों का यह कर्तव्य है कि उनके द्वारा जो भी प्रविवरण जारी किया जाए उसमें समस्त महत्त्वपूर्ण तथ्यों का पूर्ण विवरण दिया जाए तथा उसमें कोई भी असत्य कथन नहीं दिया जाना चाहिए।

3.6 प्रवर्तकों के दायित्व

आपने अभी-अभी प्रवर्तकों के वैश्वासिक कर्तव्यों के बारे में पढ़ा और यह पढ़ा कि कोई भी कर्तव्य भंग किए जाने पर कम्पनी प्रवर्तकों को गुप्त लाभ लौटाने के लिए कह सकती है। प्रवर्तकों द्वारा किए गये किसी ऐसे विक्रय अनुबन्ध में जिसमें उन्होंने अपने हित को प्रकट नहीं किया हो, कम्पनी अनुबन्ध को समाप्त कर सकती है। कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत, प्रवर्तकों के दायित्व निम्नलिखित हैं:

i) धारा 56 में उन **विषयों व रिपोर्टों** का वर्णन किया गया है **जिन्हें प्रविवरण में अवश्य शामिल करना चाहिए।** यदि इस प्रावधान का पालन नहीं किया जाता तो शेयरधारी प्रवर्तकों को उत्तरदायी ठहरा सकते हैं।

ii) धारा 62 के अनुसार प्रविवरण में किए गये असत्य वर्णन के लिए प्रवर्तकों के विरुद्ध दीवानी कार्यवाही की जा सकती है। इस धारा के अन्तर्गत प्रविवरण में किए गए असत्य या गुमराह करने वाले कथनों के लिए प्रवर्तक प्रत्येक ऐसे व्यक्ति के प्रति उत्तरदायी होता है जिसने प्रविवरण पर विश्वास करके शेयरों या ऋण-पत्रों के लिए प्रार्थना-पत्र भरे हैं। प्रविवरण में किए गये असत्य कथन से यदि किसी ऐसे व्यक्ति को हानि होती है जिसने प्रविवरण के आधार पर ही शेयर या ऋण-पत्रों के लिए आवेदन किया है, तो इस हानि को पूरा करने के लिए प्रवर्तक उत्तरदायी होते हैं। धारा 62 में उन प्रावधानों का भी विशेष उल्लेख किया गया है जिनके आधार पर प्रवर्तक अपने दायित्व से बच सकते हैं। प्रविवरण में किए गए असत्य कथन के दायित्व से बचने के लिए ये उपचार सभी दायी व्यक्तियों को उपलब्ध हैं। इन उपचारों के बारे में आप इकाई 7 में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

iii) धारा 63 में **प्रविवरण में किए गये असत्य वर्णन के लिए अपराध-जन्य (criminal) कार्यवाही** करने का प्रावधान है। उपर्युक्त दो परिस्थितियों में दीवानी (**civil**) कार्यवाही के अतिरिक्त, प्रवर्तकों के विरुद्ध असत्य वर्णन के लिए अपराध-जन्य कार्यवाही भी की जा सकती है। इस अपराध के लिए दो

वर्ष तक का करावास अथवा 5,000 रुपये तक का जुर्माना या दोनों ही किए जा सकते हैं। प्रवर्तक इस अपराध जन्य दायित्व से केवल तभी बच सकता है जब वह यह सिद्ध कर सके कि असत्य कथन महत्वहीन था अथवा प्रविवरण को जारी करते समय उसके पास उस कथन को सत्य समझने के लिए पर्याप्त आधार थे।

iv) धारा 478 के अनुसार न्यायालय को यह अधिकार है कि वह कम्पनी के गठन के दौरान **कपट के लिए दोषी सभी प्रवर्तकों की सार्वजनिक रूप से** जांच करे। यदि कम्पनी के समापन की स्थिति में समापक अपनी रिपोर्ट में कम्पनी के गठन के दौरान किसी कपट का वर्णन करते हैं, तब भी न्यायालय उन प्रवर्तकों से सार्वजनिक रूप से पूछ-ताछ कर सकता है जैसे कि कम्पनी के निर्देशकों या उसके अधिकारियों से पूछ-ताछ की जाती है।

v) धारा 543 में प्रावधान किया गया है कि यदि **कम्पनी के गठन के दौरान अपकरण या विश्वास-भंग करके धन का दुरुपयोग** किया जाता है, तो भी प्रवर्तक इसके लिए उत्तरदायी होते हैं। कम्पनी के किसी अन्य संचालक या अधिकारी के समान, प्रवर्तकों को भी उत्तरदायी ठहराया जा सकता है यदि उसने कम्पनी की किसी सम्पत्ति का दुरुपयोग किया है या निजी कार्यों के लिए प्रयोग किया है अथवा वह विश्वास भंग करने का दोषी है या कम्पनी के प्रति अपकरण का दोषी है।

vi) धारा 203 में प्रावधान है कि यदि किसी प्रवर्तक को **प्रवर्तन, गठन या कम्पनी के प्रबन्ध से सम्बन्धित किसी मामले में अपराधी** ठहराया गया है तो न्यायालय ऐसे प्रवर्तक को कम्पनी के प्रबन्ध में भाग लेने के लिए पांच वर्ष तक निलंबित (suspend) कर सकता है।

vii) **निगमन से पूर्व किए गये अनुबन्धों के लिए प्रवर्तक व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी** होते हैं। प्रवर्तक की मृत्यु होने पर भी उसका यह दायित्व समाप्त नहीं होता, उसकी मृत्यु होने पर उसकी सम्पत्ति ऐसी क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी रहती है। इसी इकाई के 3.8 में आप निगमन से पूर्व के अनुबन्धों के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

बोध प्रश्न ख

1) प्रवर्तकों के तीन मुख्य कर्तव्य गिनाइए।

....

....

....

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) प्रवर्तक कम्पनी के ·········· में महत्वपूर्ण भाग अदा करता है।

ii) एक व्यक्ति के अतिरिक्त ·········· भी प्रवर्तक हो सकती है।

iii) प्रवर्तक व्यवसाय स्थापित करने की ·········· करता है तथा इस विचार को कार्यरूप देने के लिए ·········· को संगठित करते हैं।

iv) कम्पनी के ·········· संचालक सामान्यतः प्रवर्तकों द्वारा नियुक्त किए जाते हैं।

v) कम्पनी के लिए परिसम्पत्तियां क्रय करने के लिए प्रवर्तक ·········· करते हैं।

vi) कम्पनी प्रवर्तक द्वारा प्राप्त किए गये ·········· को लौटाने के लिए उत्तरदायी ठहरा सकती है।

vii) प्रवर्तक का कम्पनी के साथ ·········· सम्बन्ध होता है।

3.7 प्रवर्तकों का पारिश्रमिक

उपर्युक्त विवरण में आपने पढ़ा कि कम्पनी के साथ प्रवतकों की स्थिति बहुत ही अनोखी है। कम्पनी को अस्तित्व में लाने से पहले प्रवर्तकों को समस्त औपचारिकताओं को पूर्ण करना पड़ता है, काफी समय व कठिन परिश्रम करना पड़ता है तथा कम्पनी को चालू करने के लिए विभिन्न साधनों को संगठित करना पड़ता है। उसे प्रारंभिक व्यय भी स्वयं ही करने पड़ते हैं। इन सब महत्वपूर्ण कार्यों व परिश्रम के लिए उस पारिश्रमिक या खर्चों या दोनों ही के लिए भुगतान की मांग करने का अधिकार होना चाहिए। परन्तु उसे अपनी सेवाओं के लिए कानून के अन्तर्गत कोई भी पारिश्रमिक पाने का तब तक अधिकार नहीं है, जब तक

कि इस सम्बन्ध में कम्पनी के गठित होने के पश्चात् प्रवर्तक का कम्पनी से विशेष अनुबन्ध नहीं हो जाता। यह ध्यान रहे कि यदि निगमन से पहले संभावित संचालकों के साथ प्रवर्तकों का कोई अनुबन्ध हो भी जाता है, तब भी उसे पारिश्रमिक प्राप्त करने का कोई वैध अधिकार नहीं होता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि संचालक कम्पनी की ओर कोई अनुबन्ध नहीं कर सकते क्योंकि अभी कम्पनी अस्तित्व में आई ही नहीं है। कई ऐसी परिस्थितियां भी हुई हैं जबकि कम्पनी के अन्तर्नियमों में एक निश्चित धनराशि प्रवर्तकों को पारिश्रमिक के रूप में देने का प्रावधान है। ऐसा प्रावधान होने पर संचालकों को यह भुगतान करने का अधिकार प्राप्त हो जाता है, परन्तु इससे प्रवर्तकों को पारिश्रमिक की मांग करने या उसे वसूल करने के लिए दावा करने का कानूनी अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। व्यवहार में, कम्पनी के पंजीकरण (registration) के बाद कम्पनी आम तौर से प्रवर्तकों को उनकी महत्वपूर्ण सेवाओं के लिए उचित पारिश्रमिक देने का करार करती है। सरल शब्दों में, पारिश्रमिक के लिए कम्पनी को तब तक उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता जब तक कि पंजीकरण के पश्चात् इसका भुगतान करने के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट अनुबन्ध नहीं किया गया हो। प्रवर्तकों को दिया जाने वाला पारिश्रमिक निम्नलिखित में से किसी भी रूप में दिया जा सकता है:

i) वह अपनी सम्पत्ति को ऊंचे मूल्य पर कम्पनी को बेच सकता है, परन्तु ऐसा वह तभी कर सकता है जब उसने मूल्य तथा अपने लाभ के बारे में स्वतन्त्र संचालक मंडल के समक्ष समस्त तथ्य प्रकट कर दिया हो।

ii) यदि प्रवर्तक ने कोई व्यवसाय या सम्पत्ति कम्पनी को बेचने के इरादे से खरीदी है, तो वह उसे ऊंचे मूल्य पर कम्पनी को बेच सकता है बशर्ते उसने क्रय मूल्य तथा अपने लाभ के बारे में तथ्य प्रकट कर दिए हों।

iii) कम्पनी प्रवर्तकों को पूर्णदत्त शेयर जारी कर सकती है।

iv) उसके द्वारा प्रदान की गई सेवाओं के लिए उसे कम्पनी एकमुश्त रकम का भुगतान कर सकती है।

v) उसे बेचे गये शेयरों पर निश्चित दर से कमीशन भी दिया जा सकता है।

vi) उसे कम्पनी के जारी न किए गए कुछ शेयरों को अंकित मूल्य पर खरीदने का विकल्प दिया जा सकता है। यह विकल्प एक निश्चित समय तक ही सीमित रहता है, अर्थात् निर्धारित समय के भीतर प्रवर्तकों को ये शेयर खरीद लेने चाहिए।

उपर्युक्त वर्णित किसी भी रूप में प्रवतकों को पारिश्रमिक का भुगतान किया जा सकता है। यदि प्रविवरण जारी करने की तिथि से पहले के दो वर्षों में प्रवर्तकों को पारिश्रमिक का भुगतान किया गया है, तो चाहे किसी भी ढंग से भुगतान किया गया हो, भुगतान की राशि का पूर्ण विवरण प्रविवरण में अवश्य दिया जाना चाहिए।

3.8 प्रारंभिक अनुबन्धों (Preliminary Contracts) की स्थिति

कम्पनी के गठन के लिए आवश्यक औपचारिकताओं को पूर्ण करने तथा साधनों को संगठित करने के लिए, प्रवर्तकों को अन्य पक्षकारों के साथ ऐसी कम्पनी के लिए अनुबन्ध करने पड़ते हैं जो अभी अस्तित्व में नहीं आई है। ऐसे अनुबन्ध सामान्यतः प्रवर्तक किसी सम्पत्ति को खरीदने या किसी अधिकार को प्राप्त करने के लिए करते हैं। कंपनी के निगमन से पूर्व प्रवर्तकों द्वारा कम्पनी की ओर से अन्य पक्षकारों के साथ किए गये अनुबन्धों को प्रारंभिक अनुबन्ध कहते हैं।

आपको स्मरण रखना चाहिए कि कम्पनी के निगमित हो जाने पर भी, कम्पनी इन प्रारंभिक अनुबन्धों से बाध्य नहीं होती है। इसका कारण यह है कि निगमन से पहले कम्पनी कोई अनुबन्ध कर ही नहीं सकती क्योंकि इसका कोई कानूनी अस्तित्व नहीं होता। यहीं नहीं, बल्कि निगमन के पश्चात् कम्पनी इन प्रारंभिक अनुबन्धों की पुष्टि भी नहीं कर सकती, क्योंकि वैध पुष्टीकरण के लिए यह आवश्यक है कि जिस समय प्रवर्तकों ने अनुबन्ध किया हो उस समय प्रधान (कम्पनी) का अस्तित्व होना चाहिए। प्रारंभिक अनुबन्धों के आधार पर कम्पनी न तो अन्य पक्षकारों के विरुद्ध कोई मुकदमा दायर कर सकती है और न ही अन्य पक्ष कम्पनी के विरुद्ध मुकदमा कर सकते हैं, क्यों कि निगमन से पहले कम्पनी का कोई अस्तित्व ही नहीं होता। प्रारंभिक अनुबन्धों की स्थिति को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है:

i) **पंजीयन होने पर कम्पनी प्रारंभिक अनुबन्धों से बाध्य नहीं होती है:** प्रारंभिक अनुबन्ध से कम्पनी बाध्य नहीं होती, भले ही उसने उस अनुबन्ध के अन्तर्गत किए गये कार्यों का लाभ उठाया हो। उदाहरण के

लिए, कम्पनी के प्रवर्तकों ने कम्पनी का सीमानियम तथा अन्तर्नियम तैयार करने के लिए एक कानूनी सलाहकार (सालिसिटर) को नियुक्त किया। कानूनी सलाहकार ने कम्पनी के पंजीयन की फीस आदि भी चुकाई। ये प्रवर्तक बाद में कम्पनी के संचालक बन गये। कानूनी सलाहकार ने खर्चों तथा अपनी फीस के लिए दावा कर दिया। निर्णय दिया गया कि जब व्यय किए गये थे उस समय कम्पनी का अस्तित्व ही नहीं था, अतः कम्पनी भुगतान करने के लिए बाध्य नहीं है।

ii) **कम्पनी प्रारंभिक अनुबन्धों को प्रवर्तित नहीं करा सकती:** आपको याद रखना चाहिए कि जिस प्रकार आरंभिक अनुबन्धों के लिए कम्पनी उत्तरदायी नहीं होती उसी तरह निगमन से पहले किए गये किसी भी अनुबन्ध को कम्पनी प्रवर्तित नहीं करा सकती। इसका अर्थ यह है कि प्रारंभिक अनुबन्धों के आधार पर कम्पनी दूसरे पक्षों पर अनुबन्ध का पालन करने के लिए मुकदमा नहीं कर सकती। उदाहरणार्थ **'x'** आसाम में एक भूमि के टुकड़े का स्वामी था। उसने अपनी भूमि को एक प्रस्तावित कम्पनी के प्रवर्तकों **A, B** और **C** के साथ पट्टे पर देने का अनुबन्ध कर लिया। बाद में प्रवर्तकों ने **M. Pvt. Ltd.** नाम की कम्पनी का गठन किया। भूमि की जांच करने पर पता चला कि वहां पर तेल निकलने की पूर्ण संभावना है। तदुपरान्त **x** ने **M. Pvt. Ltd.** को जमीन पट्टे पर देने से इंकार कर दिया। निर्णय दिया गया कि कम्पनी **x** के विरुद्ध मुकदमा नहीं कर सकती तथा वह यथा-निर्दिष्ट पालन की मांग भी नहीं कर सकती क्योंकि जिस समय पट्टे पर हस्ताक्षर हुए थे उस समय कम्पनी का अस्तित्व ही नहीं था।

उपर्युक्त दो नियमों के सम्बन्ध में, हमारे देश में विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम **(Specific Relief Act) 1963** में महत्वपूर्ण प्रावधान किए गये हैं। ये प्रावधान उपर्युक्त नियमों के अपवाद स्वरूप हैं। विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 15 एवं 19 के अनुसार, **यदि निगमन से पहले प्रवर्तकों द्वारा कम्पनी की ओर कोई ऐसा अनुबन्ध किया गया है जो कम्पनी के उद्देश्यों के लिए किया गया हो तथा यह अनुबन्ध निगमन की शर्तों के अनुसार हो, तो ऐसा अनुबन्ध कम्पनी के द्वारा अथवा उसके विरुद्ध प्रवर्तित कराया जा सकता है, बशर्ते कम्पनी ने निगमन के बाद उस अनुबन्ध को स्वीकार किया हो, तथा स्वीकृति की सूचना दूसरे पक्ष को दे दी गई हो।**

उपर्युक्त पैरा में "कम्पनी के उद्देश्यों के लिए" से तात्पर्य ऐसे अनुबन्धों से है जो कम्पनी के निगमन तथा कार्यशीलता के लिए आवश्यक हैं। उदाहरण, कम्पनी के सीमानियम एवं अन्तर्नियमों को तैयार करने व छपाई कराने का अनुबन्ध अथवा कम्पनी में उत्पादन कार्य आरंभ करने के लिए आवश्यक कच्चे माल की सप्लाई करने का अनुबन्ध। ये अनुबन्ध कम्पनी के उद्देश्यों के लिए माने जाते हैं। अब तक आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि ऐसे अनुबन्धों को प्रवर्तित कराने के लिए यह आवश्यक है कि निगमन के बाद कम्पनी ने उन्हें स्वीकार किया हो तथा इस स्वीकृति की सूचना दूसरे पक्ष को दे दी गई हो।

iii) **कम्पनी प्रारंभिक अनुबन्धों की पुष्टि नहीं कर सकती:** कम्पनी के निगमित होने के पश्चात्, कम्पनी अपने अस्तित्व से पहले किए गये अनुबन्धों की पुष्टि नहीं कर सकती। एजेंसी के अनुबन्ध में आपने पढ़ा था कि वैध पुष्टीकरण के लिए यह आवश्यक है कि जिस समय प्रारंभ में अनुबन्ध किया गया था, उस समय प्रधान का अस्तित्व में होने आवश्यक है। और यहां अनुबन्ध करने के समय क्योंकि कम्पनी अस्तित्व में थी ही नहीं, अतः निगमन के पश्चात् कम्पनी प्रारंभिक अनुबन्धों की पुष्टि नहीं कर सकती। **Kelner Vs. Baxter** के केस में निर्णय दिया गया था कि प्रारंभिक अनुबन्ध करने के समय कम्पनी का अस्तित्व नहीं था, अतः कम्पनी उनकी पुष्टि भी नहीं कर सकती। हां, कम्पनी यह अवश्य कर सकती है कि वह निगमन के बाद विक्रेताओं से नया अनुबन्ध कर सकती है तथा यह नया अनुबन्ध प्रारंभिक अनुबन्ध के आधार पर तथा उन्हीं शर्तों पर किया जा सकता है।

iv) **प्रारंभिक अनुबन्धों के लिए प्रवर्तक का दायित्व:** प्रवर्तक ऐसे अनुबन्धों के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होते हैं जो उन्होंने ऐसी कम्पनी के लिए किए हैं जिसका अभी अस्तित्व नहीं है। आप पढ़ चुके हैं कि प्रारंभिक अनुबन्धों को कम्पनी के द्वारा अथवा उसके विरुद्ध प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता। अतः, प्रारंभिक अनुबन्धों के लिए प्रवर्तक ही केवल व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होते हैं। इसका कारण यह है कि प्रारंभिक अनुबन्ध ऐसी कम्पनी के लिए किया जा रहा है, जिसके बारे में अनुबन्ध करने वाले दोनों पक्षकारों को अच्छी तरह से ज्ञात है कि उक्त कम्पनी अभी अस्तित्व में नहीं आई है। अतः यह माना जाता है कि ये अनुबन्ध प्रवर्तकों ने स्वयं किए हैं तथा वे ही इनके निष्पादन के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हैं।

प्रवर्तकों द्वारा किए गये प्रारंभिक अनुबन्धों में सामान्यतः यह प्रावधान किया जाता है कि यदि निगमन

के बाद कम्पनी उस करार को स्वीकार करती है, तो प्रवर्तकों का दायित्व समाप्त हो जाएगा तथा यदि एक निश्चित अवधि के भीतर कम्पनी प्रारंभिक अनुबन्धों को स्वीकार नहीं करती है, तो कोई भी पक्ष इस अनुबन्ध को समाप्त हुआ मान सकता है। ऐसी स्थिति में निर्धारित समय के व्यतीत हो जाने पर प्रवर्तकों का दायित्व समाप्त हो जाता है।

बोध प्रश्न ग

1) प्रवर्तकों को पारिश्रमिक देने के तीन ढंग बताइए।

....

....

....

2) निगमन से पूर्व अनुबन्ध क्या होते हैं?

....

....

....

3) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत:

i) कम्पनी के गठन के लिए की गई सेवाओं के लिए प्रवर्तकों को उचित पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार है।

ii) कम्पनी के साथ किये गये अनुबन्ध की पुष्टि न किए जाने पर, प्रवर्तक ऐसे भुगतानों की रकम को वसूल नहीं कर सकता जो उसने कम्पनी के गठन से सम्बन्धित कार्यों के लिए किए हैं।

iii) यदि प्रवर्तक ने आवश्यक तथ्य प्रकट कर दिए हैं तो वह अपनी सम्पत्ति कम्पनी को ऊंचे मूल्य पर बेच सकता है।

iv) प्रवर्तकों को पारिश्रमिक का भुगतान करने के 15 माह के भीतर यदि कोई प्रविवरण जारी किया जाता है, तो पारिश्रमिक भुगतान सम्बन्धी तथ्य को प्रविवरण में शामिल करना आवश्यक नहीं है।

v) यदि प्रवर्तकों को नकद पारिश्रमिक का भुगतान किया जाता है और पारिश्रमिक दिए जाने की तारीख के दो वर्ष के भीतर यदि प्रविवरण जारी किया जाता है, तो प्रविवरण में इसका हवाला देना आवश्यक नहीं है।

vi) प्रारंभिक अनुबन्धों के लिए प्रवर्तक का दायित्व कम्पनी का गठन होते ही समाप्त हो जाता है।

vii) पंजीयन होनें पर कम्पनी प्रारंभिक अनुबन्धों के लिए बाध्य नहीं है।

viii) यदि कम्पनी के सभी सदस्य सहमत हों तो कम्पनी प्रारंभिक अनुबन्धों की पुष्टि कर सकती है।

ix) कम्पनी तीसरे पक्षकारों के विरुद्ध प्रारंभिक अनुंबन्धों को प्रवर्तित नहीं कर सकती।

x) प्रारंभिक अनुबन्धों के लिए प्रवर्तक व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होते हैं।

3.9 सारांश

कम्पनी के गठन में प्रवर्तन पहला कदम है। कम्पनी के साथ प्रवर्तक की स्थिति बहुत निराली है, क्योंकि वह न तो कम्पनी का एजेंट होता है और न ही न्यासी, फिर भी उसका कम्पनी के साथ वैश्वासिक सम्बन्ध होता है। प्रवर्तक को गुप्त लाभ कमाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। यदि बाद में यह पता चलता है कि प्रवर्तकों ने कोई गुप्त लाभ प्राप्त किया है तो प्रवर्तक वह धनराशि कम्पनी को लौटाने के लिए बाध्य होते हैं। इसके अतिरिक्त, प्रवर्तक स्वयं अपनी सम्पति कम्पनी के हाथ बेचकर लाभ तब तक नहीं ले सकते जब तक उन्होंने समस्त आवश्यक तथ्य प्रकट न कर दिए हों। अतः यदि कोई प्रवर्तक अपनी कोई सम्पत्ति कम्पनी को बेचना चाहता है, तो उसे अपने हित को अवश्य ही प्रकट कर देना चाहिए।

कम्पनी के निगमन से पहले किए गये अनुबन्धों को निगमन से पूर्व अनुबन्ध या प्रारंभिक अनुबन्ध कहते हैं। कम्पनी ऐसे अनुबन्धों के लिए कानूनी तौर से बाध्य नहीं है, क्योंकि अनुबन्ध करने के समय कम्पनी का

अस्तित्व नहीं था। यहां तक कि यदि कम्पनी ने किसी किए गये कार्य का लाभ भी प्राप्त कर लिया है, तब भी कम्पनी उससे बाध्य नहीं होती। निगमित होने पर, कम्पनी प्रारंभिक अनुबन्धों की पुष्टि भी नहीं कर सकती।

3.10 शब्दावली

प्रवर्तक (Promoter) : ऐसा व्यक्ति जो कम्पनी के गठन सम्बन्धी विभिन्न कार्य करता है।

वैश्वासिक सम्बन्ध (Fiduciary relation) : ऐसा सम्बन्ध जो परस्पर विश्वास और निष्ठा पर आधारित होता है।

प्रारंभिक अनुबन्ध (Preliminary Contracts) : निगमन से पहले किए गये अनुबन्ध।

पुष्टीकरण (Ratification) : किए जा चुके कार्य को स्वीकार करना।

गुप्त लाभ (Secret profits) : समस्त सम्बन्धित तथ्यों को प्रकट किए बिना अर्जित लाभ।

प्रविवरण (Prospectus) : ऐसा प्रलेख जिसके द्वारा जनता को कम्पनी के शेयर या ऋण-पत्र खरीदने का निमन्त्रण दिया जाता है।

3.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 5) i) सही ii) गलत iii) सही iv) गलत v) सही vi) सही vii) सही viii) गलत।

ख 2) i) गठन ii) संस्था या कम्पनी iii) कल्पना, साधनों iv) प्रथम v) प्रारंभिक अनुबन्ध vi) गुप्त लाभ vii) वैश्वासिक

ग 3) i) गलत ii) सही iii) सही iv) गलत v) गलत vi) गलत vii) सही viii) गलत ix) सही x) सही।

3.12 स्वपरख प्रश्न

1) 'प्रवर्तक' शब्द की परिभाषा कीजिए तथा उसके द्वारा किए जाने वाले कार्यों को स्पष्ट कीजिए।
2) प्रवर्तक की कानूनी स्थिति स्पष्ट कीजिए।
3) प्रवर्तक द्वारा गठित कम्पनी के प्रति प्रवर्तक के क्या वैश्वासिक कर्तव्य हैं?
4) प्रवर्तक के दायित्वों का वर्णन कीजिए।
5) कम्पनी के गठन के दौरान की गई सेवाओं के लिए क्या प्रवर्तकों को पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार है। पारिश्रमिक दिए जाने के विभिन्न तरीकों को सूचीबद्ध कीजिए।
6) प्रारंभिक अनुबन्धों से आप क्या समझते हैं?
7) (क) निम्नलिखित को स्पष्ट कीजिए: प्रारंभिक अनुबन्धों के सम्बन्ध में कम्पनी की स्थिति तथा

   (ख) प्रारंभिक अनुबन्धों के लिए प्रवर्तक के दायित्व
8) "प्रवर्तक न तो कम्पनी का एजेंट है और न ही न्यासी, परन्तु उसकी कम्पनी के प्रति वैश्वासिक स्थिति होती है", इस कथन को स्पष्ट कीजिए।
9) निगमन से पूर्व किए गये अनुबन्धों से कम्पनी बाध्य क्यों नहीं होती?

नोटः इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को और अच्छी तरह से समझने में सहायता मिलेगी। इनके उत्तर देने का प्रयास कीजिए। लेकिन अपने उत्तर विश्वविद्यालय को मत भेजिए। ये सिर्फ आपके अपने अभ्यास के लिए दिए गए हैं।

इकाई 4 कम्पनी का गठन (Formation of a Company)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 कम्पनी के गठन की अवस्थाएँ
4.3 प्रवर्तन
4.4 रजिस्ट्रार के पास फाइल किए जाने वाले दस्तावेज
4.5 निगमन
  4.5.1 निगमन प्रमाण-पत्र के निश्चायक प्रमाण
  4.5.2 पंजीयन के प्रभाव
4.6 व्यापार आरम्भ करना
  4.6.1 व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र
  4.6.2 व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने की विधि
4.7 सारांश
4.8 शब्दावली
4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.10 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- कम्पनी के गठन की अवस्थाओं का वर्णन कर सकें
- रजिस्ट्रार के पास फाइल किए जाने वाले दस्तावेजों को सूचीबद्ध कर सकें
- निगमन प्रमाण-पत्र का अर्थ स्पष्ट कर सकें
- पंजीयन का प्रभाव स्पष्ट कर सकें
- व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने की विधि का वर्णन कर सकें।

4.1 प्रस्तावना

आप इकाई 1 में पढ़ चुके हैं कि कम्पनी कानून द्वारा निर्मित कृत्रिम व्यक्ति होती है तथा इसका अपने सदस्यों से पृथक अस्तित्व होता है। आप इकाई 3 में यह भी पढ़ चुके हैं कि कम्पनी के गठन से पहले, कुछ व्यक्ति, जिन्हें 'प्रवर्तक' कहते हैं, गहन जांच-पड़ताल करके जब वे व्यापार की लाभप्रदता के बारे में सन्तुष्ट हो जाते हैं, तब कम्पनी के गठन के लिए आवश्यक कदम उठाते हैं। इस इकाई में आप कम्पनी के गठन की विभिन्न अवस्थाओं तथा रजिस्ट्रार के पास फाइल किए जाने वाले दस्तावेजों के बारे में अध्ययन करेंगे। आप जानते ही हैं कि एक निजी कम्पनी निगमन का प्रमाण-पत्र प्राप्त होते ही व्यापार आरम्भ कर सकती है, परन्तु सार्वजनिक कम्पनी को एक अन्य प्रमाण-पत्र भी प्राप्त करना पड़ता है जिसे 'व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र' कहते हैं। व्यापार आरम्भ करने के प्रमाण-पत्र को प्राप्त करने की विधि का भी संक्षेप में वर्णन किया गया है।

4.2 कम्पनी के गठन की अवस्थाएं

कम्पनी का गठन एक लम्बी प्रक्रिया है। कम्पनियों के रजिस्ट्रार द्वारा समामेलन प्रमाण-पत्र जारी कर दिए जाने पर कम्पनी अस्तित्व में आ जाती है। पंजीयन कराने या समामेलन प्रमाण-पत्र प्राप्त करने की निम्नलिखित तीन अवस्थाएँ हैं:

1) प्रवर्तन,
2) पंजीयन या निगमन, तथा
3) व्यापार आरम्भ करना।

उपर्युक्त प्रत्येक अवस्था में अनेक विशिष्ट कार्य करने पड़ते हैं। नीचे दिए चित्र 4.1 को देखने से आपको कम्पनी के गठन की विभिन्न अवस्थाओं में की जाने वाली कार्यवाही की सम्पूर्ण जानकारी हो जाएगी।

चित्र 4.1

कम्पनी के गठन की अवस्थाएँ

अवस्था 1		अवस्था 2	अवस्था 3
प्रवर्तन		निगमन	व्यापार आरम्भ करना
व्यवसाय के विचार की कल्पना तथा संगठन	कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास दस्तावेज़ फाइल करना		
— व्यवसाय के विचार की परिकल्पना — विभिन्न साधनों जैसे पूंजी, प्लांट व मशीनरी, विशेषज्ञों आदि का संगठन — प्रथम निदेशकों की सहमति प्राप्त करना — दस्तावेज तैयार करना — पंजीयन शुल्क का भुगतान — उपयुक्त नाम के लिए आवेदन — प्रारंभिक अनुबन्ध	— सीमानियम — अन्तर्नियम — प्रस्तावित करारों की अधिकृत पूंजी का विवरण — पंजीकृत कार्यालय का पता — निदेशकों की सूची तथा उनकी लिखित सहमति — निदेशकों द्वारा योग्यता शेयर खरीदने की घोषणा — सांविधिक घोषणा	— कम्पनी के दस्तावेज़ों की जांच-पड़ताल करके, सन्तुष्ट होने पर पंजीयक (रजिस्ट्रार) क) कम्पनियों के रजिस्टर में कम्पनी का नाम दर्ज करता है, तथा ख) निगमन प्रमाण-पत्र ज़ारी करता है	— निजी कम्पनी तुरन्त ऋण लेने के अधिकार का प्रयोग कर सकती है तथा व्यापार शुरू कर सकती है — सार्वजनिक कम्पनी व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के लिए आवेदन करेगी तथा यह प्रमाण-पत्र प्राप्त करने पर ही वह ऋण लेने के अधिकार का प्रयोग कर सकती है व व्यापार आरम्भ कर सकती है

4.3 प्रवर्तन (Promotion)

कम्पनी को अस्तित्व में लाने के लिए प्रवर्तकों द्वारा की जाने वाली कार्यवाहियों के बारे में आप इकाई 3 में पढ़ चुके हैं।

व्यवसाय के विचार की परिकल्पना करके वह इसकी सुदृढ़ता को देखता है, तत्पश्चात् वह अपने विचारों को साकार रूप देने के लिए आवश्यक साधनों को संगठित करता है। प्रवर्तक कम्पनी के लिए आवश्यक सम्पत्ति, प्लांट एवं मशीनरी खरीदने के लिए आवश्यक बातचीत करके उन्हें प्राप्त करता है, तथा कम्पनी को जितनी पूंजी की आवश्यकता हो, उतनी पूंजी एकत्रित करने की व्यवस्था करता है इसके अतिरिक्त, प्रवर्तक उन व्यक्तियों से भी बातचीत करता है जो कम्पनी के प्रथम निदेशक का उत्तरदायित्व संभालने को तैयार हों।

यहां यह ध्यान रहे कि कम्पनी का निर्माण केवल वैध उद्देश्यों के लिए ही हो सकता है। कम्पनी का उद्देश्य अवैधानिक होगा यदि

क) यह कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के विपरीत है, या

ख) यह भारत में लागू होने वाले किसी अन्य कानून के प्रावधानों के विपरीत है।

यदि आप ध्यान करें तो आपने इकाई 2 में पढ़ा था कि प्रवर्तक सीमित दायित्व वाली अथवा असीमित दायित्व वाली कम्पनी का गठन कर सकते हैं। सीमित दायित्व वाली कम्पनी की दशा में, सदस्यों का दायित्व शेयरों अथवा गारंटी द्वारा सीमित हो सकता है।

इसके पश्चात् प्रवर्तक कम्पनियों के रजिस्ट्रार से कम्पनी के प्रस्तावित नाम के लिए अनुमति प्राप्त करता है। इसके लिए प्रवर्तक प्राथमिकता के क्रम में कुछ नामों का चुनाव करते हैं और फिर निर्धारित फार्म में विवरण भरकर रजिस्ट्रार के पास पंजीयन के लिए जमा कर देते हैं। धारा 20 में प्रावधान है कि कोई भी कम्पनी

ऐसे नाम से पंजीकृत नहीं की जाएगी जो केंद्र सरकार के मत में अवांछनीय है अर्थात् कम्पनी का नाम पहले से ही विद्यमान किसी कम्पनी के नाम जैसा या उससे मिलता जुलता नहीं होना चाहिए। इस सम्बन्ध में आप सीमानियम से सम्बन्धित इकाई 5 में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास कम्पनी के पंजीयन के लिए आवेदन देने से पहले, प्रवर्तक को महत्वपूर्ण दस्तावेज जैसे सीमानियम तथा अन्तर्नियम तैयार करने के लिए आवश्यक कार्यवाही कर लेनी चाहिए। इस कार्य के लिए कम्पनी के प्रवर्तक कानून विशेषज्ञ, सालिसिटर या कम्पनी सचिव की सहायता ले सकते हैं। ये दस्तावेज छपे हुए होने चाहिए। परन्तु, शेयरों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी को अपने अन्तर्नियम तैयार करना जरूरी नहीं है, यह अनुसूची I में दी हुई तालिका A को अपना सकती है। सीमानियम तथा अन्तर्नियमों पर स्टाम्प भी लगे हुए होने चाहिए, परन्तु स्टाम्प शुल्क अलग-अलग राज्यों में वहां के राज्य स्टाम्प कानून के अनुसार होता है।

अधिनियम की धारा 15 के अनुसार सीमानियम पर प्रत्येक अभिदाता के हस्ताक्षर अवश्य होने चाहिए तथा उसे अपना नाम, विवरण तथा पेशा, यदि कोई है तो, कम से कम एक गवाह की उपस्थिति में लिखने चाहिए तथा गवाह को अभिदाता के हस्ताक्षर प्रमाणित कर स्वयं अपने हस्ताक्षर करना चाहिए तथा अपना पता और व्यवसाय सम्बन्धी विवरण भी देना चाहिए। अन्तर्नियमों पर भी अभिदाताओं में से प्रत्येक के अलग से हस्ताक्षर होने चाहिए। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि सीमानियम व अन्तर्नियम पर प्रवर्तक स्वयं हस्ताक्षर करें। इन दस्तावेजों पर ऐसा एजेंट भी हस्ताक्षर कर सकता है जिसको इस कार्य के लिए मुख्तारनामा द्वारा अधिकृत किया गया है।

निदेशकों की इस रूप में कार्य करने की लिखित सहमति भी फाइल करना आवश्यक है। परन्तु, निजी कम्पनी की स्थिति में ऐसा करना आवश्यक नहीं होता। निदेशकों द्वारा योग्यता शेयर खरीदने तथा उनका मूल्य चुकाने का लिखित वचन भी दिया जाना चाहिए। आप इसके सम्बन्ध में इकाई 5 में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

पंजीकरण के लिए निर्धारित फीस रजिस्ट्रार के कार्यालय में जमा की जानी चाहिए। इन सब दस्तावेजों के साथ इस आशय की संविधिक घोषणा भी नत्थी की जानी आवश्यक है कि कम्पनी अधिनियम तथा उसके अन्तर्गत बनाए गए सभी नियमों का पालन कर दिया गया है।

इन कार्यों के अतिरिक्त, कम्पनी की विशिष्ट प्रकृति तथा उद्देश्यों के अनुसार, प्रवर्तकों को पंजीकरण कराने के लिए कम्पनी अधिनियम की कुछ अन्य औपचारिकताओं को भी पूर्ण करना पड़ता है। इसमें ये शामिल हैं— i) प्रस्तावित कम्पनी को उद्योग (विकास एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1951 के अन्तर्गत लाइसेंस प्राप्त करना आवश्यक हो तो प्रवर्तक को इसके लिए तत्संबंधी मंत्रालय को आवेदन-पत्र भेजना चाहिए ii) प्रारंभिक अनुबन्ध करने चाहिए, iii) यदि कम्पनी सामान्य जनता के बीच शेयर या ऋण-पत्र जारी करके पूंजी एकत्रित करना चाहती है तो पूंजी निर्गमन नियंत्रक की अनुमति प्राप्त करना चाहिए, और iv) स्थिति के अनुसार प्रविवरण या उसके स्थान पर विवरण जारी करना चाहिए।

बोध प्रश्न क

1) कम्पनी के प्रवर्तन का क्या अर्थ है?

....

....

....

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) कम्पनी के गठन के लिए प्रवर्तकों को .... अवस्थाओं में से गुजरना पड़ता है।

ii) कम्पनी गठन की तीन अवस्थाएँ हैं, प्रवर्तन, ... तथा व्यापार आरम्भ करना।

iii) कम्पनी के प्रवर्तन का कार्य .... से आरम्भ होता है।

iv) निजी कम्पनी .... होने पर व्यापार आरम्भ कर सकती है।

v) कम्पनी का निर्माण केवल .... उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है।

vi) ऐसी कम्पनी, जिसके सदस्यों के दायित्व की कोई सीमा नहीं होती ………… कम्पनी कहलाती है।

vii) अधिनियम की धारा के अनुसार, कोई भी कम्पनी किसी ऐसे नाम से पंजीकृत नहीं की जाएगी जो ………… के मत में ………… है।

viii) कम्पनी के आन्तरिक प्रबन्ध सम्बन्धी मामलों के लिए जो नियम बनाए जाते हैं उन्हें ………… कहते हैं

ix) कम्पनी का पंजीकरण कराने के लिए रजिस्ट्रार के पास सीमानियम तथा अन्तर्नियम फाइल करने से पहले इन दस्तावेजों पर प्रस्तावित कम्पनी के प्रत्येक के ………… होने ………… चाहिए।

x) सीमानियम के अभिदाताओं को कम से कम एक ………… की उपस्थिति में हस्ताक्षर करने चाहिए।

3) बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलतः

i) यदि कम्पनी अपने निदेशकों का चुनाव नहीं करती तो वह अस्तित्व में नहीं आ सकती।

ii) सार्वजनिक कम्पनी का गठन करने के लिए सदस्यों की न्यूनतम संख्या दस होती है।

iii) सार्वजनिक कम्पनी के सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा लिए गये शेयरों के अंकित मूल्य तक सीमित होता है।

iv) कम्पनी पंजीकृत हो भी सकती है और नहीं भी।

v) कोई भी कम्पनी असीमित दायित्व के साथ पंजीकृत नहीं हो सकती।

vi) निजी कम्पनी के लिए अपने अन्तर्नियम को पंजीकृत करना आवश्यक है।

4.4 रजिस्ट्रार के पास फाइल किए जाने वाले दस्तावेज

प्रवर्तकों ने जब आवश्यक दस्तावेज तैयार करवा लिए हों तो कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास इन दस्तावेजों को फाइल कर देना होता है। कम्पनी का पंजीकरण कराने के लिए निम्नलिखित दस्तावेज फाइल किए जाने आवश्यक होते हैं:

1) **सीमानियम (Memorendum of Association) :** सीमानियम कम्पनी का चार्टर होता है। प्रत्येक कम्पनी को यह बनाना आवश्यक है। इसमें उन उद्देश्यों का वर्णन होता है जिनके लिए कम्पनी का निर्माण किया जाता है। सीमानियम के वाक्यांशों से कम्पनी के बारे में सम्पूर्ण जानकारी मिल जाती है। इससे कम्पनी के उद्देश्य, नाम, दायित्व की प्रकृति, पंजीकृत कार्यालय का पता, अधिकृत पूंजी तथा उन व्यक्तियों के नाम, पते व व्यवसाय मालूम होते हैं जो कम्पनी के निर्माण के लिए सहमत हुए हैं। सीमानियम कम्पनी के कार्यक्षेत्र को परिभाषित करता है तथा बाहरी व्यक्तियों से सम्बन्ध नियमित करता है। कम्पनी का पंजीकरण कराने के लिए, प्रवर्तकों को सीमानियम की छपी, हस्ताक्षरित तथा स्टाम्पित कापी रजिस्ट्रार के पास फाइल करना होता है।

2 **अन्तर्नियम (Articles of Association):** कम्पनी के अन्तर्नियमों में कम्पनी के आंतरिक प्रबन्ध सम्बन्धी नियम व विनियम दिए होते हैं अतः ये कम्पनी और उसके सदस्यों के बीच सम्बन्धों को नियमित करते हैं। निजी कम्पनी को अपने अन्तर्नियम पृथक से बनाना आवश्यक है क्योंकि अन्तर्नियमों के द्वारा ही शेयरों की हस्तांतरणीयता, सामान्य जनता को शेयर पूंजी में निवेश करने के लिए निमंत्रण पर प्रतिबंध तथा सदस्यों की अधिकतम संख्या पचास तक प्रतिबन्धित की जाती है (आप इन प्रतिबन्धों के विषय में इकाई 2 में पढ़ चुके हैं)।

परन्तु शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी के लिए अपने अन्तर्नियम फाइल करना आवश्यक नहीं है। यदि कोई सार्वजनिक कम्पनी अपने अन्तर्नियम फाइल नहीं करती है तथा इस सम्बन्ध में मौन रहती है, तो यह मान लिया जाता है कि उसने अधिनियम की अनुसूची I में दी गयी तालिका A को अपना लिया है। अधिनियम की इस तालिका में आदर्श अन्तर्नियमों का नमूना दिया गया है। अन्तर्नियमों पर अलग से प्रत्येक अभिदाता का हस्ताक्षर भी होना चाहिए तथा किसी साक्षी द्वारा उनका सत्यापन भी किया जाना चाहिए।

3) **प्रस्तावित करार की प्रति (Copy of proposed agreement) :** कम्पनी संशोधन अधिनियम, 1988

के अनुसार अधिनियम में ए.. क्यांश जोड़ा गया है जिसमें यह प्रावधान है कि यदि कम्पनी किसी व्यक्ति के साथ उसे प्रबन्ध निदेशक, या पूर्णकालिक निदेशक या मैनेजर नियुक्त करने का करार करने का इरादा करती है, तो उपर्युक्त दस्तावेजों के साथ ऐसे प्रस्तावित करार की प्रति भी रजिस्ट्रार के पास फाइल करनी चाहिए।

4) **अधिकृत पूंजी का विवरण (Statement of nominal or authorised capital) :** शेयरों द्वारा सीमित अथवा गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी, जिसकी शेयर पूंजी है, उसके प्रवर्तकों को अधिकृत पूंजी की मात्रा का विवरण भी रजिस्ट्रार के पास पंजीकृत कराना चाहिए। इससे आशय उस पूंजी से है जो कम्पनी अधिक से अधिक जारी कर सकती है। इस अधिकृत पूंजी को निश्चित राशि वाले शेयरों में विभाजित किया जाता है। कम्पनी के सीमानियम में, पूंजी वाक्य के अन्तर्गत अधिकृत पूंजी को स्पष्ट रूप से लिखा जाना चाहिए। कम्पनी की अधिकृत पूंजी की राशि उसकी पूंजी की भावी आवश्यकताओं पर निर्भर करती है। पूंजी निर्गमन (नियंत्रण) अधिनियम, 1947 के प्रावधानों के अनुसार यदि कोई कम्पनी निगमन के 12 माह के भीतर शेयर या ऋण-पत्र जारी करके एक करोड़ रुपये से अधिक पूंजी एकत्रित करना चाहती है, तब प्रवर्तकों को पूंजी निर्गमन नियंत्रक से अनुमति प्राप्त होगी तथा इसकी प्रति भी रजिस्ट्रार के पास फाइल करनी चाहिए।

5) **कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय का पताः** यद्यपि कम्पनी के पंजीकरण के लिए यह आवश्यक नहीं है, परन्तु सामान्यतः प्रत्येक कम्पनी के द्वारा, चाहे वह निजी कम्पनी है या सार्वजनिक, कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय का पूरा पता प्रायः रजिस्ट्रार के पास फाइल किया जाता है। यदि अन्य दस्तावेजों को फाइल करते समय यह पता फाइल नहीं किया जाता तो निगमन की तारीख से 30 दिनों के भीतर इसे अवश्य फाइल कर दिया जाना चाहिए।

6) **उन व्यक्तियों के नामों की सूची, जिन्होंने कम्पनी के प्रथम निदेशकों के रूप में कार्य करना स्वीकार किया है,** भी रजिस्ट्रार के पास फाइल करनी चाहिए। निजी कम्पनी की स्थिति में यह आवश्यक नहीं है। सार्वजनिक कम्पनी के निदेशकों द्वारा योग्यता शेयर खरीदने तथा उनका मूल्य चुकाने का लिखित वचन भी दिया जाना चाहिए।

7) **सांविधिक घोषणाः** अन्त में, कम्पनी के प्रवर्तकों को यह सांविधिक घोषणा अवश्य करनी चाहिए कि कम्पनी अधिनियम की सभी आवश्यकताओं तथा (पंजीयन संबंधी इसके) नियमों का पालन कर लिया गया है। इस घोषणा पर निम्नलिखित में से किसी एक के द्वारा हस्ताक्षर किए जा सकते हैं:

   क) उच्चतम न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय के एडवोकेट द्वारा, या

   ख) उच्च न्यायालय में उपस्थिति होने का अधिकारी कोई वकील या अटार्नी; या

   ग) भारत में प्रेक्टिस करने वाला चार्टर्ड लेखापाल या सचिव जो कम्पनी के गठन कार्य में संलग्न था; या

   घ) ऐसा कोई व्यक्ति जिसका नाम कम्पनी के अन्तर्नियम में निदेशक, प्रबंधक या सचिव के रूप में दिया गया हो।

बोध प्रश्न ख

1) किन्हीं तीन दस्तावेजों को सूचीबद्ध कीजिए जिन्हें किसी कंपनी के निगमन के लिए रजिस्ट्रार के पास फाइल किया जाना आवश्यक होता है।

   ....

   ....

   ....

2) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही है अथवा गलतः

   i) कम्पनी के सीमानियम उन उद्देश्यों को परिभाषित करते हैं जिनके लिए कम्पनी का गठन किया जाता है।

   ii) अन्तर्नियम, कम्पनी और तीसरे पक्षकारों के बीच के सम्बन्धों को नियमित करते हैं।

   iii) कम्पनी और उसके सदस्यों के बीच सम्बन्ध अन्तर्नियम द्वारा नियमित होते हैं।

   iv) सार्वजनिक कम्पनी के पंजीयन के लिए, रजिस्ट्रार के पास अन्तर्नियम को फाइल करना आवश्यक है।

v) कम्पनी के प्रथम निदेशकों की नियुक्ति, प्रवर्तकों द्वारा की जाती है।

vi) प्रत्येक कम्पनी, अपने पंजीयन की तारीख से 30 दिनों के भीतर, पंजीकृत कार्यालय का पता, रजिस्ट्रार के पास भेजने के लिए बाध्य है।

vii) निजी कम्पनी के निदेशकों की सूची तथा निदेशक के रूप में कार्य करने की उनकी लिखित सहमति भी रजिस्ट्रार के पास फाइल करनी चाहिए।

4.5 निगमन (Incorporation)

जब रजिस्ट्रार के पास सभी आवश्यक दस्तावेज निर्धारित शुल्क सहित जमा करा दिए जाते हैं, तब वह इन दस्तावेजों की जांच करता है तथा जब वह सन्तुष्ट हो जाता है कि (क) सभी दस्तावेज ठीक है; (ख) पंजीयन सम्बन्धी कम्पनी अधिनियम के सभी प्रावधानों का पालन कर दिया गया है; तथा (ग) जिस उद्देश्य के लिए कम्पनी का निर्माण किया जा रहा है वह यदि वैध हैं, तब वह अपने कार्यालय में रखे हुए 'कम्पनियों के रजिस्टर' में कम्पनी का नाम लिख देगा। तत्पश्चात् वह अपने हस्ताक्षर करके एक प्रमाण-पत्र जारी कर देगा जो इस बात का प्रमाण है कि कम्पनी का निगमन हो गया हैं। इस प्रमाण-पत्र को ही 'निगमन प्रमाण-पत्र' कहते हैं। इस प्रमाण-पत्र में कम्पनी का नाम, इसको जारी करने की तिथि तथा रजिस्ट्रार के हस्ताक्षर व उसकी मुद्रा **(seal)** अंकित होते है। निगमन प्रमाण-पत्र वास्तव में कम्पनी के जन्म का प्रमाण-पत्र होता है तथा इसके प्राप्त होने पर कम्पनी शाश्वत अस्तित्व वाली निगमित संस्था बन जाती है जिसकी एक सामान्य मुद्रा होती है। निगमन प्रमाण-पत्र में लिखी तारीख से ही कम्पनी को अस्तित्व में माना जाता है।

यदि रजिस्ट्रार के विचार में किसी दस्तावेज में कोई मामूली सी त्रुटि या कमी है, तो वह उसे ठीक करने के लिए कह सकता है, परन्तु यदि उनमें कोई महत्वपूर्ण या सारवान् गलती है तो वह कम्पनी का पंजीयन करने से इन्कार कर सकता है।

निजी कम्पनी के निगमन की विधि लगभग उसी प्रकार की है जैसी कि सार्वजनिक कम्पनी की होती है। परन्तु निजी कम्पनी की स्थिति में सीमानियम, अन्तर्नियम आदि दस्तावेजों पर कम से कम दो व्यक्तियों के हस्ताक्षर होने चाहिए, जबकि सार्वजनिक कम्पनी में सात व्यक्तियों के हस्ताक्षर होते हैं। निजी कम्पनी के निदेशकों की इस रूप में कार्य करने की लिखित सहमति को रजिस्ट्रार के पास फाइल करना आवश्यक नहीं है। परन्तु निजी कम्पनी के अन्तर्नियम, रजिस्ट्रार के पास अवश्य ही पंजीकृत कराए जाने चाहिए तथा इसमें कम्पनी अधिनियम की धारा 3(1) (iii) द्वारा लगाए गए प्रतिबन्ध अवश्य शामिल किए जाने चाहिए।

4.5.1 निगमन प्रमाण-पत्र का निश्चायक प्रमाण (Conclusiveness of Certificate of Incorporation)

किसी भी संस्था को जब रजिस्ट्रार द्वारा निगमन प्रमाण-पत्र दे दिया जाता है तो यह इस बात का निश्चायक प्रमाण है कि कम्पनी के पंजीयन से सम्बन्धित कम्पनी अधिनियम की समस्त आवश्यकताओं को पूर्ण कर लिया गया है। निगमन प्रमाण-पत्र कम्पनी की विधिवत स्थापना एवं पंजीयन का निश्चायक प्रमाण होता है। इसे **पील्स** के केस का नियम भी कहते हैं। इस मामले में हस्ताक्षरकर्ताओं द्वारा हस्ताक्षर करने के पश्चात् परन्तु पंजीयन से पहले सीमानियम में महत्वपूर्ण परिवर्तन कर दिया गया। निर्णय दिया गया कि कम्पनी के निगमित स्तर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा तथा निगमन प्रमाण-पत्र को वैध माना गया। इस नियम की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए Lord Cairns ने कहा कि **जब एक बार सीमानियम का पंजीकरण हो जाता है तो समस्त संसार के सामने कम्पनी को शेयरधारी रखने व्यापार करने तथा व्यापार सम्बन्धी अनुबन्ध करने के योग्य घोषित किया जाता है। ऐसी स्थिति में इतना सब कुछ होने के पश्चात् यह बहुत ही खतरनाक होगा यदि किसी व्यक्ति को यह अधिकार दिया जाए कि वह फिर से कम्पनी के पंजीकरण की परिस्थितियों एवं मूल दस्तावेजों की नियमितता की जांच-पड़ताल करे।**

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि जब रजिस्ट्रार एक बार निगमन प्रमाण-पत्र जारी कर देता है, तो निगमन से पहले की गई किसी भी अनियमितता के होने पर भी, निगमन प्रमाण-पत्र की वैधता को किसी भी आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती। इस संदर्भ में इन दो मामलों में दिए गए निर्णयों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

मूसा गुलाम आरिफ बनाम इब्राहिम गुलाम आरिफ के मामले में सीमानियम के सात हस्ताक्षरकर्ताओं में से दो बालिग व्यक्ति थे तथा शेष पांच नाबालिग सदस्य थे। नाबालिगों के अभिभावक ने प्रत्येक के लिए

सीमानियम पद पृथक्-पृथक् हस्ताक्षर कर दिए। रजिस्ट्रार ने कम्पनी का पंजीयन करके निगमन प्रमाण-पत्र जारी कर दिया। वादी ने कम्पनी के निगमन को चुनौती देते हुए न्यायालय से प्रार्थना की निगमन प्रमाण-पत्र को व्यर्थ घोषित किया जाए। प्रीवी कौंसिल ने वादी के तर्क को अस्वीकार करते हुए निर्णय दिया कि निगमन प्रमाण-पत्र वैध है। न्यायालय के विचार में रजिस्ट्रार को निगमन प्रमाण-पत्र ज़ारी नहीं करना चाहिए था, परन्तु जब एक बार यह प्रमाण-पत्र जारी कर दिया गया तो यह सब प्रकार से निश्चायक हो गया, अतः कम्पनी की स्थापना को किसी भी आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती।

निगमन प्रमाण-पत्र इस तथ्य का भी निश्चायक प्रमाण है कि कम्पनी उस तारीख को अस्तित्व में आई जो निगमन प्रमाण-पत्र में लिखी गई है। **जुबली कॉटन मिल्स लिमिटेड बनाम लीविस** के मामले में कम्पनी ने 6 जनवरी को रजिस्ट्रार के पास पंजीयन से सम्बन्धित सभी आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत कर दिए। रजिस्ट्रार ने 8 जनवरी को कम्पनी को पंजीकृत करके निगमन प्रमाण-पत्र ज़ारी कर दिया परन्तु उस पर 8 जनवरी की तारीख के बजाय 6 जनवरी लिख दिया। कम्पनी ने 6 जनवरी को (प्रमाण-पत्र प्राप्त होने से पहले) कुछ शेयर श्री लीविस को आवंटित कर दिए। निगमन प्रमाण-पत्र प्राप्त होने से पहले किए गये इस आवंटन की वैधता को चुनौती दी गई तथा प्रार्थना की गई कि इस आवंटन को व्यर्थ घोषित किया जाए। न्यायालय ने निर्णय दिया कि निगमन प्रमाण-पत्र उसमें लिखी सभी बातों के बारे में निश्चायक प्रमाण है। अतः कम्पनी का गठन 6 जनवरी को हुआ माना गया तथा शेयरों का आवंटन वैध माना गया।

परन्तु इस सम्बन्ध में यह स्मरण रखना बहुत आवश्यक है कि कम्पनी के सीमानियम में उद्देश्य खंड के अन्तर्गत वर्णित किसी अवैध उद्देश्य को निगमन प्रमाण-पत्र वैध नहीं बना देता। अतः यदि किसी ऐसी कम्पनी का पंजीकरण कर लिया गया है जिसके उद्देश्य अवैधानिक हैं, तो निगमित हो जाने पर वे अवैध उद्देश्य वैध नहीं हो सकते। ऐसी स्थिति में एकमात्र उपाय यही है कि कम्पनी का समापन किया जाए।

4.5.2 पंजीयन के प्रभाव (Effects of Registration)

अभी-अभी आप पढ़ चुके हैं कि रजिस्ट्रार द्वारा ज़ारी किए जाने वाले प्रमाण-पत्र को निगमन प्रमाण-पत्र कहते हैं। यह प्रमाण-पत्र कम्पनी के लिए एक बहुत महत्वपूर्ण दस्तावेज़ है, क्योंकि कम्पनी का निगमित जीवन, प्रमाण-पत्र में दी गयी तारीख से ही आरम्भ हुआ माना जाता है।

कम्पनी के सीमानियम, अन्तर्नियम तथा अन्य प्रस्तावित करार आदि जब रजिस्ट्रार के पास फाइल कर दिए जाते हैं तब रजिसट्रार कम्पनी को निगमन प्रमाण-पत्र ज़ारी करता है। इस प्रमाण-पत्र में रजिस्ट्रार अपने हस्ताक्षरों द्वारा यह प्रमाणित करता है कि कम्पनी का निगमन हो गया। यदि कम्पनी सीमित दायित्व वाली कम्पनी है तो रजिस्ट्रार यह भी प्रमाणित करता है कि यह कम्पनी सीमित कम्पनी है।

निगमन की तारीख से अर्थात् निगमन प्रमाण-पत्र में लिखी हुई तारीख से, कम्पनी का अपने सदस्यों से पृथक् विधिक अस्तित्व हो जाता है। धारा 34 के खंड 2 में पंजीयन के प्रभाव का वर्णन इस प्रकार किया गया है :

i) निगमन की तारीख से सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वाले मूल अभिदाता तथा समय-समय पर कम्पनी के सदस्य बनने वाले अन्य व्यक्ति, सीमानियम में दिए नाम से एक निगमित संस्था बन जाते हैं। यदि आप स्मरण करें तो आप इकाई 1 में पढ़ चुके हैं कि निगमन के पश्चात् कम्पनी का अपने सदस्यों से पृथक् अस्तित्व हो जाता है, कम्पनी का समामेलित अस्तित्व हो जाता है। कम्पनी एक वैधिक व्यक्ति बन जाती है। कम्पनी का जीवन निगमन की तारीख से आरम्भ होता है।

ii) कम्पनी को शाश्वत उत्तराधिकार प्राप्त हो जाता है। इसके परिणाम को एक उदाहरण देकर अच्छी तरह से समझा जा सकता है। यदि किसी कम्पनी में दस सदस्य हैं और एक रेल दुर्घटना में अचानक उन सभी की मृत्यु हो जाती है, तब भी कम्पनी के अस्तित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। अन्य शब्दों में, कम्पनी के सदस्य आते-जाते रह सकते हैं, परन्तु जब तक कम्पनी का समापन न कर दिया जाए वह निरन्तर चलती रहती है।

iii) कम्पनी की एक सार्वमुद्रा होती है।

iv) कम्पनी स्वयं अपने नाम से मुकदमा दायर कर सकती है तथा कम्पनी के नाम से उस पर मुकदमा दायर किया जा सकता है।

v) निगमन प्रमाण-पत्र प्राप्त होते ही कोई निजी कम्पनी व्यापार आरम्भ कर सकती है।

vi) कम्पनी की देयता एवं ऋण कम्पनी के ही होते हैं, उसके शेयरधारियों या सदस्यों के नहीं। फिर भी वे

अनुबन्ध के अन्तर्गत अपने दायित्व की सामी तक या गारंटी की गई राशि तक, कम्पनी के समापन की दशा में ही, कम्पनी को अंशदान करने के लिए उत्तरदायी होते हैं।

ii) कम्पनी को अपनी सम्पत्ति अपने नाम से रखने का अधिकार होता है। कम्पनी की सम्पत्ति शेयरधारियों की सम्पत्ति नहीं होती।

viii) कम्पनी के सीमानियम तक अन्तर्नियम कम्पनी पर तथा प्रत्येक सदस्य पर बाध्य होते हैं। अन्तर्नियमों को कम्पनी और सदस्यों के बीच एक अनुबन्ध माना जाता है तथा निगमन के पश्चात् ये (क) कम्पनी के प्रति सदस्यों के (ख) सदस्यों के प्रति कम्पनी के तथा (ग) कम्पनी के सदस्यों के परस्पर अधिकारों को नियमित करते हैं।

4.6 व्यापार आरम्भ करना (Commencement of Business)

आप पढ़ चुके हैं कि निगमन प्रमाण-पत्र मिलने पर कम्पनी अस्तित्व में आ जाती है। एक निजी कम्पनी अपने निगमन के पश्चात् तुरन्त व्यापार आरम्भ कर सकती है, परन्तु सार्वजनिक कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने से पहले एक और प्रमाण-पत्र प्राप्त करना होगा जिसे 'व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र' कहते हैं। बिना शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी भी निगमन प्रमाण-पत्र प्राप्त होते ही व्यापार आरम्भ कर सकती है उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी को व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र प्राप्त करने से पहले कुछ अन्य औपचारिकताओं का पालन करना पड़ता है।

4.6.1 व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र

जैसा कि आप पढ़ चुके हैं कि निगमित होने के तुरंत बाद ही कोई निजी कम्पनी तो तुरन्त व्यापार आरम्भ कर सकती है, परन्तु शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी ऐसा नहीं कर सकती। शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी, चाहे वह जनता को कम्पनी के शेयरों में धन लगाने के लिए निमन्त्रित करने के लिए प्रविवरण ज़ारी करती है अथवा नहीं, उसे कुछ और औपचारिकताओं को पूर्ण करना पड़ता है, उसके बाद ही वह व्यापार आरम्भ कर सकती है।

शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी को रजिस्ट्रार के पास प्रविवरण या स्थानापत्र विवरण की एक प्रति फाइल करनी चाहिए तथा किसी एक निदेशक या सचिव या जब कम्पनी ने सचिव की नियुक्ति नहीं की हो तो पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाले सचिव के द्वारा एक घोषणा की जानी चाहिए कि धारा 149 की सभी आवश्यकताओं का पालन कर दिया गया है। इस बात से सन्तुष्ट हो जाने पर कि सभी औपचारिकताओं का पालन कर दिया गया है, रजिस्ट्रार यह प्रमाणित करेगा कि अब कम्पनी व्यापार आरम्भ करने की हकदार हो गई है।

4.6.2 व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने की विधि

यदि शेयर पूंजी वाली कोई सार्वजनिक कम्पनी सामान्य जनता को अपने शेयरों या ऋणपत्रों में धन लगाने के लिए निमंत्रित करती है और इसके लिए वह **प्रविवरण ज़ारी करती** है, तो ऐसी कम्पनी तब तक व्यापार आरम्भ नहीं कर सकती जब तक कि:

i) प्रविवरण में वर्णित न्यूनतम अभिदान राशि के बराबर शेयर आवंटित नहीं हो जाते तथा उन पर नकद राशि प्राप्त नहीं हो जाती। सरल शब्दों में यह कह सकते हैं कि न्यूनतम अभिदान राशि नकद प्राप्त हो जानी चाहिए।

ii) प्रत्येक निदेशक ने अपने योग्यता शेयरों पर या उनके द्वारा लिए जाने वाले अनुबन्धित शेयरों पर उतनी ही राशि का आवेदन तथा आवंटन राशि के रूप में नकद भुगतान न कर दिया हो जितना कि अन्य शेयरधारियों द्वारा आवेदन एवं आवंटन पर देय था।

iii) मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज में शेयरों या ऋण-पत्रों के क्रय-विक्रय के लिए अनुमति प्राप्त न करने या उसके लिए आवेदन न करने के कारण किसी भी धन को आवेदनकर्ताओं को लौटाने का दायित्व उत्पन्न नहीं होता।

iv) जब किसी कम्पनी के शेयर स्टॉक एक्सचेंज में सूचीयत होते हैं, तो सम्बन्धित स्टॉक एक्सचेंज में निर्धारित समय के भीतर सूचीयन के लिए आवेदन पत्र अवश्य भेज दिया जाना चाहिए।

v) भारतीय स्टाम्प अधिनियम द्वारा निर्धारित स्टाम्प फीस या जिस राज्य में कम्पनी का पंजीयन होना है

उस राज्य के स्टाम्प अधिनियम के अन्तर्गत निर्धारित स्टाम्प फीस जमा न करा दी गई हो।

vi) भुगतान कर दिए जाने के प्रमाण स्वरूप सरकारी खजाने के चालान को अन्य दस्तावेज़ों के साथ नत्थी कर दिया जाना चाहिए।

vii) निर्धारित प्रारूप में विधिवत् प्रमाणित सांविधिक घोषणा रजिस्ट्रार के पास फाइल न कर दी जाए। इस घोषणा में यह स्पष्ट किया जाता है कि उपर्युक्त (i), (ii) तथा (iii) वाक्यांशों का पूर्णतः पालन कर दिया गया है। इस सांविधिक घोषणा को कम्पनी के निदेशकों या सचिव द्वारा सत्यापन किया जाना चाहिए। यदि कम्पनी ने किसी सचिव को नियुक्त नहीं किया है तो पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाले सचिव द्वारा इस घोषणा का सत्यापन किया जाना चाहिए।

यदि कम्पनी तो शेयर पूंजी वाली है, परन्तु वह अपने शेयरों को जनता को बेचने के लिए आमंत्रित करने के उद्देश्य से **प्रविवरण जारी नहीं करती,** तो ऐसी कम्पनी उस समय तक व्यापार आरम्भ नहीं कर सकती जब तक कि निम्न शर्तें पूर्ण नहीं हो जातीं:

i) अधिनियम की अनुसूची III के भाग II में निर्दिष्ट रिपोर्ट के साथ कम्पनी को स्थानापन्न प्रविवरण कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास भेजना चाहिए। यह प्रविवरण, शेयरों या ऋणपत्रों के प्रथम आवंटन से कम-से-कम तीन दिन पहले रजिस्ट्रार के पास अवश्य फाइल कर देना चाहिए।

ii) इस सम्बन्ध में यह घोषणा की जानी चाहिए कि कम्पनी के प्रत्येक निदेशक ने अपने योग्यता शेयरों या अनुबन्धित शेयरों के लिए आवेदन तथा आवंटन राशि का नकद भुगतान कम्पनी को कर दिया है।

iii) प्रथम आवंटन करने से कम-से-कम तीन दिन पहले, निर्धारित प्रारूप में सत्यापित घोषणा रजिस्ट्रार के पास फाइल की जानी चाहिए। इस घोषणा में यह लिखा होना चाहिए कि उपर्युक्त शर्तों का पूर्णतः पालन कर दिया गया है तथा इस घोषणा को कम्पनी के किसी भी निदेशक या सचिव द्वारा सत्यापित किया जाना चाहिए। यदि कम्पनी ने सचिव की नियुक्ति नहीं की है तो इस सांविधिक घोषणा को पूर्णकालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव भी सत्यापित कर सकता है (धारा 149)।

जब उपर्युक्त आवश्यक शर्तों को पूर्ण कर दिया जाता है तो सन्तुष्ट होने पर, रजिस्ट्रार कम्पनी को एक प्रमाण-पत्र देगा जिसे 'व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र' कहते हैं। यह प्रमाण-पत्र यह प्रमाणित करता है कि कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने का अधिकार प्राप्त हो गया है; तथा यह इस तथ्य का एक निश्चायक प्रमाण है कि कम्पनी व्यापार आरम्भ करने के लिए हकदार है। यदि कोई कम्पनी इन प्रावधानों का उल्लंघन करके व्यापार आरम्भ करती है, तो उल्लंघन के लिए उत्तरदायी प्रत्येक दोषी व्यक्ति पर 500 रुपये प्रतिदिन तक जुर्माना किया जा सकता है (धारा 149 (6))।

यहां यह ध्यान रहे कि कम्पनी के निगमित होने की तारीख के एक वर्ष के भीतर कम्पनी को व्यापार आरम्भ कर देना चाहिए, अन्यथा न्यायालय द्वारा कम्पनी का समापन कराया जा सकता है (धारा 433 (c))।

आपको यह याद रखना चाहिए कि शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी तब तक व्यापार आरम्भ नहीं कर सकती जब तक उसे यह प्रमाण-पत्र प्राप्त नहीं हो जाता। निगमन के पश्चात् परन्तु व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने से पहले यदि कोई अनुबन्ध किया जाता है तो वे अस्थायी (provisional) प्रकृति के होते हैं तथा कम्पनी उन अनुबन्धों से तब तक बाध्य नहीं होती जब तक उसे व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त नहीं हो जाता।

ऐसे अनुबन्धों की स्थिति के बारे में एक दिलचस्प प्रश्न उठता है जो किसी सार्वजनिक कम्पनी ने निगमन के पश्चात् परन्तु व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त होने से पहले किया हो। कम्पनी अधिनियम की धारा 149 (4) के अनुसार ऐसे समस्थ अनुबन्ध विशुद्ध रूप से अस्थायी (provisional) प्रकृति के माने जाते हैं, तथा कम्पनी ऐसे अनुबन्धों से तब तक बाध्य नहीं होती जब तक उसे व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त नहीं हो जाता। अतः यदि कोई सार्वजनिक कम्पनी निगमन के पश्चात् अनुबन्ध करती है परन्तु उसे व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र कभी भी प्राप्त नहीं होता, तो कम्पनी उन अनुबन्धों से कभी भी बाध्य नहीं होगी। परन्तु व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र की तारीख से ही ऐसे अनुबन्ध कम्पनी के प्रति स्वतः ही लागू हो जाते हैं तथा उनकी पुष्टि की आवश्यकता नहीं होती। इस बात को एक उदाहरण दे कर स्पष्ट करते हैं—एक फर्नीचर व्यापारी **'A'** ने एक कम्पनी को फर्नीचर सप्लाई करने का अनुबन्ध किया। व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने से पहले ही कम्पनी का समापन हो गया। **'A'** फर्नीचर का मूल्य कम्पनी से वसूल करने में सफल नहीं होगा क्योंकि कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने का

अधिकार ही प्राप्त नहीं हुआ।

बोध प्रश्न ग

1) निगमन प्रमाण-पत्र से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

2) निगमन के क्या परिणाम होते हैं?

....

....

....

....

3) प्रविवरण जारी करने वाली कम्पनी कब व्यापार आरम्भ कर सकती है?

....

....

....

....

4) अस्थायी अनुबन्धों की कानूनी स्थिति क्या होती है?

....

....

....

....

5) बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत:

i) निगमन प्रमाण-पत्र में लिखी तारीख से कम्पनी अस्तित्व में आ जाती है।

ii) रजिस्ट्रार अपना हस्ताक्षर करके निगमन प्रमाण-पत्र ज़ारी करता है।

iii) सार्वजनिक कम्पनी तथा निजी कम्पनी को निगमित करने की विधि एक जैसी ही है।

iv) रजिस्ट्रार द्वारा ज़ारी किया गया निगमन प्रमाण-पत्र इस बात का निश्चायक प्रमाण होता है कि कम्पनी अधिनियम द्वारा पंजीयन से सम्बन्धित निर्धारित सभी आवश्यक नियमों का पूर्णतः पालन कर दिया गया है।

v) निगमन प्रमाण-पत्र इस तथ्य का कोई निश्चायक प्रमाण नहीं होता कि प्रमाण-पत्र में लिखी तारीख को कम्पनी अस्तित्व में आ गई।

vi) केवल सार्वजनिक कम्पनी को निगमन के पश्चात् शाश्वत उत्तराधिकार प्राप्त होता है।

vii) निजी कम्पनी निगमन प्रमाण-पत्र प्राप्त करते ही तुरन्त व्यापार आरम्भ कर सकती है।

viii) निगमन के पश्चात् अन्तर्नियम के प्रावधान तीसरे पक्षकारों के प्रति कम्पनी के अधिकारों को नियमित करते हैं।

ix) सार्वजनिक कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने के लिए व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करना होगा।

x) निगमन के पश्चात्, परन्तु व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त होने से पहले, कम्पनी जो अनुबन्ध करती है वे अस्थायी होते हैं।

xi) शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी की दशा में, व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के लिए एक आवश्यक शर्त यह है कि न्यूनतम अभिदान राशि के बराबर नकद मूल्य के लिए शेयरों का आवंटन हो गया है।

xii) शेयर पूंजी वाली ऐसी सार्वजनिक कम्पनी जिसने जनता को शेयर खरीदने के लिए आमंत्रित करने के उद्देश्य से प्रविवरण ज़ारी नहीं किया है, वह रजिस्ट्रार के पास स्थानापन्न प्रविवरण फाइल किए बिना व्यापार आरम्भ कर सकती है।

4.7 सारांश

कम्पनी के गठन की तीन अवस्थाएं हैं—प्रर्वतन, निगमन तथा व्यापार आरम्भ करना। प्रवर्तन की अवस्था में कम्पनी के प्रवर्तक व्यापार की परिकल्पना करते हैं तथा कम्पनी के निर्माण के लिए सभी आवश्यक साधनों को संगठित करते हैं। वे सभी आवश्यक दस्तावेज़ों को तैयारी व उनकी छपाई की व्यवस्था करते हैं तथा पंजीयन के लिए निर्धारित फीस के साथ उन्हें रजिस्ट्रार के कार्यालय में फाइल करते हैं। इन दस्तावेज़ों की जांच करके यदि रजिस्ट्रार इस बात से सन्तुष्ट हो जाता है कि कम्पनी अधिनियम द्वारा निर्धारित सभी औपचारिकताओं को पूरा कर दिया गया है, तो वह अपना हस्ताक्षर करके कम्पनी को निगमन का प्रमाण-पत्र प्रदान करता है। इस तारीख से कम्पनीं का निगमित जीवन आरम्भ होता है

निजी कम्पनी तथा शेयर पूंजी के बिना सार्वजनिक कम्पनी, निगमन के तुरन्त बाद ही व्यापार आरम्भ कर सकती हैं। इसके विपरीत, शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी को निर्धारित विधि का पालन करना पड़ता है, तभी उसे व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र मिलता है। यह प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के पश्चात् ही वह व्यापार आरम्भ कर सकती है। शेयर पूँजी वाली सार्वजनिक कम्पनी को जब व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र मिल जाता है, तब वह सीमानियम द्वारा प्रदान किए गये सभी अधिकारों को उपयोग कर सकती है।

4.8 शब्दावली

निश्चायक (Conclusive): अन्तिम जिसके लिए किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं रहती।

ऋणपत्र (Debenture): ऐसा दस्तावेज़ या प्रमाण-पत्र जिस पर कम्पनी के अधिकारी हस्ताक्षर करके ऋण का प्रमाण पत्र देते हैं तथा ब्याज सहित उसे वापस लौटाने की गारंटी देते हैं।

निगमित (Incorporated): निगमित निकाय के रूप में निर्मित, जो एक व्यक्ति की तरह कार्य करने का हकदार होती है।

आपस में (Inter se): एक-दूसरे के बीच या परस्पर।

प्रवर्तक (Promoter): जो कम्पनी के निर्माण के लिए प्रवर्तन कार्य करता है।

प्रविवरण (Prospectus): सार्वजनिक जनता को कम्पनी के शेयरों या ऋणपत्रों में धन लगाने के लिए निमंत्रण।

संशोधन (Rectification): ठीक करने या गलती को ठीक करने का कार्य या प्रक्रिया।

विवरण (Statement): लिखित दस्तावेज़ जिसमें किसी विषय के बारे में पूर्ण जानकारी दी जाती है।

सांविधिक घोषणा (Statutory declaration): किसी लिखित कानून के नियमों को पालन करने की घोषणा।

वचन (Undertaking): उत्तरदायित्व लेना, आश्वासन देना या बीड़ा उठाना।

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1) इस प्रश्न के उत्तर के लिए इस इकाई का 4.2 देखिए।

2) i) तीन ii) निगमन iii) व्यापार के विचार की खोज iv) निगमित v) वैध vi) असीमित

vii) केन्द्र सरकार, अवांछनीय viii) अन्तर्नियम ix) अभिदाता या प्रवर्तक, हस्ताक्षर x) गवाह

3) i) गलत ii) गलत iii) सही iv) गलत v) गलत vi) सही

ख 1) इस इकाई का 4.3 देखिए

2) i) सही ii) गलत iii) सही iv) गलत v) सही vi) सही vii) गलत

ग 5) i) सही ii) सही iii) गलत iv) सही v) गलत vi) गलत vii) सही viii) गलत ix) सही x) सही xi) सही xii) गलत

4.10 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

1) कम्पनी के निर्माण की विभिन्न अवस्थाएँ क्या हैं? वर्णन कीजिए।

2) कम्पनी के पंजीयन के लिए रजिस्ट्रार के पास फाइल किए जाने वाले दस्तावेज़ों को सूचीबद्ध कीजिए।

3) कम्पनी के 'निगमन' से आप क्या समझते हैं? कम्पनी के पंजीयन के क्या प्रभाव होते हैं?

4) "निगमन का प्रमाण-पत्र इस बात का निश्चायक प्रमाण है कि कम्पनी अधिनियम द्वारा निर्धारित कम्पनी के निर्माण सम्बन्धी सभी आवश्यकताएं पूरी कर ली गई हैं." स्पष्ट कीजिए।

5) व्यापार आरम्भ करने से क्या तात्पर्य है? व्यापार आरम्भ करने से पहले कम्पनी को क्या-क्या कार्यवाही करनी पड़ती है? वर्णन कीजिए।

6) शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी यदि व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने से पहले कोई अनुबन्ध करती है, तो इसके क्या परिणाम होंगे?

7) यह तो आप जानते हैं कि प्रस्तावित कम्पनी के प्रवर्तक जब कम्पनी के निगमन के लिए आवेदन करते हैं, तो उन्हें इस कम्पनी के सीमानियम की छपी हुई प्रति रजिस्ट्रार के पास भेजनी पड़ती है। छपी हुई प्रति के स्थान पर, प्रवर्तकों ने सीमानियम की कम्प्यूटर से छपी हुई प्रति पंजीयन के लिए भेज दी। रजिस्ट्रार क्या इसे स्वीकार करने से इंकार कर सकता है?

[संकेत: छपाई की तकनीक में प्रगति को ध्यान में रखते हुए, कम्प्यूटर द्वारा छपी हुई प्रति भी उस आवश्यकता को पूरा करती है कि सीमानियम छपा हुआ होना चाहिए। अतः रजिस्ट्रार मना नहीं कर सकता।]

8) कम्पनी के प्रवर्तकों ने Z के साथ कम्पनी की ओर से करार किया कि वे उसे कम्पनी का सालिसिटर नियुक्त करेंगे। निगमन होने पर कम्पनी ने Z को सालिसिटर नियुक्त नहीं किया। Z को सलाह दीजिए।

[संकेत: कम्पनी के विरुद्ध Z को कोई उपचार उपलब्ध नहीं है। परन्तु वह इस अनुबन्ध के लिए प्रवर्तकों को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहरा सकता है।]

9) तमिलनाडू राज्य में लाटरी का व्यापार चलाने के उद्देश्य से एक निजी कम्पनी का निगमन किया गया। कम्पनी के कार्य को इस आधार पर चुनौती दी गई है कि लाटरी चलाना गैरकानूनी है। कम्पनी को यह तर्क था कि जब एक बार कम्पनी का निगमन हो गया तो कम्पनी के व्यापार की प्रकृति के बारे में कोई प्रश्न नहीं उठाया जा सकता तथा निगमन प्रमाण-पत्र निश्चायक होता है।

[संकेत: आपने ऊपर 4.5 में पढ़ा है कि निगमन प्रमाण-पत्र, सीमानियम के उद्देश्य खण्ड में वर्णित कम्पनी के उद्देश्य की वैधता के सम्बन्ध में निश्चायक नहीं होता, तथा अवैध उद्देश्य इससे वैध नहीं हो जाते। अतः कम्पनी को लाटरी का व्यापार करने से रोका जा सकता है।]

10) शेयर पूंजी वाली ऐसी सार्वजनिक कम्पनी जिसने सामान्य जनता को कम्पनी के शेयरों में धन लगाने के लिए निमंत्रित करने के उद्देश्य से प्रविवरण जारी किया है, उसे व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के लिए किस विधि का पालन करना होगा, स्पष्ट कीजिए।

नोट: इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को और अच्छी तरह से समझने में सहायता मिलेगी। उनके उत्तर देने का प्रयास कीजिए। लेकिन अपने उत्तर विश्वविद्यालय को मत भेजिए। ये सिर्फ आपके अपने अभ्यास के लिए दिए गए हैं।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-07

कम्पनी विधि

खंड

2

मुख्य प्रलेख

इकाई 5

सीमानियम 5

इकाई 6

अन्तर्नियम 17

इकाई 7

प्रविवरण 30

खंड 2 मुख्य प्रलेख (Principal Documents)

कम्पनी के निर्माण के लिये और इसे अपना व्यवसाय शुरू करने के लिये कई प्रलेख बनाने होते हैं। इनमें मुख्य हैं : (i) सीमानियम, (ii) अन्तर्नियम और (iii) प्रविवरण।

सीमानियम कम्पनी के कार्यक्षेत्र को परिभाषित करता है और बाहरी व्यक्तियों से इसके सम्बंध को निर्धारित करता है। कम्पनी के अन्तर्नियम में इसके आन्तरिक मामलों की व्यवस्था के संबंध में नियम दिये होते हैं। प्रविवरण का उद्देश्य कम्पनी के बारे में आवश्यक जानकारी प्रदान करना और प्रत्याशित निवेशकों को कम्पनी के शेयरों और ऋणपत्रों के लिये अभिदान करने को प्रेरित करना है।

इस खंड में हम इन तीन प्रलेखों के महत्व, विषय-सामग्री और सम्बंधित नियमों का विस्तार से अध्ययन करेंगे।

इकाई 5 सीमानियम (Memorandum of Association) के बारे में है। इसमें सीमानियम के अर्थ, उद्देश्य एवं विषय-सामग्री के संबंध में तथा इसके विभिन्न खंडों में परिवर्तन करने की विधियों के संबंध में विचार किया गया है।

इकाई 6 में अन्तर्नियम (Articles of Association) का अर्थ, महत्व और विषय सामग्री के बारे में बताया गया है। इसमें परिवर्तन करने की विधि भी बतायी गयी है तथा सीमानियम और अन्तर्नियम के प्रभाव और आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त पर भी विचार किया गया है।

इकाई 7 प्रविवरण (Prospectus) के संबंध में है। इसमें इसका अर्थ, उद्देश्य और विषय सामग्री स्पष्ट की गयी है। इसमें प्रविवरण में मिथ्यानिरूपण की स्थिति में पीड़ित पक्ष को उपलब्ध उपचारों पर भी विचार किया गया है।

इकाई 5 सीमानियम (Memorandum of Association)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 अर्थ एवं उद्देश्य
5.3 सीमानियम का प्रारूप
5.4 सीमानियम की विषय-वस्तु
  5.4.1 नाम खंड
  5.4.2 पंजीकृत कार्यालय खंड
  5.4.3 उद्देश्य खंड
  5.4.4 दायित्व खंड
  5.4.5 पूँजी खंड
  5.4.6 संघ खंड
5.5 शक्तिबाह्यता का सिद्धान्त
5.6 सीमानियम में परिवर्तन
  5.6.1 नाम में परिवर्तन
  5.6.2 पंजीकृत कार्यालय में परिवर्तन
  5.6.3 उद्देश्य खंड में परिवर्तन
  5.6.4 दायित्व खंड में पविर्तन
  5.6.5 पूँजी खंड में परिवर्तन
5.7 सारांश
5.8 शब्दावली
5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें
5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.11 स्वपरख प्रश्न

5.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि
- सीमानियम का अर्थ एवं उद्देश्य का वर्णन कर सकें
- सीमानियम के विभिन्न प्रारूपों को बता सकें
- सीमानियम के विभिन्न खंडों की सूची बना सकें
- शक्तिबाह्यता के सिद्धांत की व्याख्या कर सकें
- सीमानियम के विभिन्न खंडों में परिवर्तन करने की पद्धति का वर्णन कर सकें।

5.1 प्रस्तावना

वर्तमान संसार में जबकि व्यापार अत्यंत जटिल हो गया है, उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जाता है जिसके लिए बड़ी मात्रा में कोष की आवश्यकता होती है, ऐसी स्थिति में कम्पनी संगठन बहुत लोकप्रिय हो गया है। कम्पनी की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसका अपने सदस्यों से पृथक अस्तित्व होता है। कम्पनी केवल तभी अस्तित्व में आती है जब उसे रजिस्ट्रार ऑफ कम्पनीज़ से निगमन का प्रमाण पत्र मिल जाता है। कम्पनी के निगमन के लिए, रजिस्ट्रार ऑफ कम्पनीज़ के पास कुछ प्रलेख जमा कराने पड़ते हैं। प्रथम और सबसे महत्वपूर्ण प्रलेख जो जमा कराया जाता है वह सीमानियम (Memorandum of Association) है। इस इकाई में आप सीमानियम का अर्थ एवं उद्देश्य पढ़ेंगे। आप इस प्रलेख की विषय-वस्तु के बारे में तथा इसके विभिन्न खंडों में परिवर्तन करने की विधि का भी अध्ययन करेंगे।

5.2 अर्थ एवं उद्देश्य

कम्पनी अधिनियम की धारा 2(28) के अन्तर्गत "सीमानियम का अर्थ संस्था के मूल रूप से बने हुए अथवा किसी पूर्व अधिनियम या कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत संशोधित सीमानियम से है।" परन्तु यह

परिभाषा अपने आप में पूर्ण नहीं है। **ऐशबरी रेलवे कैरेज क. बनाम रिचे** (**Ashbury Railway Carriage** Co. Vs. Riche) के केस में लार्ड केने ने सीमानियम की परिभाषा इस प्रकार की है—"सीमानियम कम्पनी का चार्टर होता है तथा वह कम्पनी के अधिकार क्षेत्र की सीमाओं को परिभाषित करता है।"

सीमानियम कम्पनी का चार्टर होता है। इसमें वे आधारभूत शर्तें लिखी होती हैं जिनके अनुसार कम्पनी निगमित की जाती है। इस दस्तावेज़ के उद्देश्य खंड से हमें यह पता चलता है कि कम्पनी क्या-क्या कार्य कर सकती है। सीमानियम का उद्देश्य खंड अत्यन्त महत्वपूर्ण खंड है, क्योंकि इससे हमें कम्पनी के कार्यक्षेत्र की सीमाओं का पता चलता है। कम्पनी के कार्य इस खंड में निर्धारित कार्यक्षेत्र से बाहर नहीं हो सकते। इस प्रकार यह प्रलेख कम्पनी के अधिकार क्षेत्र को परिभाषित एवं सीमित करता है। यदि कम्पनी अपने सीमानियम में दिए उद्देश्य खंड के बाहर कोई कार्य करती है, तो ऐसे कार्य शक्तिबाह्य (ultra-vires) अर्थात् अधिकारों से बाहर माने जाते हैं तथा कानून के द्वारा उन्हें व्यर्थ एवं शून्य घोषित किया गया है।

सीमानियम एक सार्वजनिक प्रलेख है, कोई भी व्यक्ति इसकी जाँच कर सकता है, अतः कम्पनी के साथ लेन-देन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि उसे इस प्रलेख की विषय-सामग्री की पूर्ण जानकारी है। सीमानियम का मुख्य उद्देश्य इसके शेयरधारियों, ऋणदाताओं एवं अन्य उन समस्त व्यक्तियों, जो इसके साथ लेन-देन करते हैं, को यह बतलाना है कि इसके अधिकार क्या हैं तथा इसका कार्य-क्षेत्र कितना है। इस प्रकार भावी शेयरधारी यह जान सकता है कि उसका धन किस क्षेत्र या कार्य के लिए प्रयुक्त किया जाएगा तथा निवेश करने में वह कितना जोखिम उठा रहा है। कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाला प्रत्येक व्यक्ति, जैसे माल सप्लाई करने वाला या ऋणदाता, यह जान सकेगा कि जो लेन-देन वह कम्पनी के साथ करने जा रहा है, वह कम्पनी के अधिकार क्षेत्र के भीतर है भी या नहीं। यदि वह यह पाता है कि जो अनुबन्ध वह कम्पनी के साथ करने जा रहा है वह सीमानियम में वर्णित उद्देश्य खंड की परिधि के अन्तर्गत नहीं है, तो उसे अपने हितों की रक्षा के लिए ऐसे अनुबन्ध नहीं करने चाहिए।

5.3 सीमानियम का प्रारूप

कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 14 के अनुसार कम्पनी का सीमानियम अनुसूची 1 में वर्णित प्रारूपों में से किसी भी प्रारूप के समान या उससे मिलते-जुलते प्रारूप में होना चाहिए जो कम्पनी के लिए उपयुक्त हो। विभिन्न प्रारूप विभिन्न प्रकार की कम्पनियों पर लागू होते हैं।

उपर्युक्त तालिका में सीमानियम के विभिन्न आदर्श प्रारूप दिए गए हैं, जो इस प्रकार हैं:
तालिका B : शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी के लिए।
तालिका C : गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी के लिए जिसकी शेयर पूँजी नहीं है।
तालिका D : गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी जिसकी शेयर पूँजी है।
तालिका E : असीमित दायित्व वाली कम्पनी के लिए।

सीमानियम छपा हुआ, क्रमांकित तथा पैराग्राफ़ों में विभाजित होना चाहिए। सार्वजनिक कम्पनी की दशा में इस पर 7 व्यक्तियों के तथा निजी कम्पनी की दशा में 2 व्यक्तियों के हस्ताक्षर अवश्य होने चाहिए। सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों को 'अभिदाता' (subscriber) कहते हैं। प्रत्येक अभिदाता को अपना पता तथा व्यवसाय भी लिखना चाहिए। प्रत्येक अभिदाता के हस्ताक्षरों के लिए कम-से-कम एक गवाह के हस्ताक्षर भी होने चाहिए तथा गवाह को भी अपना पता तथा व्यवसाय का विवरण देना चाहिए। एक अभिदाता, दूसरे अभिदाता के हस्ताक्षर की गवाही नहीं दे सकता। प्रत्येक अभिदाता को कम से कम एक शेयर अवश्य लेना चाहिए तथा सीमानियम में अपने नाम के सामने शेयरों की वह संख्या लिखनी चाहिए जो वह लेने को तैयार हैं।

5.4 सीमानियम की विषय-वस्तु

आप सीमानियम का अर्थ एवं उद्देश्य पढ़ चुके हैं। आइए, अब इसकी विषय-वस्तु का अध्ययन करते हैं।

कम्पनी अधिनियम की धारा 13 के अनुसार, शेयरों द्वारा सीमित प्रत्येक कम्पनी के सीमानियम में निम्नलिखित बातें दर्शाई जानी चाहिएं:

क) कम्पनी का नाम। सार्वजनिक कम्पनी की दशा में नाम के अंत में "सीमित" तथा निजी कम्पनी की दशा में नाम के अंत में "निजी सीमित" शब्द जोड़े जाने चाहिए।
ख) उस राज्य का नाम लिखा जाना चाहिए जिसमें कम्पनी का पंजीकृत कार्यालय स्थित है।

ग) कम्पनी के उद्देश्य, इनको पृथक् रूप से (i) मुख्य उद्देश्य तथा (ii) अन्य उद्देश्य जो (i) में शामिल नहीं है, के रूप में लिखा जाना चाहिए।

घ) शेयरों या गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में यह घोषणा कि सदस्यों का दायित्व सीमित है।

ङ) शेयर पूँजी वाली कम्पनी की दशा में

(i) शेयर पूँजी की वह राशि जिससे कम्पनी को पंजीकृत किया जाना है, तथा निश्चित राशि वाले शेयरों में उसका विभाजन (असीमित दयित्व वाली कम्पनी की दशा में यह प्रावधान लागू नहीं होता),

(ii) सीमानियम के प्रत्येक अभिदाता को कम से कम एक शेयर लेना चाहिए तथा वह अपने नाम के सामने खरीदे गये शेयरों की संख्या लिखेगा।

धारा 13 के उपर्युक्त प्रावधान के अनुसार अब हम सीमानियम के मुख्य खंडों की सूची निम्नलिखित प्रकार से बना सकते हैं:

1 नाम खंड,
2 पंजीकृत कार्यालय खंड,
3 उद्देश्य खंड,
4 दायित्व खंड,
5 पूँजी खंड, तथा
6 संघ खंड/अभिदान खंड।

बोध प्रश्न क

1 सीमानियम क्या होता है?

....

....

....

....

2 तालिका में कम्पनी का नाम लिखिए जिसके लिए यह उपयुक्त है:

तालिका B : ....

तालिका C : ....

तालिका D : ....

तालिका E : ....

3 बताइए कि निम्न कथन सही हैं अथवा गलत।

i) सीमानियम कम्पनी का प्रमुख प्रलेख होता है।

ii) सीमानियम कम्पनी के कार्यक्षेत्र की सीमा निर्धारित करता है।

iii) सीमानियम के अभिदाता के हस्ताक्षरों की गवाही कराना आवश्यक नहीं है।

iv) निगमन के समय प्रत्येक कम्पनी को अपना सीमानियम बनाना तथा फाइल करना आवश्यक नहीं है।

v) कम्पनी के सीमानियम में छः खंड होते हैं।

vi) प्रत्येक कम्पनी के सीमानियम में पूँजी खंड अवश्य दर्शाया जाना चाहिए।

4 रिक्त स्थान भरिए:

i) सार्वजनिक कम्पनी की दशा में सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वाले कम से कम .... व्यक्ति तथा निजी कम्पनी की दशा में कम से कम .... व्यक्ति होने चाहिए।

ii) सीमानियम का उद्देश्य खंड दो भागों में विभाजित होता है: (अ) "मुख्य उद्देश्य" तथा (ब) ....

iii) सीमानियम के प्रत्येक अभिदाता को कम से कम ········ शेयर अवश्य लेना चाहिए।

iv) ········ उन उद्देश्यों को परिभाषित करता है जिसके लिए कम्पनी की स्थापना की गई है।

v) सीमानियम का उद्देश्य ········ के हितों की रक्षा करने के साथ-साथ अन्य पक्षकारों की रक्षा करना भी है।

vi) सीमानियम ··················· के साथ कम्पनी का सम्बन्ध नियमित करता है।

5.4.1 नाम खंड (Name Clause)

प्रत्येक कम्पनी के सीमानियम में कंपनी के नाम का उल्लेख अवश्य किया जाना चाहिए। सार्वजनिक कम्पनी के नाम के अंत में "सीमित" तथा निजी कम्पनी के नाम के अंत में "निजी सीमित" शब्द अवश्य जोड़े जाने चाहिए। आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी एक विधिक व्यक्ति होती है, अतः इसका कोई नाम अवश्य होना चाहिए जिससे इसे जाना जाए।

कम्पनी कोई भी नाम रख सकती है, परन्तु यह ध्यान रहे कि नाम ऐसा नहीं होना चाहिए जो केन्द्र सरकार के मत में अवांछनीय है [धारा 20]। कम्पनी के मामलों से सम्बन्धित विभाग (भारतीय सरकार) ने कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत कम्पनी का नाम पंजीकरण कराने के सम्बन्ध में कुछ दिशा-निर्देश बना रखे हैं।

यह भी ध्यान रखना चाहिए कि कम्पनी का प्रस्तावित नाम, पहले से ही विद्यमान कम्पनी के नाम के समान या उससे मिलता-जुलता नहीं होना चाहिए।

कम्पनी का प्रस्तावित नाम संप्रतीक और नाम (अनुचित प्रयोग निवारण) अधिनियम, 1950 के प्रावधानों का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। इस अधिनियम ने कुछ नामों के उपयोग पर रोक लगाया है। इस अधिनियम ने निम्नलिखित नामों या चिन्हों के उपयोग पर प्रतिबन्ध लगाया है (अ) संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O.) तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन, (W.H.O.) (ब) भारतीय राष्ट्रीय ध्वज, (स) केन्द्र तथा राज्य सरकारों की राजकीय मुद्रा तथा चिन्ह, (द) महात्मा गांधी तथा प्रधान मंत्री के नाम एवं चित्र। अतः यदि प्रस्तावित नाम से ऐसा आभास होता है कि इसे सरकार का संरक्षण प्राप्त है, जबकि वास्तव में ऐसा है नहीं, तो ऐसे नाम से कम्पनी के पंजीकरण की अनुमति नहीं दी जाएगी।

कम्पनी के नाम का स्पष्ट रूप से प्रदर्शन : जब कम्पनी का नाम एक बार पंजीकृत हो जाता है तो कम्पनी के प्रत्येक कार्यालय तथा व्यापार के प्रत्येक स्थान के बाहर कम्पनी का नाम साफ अक्षरों में लिखा व प्रदर्शित किया जाना चाहिए। नाम साफ तौर से पढ़े जाने योग्य तथा उस क्षेत्र में सामान्य उपयोग में लाई जाने वाली भाषा में लिखा जाना चाहिए। कम्पनी की मुद्रा पर भी नाम स्पष्ट अक्षरों में अंकित कराना चाहिए तथा सभी सूचनाओं, विज्ञापन, बीजकों, व्यापारिक पत्रों में यह नाम छपा होना चाहिए। इन प्रावधानों का पालन न करने पर कम्पनी तथा उसके प्रत्येक दोषी अफसर पर जुर्माना किया जा सकता है [धारा 147]।

5.4.2 पंजीकृत कार्यालय खंड (Registered Office Clause)

इस खंड में उस राज्य का नाम लिखा जाता है जहाँ पंजीकृत कार्यालय स्थित है। प्रत्येक कम्पनी का एक पंजीकृत कार्यालय होना चाहिए, इससे उसका अधिवास (domicile) निर्धारित होता है। वास्तव में यह कम्पनी का वह पता होता है जहाँ सामान्यतः कम्पनी की सांविधिक पुस्तकें रखी जाती हैं तथा इस पते पर ही कम्पनी को सूचनाएं तथा अन्य संदेश भेजे जा सकते हैं।

सीमानियम में केवल उस राज्य का नाम लिखना ही पर्याप्त है जहाँ पर पंजीकृत कार्यालय स्थापित किया जाएगा। कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय के सही पते की सूचना निगमन की तिथि के 30 दिनों के भीतर रजिस्ट्रार को अवश्य भेज दी जानी चाहिए [धारा 146]।

5.4.3 उद्देश्य खंड (Objects Clause)

यह खंड कम्पनी के उद्देश्यों की व्याख्या करता है और इस प्रकार यह कम्पनी के कार्य-क्षेत्र को परिभाषित करता है। कम्पनी कोई भी ऐसा कार्य नहीं कर सकती जो उसके उद्देश्य वाक्य के परे या बाहर है तथा इससे बाहर किया गया प्रत्येक कार्य 'शक्ति बाह्य' (ultra vires) तथा व्यर्थ होगा। ऐसे कार्यों की सारे शेयरधारी मिलकर भी पुष्टि नहीं कर सकते।

परन्तु कम्पनी ऐसे कार्य कर सकती है जो मुख्य उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक या प्रासंगिक है या सहायक कार्य हैं तथा ऐसे कार्यों को शक्ति बाह्य नहीं माना जाता। इस प्रकार एक व्यापारिक कम्पनी को धन उधार लेने, विनिमय बिल लिखने व स्वीकार करने का निहित अधिकार होता है।

धारा 13 के अनुसार अब प्रत्येक कम्पनी को अपना उद्देश्य खंड निम्नलिखित दो भागों में विभाजित करना पड़ता है :

i) **कम्पनी के मुख्य उद्देश्य :** इस भाग में वे उद्देश्य भी शामिल किए जाते हैं जो मुख्य उद्देश्य की प्राप्ति हेतु अमल में लाए जाने वाले सहायक तथा सम्बद्ध होते हैं।
ii) **कम्पनी के अन्य उद्देश्य :** ऐसे कार्य जो उपर्युक्त (i) में शामिल नहीं किए जाते।

उपर्युक्त (ii) में दिए गये उद्देश्यों में ऐसे कार्य भी शामिल होते हैं, जिन्हें कम्पनी निगमन के पश्चात् शुरू नहीं करने जा रही है। कम्पनी अधिनियम की धारा 149 में वास्तव में वर्णित किया गया है कि यदि कोई कम्पनी ऐसा कार्य आरम्भ करना चाहती है जो "अन्य उद्देश्य" खंड के अन्तर्गत आता है, तो कम्पनी ऐसा कार्य केवल तभी कर सकती है जब कम्पनी की साधारण सभा में प्रस्ताव पारित करके कम्पनी को वह कार्य करने का अधिकार प्रदान किया गया हो [धारा 149]।

इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखें कि उद्देश्य खंड में कोई भी ऐसी बात नहीं लिखी जानी चाहिए जो अवैधानिक, अनैतिक या लोक-नीति के विपरीत हो अथवा कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों का उल्लंघन करने वाली हो। उदाहरण के लिए, धारा 77 के अनुसार कम्पनी अपने शेयर नहीं खरीद सकती, धारा 205 के द्वारा पूँजी में से लाभांश भुगतान करने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है, अतः यदि कम्पनी के उद्देश्य खंड में स्वंय अपने शेयरों को खरीदने की अथवा पूँजी में से लाभांश भुगतान करने की व्यवस्था की गई है, तो यह पूर्णतः शक्तिबाह्य होगी तथा व्यर्थ होगी।

उद्देश्य वाक्य को अत्यन्त सावधानी से तैयार करना चाहिए, परन्तु यह एकदम स्पष्ट तथा ऐसी भाषा में लिखे जाने चाहिए जिससे कोई भ्रम उत्पन्न न हो। इस खंड से शेयरधारियों एवं ऋणदाताओं को यह ज्ञात करने में सहायता मिलती है कि कम्पनी का धन किन-किन कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाएगा।

5.4.4 दायित्व खंड (Liability Clause)

इस खंड में कम्पनी के सदस्यों के दायित्व की प्रकृति को दर्शाया जाता है। जब सदस्यों का दायित्व सीमित हो, तब यह खंड अनिवार्य है। अतः असीमित दायित्व वाली कम्पनी की दशा में यह खंड शामिल ही नहीं किया जाता। आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी शेयरों द्वारा तथा गारंटी द्वारा सीमित हो सकती है। शेयरों से दायित्व सीमित वाली कम्पनी की स्थिति में, दायित्व खंड में यह तथ्य स्पष्टतः लिखा जाना चाहिए कि सदस्यों का दायित्व शेयरों द्वारा सीमित है। इसका आशय है कि सदस्य का दायित्व उसके द्वारा लिए गए शेयरों के अंकित मूल्य तक ही सीमित है। यदि कम्पनी के शेयर अंशतः प्रदत्त (partly paid) हैं, तो किसी भी सदस्य से उसके शेयरों पर बकाया राशि से अधिक राशि की मांग नहीं की जा सकती। इस प्रकार प्रत्येक सदस्य अपने शेयरों पर अदत्त (unpaid) राशि का भुगतान करने के लिए ही बाध्य है, उससे अधिक नहीं। उदाहरणार्थ, एक शेयरधारी के पास 10 रुपये अंकित मूल्य का शेयर है और उस शेयर पर अब तक 7.50 रु. की अदायगी कर दी है। अब उससे केवल 2.50 रु. की ही मांग की जा सकती है, अधिक की नहीं। इस उदाहरण में यदि वह पूर्णतः दत्त शेयरों का धारक है, तब उसका दायित्व शून्य होगा।

गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में यदि कम्पनी की शेयर पूँजी है, तब उसके सदस्यों का दायित्व दो तरह का होता है। वह अपने शेयरों पर अनमाँगी (uncalled) राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होता है। जब कभी भी कम्पनी अनमाँगी राशि की मांग करती है तो वह बकाया राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होता है, इसके साथ-साथ वह गारंटी की राशि तक भी उत्तरदायी होता है। गारंटी की गई राशि कितनी भी हो सकती है, परन्तु इस राशि की मांग कम्पनी के समापन के समय ही की जा सकती है अन्य किसी समय नहीं।

5.4.5 पूँजी खंड (Capital Clause)

इस खंड में पूँजी की कुल राशि दी जानी चाहिए जिससे कम्पनी पंजीकृत की गई है, इसे पंजीकृत (registered), या अधिकृत (authorised), या अंकित पूँजी भी कहते हैं।

शेयर पूँजी वाली सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में शेयर साधारण या पूर्वाधिकार वाले हो सकते हैं। अतः

कम्पनी की पूँजी पूर्वाधिकर शेयर पूँजी तथा साधारण शेयर पूँजी हो सकती है। इस खंड में यह भी वर्णन किया जाता है कि शेयर पूँजी निश्चित राशि वाले कितने शेयरों में विभाजित है।

ये शेयर एक निश्चित मूल्य या राशि के होते हैं। इस निश्चित मूल्य को सममूल्य (**par value**) या अंकित मूल्य (**nominal value**) भी कहते हैं। ईक्विटी शेयर का अंकित मूल्य 10 रुपये तथा पूर्वाधिकार शेयर 100 रुपये का हो सकता है। इस खंड का प्रभाव यह है कि कोई कम्पनी सीमानियम में वर्णित पंजीकृत पूँजी से अधिक राशि के लिए शेयर जारी नहीं कर सकती।

5.4.6 संघ खंड (Association Clause)

इस खंड में सीमानियम के अभिदाताओं की निम्नलिखित घोषणा रहती है: "हम कई व्यक्ति, जिनके नाम व पते निर्दिष्ट हैं, इस सीमानियम के अनुसार एक-एक कम्पनी के रूप में निगमित होने के इच्छुक हैं तथा हम कम्पनी की पूँजी में अपने-अपने नामों के आगे लिखे गये शेयर लेना स्वीकार करते हैं।"

कम्पनी अधिनियम की धारा 12 के अनुसार, सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में, सीमानियम पर कम से कम 7 व्यक्तियों तथा निजी कम्पनी की स्थिति में, कम से कम दो व्यक्तियों के हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं। प्रत्येक अभिदाता को एक गवाह की उपस्थिति में हस्ताक्षर करने चाहिंए और अभिदाता के हस्ताक्षर एक गवाह के द्वारा प्रमाणित किए जाने चाहिए। प्रत्येक अभिदाता को कम से कम एक शेयर अवश्य लेना चाहिए तथा सीमानियम में अपने नाम के आगे शेयरों की वह संख्या लिखनी चाहिए जो वह ले रहा है।

5.5 शक्तिबाह्यता का सिद्धान्त (Doctrine of Ultra Vires)

'बाह्य' शब्द का अर्थ है बाहर या परे तथा 'शक्ति' का अर्थ है 'अधिकार'। इस प्रकार कम्पनी के शक्तिबाह्य होने का अर्थ है 'कम्पनी के अधिकार क्षेत्र से बाहर के कार्य'। आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी के सीमानियम के उद्देश्य खंड में कम्पनी के उद्देश्यों का उल्लेख होता है, अतः कोई भी ऐसा कार्य जो वर्णित उद्देश्यों के बाहर है तो वह 'शक्तिबाह्य' कहलाएगा तथा वह पूर्णतया शून्य एवं अप्रवर्तनीय होगा। कम्पनी किसी भी ऐसे कार्य से बाध्य नहीं हो सकती है जो उसकी शक्ति या अधिकारों से परे हैं। शक्तिबाह्यता के सिद्धान्त का उद्देश्य सदस्यों, बाहरी व्यक्तियों तथा ऋणदाताओं के हितों की रक्षा करना है। ये इस प्रकार हैं:

i) कम्पनी के सदस्यों को उन उद्देश्यों की जानकारी है जिनके लिए उनके धन का उपयोग किया जा सकता है।

ii) कम्पनी के साथ लेन-देन करने वाले बाहरी व्यक्तियों को भी इन उद्देश्यों की जानकारी होती है जिनके लिए कम्पनी की स्थापना की गई है, अतः बाहरी व्यक्तियों को यह ध्यान रखना चाहिए कि वे कम्पनी के साथ ऐसे लेन-देन ही करें जो उन उद्देश्यों के अन्तर्गत हैं। इसी प्रकार, ऋणदाताओं को भी इस बात का भरोसा रहता है कि कम्पनी की परिसम्पत्तियों को अनधिकृत व्यापार में जोखिम में नहीं डाला जाएगा।

अतः शेयरधारियों तथा कम्पनी के साथ अनुबन्ध करने वाले बाहरी व्यक्तियों के हितों की रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि कम्पनी के कार्य, सीमानियम में वर्णित उद्देश्यों तक ही सीमित रहें। कम्पनी उद्देश्य वाक्य से परे कोई भी कार्य नहीं कर सकती और यदि वह कोई ऐसा कार्य करती है जो उद्देश्य खंड से परे हैं तो उसे शक्तिबाह्य कहा जाएगा और वह पूर्णतया व्यर्थ होगा।

शक्तिबाह्य कार्यों को निम्नलिखित तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं:

1 कम्पनी अधिनियम के लिए शक्तिबाह्य,
2 सीमानियम के लिए शक्तिबाह्य, तथा
3 अन्तर्नियम के लिए शक्तिबाह्य।

1 **कम्पनी अधिनियम के लिए शक्तिबाह्य:** ऐसा कोई भी कार्य जो कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के विपरीत या परे हैं, शक्तिबाह्य कहलाता है। ऐसा कार्य पूर्णतया व्यर्थ होता है तथा सब शेयरधारियों द्वारा एकमत से उनकी पुष्टि भी नहीं की जा सकती है। ऐसे कार्यों के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं
(अ) पूँजी में से लाभांश का भुगतान,
(ब) बोनस शेयरों का मुफ्त वितरण,
(स) अपने शेयरों को स्वयं खरीदना,
(द) कानूनी औपचारिकताओं को पूर्ण किए बिना शेयर पूँजी को घटाना।

2 **सीमानियम के लिए शक्तिबाह्य :** सीमानियम कम्पनी के अधिकार क्षेत्र को परिभाषित एवं सीमित करता है। सीमानियम में कम्पनी के उद्देश्यों का वर्णन होता है। कम्पनी कोई भी ऐसा कार्य नहीं कर सकती जो उसके उद्देश्य खंड के अधिकार क्षेत्र से परे हो। उद्देश्य खंड के विपरीत किया गया प्रत्येक कार्य सीमानियम के लिए शक्तिबाह्य होगा तथा व्यर्थ होगा। सब शेयरधारी एकमत से ऐसे कार्यों की पुष्टि नहीं कर सकते।

शक्तिबाह्यता का सिद्धान्त सर्वप्रथम **ऐशबरी रेलवे कैरेज क. बनाम रिचे** (Ashbury Railway Carriage Co. Vs. Riche) के केस में प्रतिपादित किया गया। इस केस में कम्पनी का निगमन रेल सवारी के डिब्बे व माल डिब्बे बनाने, बेचने व किराये पर देने तथा मैकेनिकल इंजीनियर एवं आम ठेकेदारी का व्यापार करने के लिए किया गया। कम्पनी के निदेशकों ने रिचे (Riche) के साथ एक अनुबन्ध किया जो रेलवे के ठेकेदार थे, इस अनुबन्ध के अनुसार उन्होंने बेल्ज़ियम में एक रेल-मार्ग बनाने का अनुबन्ध किया। कम्पनी ने साधारण बैठक में एक विशेष प्रस्ताव पारित करके इस अनुबन्ध की पुष्टि कर दी। बाद में, कम्पनी ने यह कह कर कि यह कार्य कम्पनी के लिए शक्तिबाह्य है, अनुबन्ध को रद्द कर दिया। कम्पनी पर अनुबन्ध भंग करने के लिए दावा किया गया। हाउस ऑफ लॉर्ड्स (House of Lords) ने निर्णय दिया कि यह अनुबन्ध सीमानियम के लिए शक्तिबाह्य है अतः व्यर्थ है। सब शेयरधारी भी इस अनुबन्ध का पुष्टिकरण नहीं कर सके, क्योंकि अनुबन्ध उद्देश्य खंड के विपरीत था।

शक्तिबाह्यता के सिद्धान्त को भारत में भी मान्यता प्रदान की गई है। ए.एल. मुदलियार बनाम एल.आई.सी. ऑफ इन्डिया (A.L. Mudaliar Vs. L.I.C. of India) के केस में सुप्रीम कोर्ट ने इस सिद्धान्त को मान्यता दी है।

3 **अन्तर्नियम के लिए शक्तिबाह्य :** ऐसे कार्य जो अन्तर्नियम के लिए शक्तिबाह्य हैं परन्तु कम्पनी की शक्ति के अन्तर्गत हैं, वे अन्तर्नियम के लिए शक्तिबाह्य 'कहलाते हैं। उदाहरण के लिए, अग्रिम राशि पर अन्तर्नियम में वर्णित ब्याज दर से अधिक ब्याज दर पर ब्याज का भुगतान। ऐसे कार्य भी व्यर्थ होते हैं, परन्तु कम्पनी अपनी साधारण सभा में एक विशेष प्रस्ताव पारित करके ऐसे अनधिकृत कार्यों की पुष्टि कर सकती है।

(1)2

शक्तिबाह्य कार्यों का प्रभाव

1 कम्पनी की शक्ति के बाहर किया गया कार्य पूर्णतया व्यर्थ होता है तथा कम्पनी के प्रति उन्हें प्रवर्तित नहीं किया जा सकता।
2 कम्पनी की शक्ति के बाहर किए गये कार्यों की सब शेयरधारी मिलकर भी पुष्टि नहीं कर सकते।
3 कम्पनी की शक्ति के बाहर किए गये कार्यों को न केवल बाहरी व्यक्ति कम्पनी के विरुद्ध प्रवर्तित कर सकते हैं बल्कि कम्पनी भी ऐसे कार्यों को बाहरी व्यक्ति के विरुद्ध प्रवर्तित नहीं कर सकती।
4 जब कभी भी कम्पनी शक्तिबाह्य कार्य करती है या करने जा रही होती है, तो उसका कोई भी सदस्य न्यायालय की सहायता से निषेधाज्ञा प्राप्त करके कम्पनी को वह शक्तिबाह्य कार्य करने से रोक सकता है।
5 यदि शक्तिबाह्य कार्य से कोई हानि होती है तो उसके लिए निदेशकों को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है।

उपर्युक्त विवरण से अब तक आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि यदि कोई कार्य कम्पनी की शक्ति से बाहर है, तो ऐसा कार्य पूर्णतया व्यर्थ होता है। अतः यदि कम्पनी ऋण लेने की सीमा से अधिक उधार धन लेती है, तो यह शक्तिबाह्य कार्य होगा तथा ऋणदाता को कम्पनी के विरुद्ध कोई भी कार्यवाही करने का अधिकार नहीं होगा।

यहाँ यह ध्यान रहे कि यदि कोई कार्य निदेशकों के लिए शक्तिबाह्य है, परन्तु कम्पनी के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत है, तो ऐसा कार्य एकदम व्यर्थ नहीं होता। कम्पनी के शेयरधारी अपनी साधारण सभा में ऐसे कार्यों की पुष्टि कर सकते हैं, तथा जब ऐसे कार्यों की पुष्टि कर दी जाती है तो कम्पनी उन कार्यों के लिए बाध्य होती है। जैसे, कम्पनी को ऋण लेने का तो अधिकार है, परन्तु निदेशकों को एक निश्चित राशि तक ही उधार लेने का अधिकार है। अब यदि निदेशक अपने अधिकारों से बाहर जाकर अधिक राशि ऋण के रूप में लेते हैं, तो ऐसे दशा में, कम्पनी यदि उचित समझे, तो वह निदेशक के कार्य की पुष्टि कर सकती है। पुष्टि किए जाने के पश्चात् कम्पनी एवं ऋणदाता इस अनुबन्ध से ठीक उसी प्रकार बाध्य होंगे जैसे कि यह कार्य कम्पनी ने अपने अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत किया है।

5.6 सीमानियम में परिवर्तन

आप पढ़ चुके हैं कि सीमानियम एक प्रमुख प्रलेख है, अतः कम्पनी के सदस्य जब चाहें, इसमें परवर्तन नहीं कर सकते। कम्पनी अधिनियम, 1956 में सीमानियम के विभिन्न खंडों में परिवर्तन करने के लिए विशेष पद्धति निर्धारित की है, और उस पद्धति के अनुसार ही परिवर्तन किया जाना चाहिए। आइए अब हम सीमानियम के विभिन्न खंडों में परिवर्तन करने की पद्धति का अध्ययन करते हैं।

5.6.1 नाम में परिवर्तन

कम्पनी का नाम कभी भी (i) साधारण सभा में एक विशेष प्रस्ताव पारित करके तथा (ii) केन्द्र सरकार की लिखित अनुमति से, परिवर्तित किया जा सकता है। किन्तु नाम में ऐसा परिवर्तन, जिसके अनुसार नाम से केवल "निजी" (private) शब्द हटाने या जोड़ने का प्रश्न है (अर्थात् जब सार्वजनिक कम्पनी को निजी कम्पनी में परिवर्तित किया जाता है), तो केन्द्र सरकार की अनुमति की आवश्यकता नहीं होती।

यदि कम्पनी किसी ऐसे नाम से पंजीकृत कर दी गई है जो केन्द्र सरकार के मत में अवांछनीय है, तो कम्पनी साधारण प्रस्ताव पारित करके और केन्द्र सरकार की अनुमति से नाम में परिवर्तन कर सकती है।

नाम में परिवर्तन करने का प्रस्ताव पारित करने के 30 दिन के भीतर कम्पनियों के रजिस्ट्रार को नये नाम की सूचना दी जानी चाहिए। रजिस्ट्रार अपने रजिस्टर में पुराने नाम के स्थान पर नया नाम लिख देगा तथा आवश्यक परिवर्तन के साथ कम्पनी को नया निगमन का प्रमाण-पत्र ज़ारी कर देगा। यहाँ यह स्मरण रहे कि नाम में परिवर्तन करने से कम्पनी के अधिकारों एवं दायित्वों में कोई परिवर्तन नहीं होता।

5.6.2 पंजीकृत कार्यालय में परिवर्तन

उसी नगर के भीतर, एक स्थान से दूसरे स्थान पर पंजीकृत कार्यालय कभी भी ले जाया जा सकता है। ऐसा करने पर केवल इतना ही आवश्यक है कि कार्यालय परिवर्तन करने के 30 दिन के भीतर रजिस्ट्रार को नये पते की सूचना दे दी जानी चाहिए। परन्तु यदि उसी राज्य के भीतर, पंजीकृत कार्यालय एक नगर से दूसरे नगर में ले जाया जाता है, तो ऐसा करने के लिए कम्पनी को विशेष प्रस्ताव पारित करना चाहिए।

कोई भी कम्पनी साधारण सभा में विशेष प्रस्ताव पारित करके अपने पंजीकृत कार्यालय को एक राज्य से दूसरे राज्य में ले जा सकती है। यह भी आवश्यक है कि कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा इस प्रस्ताव की पुष्टि की जाए। परिवर्तन की पुष्टि करने से पहले कम्पनी लॉ बोर्ड को इस सम्बन्ध में संतुष्ट होना चाहिए कि परिवर्तन से प्रभावित होने वाले सभी लेनदारों तथा अन्य सम्बन्धित व्यक्तियों को परिवर्तन की पर्याप्त सूचना दे दी गई है। यह सूचना कम्पनियों के रजिस्ट्रार को तथा उस राज्य सरकार को भी दी जानी चाहिए जहाँ कम्पनी का पंजीकृत कार्यालय स्थित है। कम्पनी लॉ बोर्ड कम्पनी के सदस्यों, लेनदारों, कम्पनियों के रजिस्ट्रार तथा अन्य प्रभावित व्यक्तियों को अपना पक्ष प्रस्तुत करने का पर्याप्त अवसर देगा। सारे मामले की सुनवाई करने के पश्चात् कम्पनी लॉ बोर्ड को अधिकार है कि ऐसी शर्तों के साथ, जो वह उचित समझे, विशेष प्रस्ताव की अनुमति प्रदान कर दे।

विशेष प्रस्ताव पारित करने के 30 दिन के भीतर इस प्रस्ताव की एक प्रतिलिपि रजिस्ट्रार के पास अवश्य भेजी जानी चाहिए।

कम्पनी का यह भी कर्त्तव्य है कि वह कम्पनी लॉ बोर्ड से प्राप्त हुई अनुमति की एक प्रमाणित प्रतिलिपि, आदेश दिए जाने के 3 माह के भीतर, दोनों राज्यों के रजिस्ट्रारों के पास जमा कर दे ताकि कम्पनी के सारे रिकार्ड उस रजिस्ट्रार को भेज दिए जाएं जहाँ कम्पनी का पंजीकृत कार्यालय स्थानांतरित हुआ है।

यदि कम्पनी स्थान परिवर्तन करने के आदेश की प्रमाणित प्रतिलिपि निर्धारित समय के भीतर जमा नहीं करती, तो निर्धारित अवधि व्यतीत हो जाने पर, परिवर्तन व्यर्थ तथा अप्रवर्तनीय हो जाता है।

जब कोई कम्पनी अपना पंजीकृत कार्यालय किसी नये राज्य में स्थानांतरित करती है, तो स्थानांतरण करने के 30 दिन के भीतर, उस राज्य के रजिस्ट्रार को कम्पनी के कार्यालय के नये पते की सूचना भेजी जानी चाहिए।

यह स्मरण रहे कि कुछ विशिष्ट प्रयोजनों के लिए ही कम्पनी का पंजीकृत कार्यालय एक राज्य से दूसरे राज्य में स्थानांतरित किया जा सकता है। इन परिस्थितियों का वर्णन नीचे 'उद्देश्य खंड में परिवर्तन' शीर्षक के अन्तर्गत किया गया है।

5.6.3 उद्देश्य खंड में परिवर्तन

यह तो आपको ज्ञात ही है कि उद्देश्य खंड अत्यन्त महत्वपूर्ण खंड है और इसमें किसी परिवर्तन के व्यापक परिणाम होते हैं। इसलिए इस खंड में परिवर्तन करने के कम्पनी के अधिकारों पर कुछ प्रतिबन्ध लगाए गए हैं।

कोई भी कम्पनी विशेष प्रस्ताव पारित करके तथा कम्पनी लॉ बोर्ड की अनुमति प्राप्त करके, उद्देश्य खंड में परिवर्तन कर सकती है, बशर्ते यह परिवर्तन

i) कम्पनी के व्यापार को अधिक किफ़ायत और कुशलता से चलाने के लिए किया जाए,

ii) कम्पनी को नए तथा सुधरे तौर-तरीकों से मुख्य उद्देश्य प्राप्त करने के लिए किया जाए,

iii) कंम्पनी के व्यापार संचालन के स्थानीय क्षेत्र में विस्तार या परिवर्तन करने के लिए किया जाए,

iv) किसी ऐसे व्यापार को करने के लिए किया जाए जो वर्तमान परिस्थितियों में कम्पनी के वर्तमान व्यापार के साथ सुविधाजनक एवं लाभदायक ढंग से किया जा सके,

v) कम्पनी के पूर्ण अथवा आंशिक व्यापार को बेचने या उसका निपटारा करने के लिए किया जाए,

vi) सीमानियम में वर्णित किसी उद्देश्य को प्रतिबन्धित करने या त्यागने के लिए किया जाए, अथवा

vii) किसी अन्य कम्पनी अथवा व्यक्तियों के समूह से समामेलन के लिए किया जाए।

कम्पनी का यह कर्त्तव्य है कि वह उपर्युक्त विशेष प्रस्ताव की एक सत्य प्रतिलिपि जो छपी हुई या टाईप हो, प्रस्ताव पारित करने के 30 दिनों के भीतर कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास जमा करा दे।

इसके अतिरिक्त, कम्पनी की साधारण सभा में पारित किए गए विशेष प्रस्ताव को अनुमोदन के लिए कम्पनी लॉ बोर्ड के समक्ष एक याचिका दाखिल करनी चाहिए। कम्पनी लॉ बोर्ड को सन्तुष्ट होना होगा कि विशेष प्रस्ताव की सूचना समस्त प्रभावित होने वाले पक्षकारों को दे दी गई है। साथ ही सम्बन्धित राज्य सरकार व रजिस्ट्रार को भी इस परिवर्तन की सूचना दी जानी चाहिए। तत्पश्चात् कम्पनी लॉ बोर्ड, उन सब व्यक्तियों को जिन्हें परिवर्तन की सूचना दी गई है, अपना पक्ष प्रस्तुत करने का उचित अवसर देगा। इसके बाद, सन्तुष्ट होने पर कम्पनी लॉ बोर्ड अपनी राय के अनुसार निर्धारित शर्तों पर, परिवर्तन की आंशिक या पूर्ण पुष्टि का आदेश जारी कर देगा।

कम्पनी का यह कर्त्तव्य है कि परिवर्तन की कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा पुष्टि कर देने के बाद उस आदेश की एक सत्य प्रतिलिपि, परिवर्तित सीमानियम के साथ, आदेश की तिथि के तीन माह के भीतर रजिस्ट्रार के पास फाइल कर दे। जैसे ही कम्पनियों के रजिस्ट्रार को उपर्युक्त दस्तावेज प्राप्त होते हैं, वह उन्हें अपने रजिस्टर में दर्ज करेगा, और दस्तावेज जमा करने की तिथि से एक माह के भीतर एक नया समामेलन प्रमाण-पत्र जारी करेगा, यह इस बात का अकाट्य प्रमाण होता है कि कानून के अन्तर्गत जो भी कार्यवाही करनी आवश्यक थी, वह सब पूर्ण कर दी गई है। परिवर्तन के पंजीयन की तिथि से परिवर्तन प्रभावशाली माना जाता है।

यदि रजिस्ट्रार को भेजे जाने वाले उपर्युक्त दस्तावेज़ निर्धारित अवधि के भीतर नहीं भेजे जाते, तो तत्सम्बन्धी परिवर्तन एवं कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा परिवर्तन की पुष्टि करने का आदेश, उक्त अवधि व्यतीत हो जाने के बाद, व्यर्थ एवं अप्रवर्तनीय हो जाएंगे।

5.6.4 दायित्व खंड में परिवर्तन

यह तो आपको ज्ञात ही है कि कम्पनी की प्रमुख विशेषता इसके सदस्यों का सीमित दायित्व है। साधारणतः, दायित्व खंड में इस प्रकार का कोई भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता जिसके परिणामस्वरूप सदस्यों का दायित्व असीमित हो जाए।

कम्पनी का सदस्य उस राशि का भुगतान करने के लिए बाध्य है जिस अंकित मूल्य के उसने शेयर खरीदे हैं। कम्पनी कुछ राशि प्रार्थना-पत्र के साथ तथा कुछ राशि आबंटन (allotment) के समय मांग सकती है, शेष राशि की मांग बाद में आवश्यकता पड़ने पर की जाती है। परन्तु कम्पनी कभी भी अपने सदस्यों से उनके द्वारा खरीदे गये शेयरों के अंकित मूल्य से अधिक राशि की मांग नहीं कर सकती। परन्तु कोई सदस्य लिखित रूप से अपनी सहमति देकर, सीमानियम में हुए परिवर्तन के फलस्वरूप दायित्व में वृद्धि करने या किसी अन्य रूप में शेयर पूँजी में अंशदान करने के लिए कह सकता है, अर्थात् सदस्य की लिखित सहमति से ही उसके दायित्व में वृद्धि की जा सकती है [धारा 38]।

5.6.5 पूँजी खंड में परिवर्तन

कम्पनी की पंजीकृत या अधिकृत पूँजी में, कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 94 के प्रावधानों के अन्तर्गत, वृद्धि की जा सकती है। शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी की स्थिति में, यदि कम्पनी का अन्तर्नियम इस बात की अनुमति दे, तो वह कम्पनी सीमानियम में वर्णित शेयर पूँजी में उतनी राशि से वृद्धि कर सकती है जो नये शेयर जारी करके एकत्रित करना आवश्यक मानती है। कम्पनी अपनी अधिकृत पूँजी में वृद्धि करने के इस अधिकार का समय-समय पर प्रयोग कर सकती है। सामान्यतः, कम्पनी इस अधिकार का प्रयोग उस समय करती है जब कम्पनी अपनी सम्पूर्ण अधिकृत पूँजी जारी कर चुकी हो, और उसे अतिरिक्त धन की आवश्यकता हो। एक कम्पनी जिसकी अधिकृत पूँजी 20,000 रु. है जो 10 रु. के शेयर के 2,000 शेयरों में बंटी हुई है, वह 10 प्रतिशत के 100 रु. प्रति शेयर मूल्य के 300 पूर्वाधिकार शेयर जारी करके पूँजी में वृद्धि कर सकती है। अतिरिक्त शेयर पूँजी ईक्विटी तथा/या पूर्वाधिकार शेयरों में हो सकती है।

कम्पनी की शेयर पूँजी में परिवर्तन कम्पनी की साधारण सभा में ही किया जा सकता है। इस प्रकार का परिवर्तन करने के लिए साधारण प्रस्ताव पारित करना ही पर्याप्त है। इस परिवर्तन को करने के लिए बुलाई गई सभा की सूचना में पूँजी की वृद्धि के प्रस्ताव की पूर्ण सूचना दी जानी चाहिए।

जब शेयर पूँजी में वृद्धि की जाती है, तो इसके सम्बन्ध में कम्पनियों के रजिस्ट्रार को भी सूचित किया जाना चाहिए। शेयर पूँजी में वृद्धि करने के प्रस्ताव की एक प्रतिलिपि, प्रस्ताव पारित करने की तिथि के 30 दिन के भीतर रजिस्ट्रार के पास फाइल करनी चाहिए। तत्पश्चात् कम्पनियों का रजिस्ट्रार इस वृद्धि को अपने रजिस्टर में दर्ज करेगा तथा कम्पनी के सीमानियम में भी आवश्यक परिवर्तन करेगा।

यदि उपर्युक्त विधि के अनुसार सूचना फाइल करने में त्रुटि की जाती है, तो कम्पनी तथा कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी पर त्रुटि के प्रत्येक दिन के लिए 50 रु. तक जुर्माना किया जा सकता है।

बोध प्रश्न ख

1. कम्पनी के लिए पंजीकृत कार्यालय का होना क्यों आवश्यक है?

   ....

   ....

   ....

2. सीमानियम का उद्देश्य क्या है?

   ....

   ....

   ....

3. उन दो भागों के नाम बताइए जिनमें कम्पनी के उद्देश्य खंड को विभाजित किया जाता है:

   i) ....

   ii) ....

4. शक्तिबाह्यता के सिद्धान्त से आपका क्या तात्पर्य है?

   ....

   ....

   ....

   ....

5. बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत।

   i) कम्पनी किसी ऐसे नाम का चुनाव नहीं कर सकती जो केन्द्र सरकार की राय में अवांछनीय है।

   ii) सीमानियम में कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय का ठीक-ठीक पता व राज्य का नाम दिया जाना चाहिए।

   iii) ऐसा कोई भी कार्य जो उद्देश्य खंड से बाहर है, कम्पनी के लिए शक्तिबाह्य है।

iv) शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में, सदस्यों से उनके शेयरों की अदत्त सकती है।

v) गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में, कम्पनी के जीवन-काल में कभी भी सदस्यों से गारंटी की गई राशि मांगी जा सकती है।

vi) कम्पनी लॉ बोर्ड से आदेश प्राप्त होने के 3 माह के भीतर परिवर्तित सीमानियम की प्रतिलिपि रजिस्ट्रार के पास फाइल कर देनी चाहिए।

6 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) शेयरों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी दो प्रकार के शेयर जारी कर सकती है–पूर्वाधिकार तथा ....।

ii) सीमानियम के उद्देश्य खंड में परिवर्तन करने की अनुमति केवल .... ही दे सकता है।

iii) कम्पनी के लिए अपने पंजीकृत कार्यालय को एक राज्य से दूसरे राज्य में ले जाने के लिए विशेष प्रस्ताव पारित करना तथा .... की अनुमति प्राप्त करना आवश्यक है।

iv) कोई भी कम्पनी सीमानियम में वर्णित 'अन्य उद्देश्यों' का अनुसरण तब तक नहीं कर सकती जब तक कि .... में इसकी अनुमति न मिल जाए।

v) सीमानियम के पूँजी खंड में कम्पनी की .... पूँजी दी जाती है।

5.7 सारांश

सीमानियम कम्पनी की आधारशिला है, क्योंकि इसके बिना कम्पनी की स्थापना नहीं हो सकती। इसमें उन उद्देश्यों का वर्णन किया जाता है जिनके बाहर कम्पनी कोई कार्य नहीं कर सकती। इसके अतिरिक्त, कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले पक्षकारों के साथ सम्बन्धों को भी यह परिभाषित करता है। यह भावी शेयरधारियों को यह भी बतलाता है कि उनकी पूँजी का उपयोग किन-किन उद्देश्यों के लिए किया जाएगा।

शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी के सीमानियम में निम्नलिखित खंड अवश्य होने चाहिए: (i) नाम खंड, (ii) पंजीकृत कार्यालय खंड, (iii) उद्देश्य खंड, (iv) दायित्व खंड, (v) पूँजी खंड, तथा (vi) संघ खंड।

कम्पनी को उद्देश्य खंड के अन्तर्गत ही कार्य करना चाहिए। यदि कम्पनी कोई ऐसा कार्य करती है जो उद्देश्य खंड से बाहर है, तो ऐसा कार्य कम्पनी के लिए शक्तिबाह्य होता है तथा आरम्भ से ही व्यर्थ होता है।

यद्यपि सीमानियम कम्पनी का चार्टर होता है, परन्तु कुछ सीमा तक इसमें परिवर्तन किए जा सकते हैं। परन्तु यह परिवर्तन विशिष्ट प्रयोजनों के लिए तथा कम्पनी अधिनियम, 1956 में निर्धारित पद्धति के द्वारा ही किए जाने चाहिए।

5.8 शब्दावली

सीमित दायित्व (Limited Liability) : सदस्यों द्वारा लिए गये शेयरों पर अदत्त राशि तक ही उनका दायित्व सीमित होता है। गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में सदस्यों का दायित्व उस राशि तक होता है जो कम्पनी के समापन के समय उनसे मांगी जा सकती है।

सीमानियम (Memorandum of Association) : यह कम्पनी के संविधान तथा उद्देश्यों को परिभाषित करने वाला प्रमुख प्रलेख है। इसके द्वारा मूलभूत शर्तें निर्धारित की जाती हैं जिनके अधीन कम्पनी की स्थापना की जाती है।

सम-मूल्य (Par Value) : शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी की शेयर पूँजी होती है जो अंकित मूल्य के निश्चित शेयरों में बंटी होती है। शेयरों के निश्चित अंकित मूल्य को 'सम-मूल्य' कहते हैं।

पंजीकृत कार्यालय (Registered Office) : कम्पनी का पंजीकृत कार्यालय उसके निवास-स्थान का निर्णय करता है।

शेयर पूँजी (Share Capital) : वह निश्चित राशि जो निश्चित राशि वाले शेयरों में विभाजित होती है।

शक्तिबाह्य (Ultra Vires) : ऐसे कार्य जो कम्पनी की शक्ति या अधिकार से बाहर हैं।

असीमित दायित्व (Unlimited Liability) : जब कम्पनी की देयताओं का भुगतान करने के लिए उसके सदस्यों की व्यक्तिगत या निजी सम्पत्ति का उपयोग किया जाए, तब सदस्यों का दायित्व असीमित कहा जाता है।

5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एम.सी. कुच्छल : *आधुनिक भारतीय कम्पनी अधिनियम* (दिल्ली : श्री महावीर बुक डिपो, नई सड़क, 1989) अध्याय 5

एन.डी. कपूर, दिनकर पगोर एवं भारत भूषण : *कम्पनी अधिनियम* (नई दिल्ली : सुल्तान चन्द एण्ड संस, 1990) अध्याय 3

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 2 तालिका B—शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी के लिए
तालिका C—गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी जिसकी शेयर पूँजी नहीं है
तालिका D—गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी जिसकी शेयर पूँजी है
तालिका E—असीमित दायित्व वाली कम्पनी के लिए।

3 i) सही ii) सही iii) गलत iv) गलत v) सही vi) सही

4 i) 7; 2 ii) अन्य उद्देश्य iii) एक iv) सीमानियम v) सदस्य vi) बाहरी व्यक्तियों

ख 5 i) सही ii) गलत iii) सही iv) सही v) गलत vi) सही

6 i) इक्विटी ii) कम्पनी लॉ बोर्ड iii) कम्पनी लॉ बोर्ड iv) कम्पनी की साधारण सभा में v) अधिकृत/पंजीकृत

5.11 स्वपरख प्रश्न

1 सीमानियम से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिए।
2 सीमानियम का उद्देश्य क्या है?
3 सीमानियम में शामिल विभिन्न खंडों की सूची बनाइए।
4 शक्तिबाह्यता सिद्धान्त को उपयुक्त उदाहरण दे कर समझाइए।
5 कम्पनी के उद्देश्य खंड को परिवर्तित करने की पद्धति का वर्णन कीजिए।

नोट : इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 6 अन्तर्नियम (Articles of Association)

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 अर्थ तथा प्रयोजन
6.3 अन्तर्नियमों का पंजीकरण
6.4 अन्तर्नियमों की विषय-वस्तु
6.5 अन्तर्नियमों में परिवर्तन
6.6 अन्तर्नियम एवं सीमानियम के बीच सम्बन्ध
6.7 अन्तर्नियम एवं सीमानियम में अन्तर
6.8 सीमानियम एवं अन्तर्नियम का प्रभाव
6.9 सीमानियम एवं अन्तर्नियम की प्रलक्षित सूचना
6.10 आन्तरिक प्रबन्ध का सिद्धान्त
6.11 सारांश
6.12 शब्दावली
6.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें
6.14 बोध प्रश्नों के उत्तर
6.15 स्वपरख प्रश्न अभ्यास

6.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- अन्तर्नियमों के अर्थ एवं प्रयोजन स्पष्ट कर सकें
- अन्तर्नियमों की विषयवस्तु का वर्णन कर सकें
- अन्तर्नियम तथा सीमानियम के बीच परस्पर सम्बन्ध एवं अन्तर बता सकें
- सीमानियम एवं अन्तर्नियमों के क़ानूनी प्रभाव की व्याख्या कर सकें
- प्रलक्षित सूचना एवं आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त का वर्णन कर सकें
- अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने की पद्धति की व्याख्या कर सकें।

6.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी एक निगमित निकाय होती है। अतः इसके व्यापार का संचालन करने तथा आन्तरिक मामलों का प्रबन्ध करने के लिए नियमों को बनाना आवश्यक है। कम्पनी तथा उसके सदस्यों के परस्पर सम्बन्ध को भी परिभाषित करना जरूरी है। सदस्यों एवं कम्पनी के एक दूसरे के प्रति अधिकारों एवं कर्त्तव्यों का भी वर्णन किया जाना चाहिए। इनसे सम्बन्धित समस्त नियम एवं विनियम अन्तर्नियमों में दिए जाते हैं। कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास पंजीकरण कराया जाने वाला दूसरा प्रमुख प्रलेख अन्तर्नियम है।

शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी का प्रबन्ध करने से सम्बन्धित आदर्श नियम कम्पनी अधिनियम, 1956 की अनुसूची 1 की तालिका A में दिए गए हैं। शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी अपने अन्तर्नियमों में तालिका A में दिए सभी अथवा कुछ नियमों को शामिल कर सकती है। प्रत्येक कम्पनी को अपने अन्तर्नियम बनाने चाहिए। इस इकाई में आप अन्तर्नियमों का महत्व एवं विषयवस्तु का अध्ययन करेंगे। आप सीमानियम एवं अन्तर्नियमों के बीच अन्तर को भी पढ़ेंगे। अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने की पद्धति का भी संक्षेप में वर्णन किया गया है। आप इन प्रलेखों के कानूनी प्रभावों का भी अध्ययन करेंगे। आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त का विस्तार से वर्णन किया गया है, इससे आप इस प्रलेख के प्रयोजन को भली-भाँति समझ सकेंगे।

6.2 अर्थ तथा प्रयोजन

कम्पनी अधिनियम की धारा 2(2) के अनुसार अन्तर्नियमों की परिभाषा इस प्रकार है

पिछले कम्पनी अधिनियमों या वर्तमान कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत मूल रूप से बनाए गए अथवा समय-समय पर परिवर्तित किए गए अन्तर्नियमों से है।" यह परिभाषा अन्तर्नियमों का अर्थ स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त नहीं है। कम्पनी के आन्तरिक मामलों के प्रबन्ध के लिए जो नियम एवं उपनियम बनाए जाते हैं उन्हें अन्तर्नियम कहते हैं। ये साझेदारी की स्थिति में 'साझेदारी विलेख' (partnership deed) के समान होते हैं। सीमानियम कम्पनी के कार्य-क्षेत्र की सीमा निर्धारित करता है, जिसके बाहर कम्पनी कोई कार्य नहीं कर सकती जबकि अन्तर्नियमों में कम्पनी के व्यापार संचालन के लिए नियम व विनियम दिए जाते हैं। इस प्रकार अन्तर्नियम सीमानियम के सहायक तथा उसी से नियन्त्रित होते हैं।

अन्तर्नियमों में निदेशकों, अधिकारियों तथा शेयरधारियों के अधिकारों, वोट देने के अधिकार आदि, कम्पनी के व्यापार करने का प्रारूप तथा तरीका तथा आन्तरिक प्रबन्ध सम्बन्धी नियमों में परिवर्तन करने की पद्धति एवं सीमा का वर्णन होता है। कम्पनी का अपने सदस्यों के प्रति और सदस्यों का कम्पनी के प्रति अधिकारों, कर्त्तव्यों एवं शक्तियों का वर्णन अन्तर्नियमों में किया जाता है। केवल वर्तमान सदस्य ही नहीं बल्कि भावी सदस्य भी इन अन्तर्नियमों से बाध्य होते हैं। यहां तक कि सदस्यों के उत्तराधिकारी, कानूनी प्रतिनिधि या वारिस भी अन्तर्नियमों के प्रावधानों से बाध्य होते हैं। वास्तव में अन्तर्नियम कम्पनी तथा सदस्यों को एक दूसरे के प्रति इस प्रकार आबद्ध करते हैं, जैसे कि उस पर कम्पनी तथा प्रत्येक सदस्य द्वारा हस्ताक्षर किए गए हों।

अन्तर्नियम, कम्पनी और सदस्यों के मध्य हुए अनुबन्ध का आधार होते हैं। सदस्यों को कम्पनी के विरुद्ध कुछ अधिकार प्राप्त हैं। इसी प्रकार सदस्यों के कम्पनी के प्रति कुछ कर्त्तव्य भी हैं। अन्तर्नियमों में सदस्यों के ये अधिकार एवं कर्त्तव्य शामिल होते हैं। उदाहरण के लिए, निदेशक मंडल अन्तर्नियमों में निर्धारित विधि के अनुसार जब भी सदस्यों से मांग राशि (call money) की मांग करें, तो सदस्यों का कर्त्तव्य है कि वह अपने शेयरों पर मांग की गई राशि का भुगतान करें। यदि कोई सदस्य भुगतान करने में चूक करता है तो निर्धारित पद्धति का पालन करके कम्पनी उन शेयरों को ज़ब्त कर सकती है। दूसरी ओर सदस्यों को भी अनेक अधिकार प्राप्त हैं, जैसे कि उसे कम्पनी की सभा में भाग लेने तथा वोट देने का अधिकार प्राप्त है।

इसके अतिरिक्त, अन्तर्नियम केवल सदस्यों व कम्पनी के मध्य ही अनुबन्ध का निर्माण नहीं करती बल्कि वह सदस्यों में परस्पर भी अनुबन्ध का निर्माण करती है। इसका विस्तार से वर्णन 6.8 (सीमानियम एवं अन्तर्नियमों का प्रभाव) में आगे किया गया है।

6.3 अन्तर्नियमों का पंजीकरण

कम्पनी अधिनियम की धारा 26 के अनुसार प्रत्येक निजी कम्पनी, असीमित कम्पनी तथा गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी को अपने अन्तर्नियम बनाने चाहिए तथा सीमानियम के साथ-साथ इनका भी पंजीकरण करा लेना चाहिए। परन्तु शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी के लिए अपने अन्तर्नियम अलग से बनाना अनिवार्य नहीं है। शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी या तो अलग से अन्तर्नियम बना सकती है अथवा कम्पनी अधिनियम की अनुसूची 1 की तालिका A के नियमों को पूर्णतः या अंशतः या कुछ परिवर्तनों के साथ अपना सकती है। यदि कोई कम्पनी अपने अन्तर्नियम बनाती भी है, तब भी तालिका A में दिए गए नियम उस पर लागू होते हैं जब तक उन्हें संशोधित या अलग न कर दिया गया हो। सरल शब्दों में, शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी के पास अन्तर्नियमों को अपनाने के सम्बन्ध में तीन संभावित विकल्प हैं, ये इस प्रकार हैं:

i) यह तालिका A को पूर्णतः अपना ले; अथवा
ii) यह तालिका A को पूर्णतः हटाकर, अपने लिए अलग से अन्तर्नियम बनाए, अथवा
iii) यह अपने लिए अन्तर्नियम बनाए तथा तालिका A के कुछ भागों को अपना ले।

यदि कोई कम्पनी पहले विकल्प को चुनती है तो उसके लिए अन्तर्नियमों का पंजीकरण कराना अनिवार्य नहीं है। उसे सीमानियम के मुखपृष्ठ पर केवल इतना लिखना आवश्यक है कि उसने तालिका A में वर्णित अन्तर्नियमों को अपना लिया है।

यह स्मरण रहे कि निजी कम्पनी के अन्तर्नियमों में धारा 3(1)(iii) में वर्णित प्रतिबन्ध (restrictions) अवश्य सम्मिलित होनी चाहिए। असीमित दायित्व वाली कम्पनी के अन्तर्नियमों में, उन सदस्यों की संख्या जिनसे कम्पनी का पंजीकरण किया जाना है तथा यदि कम्पनी की शेयर पूँजी है, तो शेयर पूँजी की वह राशि जिससे कम्पनी का पंजीकरण होना है, लिखी जानी चाहिए [धारा 27(1)]।

गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी के अन्तर्नियमों में सदस्यों की वह संख्या लिखी जानी चाहिए जिनसे कम्पनी का पंजीकरण किया जाना है [धारा 27(2)]।

अन्तर्नियम छपे हुए तथा पैराग्राफ़ों में विभाजित होने चाहिए व उनकी क्रम संख्या लिखी होनी चाहिए। अन्तर्नियमों पर उन सभी व्यक्तियों के हस्ताक्षर होने चाहिए जिन्होंने सीमानियम पर हस्ताक्षर किए हों, तथा उनके नाम, पते व व्यवसाय भी लिखे जाने चाहिए। ये हस्ताक्षर कम-से-कम एक साक्षी द्वारा प्रमाणित किए जाने चाहिए तथा यह साक्षी भी अपना नाम, पता व व्यवसाय का ब्योरा देगा [धारा 30]।

6.4 अन्तर्नियमों की विषय-वस्तु

आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी के अन्तर्नियमों में कम्पनी के आन्तरिक प्रबन्ध से सम्बन्धित नियम एवं विनियम दिए होते हैं। कम्पनी के अन्तर्नियमों में, सामान्यतः निम्नलिखित से सम्बन्धित नियम दिए हुए होने चाहिए:

i) शेयरों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में, कम्पनी अधिनियम की तालिका A में दिए गए नियमों को किस सीमा तक शामिल या अलग किया गया है। परन्तु अन्य प्रकार की कम्पनियां, यदि वे चाहें, तो अपने अन्तर्नियमों में तालिका A के सम्बन्धित नियम शामिल कर सकती हैं।

ii) शेयर पूँजी तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के शेयरों में विभाजन अर्थात् शेयर पूँजी कितने मूल्य के ईक्विटी तथा पूर्वाधिकार शेयरों में विभाजित है।

iii) प्रत्येक वर्ग के शेयरधारियों के अधिकार तथा उनके अधिकारों में परिवर्तन करने की पद्धति।

iv) शेयरों के आबंटन, उनके लिए राशि की मांग करने तथा शेयरों को ज़ब्त करने की विधि।

v) शेयर पूँजी में वृद्धि, परिवर्तन या उसे घटाने सम्बन्धी नियम।

vi) शेयरों का अंतरण तथा संचरण।

vii) सदस्यों को आबंटित शेयरों पर अदत्त राशि के लिए कम्पनी का ऐसे शेयरों पर पूर्वाधिकार (lien)।

viii) कम्पनी के निदेशकों तथा अधिकारियों की नियुक्ति, और उनके पारिश्रमिक, अधिकार, कर्त्तव्य आदि।

ix) शेयरों का स्टॉक में परिवर्तन।

x) बैठकों की सूचना, सदस्यों का मताधिकार, क़ोरम, मतसंग्रह (poll), प्रॉक्सी आदि।

xi) लेखों का अंकेक्षण, कोष में राशि अन्तरित करना, लाभांश घोषित करना आदि।

xii) कम्पनी का ऋण लेने संबन्धी अधिकार तथा उधार लेने की विधि।

xiii) प्रारंभिक अनुबन्धों, यदि कोई हैं, को स्वीकार करना।

xiv) शेयर प्रमाण-पत्र (सर्टीफिकेट) जारी करना।

xv) शेयर वारंट जारी करना।

xvi) विभिन्न प्रकार के रजिस्टर रखना।

xvii) कम्पनी के समापन के सम्बन्ध में नियम।

अन्तर्नियमों को अत्यन्त सावधानीपूर्वक तैयार करना चाहिए, तथा इसमें उन समस्त विषयों से सम्बन्धित नियमों को सम्मिलित किया जाना चाहिए जिन्हें उसमें सम्मिलित करना आवश्यक है तथा जो कम्पनी के सुचारू संचालन के लिए आवश्यक हों। परन्तु आपको यह स्मरण रखना चाहिए कि कम्पनी अधिनियम तथा सीमानियम के प्रावधानों का उल्लंघन करने वाला कोई नियम अन्तर्नियमों में नहीं होना चाहिए। उदाहरणार्थ, अन्तर्नियमों में ऐसा कोई प्रावधान नहीं होना चाहिए जो पूँजी में से लाभांश वितरण करने की अनुमति दे, क्योंकि धारा 205 के अनुसार केवल लाभ में से ही लाभांश वितरित किया जा सकता है।

6.5 अन्तर्नियमों में परिवर्तन

आप यह तो पढ़ चुके हैं कि अन्तर्नियमों में कम्पनी के आन्तरिक प्रबन्ध सम्बन्धी नियम एवं विनियम दिए होते हैं। कम्पनी को अपने अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने का सांविधिक अधिकार होता है। कम्पनी अधिनियम, 1956, की धारा 31 के द्वारा कम्पनी को अधिकार प्रदान किया गया है कि वह अपने अन्तर्नियमों में परिवर्तन कर सकती है या कुछ जोड़ सकती है। यदि अन्तर्नियमों में परिवर्तन न करने सम्बन्धी कोई प्रावधान किया जाए तो उसे व्यर्थ समझा जाएगा। अधिनियम में वर्णित निम्नलिखित पद्धति के अनुसार अन्तर्नियमों में परिवर्तन किया जा सकता है।

कम्पनी अधिनियम की धारा 31 में प्रावधान किया गया है कि विशेष प्रस्ताव पारित करके अन्तर्नियमों में परिवर्तन किया जा सकता है परन्तु यह परिवर्तन कम्पनी अधिनियम और सीमानियम दोनों की परिसीमाओं के भीतर ही होना चाहिए। यहां यह ध्यान रहे कि किसी करार या अन्तर्नियमों में प्रावधान करके कम्पनी

स्वयं अपने को अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने के अपने अंतर्निहित (inherent) अधिकार से वंचित नहीं कर सकती।

परन्तु अन्तर्नियमों में किया गया ऐसा परिवर्तन जिसके परिणामस्वरूप एक सार्वजनिक कम्पनी, निजी कम्पनी में परिवर्तित हो जाए तब तक प्रभावशाली नहीं होगा जब तक कि केन्द्र सरकार से इस प्रकार के परिवर्तन के लिए अनुमति प्राप्त न हो जाए [धारा 31(1) का परन्तुक]। अन्तर्नियमों में किया गया परिवर्तन ठीक उसी प्रकार वैध होता है जैसे कि वह अन्तर्नियमों में आरम्भ से ही शामिल था [धारा 31(2)]।

कम्पनी अधिनियम द्वारा सदस्यों को अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने के सम्बन्ध में व्यापक अधिकार दिए गए हैं। परन्तु यह परिवर्तन पूर्ण सद्विश्वास में तथा कुल मिलाकर कम्पनी के हित के लिए किया जाना चाहिए, न कि बहुमत शेयरधारियों के लाभ के लिए।

कम्पनी के अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने का अधिकार कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों या सीमानियम के अन्तर्गत ही किया जाना चाहिए। अन्य शब्दों में, अन्तर्नियमों में ऐसा कोई भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता जो कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों या सीमानियम के विपरीत हो। उदाहरण के लिए, कम्पनी अधिनियम द्वारा कम्पनी को स्वयं अपने शेयर खरीदने से प्रतिबन्धित किया गया है। इस प्रकार, कम्पनी अपने अन्तर्नियमों में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं कर सकती जिसके अनुसार कम्पनी स्वयं अपने शेयर खरीद सके। अतः कुछ परिसीमाओं के अन्तर्गत ही कम्पनी अपने अन्तर्नियमों में परिवर्तन कर सकती है।

अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने की सीमाएं

यद्यपि कम्पनी एक विशेष प्रस्ताव पारित करके अन्तर्नियमों में किसी भी समय परिवर्तन कर सकती है, परन्तु परिवर्तन करने के इस अधिकार की कुछ सीमाएं भी हैं, ये इस प्रकार हैं :

i) अन्तर्नियमों में प्रस्तावित परिवर्तन सीमानियम में वर्णित बातों के विरुद्ध नहीं होना चाहिए अर्थात् सीमानियम के विरुद्ध परिवर्तन नहीं होना चाहिए।

ii) अन्तर्नियमों में प्रस्तावित परिवर्तन कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के विपरीत या असंगत नहीं होने चाहिए। उदाहरण के लिए धारा 106-107 शेयरधारियों के अधिकारों में परिवर्तन करने की पद्धति से सम्बन्धित है। अन्तर्नियमों में परिवर्तन करके कोई ऐसा नियम शामिल नहीं किया जा सकता जो कम्पनी अधिनियम की धारा 106-107 के प्रावधानों के विपरीत हो।

iii) अन्तर्नियमों में कोई भी ऐसा परिवर्तन नहीं किया जा सकता जो कम्पनी अधिनियम, 1956 या अन्य किसी कानून के अन्तर्गत अवैध हो।

iv) परिवर्तन पूर्ण सद्विश्वास में तथा कम्पनी के सर्वांगीण हित में होना चाहिए। **ऐलन बनाम गोल्ड रीफ्स ऑफ वेस्ट अफ्रीका** (Allen Vs. Gold Reefs of West Africa) का केस इस बात को अधिक स्पष्ट करता है। इस केस में कम्पनी के मूल अन्तर्नियमों द्वारा कम्पनी को ऐसे सभी शेयरों पर 'जो पूर्णतः प्रदत्त नहीं हैं', मांग राशि के लिए पूर्वाधिकार (lien) प्रदान किया गया। S ही केवल ऐसा व्यक्ति था जिसके पास कुछ पूर्णतः प्रदत्त शेयर थे, परन्तु उसे अन्य शेयरों पर अभी कम्पनी को मांग राशि देनी शेष थी। S की मृत्यु हो गई और उसके कानूनी उत्तराधिकारियों ने उन शेयरों को प्राप्त किया। तत्पश्चात् कम्पनी ने अपने अन्तर्नियमों में परिवर्तन करके पूर्वाधिकार सभी प्रकार के शेयरों पर प्राप्त कर लिया, चाहे वे शेयर पूर्णतः प्रदत्त थे या नहीं। अब प्रश्न यह उत्पन्न हुआ कि क्या कम्पनी पूर्णतः प्रदत्त शेयरों पर पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकती है या नहीं? निर्णय दिया गया कि कम्पनी ऐसा परिवर्तन कर सकती है क्योंकि यह पूर्ण सद्भाव में तथा कम्पनी के सर्वांगीण हित में किया गया है।

v) अन्तर्नियमों में परिवर्तन करके कम्पनी के किसी वर्तमान सदस्य को कुछ और शेयर लेने अथवा किसी अन्य प्रकार उसके दायित्व में वृद्धि या कम्पनी की शेयर पूँजी में और अंशदान करने के लिए तब तक बाध्य नहीं किया जा सकता जब तक कि वह इसकी लिखित सहमति न दे दे [धारा 38]।

vi) कम्पनी विशेष प्रस्ताव पारित करके अनमाँगी पूँजी (uncalled capital) को रिजर्व दायित्व में परिवर्तित कर सकती है जिसकी मांग केवल कम्पनी के समापन के समय ही की जा सकती है [धारा 99]। जब एक बार रिजर्व दायित्व का निर्माण कर दिया गया तो बाद में इसे समाप्त नहीं किया जा सकता, परन्तु पूँजी में कमी होने पर इसे रद्द किया जा सकता है।

vii) अन्तर्नियमों में कोई ऐसा परिवर्तन नहीं किया जा सकता जिसका प्रभाव केन्द्र सरकार की अनुमति के बिना किसी सार्वजनिक कम्पनी को निजी कम्पनी में बदलना हो [धारा 31]।

viii) अन्तर्नियमों में कोई ऐसा परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए जिससे बहुसंख्यक शेयरधारियों तथा अल्पसंख्यक शेयरधारियों में कोई भेदभाव उत्पन्न हो जिसके परिणामस्वरूप बहुसंख्यक शेयरधारियों को

अल्पसंख्यक शेयरधारियों से अधिक लाभ हो अथवा अल्पसंख्यक शेयरधारी उन अधिकारों या लाभों से वंचित हों।

ix) अन्तर्नियमों में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता जिससे कम्पनी द्वारा किसी तीसरे पक्षकार के साथ अनुबंध भंग होता हो। कम्पनी अनुबन्ध भंग के लिए हर्जाना देने के लिए उत्तरदायी बनी रहती है।

x) कोई भी परिवर्तन न्यायालय के किसी आदेश के विपरीत या असंगत नहीं होना चाहिए। ऐसी स्थिति में न्यायालय की अनुमति से ही परिवर्तन किया जा सकता है।

अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने के विशेष प्रस्ताव की एक प्रतिलिपि प्रस्ताव पारित करने के 30 दिनों के भीतर रजिस्ट्रार के पास फाइल की जानी चाहिए। अधिनियम की धारा 40 के अनुसार अन्तर्नियमों की प्रत्येक प्रतिलिपि में परिवर्तन दर्ज किया जाना चाहिए तथा परिवर्तन के बाद की तिथि के पश्चात् जो अन्तर्नियम जारी किए जाते हैं, वे परिवर्तित स्वरूप में होने चाहिए।

बोध प्रश्न क

1 अन्तर्नियमों का क्या प्रयोजन है?

....

....

....

2 अन्तर्नियमों का क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

3 अनुसूची I की तालिका A में क्या-क्या शामिल है?

....

....

....

....

4 अन्तर्नियमों में सम्मिलित किन्हीं चार मदों को लिखिए।

....

....

....

....

5 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत।

i) अन्तर्नियम कम्पनी तथा उसके सदस्यों के बीच सम्बन्धों को नियमित करता है।

ii) निजी कम्पनी तालिका A को अपना सकती है।

iii) अन्तर्नियम कम्पनी का चार्टर होते हैं।

iv) प्रत्येक कम्पनी को अपने अन्तर्नियम बनाने आवश्यक हैं।

v) अन्तर्नियम सदस्यों में एक-दूसरे के साथ अनुबन्ध का निर्माण करते हैं।

vi) अन्तर्नियम पर सीमानियम के अभिदाताओं के हस्ताक्षर होने चाहिए।

vii) अन्तर्नियमों में ऐसे प्रावधान हो सकते हैं जो कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के विपरीत या असंगत हों।

viii) शेयरों द्वारा सीमित निजी कम्पनी के लिए अन्तर्नियमों का पंजीकरण कराना आवश्यक नहीं है।

6 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

i) अन्तर्नियम .... के सहायक होते हैं।

ii) कम्पनी के .... प्रबन्ध के लिए अन्तर्नियमों में नियम एवं विनिमय दिए जाते हैं।

iii) शेयरों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी अपने अन्तर्नियमों के लिए .... अपना सकती है।

iv) अन्तर्नियमों में .... पारित करके परिवर्तन किया जा सकता है।

6.6 अन्तर्नियम एवं सीमानियम के बीच सम्बन्ध

सीमानियम कम्पनी का प्रमुख आधारभूत प्रलेख होता है, जैसे कि देश का संविधान होता है। सीमानियम मुख्य प्रलेख है और अन्तर्नियम उसके सहायक होते हैं तथा अन्तर्नियम, सीमानियम द्वारा नियन्त्रित होते हैं। अन्तर्नियम कम्पनी को ऐसे अधिकार प्रदान नहीं कर सकते जो सीमानियम द्वारा कम्पनी को नहीं दिए गए हैं। अतः अन्तर्नियम बनाते या इनमें परिवर्तन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि मूल नियम या परिवर्तित नियम सीमानियम में दिए गए अधिकारों से अधिक न हो, तथा साथ ही किसी ऐसे प्रावधान को मान्यता नहीं दी जानी चाहिए जो कम्पनी अधिनियम, 1956 के विपरीत है। उदाहरणार्थ, कम्पनी के सीमानियम में उद्देश्य खंड दो भागों में विभाजित करके लिखा जाता है। "अन्य उद्देश्य" के अन्तर्गत कार्यों को कम्पनी अधिनियम में वर्णित पद्धति का पालन करके ही आरम्भ किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में, कम्पनी अपने अन्तर्नियम में यह प्रावधान करके कम्पनी को "अन्य उद्देश्य" के व्यापार को "मुख्य उद्देश्य" के व्यापार के साथ आरम्भ करने का अधिकार प्रदान नहीं कर सकती।

सीमानियम ऐसे बाहरी व्यक्तियों के लाभ के लिए होता है जो कम्पनी के साथ व्यवहार करने के इच्छुक हैं, जबकि अन्तर्नियम मुख्यतः शेयरधारियों व निदेशकों के लाभ के लिए होते हैं।

6.7 अन्तर्नियम एवं सीमानियम में अन्तर

सीमानियम तथा अन्तर्नियम में निम्नलिखित मुख्य अन्तर हैं:

1 सीमानियम कम्पनी का चार्टर होता है। यह कम्पनी के अधिकार और क्षेत्र को निश्चित करता है। वास्तव में, सीमानियम वह क्षेत्र बताता है जिसके बाहर कम्पनी कोई कार्य नहीं कर सकती। उस निर्धारित कार्यक्षेत्र के भीतर कम्पनी के संचालन के लिए शेयरधारी अन्तर्नियम बनाते हैं।

2 सीमानियम आधारभूत प्रलेख है। अन्तर्नियम, सीमानियम के सहायक तथा उससे ही नियन्त्रित होते हैं।

3 सीमानियम के दो उद्देश्य होते हैं:

i) कम्पनी के शेयर खरीदने वाले सम्भावित व्यक्तियों को कम्पनी के कार्यक्षेत्र के बारे में सूचना देना जिससे उन्हें यह ज्ञात हो सके कि उनका धन किन कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाएगा।

ii) कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले व्यक्तियों को कम्पनी के उद्देश्यों के बारे में सूचना देना, जिससे वह यह जान सकें कि वह कम्पनी के साथ केवल ऐसे ही अनुबन्ध करें जो कम्पनी की शक्ति से बाहर (ultra vires) नहीं हैं। जबकि अन्तर्नियम का उद्देश्य कम्पनी के आन्तरिक प्रबन्ध से सम्बन्धित नियम आदि बनाने से है। अतः कम्पनी अपने अन्तर्नियम से बाहरी व्यक्तियों के प्रति बाध्य नहीं होती है, परन्तु अन्तर्नियम में जो कुछ भी नियम दिए गए हैं उनसे वह अपने सदस्यों के प्रति बाध्य होती है।

4 सीमानियम साधारणतः कम्पनी का बाहरी व्यक्तियों के साथ सम्बन्ध परिभाषित करता है, जबकि अन्तर्नियम कम्पनी और सदस्यों के मध्य अनुबन्ध का आधार होते हैं।

5 शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी के लिए अलग से अपने अन्तर्नियम बनाना आवश्यक नहीं है. यह तालिका A को अपने अन्तर्नियम के रूप में स्वीकार कर सकती है। परन्तु बिना किसी अपवाद के, प्रत्येक कम्पनी के लिए अपना सीमानियम बनाना अनिवार्य है।

6 सीमानियम के खंडों में सरलता से परिवर्तन नहीं किया जा सकता। विभिन्न खंडों में परिवर्तन करने के लिए निर्धारित पद्धति का पालन करना पड़ता है। कुछ खंडों में परिवर्तन करने के लिए कम्पनी लॉ बोर्ड

अथवा न्यायालय की अनुमति की आवश्यकता होती है। जबकि विशेष प्रस्ताव पारित करके ही अन्तर्नियमों में परिवर्तन किया जा सकता है।

7 ऐसा कोई भी कार्य जो सीमानियम के अधिकारों से बाहर है, शक्तिबाह्य कहलाता है तथा व्यर्थ होता है और सब शेयरधारी मिलकर भी ऐसे कार्य की पुष्टि नहीं कर सकते। परन्तु अन्तर्नियम के शक्तिबाह्य कार्यों की पुष्टि एक विशेष प्रस्ताव पारित करके की जा सकती है।

6.8 सीमानियम एवं अन्तर्नियम का प्रभाव

कम्पनी अधिनियम की धारा 36 में प्रावधान किया गया है कि पंजीकृत होने के बाद, सीमानियम और अन्तर्नियम कम्पनी एवं उसके सदस्यों को उसी सीमा तक बाध्य करते हैं जैसे कि उन पर कम्पनी तथा प्रत्येक सदस्य द्वारा हस्ताक्षर किये गए हों, तथा ये कम्पनी और सदस्यों द्वारा किए गए ऐसे अनुबन्ध का रूप ले लेते हैं जिसके अनुसार वे सीमानियम एवं अन्तर्नियम के समस्त नियमों का पालन करने के लिए अपनी सहमति देते हैं। इस प्रकार, सीमानियम तथा अन्तर्नियमों के द्वारा कम्पनी और उसके सदस्यों के बीच एक अनुबन्ध का निर्माण हो जाता है। इसके कानूनी प्रभाव का निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत अध्ययन किया जा सकता है:

i) **सदस्यों की कम्पनी के प्रति बाध्यता :** सीमानियम एवं अन्तर्नियम, एक ऐसे अनुबन्ध का निर्माण करते हैं। जिसके अनुसार सदस्य कम्पनी के प्रति बाध्य होते हैं। प्रत्येक सदस्य इन दस्तावेज़ों में लिखी बातों से ठीक उसी तरह बाध्य होता है जैसे कि उसने इन दोनों दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किया हो।

बोरलैंडस् ट्रस्टी बनाम स्टील ब्रदर्स एंड कं. लिमिटेड (Borelands Trustee Vs. Steel Brothers and Co. Ltd.) के केस में कम्पनी के अन्तर्नियमों में यह प्रावधान था कि किसी सदस्य के दिवालिया हो जाने पर उसके शेयरों को निदेशकों द्वारा निर्धारित किए गए मूल्य पर किन्हीं अन्य व्यक्तियों को बेच दिया जाएगा। B दिवालिया हो गया और उसके न्यासी (trustee) ने यह दावा किया कि वह अन्तर्नियम के नियम से बाध्य नहीं है और वह उन शेयरों को उनके वास्तविक मूल्य पर बेच सकता है। परन्तु इस केस में निर्णय दिया गया कि दिवालिए का न्यासी अन्तर्नियमों से बाध्य है, क्योंकि यह सदस्य और कम्पनी के मध्य एक अनुबन्ध था।

इसी प्रकार **ब्रैडफोर्ड बैंकिंग कम्पनी बनाम ब्रिगुस** (Bradford Banking Company Vs. Briggs) के केस में अन्तर्नियमों में यह प्रावधान था कि सदस्यों द्वारा कम्पनी को देय ऋण की राशि के लिए कम्पनी को सदस्य के शेयरों पर प्रथम प्रभार का अधिकार होगा। कम्पनी के प्रति एक ऋणी सदस्य ने शेयरों की जमानत पर बैंक से ऋण ले लिया। बैंक ने शेयरों को जमानत के रूप में जमा कराने की सूचना कम्पनी को दे दी। निर्णय दिया गया कि कम्पनी को शेयरों पर प्राथमिकता मिलेगी।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि अन्तर्नियम के प्रावधानों को लागू कराने के लिए कम्पनी अपने सदस्यों पर दावा कर सकती है तथा न्यायालय के माध्यम से किसी भी सदस्य को अन्तर्नियम के नियमों का उल्लंघन करने से रोक सकती है।

ii) **कम्पनी की सदस्यों के प्रति बाध्यता :** सीमानियम एवं अन्तर्नियम ऐसे अनुबन्ध का निर्माण करते हैं जिसके द्वारा सदस्य कम्पनी के प्रति बाध्य होते हैं, ठीक उसी प्रकार कम्पनी भी अपने सदस्यों के प्रति अन्तर्नियमों का पालन करने के लिए बाध्य होती है। उदाहरणार्थ, कम्पनी को सीमानियम में वर्णित उद्देश्य खंड के अन्तर्गत ही कार्य करना चाहिए, यदि कम्पनी ऐसा शक्तिबाह्य अनुबन्ध करने जा रही है तो कम्पनी का कोई भी सदस्य न्यायालय जा कर निषेधाज्ञा प्राप्त करके कम्पनी को वह कार्य करने से रोक सकता है। कम्पनी सदस्यों के प्रति, सदस्यों के सामान्य अधिकारों के लिए बाध्य होती है। उदाहरण के लिए, सदस्य अन्तर्नियम के नियमों एवं विनियमों के अनुसार शेयर सर्टीफ़िकेट प्राप्त करने, डिविडेंड वारंट प्राप्त करने, सभा की सूचना प्राप्त करने, सभा में मताधिकार करने, निदेशकों का चुनाव करने के अपने अधिकार को प्रवर्तित करा सकता है।

iii) **सदस्य दूसरे सदस्य के प्रति बाध्य :** सीमानियम एवं अन्तर्नियम कम्पनी के सदस्यों के बीच स्पष्ट अनुबन्ध का निर्माण नहीं करते हैं। फिर भी प्रत्येक सदस्य, अन्य सदस्यों के प्रति निहित अनुबन्ध के आधार पर इन दस्तावेज़ों से बाध्य होता है। अन्तर्नियम सदस्यों के एक-दूसरे के प्रति अधिकारों को नियमित करते हैं।

सीमानियम एवं अन्तर्नियम कम्पनी के सदस्यों को एक दूसरे के प्रति बाध्य करते हैं। परन्तु कुछ अपवादात्मक स्थितियों को छोड़कर, इस अधिकार का प्रवर्तन केवल कम्पनी के माध्यम से ही किया जा

सकता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी सदस्य ने अन्तर्नियमों को भंग किया है जैसे कि उसने शेयरों पर माँगी राशि का भुगतान नहीं किया है, तो किसी दूसरे सदस्य को यह अधिकार नहीं है कि वह दोषी सदस्य के विरुद्ध दावा दायर करे। दोषी सदस्य के विरुद्ध केवल कम्पनी को ही दावा करने का अधिकार है। उदाहरण के लिए, यदि सदस्य के पास बहुसंख्यक शेयर हैं और वह कम्पनी के नाम से कार्यवाही करने का अधिकार भी नहीं देता तो शिकायत करने वाले सदस्यों को यह अधिकार है कि वे स्वयं अपने नाम में ऐसे सदस्य के प्रति दावा दायर कर सकते हैं, परन्तु इसके लिए शर्त यह है कि शिकायत सम्बन्धी कार्य अल्पसंख्यकों के प्रति कपटपूर्ण कार्य है अथवा कम्पनी की शक्ति से बाहर कार्य है।

iv) **कम्पनी बाहरी व्यक्तियों के प्रति बाध्य नहीं है:** अन्तर्नियम, कम्पनी तथा बाहरी व्यक्तियों के मध्य किसी अनुबन्ध का निर्माण नहीं करते, अतः अन्तर्नियमों के आधार पर कोई बाहरी व्यक्ति कम्पनी के विरुद्ध दावा दायर नहीं कर सकता। यदि अन्तर्नियम किसी बाहरी व्यक्ति को कोई अधिकार प्रदान करते हैं, तो ऐसे अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए वह कम्पनी के विरुद्ध अन्तर्नियमों को प्रवर्तित नहीं करा सकता। यहां तक कि यदि किसी प्रस्तावित कार्य या व्यापार के लिए किसी बाहरी व्यक्ति का नाम अन्तर्नियमों में लिखा हुआ भी हो, तब भी कम्पनी बाहरी व्यक्ति के प्रति उत्तरदायी नहीं होती है। इस सम्बन्ध में **ऐली बनाम पॉजीटिव गवर्मेन्ट लाईफ एशोरेन्स कम्पनी लिमिटेड** (Eley Vs. Positive Government Life Assurance Co. Ltd.) का केस उल्लेखनीय है, इस केस का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार था:

कम्पनी के अन्तर्नियमों में यह उल्लिखित था कि श्री ऐली (Eley) जीवन पर्यन्त कम्पनी के कानूनी सलाहकार बने रहेंगे, तथा उन्हें दुराचरण के अतिरिक्त अन्य किसी कारण से उस पद से नहीं हटाया जा सकेगा। श्री ऐली ने कानूनी सलाहकार के रूप में कार्य किया तथा वह कम्पनी का सदस्य भी बन गया। परन्तु कुछ समय बाद कम्पनी ने उसे उक्त पद से हटा दिया। इस पर श्री ऐली ने अनुबन्ध भंग के आधार पर कम्पनी पर हर्जाने के लिए दावा कर दिया। निर्णय दिया गया कि अन्तर्नियम कम्पनी और किसी बाहरी व्यक्ति के बीच अनुबन्ध का आधार नहीं हो सकते। यहां पर ध्यान करें कि श्री ऐली एक कर्मचारी के रूप में अपने अधिकारों को प्रवर्तित कराना चाहते थे, सदस्य के रूप में नहीं। कोई व्यक्ति कम्पनी का सदस्य हो सकता है तथा साथ ही साथ वह कम्पनी का ऋणदाता या कर्मचारी भी हो सकता है। उपर्युक्त केस में श्री ऐली कर्मचारी के रूप में अपने अधिकारों को प्रवर्तित कराना चाहते थे। कम्पनी और श्री ऐली में अन्तर्नियमों के अतिरिक्त अन्य कोई स्वतन्त्र अनुबन्ध नहीं था, अतः उनका दावा रद्द कर दिया गया।

6.9 सीमानियम एवं अन्तर्नियम की प्रलक्षित सूचना (Constructive Notice of Memorandum and Articles)

आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी के निगमन के लिए, कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास सीमानियम एवं अन्तर्नियमों का पंजीकरण कराना आवश्यक है। पंजीकृत हो जाने पर, सीमानियम तथा अन्तर्नियम सार्वजनिक दस्तावेज़ का रूप ले लेते हैं। इन दस्तावेज़ों की कोई भी व्यक्ति, प्रति जाँच के लिए एक रुपया फीस दे कर, कम्पनी के कार्यालय में अथवा रजिस्ट्रार के कार्यालय में जाँच कर सकता है।

कम्पनी से व्यवहार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि उसने इन दस्तावेजों को पढ़ लिया है तथा उसमें लिखी बातों को ठीक से समझ भी लिया है। ऐसे दस्तावेज़ों की इस प्रकार से उन व्यक्तियों को, चाहे वह शेयरधारी हैं अथवा बाहरी व्यक्ति, जानकारी होने की मान्यता को सीमानियम एवं अन्तर्नियमों की "प्रलक्षित सूचना" (constructive notice) कहते हैं।

अतः, इस नियम के अनुसार, कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाला कोई भी व्यक्ति यह तर्क नहीं दे सकता कि उसने कम्पनी के सीमानियम को नहीं पढ़ा है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति कम्पनी को कुछ माल सप्लाई करने का अनुबन्ध करता है तथा वह माल भी कम्पनी को दे देता है, परन्तु कम्पनी उक्त माल का मूल्य इस आधार पर देने से मना कर देती है कि वह अनुबन्ध कम्पनी के अधिकारों या शक्ति से बाहर था। ऐसी स्थिति में माल सप्लाई करने वाला व्यक्ति अपनी सफाई में यह तर्क नहीं दे सकता कि उसे कम्पनी के सीमानियम के प्रावधानों का ज्ञान नहीं था। अतः यदि कोई व्यक्ति कम्पनी के साथ ऐसा लेन-देन करता है जो इन दस्तावेज़ों के अन्तर्गत नहीं है, तो वह न्यायालय में यह तर्क प्रस्तुत नहीं कर सकता कि वह सीमानियम एवं अन्तर्नियमों की विषयवस्तु से अनजान था। इस सम्बन्ध में यह मान्यता है कि उसे न केवल इन दस्तावेज़ों की जानकारी है बल्कि यह भी मान्यता है कि उसने इन्हें ठीक से पढ़ लिया है और उन्हें सही

अर्थों में समझ भी लिया है। इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता यदि उसने इन दस्तावेज़ों को देखा न भी हो। परन्तु 'प्रलक्षित सूचना' के उपर्युक्त सिद्धान्त को 'आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त' द्वारा सुधारा गया है।

6.10 आन्तरिक प्रबन्ध का सिद्धान्त (Doctrine of Indoor Management)

आन्तरिक प्रबन्ध का सिद्धान्त, प्रलक्षित सूचना के सिद्धांत का एक अपवाद है। आन्तरिक प्रबन्ध का सिद्धान्त, प्रलक्षित सूचना के सिद्धान्त पर एक महत्वपूर्ण सीमा लगाता है। प्रलक्षित सूचना के सिद्धान्त के अनुसार यह मान लिया जाता है कि कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले व्यक्तियों ने इन दोनों दस्तावेज़ों की विषयवस्तु को अच्छी तरह से पढ़ तथा समझ लिया है। जब वे एक बार संतुष्ट हो जाते हैं कि कम्पनी को प्रस्तावित कार्य करने का अधिकार है, तो वे इससे अधिक कुछ करने के लिए बाध्य नहीं हैं। उन्हें इस बात की जाँच करने की कोई आवश्यकता नहीं है कि क्या कम्पनी ने आन्तरिक कार्यवाही नियमित ढंग से की है। बाहरी व्यक्तियों को यह मान लेने का अधिकार है कि कम्पनी ने अन्तर्नियमों का पूर्णतः पालन किया है। इस सिद्धान्त के द्वारा बाहरी व्यक्तियों की कम्पनी से रक्षा करने का प्रयास किया गया है।

अतः, यदि कोई व्यवहार प्रत्यक्षतः कम्पनी के अधिकारों के अन्तर्गत प्रतीत होता है, तो कम्पनी यह तर्क दे कर अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकती कि कार्य-विधि का पालन करने में कोई अनियमितता हुई है। एक व्यक्ति से यह तो आशा की जाती है कि उसे कम्पनी के संविधान की जानकारी हो, परन्तु उससे यह आशा नहीं की जा सकती कि उसे इस बात की भी जानकारी हो कि कम्पनी चार-दीवारी के भीतर क्या करती है या क्या नहीं करती, क्योंकि कम्पनी के दरवाज़े उसके लिए बन्द हैं। इस सिद्धान्त को 'आन्तरिक प्रबन्ध का सिद्धान्त' अथवा **रॉयेल ब्रिटिश बैंक बनाम टरक्वेन्ड** (Royal British Bank Vs. Turquand) के केस में प्रतिपादित नियम कहते हैं। इस केस के तथ्य निम्न प्रकार थे :

कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा कम्पनी के निदेशकों को, आवश्यकता पड़ने पर, बांड जारी करके ऋण लेने का अधिकार इस शर्त पर प्रदान किया कि उधार ली जाने वाली राशि के लिए साधारण सभा में प्रस्ताव पारित करके अधिकार दिया जाए। निदेशकों ने टरक्वेण्ड से ऋण लेकर बांड ज़ारी कर दिए। परन्तु कम्पनी ने साधारण सभा में कोई प्रस्ताव पारित नहीं किया, जैसा कि अन्तर्नियमों द्वारा किया जाना चाहिए था। निर्णय दिया गया कि टरक्वेन्ड (Turquand) बांड के आधार पर कम्पनी पर दावा कर सकता है, क्योंकि उसे यह मान लेने का पूर्ण अधिकार है कि कम्पनी ने आन्तरिक प्रबन्ध सम्बन्धी जो भी कार्यवाही करनी थी वह कर ली थी। अन्य शब्दों में, उसे यह मान लेने का पूर्ण अधिकार है कि बांड के आधार पर ऋण लेने के लिए कम्पनी ने साधारण सभा में आवश्यक प्रस्ताव पारित कर लिया था। उसका यह कर्त्तव्य नहीं है कि वह इस तथ्य की भी जाँच करे कि क्या कम्पनी ने उक्त प्रस्ताव पारित किया भी है अथवा नहीं। परन्तु ऋणदाता को इस बात की जाँच अवश्य करनी होगी कि कम्पनी को ऋण लेने का अधिकार है भी या नहीं, क्योंकि प्रलक्षित सूचना के सिद्धान्त के द्वारा यह भार उस पर डाला गया है।

अपवाद : आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त के निम्नलिखित मुख्य अपवाद हैं :

1 **अनियमितता की जानकारी :** ऐसे व्यक्ति को जिसे कम्पनी की आन्तरिक कार्यवाही की अनियमितता की जानकारी है, उसे इस सिद्धान्त के अन्तर्गत संरक्षण प्राप्त करने का अधिकार नहीं है। अनियमितता की जानकारी वास्तविक अथवा प्रलक्षित हो सकती है। इस सम्बन्ध में **हावर्ड बनाम पेटेंट आईवरी कम्पनी** (Howard Vs. Patent Ivory Co.) का केस उल्लेखनीय है। कम्पनी के निदेशकों को £ 1,000 तक उधार लेने का अधिकार था तथा इस राशि से अधिक राशि के लिए शेयरधारियों की सहमति प्राप्त करना आवश्यक था। संचालकों ने शेयरधारियों की सहमति प्राप्त किए बिना, स्वयं ही कम्पनी को £ 3,500 उधार दे दिए तथा इसके लिए ऋणपत्र प्राप्त कर लिए। निर्णय दिया गया कि क्योंकि निदेशकों को आंतरिक अनियमितता की जानकारी थी, अतः वे कम्पनी से ऋणपत्रों के लिए केवल £ 1,000 ही वसूल कर सकते हैं।

2 **लापरवाही :** यदि कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाला व्यक्ति इन दस्तावेज़ों को पढ़ने का प्रयास नहीं करता तथा यह जानने की कोशिश नहीं करता कि प्रस्तावित व्यवहार कम्पनी के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत है या नहीं, तो ऐसा व्यक्ति आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त के अन्तर्गत कोई लाभ या संरक्षण प्राप्त नहीं कर सकता। उदाहरण के लिए, एक असाधारण रूप से बड़े व्यवहार की दशा में कम्पनी के साथ व्यापार करने वाले व्यक्ति का यह कर्त्तव्य होता है कि वह उससे संबंधित अधिकारी के प्राधिकार की उचित जाँच करे।

3 **प्रकट अधिकार से बाहर कार्य :** यदि कम्पनी का कोई अधिकारी इस प्रकार कार्य करता है जो सामान्यतः उसके अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत नहीं है, तो ऐसी स्थिति में कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले व्यक्ति को उचित जाँच करनी चाहिए तथा अधिकारी के प्राधिकार के बारे में सन्तुष्ट होना चाहिए। यदि संदेहात्मक परिस्थितियों के होने पर भी वह उचित जाँच-पड़ताल नहीं करता, तब ऐसा व्यक्ति आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त के अन्तर्गत कोई संरक्षण प्राप्त नहीं कर सकता।

आनन्द बिहारी लाल बनाम दिनशॉ एन्ड कम्पनी (Anand Bihari Lal Vs. Dinshaw & Co.) के मामले में कम्पनी के लेखापाल (accountant) ने कम्पनी की कुछ सम्पत्ति वादी के नाम हस्तांतरित कर दी। न्यायालय ने इस अंतरण को व्यर्थ घोषित ठहराया क्योंकि कम्पनी की सम्पत्ति को अंतरित करना लेखापाल के प्राधिकार का विषय नहीं माना जा सकता। वादी के पास संदेह करने के पर्याप्त कारण थे तथा उसे अच्छी तरह से जाँच करनी चाहिए थी।

4 **जालसाजी :** आन्तरिक प्रबन्ध का सिद्धान्त उस स्थिति में भी लागू नहीं होता है जब बाहरी व्यक्तियों ने जिस दस्तावेज़ पर विश्वास किया है, वह जाली सिद्ध होता है। कम्पनी के अफसरों व अधिकारियों की जालसाज़ी के लिए कम्पनी को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। इस सम्बन्ध में **रूबेन बनाम ग्रेट फिन्गाल कनसॉलिडेटिड कम्पनी** (Ruben Vs. Great Fingall Consolidated Company) का मामला उल्लेखनीय है। कम्पनी के सचिव ने दो निदेशकों के जाली हस्ताक्षर करके शेयर सर्टिफिकेट जारी कर दिया। प्रत्यक्षतः यह कम्पनी के अन्तर्नियमों के अनुसार था क्योंकि उस पर दो निदेशकों के हस्ताक्षर प्रकट होते थे। शेयर सर्टिफिकेट के धारक ने इस आधार पर कम्पनी के शेयरधारी के रूप में पंजीकृत किए जाने की मांग की, परन्तु कम्पनी ने उसे शेयरधारी मानने से इन्कार कर दिया। शेयर सर्टिफिकेट के धारक का तर्क था कि उसके पास यह जानने का साधन नहीं था कि यह हस्ताक्षर वास्तविक हैं या नहीं, अतः उसे संरक्षण मिलना चाहिए। परन्तु निर्णय दिया गया कि जालसाज़ी के मामलों में आन्तरिक प्रबन्ध का सिद्धान्त लागू नहीं होता।

बोध प्रश्न ख

1 प्रलक्षित सूचना से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

2 आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

....

3 आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त के अपवादों की सूची बनाइए।

....

....

....

....

4 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत।

i) अन्तर्नियम, सीमानियम की किसी संदिग्धता को स्पष्ट कर सकते हैं।

ii) कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले किसी भी व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि उसे सीमानियम एवं अन्तर्नियमों की विषयवस्तु की जानकारी है।

iii) कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले व्यक्ति को यह मानने का अधिकार नहीं है कि आन्तरिक प्रबन्ध सम्बन्धी जो कुछ भी करना चाहिए था, कम्पनी ने वह सब कुछ कर दिया है।

iv) अन्तर्नियम कम्पनी और सदस्यों के मध्य सम्बन्धों को नियमित करते हैं।

v) कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाला व्यक्ति यदि कम्पनी के साथ व्यवहार करते समय अनियमितता का पता कर सकता है, तो वह आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त के अन्तर्गत कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकता।

5 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

i) पंजीकृत हो जाने के बाद, सीमानियम एवं अन्तर्नियम कम्पनी और उसके .... को बाध्य करते हैं।

ii) कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति से अपेक्षा की जाती है कि उसे .... की विषयवस्तु की सूचना है।

iii) कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को यह मान लेने का .... है कि कम्पनी के आन्तरिक प्रबन्ध के सम्बन्ध में जो कुछ भी करना चाहिए था वह सब कर लिया गया है।

6.11 सारांश

अन्तर्नियम, कम्पनी का एक अन्य महत्वपूर्ण दस्तावेज़ होता है। इसमें कम्पनी के आन्तरिक प्रबन्ध सम्बन्धी मामलों को नियमित करने के सम्बन्ध में नियम एवं विनियम दिए जाते हैं। ये कम्पनी के, उसके सदस्यों के तथा निदेशकों के क्रमशः उनके कर्त्तव्यों एवं अधिकारों को परिभाषित करती है।

अन्तर्नियम, सीमानियम के सहायक होते हैं, जबकि सीमानियम मुख्य दस्तावेज़ होता है। परन्तु सीमानियम में हुई किसी अस्पष्टता को अन्तर्नियमों के द्वारा समझाया जा सकता है।

कम्पनी को अपने अन्तर्नियम में परिवर्तन करने का सांविधिक अधिकार है, वह विशेष प्रस्ताव पारित करके उसे परिवर्तित कर सकती है। कोई करार करके या अन्तर्नियम में कोइ प्रावधान करके कम्पनी के इस अधिकार को प्रतिबन्धित नहीं किया जा सकता। परन्तु अन्तर्नियम में परिवर्तन करने के लिए कुछ सीमाएं अवश्य निश्चित की गई हैं। कोई भी परिवर्तन कम्पनी अधिनियम या सीमानियम के प्रावधानों के विपरीत या असंगत नहीं होना चाहिए। ये दोनों दस्तावेज़ सार्वजनिक दस्तावेज़ होते हैं। अतः कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती है कि उसे इन दस्तावेज़ों की विषयवस्तु की पूर्ण जानकारी है। परन्तु, उसे यह मान लेने का पूर्ण अधिकार है कि आन्तरिक प्रबन्ध सम्बन्धी कार्य-विधि का पालन कम्पनी ने कर लिया है। किन्तु इस नियम के कुछ महत्वपूर्ण अपवाद हैं।

6.12 शब्दावली

प्रलक्षित सूचना (Constructive Notice) : कम्पनी के साथ व्यवहार करने वालों के सम्बन्ध में कानून की यह मान्यता कि उन्हें दस्तावेज़ों की विषयवस्तु की जानकारी है।

एक-दूसरे के प्रति (Inter se) : परस्पर एक-दूसरे के बीच।

सार्वजनिक दस्तावेज़ (Public Document) : कोई भी ऐसा दस्तावेज़ जो किसी सरकारी अधिकारी के कब्ज़े में है तथा जिसकी कोई भी जाँच कर सकता है।

तालिका A (Table A) : कम्पनी अधिनियम की अनुसूची 1 में तालिका A दी हुई है। इसमें शेयर पूँजी वाली कम्पनी के लिए आदर्श नियमों एवं विनियमों की सूची दी हुई है।

6.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एम.सी. कुच्छल : *आधुनिक भारतीय कम्पनी अधिनियम* (दिल्ली : श्री महावीर बुक डिपो, नई सड़क, 1989) अध्याय 6

एन.डी. कपूर, दिनकर पगारे एवं भारत भूषण : *कम्पनी अधिनियम* (नई दिल्ली : सुल्तान चन्द एण्ड संस, 1990) अध्याय 4

6.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 5 i) सही ii) गलत iii) गलत iv) गलत v) सही vi) सही vii) गलत viii) गलत

6 i) सीमानियम ii) आन्तरिक मामलों iii) तालिका A iv) विशेष प्रस्ताव

ख 4 i) सही ii) सही iii) गलत iv) सही v) सही

5 i) सदस्यों ii) सीमानियम एवं अन्तर्नियम iii) अधिकार

6.15 स्वपरख प्रश्न अभ्यास

1 अन्तर्नियम क्या होते हैं? इनमें कैसे परिवर्तन किया जा सकता है?

2 "कम्पनी के अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने सम्बन्धी अधिकार व्यापक हैं किन्तु वे कई सीमाओं के अधीन होते हैं।" स्पष्ट कीजिए।

3 अन्तर्नियम की सामान्य विषयवस्तु क्या होती है?

4 अन्तर्नियम के कानूनी प्रभाव स्पष्ट कीजिए। वे बाहरी व्यक्तियों पर किस सीमा तक लागू होते हैं?

5 सीमानियम तथा अन्तर्नियम के परस्पर सम्बन्ध की संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

6 सीमानियम तथा अन्तर्नियम में क्या अन्तर है।

7 'आन्तरिक प्रबन्ध के सिद्धान्त' को समझाइए। इस सिद्धान्त के क्या कुछ अपवाद हैं?

8 निम्नलिखित मामलों का कारण सहित उत्तर दीजिए:

i) कम्पनी के सचिव ने 'A' के नाम एक शेयर प्रमाणपत्र जारी किया, जो प्रत्यक्षतः अन्तर्नियम के अनुसार था तथा उस पर दो निदेशकों व सचिव के हस्ताक्षर थे तथा उस पर कम्पनी की 'सील' भी अंकित थी। वास्तव में, कम्पनी के सचिव ने निदेशकों के जाली हस्ताक्षर कर दिए तथा बिना अधिकार प्राप्त किए कम्पनी की 'सील' भी अंकित कर दी। क्या कम्पनी इस शेयर प्रमाणपत्र से बाध्य होगी?

ii) कम्पनी के अन्तर्नियम में एक खंड है जिसके अनुसार परिवर्तन करने पर प्रतिबन्ध लगाया गया। क्या यह वाक्य वैध है?

iii) कम्पनी के बहुसंख्यक शेयरधारियों ने विशेष प्रस्ताव पारित करके अन्तर्नियमों में ऐसा परिवर्तन किया जिसके द्वारा निदेशकों को अधिकार दिया गया कि वे किसी ऐसे शेयरधारी को, जो प्रतिस्पर्धी व्यापार करता है, अपने शेयर निदेशकों द्वारा नामांकित व्यक्ति को अंतरित करने के लिए बाध्य करे। वादी ने, जो कि प्रतिस्पर्धी व्यापार करता था, इस परिवर्तन की वैधता को चुनौती दी। आप अपना निर्णय दीजिए।

iv) कम्पनी के अन्तर्नियम में एक खंड था जिसके अनुसार A कम्पनी का सालिसिटर नियुक्त हुआ तथा उसे दुराचरण के अतिरिक्त किसी अन्य आधार पर नहीं निकाला जा सकता था। क्या कम्पनी A को निकाल सकती है यद्यपि वह दुराचरण का दोषी नहीं है।

v) A कम्पनी B कम्पनी की परिसम्पत्तियों को बन्धक रख कर ऋण प्रदान करती है। अन्तर्नियमों में निर्धारित कार्य-विधि का पालन नहीं किया गया। दोनों कम्पनियों के निदेशक एक ही थे। क्या इस बन्धक से B कम्पनी बाध्य है?

संकेत

i) नहीं। जालसाज़ी कोई अधिकार प्रदान नहीं करता। अतः कम्पनी उस शेयर प्रमाणपत्र से बाध्य नहीं है (Ruben Vs. Great Fingall Consolidated Co. का केस पढ़िए)

ii) नहीं। अन्तर्नियम में परिवर्तन करने का अधिकार सांविधिक है, अतः इसे छीना नहीं जा सकता।

iii) परिवर्तन पूर्णतः वैध है, क्योंकि यह कम्पनी के समुचित हित में है।

iv) हाँ। कम्पनी A को पद से हटा सकती है क्योंकि अन्तर्नियम, कम्पनी और बाहरी व्यक्तियों के

बीच अनुबन्ध का निर्णय नहीं करते (Eley Vs. Positive Government Life Assurance Co. Ltd. के केस का पढ़िए)

v) नहीं। यह बन्धक B कम्पनी पर बाध्यं नहीं है क्योंकि निदेशकों को अनिवार्यता की जानकारी थी।

नोट: इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 7 प्रविवरण (Prospectus)

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 अर्थ और महत्त्व
7.3 प्रविवरण की विषय-वस्तु
7.3.1 प्रविवरण में निर्दिष्ट की जाने वाली बातें
7.3.2 प्रविवरण में दी जाने वाली रिपोर्टें
7.3.3 कम्पनियों के रजिस्ट्रार के यहां प्रविवरण का पंजीकरण
7.4 प्रविवरण के स्थान पर विवरण
7.5 न्यूनतम अभिदान
7.6 प्रविवरण में मिथ्या निरूपण और उसके परिणाम
7.6.1 कम्पनी के विरुद्ध उपचार
7.6.2 कम्पनी के प्रवर्तकों और निदेशकों के विरुद्ध उपचार
7.6.3 विशेषज्ञों के विरुद्ध उपचार
7.6.4 प्रविवरण में मिथ्या कथन के लिए आपराधिक दायित्व
7.7 सारांश
7.8 शब्दावली
7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें
7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
7.11 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

7.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- प्रविवरण का अर्थ और महत्त्व समझा सकें
- प्रविवरण की विषयवस्तु का वर्णन कर सकें
- प्रविवरण के स्थान पर विवरण का अर्थ स्पष्ट कर सकें
- प्रविवरण और प्रविवरण के स्थान पर विवरण में भेद कर सकें
- न्यूनतम अभिदान की संकल्पना का वर्णन कर सकें
- प्रविवरण में मिथ्या कथन के प्रभाव और उपलब्ध उपचार बता सकें।

7.1 प्रस्तावना

निगमन के बाद कम्पनी को अपना व्यवसाय चलाने के लिए आवश्यक साधन जुटाने पड़ते हैं। आवश्यक पूँजी जुटाना निदेशकों का एक प्रथम महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य होता है। आपने यह पढ़ा होगा कि निजी कम्पनी के लिए जनता को अपनी अंश पूँजी के अभिदान करने को आमंत्रित करना वर्जित है, अंश पूँजी के लिए अभिदान करने के लिए जनता को आमंत्रित करने की आवश्यकता केवल सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में ही होती है। सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में भी यदि निदेशक निजी तौर पर आवश्यक पूँजी की व्याख्या करने के लिए आश्वस्त हैं तो उन्हें प्रविवरण के निर्गमन की आवश्यकता नहीं होती बल्कि ऐसी स्थिति में कम्पनी को प्रविवरण के स्थान पर कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास एक विवरण फाइल करना होता है। साधारणतया एक सार्वजनिक कम्पनी प्रविवरण के निर्गमन के द्वारा अपनी पूँजी जुटाती है। प्रविवरण के निर्गमन का मुख्य उद्देश्य निवेशकों को कम्पनी के व्यवसाय, वित्तीय स्थिति, पूँजी की संरचना, भविष्य की प्रत्याशाओं और प्रबंध आदि के बारे में जानकारी प्रदान करना है। इस इकाई में आप प्रविवरण के निर्गमन के अर्थ, महत्त्व और आवश्यकता के बारे में पढ़ेंगे। आपको प्रविवरण की विषयवस्तु के बारे में बताया जायेगा और प्रविवरण के स्थान पर विवरण से प्रविवरण किस प्रकार भिन्न है, इस बारे में भी बताया जाएगा। अन्त में, प्रविवरण में मिथ्या कथनों के लिए उपलब्ध विभिन्न उपचारों पर भी चर्चा की जाएगी।

7.2 अर्थ और महत्त्व

कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 2(36) में दी गयी परिभाषा के अनुसार, **प्रविवरण वह प्रलेख है जो प्रविवरण के रूप में वर्णित या निर्गमित किया गया हो और जिसमें कोई ऐसा नोटिस, परिपत्र, विज्ञापन या अन्य प्रलेख शामिल है जो एक निगमित निकाय (body corporate) के अंशों या ऋणपत्रों के लिए अभिदान करने को या उन्हें क्रय करने को जन्ता को आमंत्रित करता हो।**

सरल शब्दों में, प्रविवरण जनता को कम्पनी के शेयरों या ऋणपत्रों के लिए अभिदान करने का एक आमंत्रण है। यह ध्यान रखिये कि कोई भी प्रलेख जिससे जनता से निक्षेप (deposits) आमंत्रित किए जाते हैं अब एक प्रविवरण माना जाता है।

यह अवश्य ध्यान रखिये कि एक प्रविवरण कम्पनी द्वारा किया गया एक प्रस्ताव नहीं है बल्कि यह प्रस्ताव करने के लिए केवल एक आमंत्रण है। कम्पनी जनता के बीच प्रविवरण का निर्गमन करके कम्पनी के शेयर या ऋणपत्र खरीदने के लिए आवेदन पत्र आमंत्रित करती है। जो भी व्यक्ति कम्पनी के शेयर खरीदना चाहता है वह शेयर आवेदन फार्म भरकर, उसे शेयर आवेदन राशि सहित जमा करायेगा। आवेदकों का यह कार्य कम्पनी के उतने अंशों के क्रय के लिए एक प्रस्ताव है जितने कि आवेदन पत्र में लिखे गये हैं। इसके आधार पर निदेशक मंडल शेयरों का आबंटन करता है। निदेशक मंडल का आवंटन का कार्य आवेदन कर्त्ताओं के शेयर खरीदने के प्रस्ताव की स्वीकृति के बराबर है। इस प्रकार आवेदक और कम्पनी के बीच एक अनुबंध हो जाता है जिसमें अनुबंध के सभी अधिकार और दायित्व होते हैं।

प्रविवरण की परिभाषा के अनुसार इसमें कोई भी नोटिस, परिपत्र, विज्ञापन या अन्य प्रलेख शामिल होता है जो जनता से निक्षेप आमंत्रित करता है। इस प्रकार कम्पनियों द्वारा सार्वजनिक निक्षेप आमंत्रित करना भी प्रविवरण द्वारा नियमित होता है।

जनता को निर्गमित किये गये प्रविवरण का अर्थ : प्रविवरण की परिभाषा से आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि आमंत्रण जनता को दिया जाना चाहिए। कम्पनी अधिनियम की धारा 67 में 'जनता' शब्द का इस प्रकार स्पष्टीकरण दिया गया है : **इसमें जनता का कोई भी वर्ग शामिल होता है, चाहे उसका चयन सदस्यों के रूप में, कम्पनी के ऋणपत्र धारकों के रूप में या प्रविवरण निर्गमित करने वाले व्यक्ति के ग्राहकों के रूप में या किसी अन्य तरीके से किया गया हो।** इस प्रकार यदि व्यक्ति को शेयर ऋणपत्र खरीदने के लिए आमंत्रित करने वाला प्रलेख जनता के किसी वर्ग को निर्गमित किया जाता है जैसे कि सभी डाक्टरों या इंजीनियरों या किसी खास शेयर दलाल के ग्राहकों को, तो यह प्रविवरण के समान होगा। यह निर्णय करने के लिए कि आमंत्रण जनता के समान होगा। यह निर्णय करने के लिए कि आमंत्रण जनता को दिया गया है या नहीं, नोटिस की भाषा और मामले के तथ्यों पर विचार करना होता है। प्रविवरण की प्रतियों की संख्या या व्यक्तियों की संख्या जिन्हें यह निर्गमित किया है, इस बात के निर्णायक तत्त्व नहीं होते। इसकी असली कसौटी यह है कि आमंत्रण के उत्तर में शेयरों के लिए कौन आवेदन कर सकता है। केवल एक निजी सूचना जनता को आमंत्रण देने के बराबर नहीं है। इसका उदारहण **नैश बनाम लिन्डे** (Nash vs Lynde) का मुकदमा है।

एक कम्पनी के प्रबन्ध निदेशक ने अपने सह-निदेशक को एक प्रलेख की कई प्रतियां भेजी जिन पर 'निजी एवं गोपनीय' शब्द अंकित थे और जिसमें अंशों के प्रस्तावित निर्गमन का विवरण दिया हुआ था और इनके साथ आवेदन पत्र के फार्म भी संलग्न थे। सह-निदेशक ने इसकी एक प्रति एक सालिसिटर (solicitor) के पास भेज दी, सालिसिटर ने उसे अपने किसी ग्राहक को दे दी और उसने उसे अपने किसी रिश्तेदार को दे दी। सॉलिसिटर के ग्राहक के रिश्तेदार ने प्रलेख में की गई चूक के कारण उसे हुई हानि की क्षतिपूर्ति के लिए मुकदमा कर दिया। यह निर्णय दिया गया कि प्रलेख जनता को निर्गमित प्रविवरण के बराबर नहीं था क्योंकि इस पर 'निजी एवं गोपनीय' शब्द अंकित थे।

एक प्रलेख जनता को निर्गमित हुआ माना जाता है यदि आमंत्रण इस प्रकार का हो कि कोई भी व्यक्ति अपने पैसे से कम्पनी के शेयरों के लिए आवेदन कर सकता है, चाहे प्रविवरण उसके नाम में दिया गया हो या नहीं। लेकिन यदि आमंत्रण केवल उन्हीं के द्वारा स्वीकार किया जा सकता हो जिन्हें यह दिया गया हो तब इसे जनता को दिया आमंत्रण नहीं मानना चाहिए। **शेरवेल बनाम कम्बाइन्ड इंकैन्डेसेंट मैंटिल्स सेंडिकेट** (Sherwell V. Combined Incandescent Mantles Syndicate) के मुकदमें में कम्पनी के शेयरों के लिए अभिदान करने का आमंत्रण निदेशकों के कुछ मित्रों को दिया गया था। यह निर्णय दिया गया कि यह जनता को आमंत्रण देने के समान नहीं है।

7.3 प्रविवरण की विषय-वस्तु

धारा 55 के अनुसार **कम्पनी के द्वारा या उसकी ओर से निर्गमित अथवा किसी प्रस्तावित कम्पनी से सम्बन्धित प्रविवरण पर तिथि अवश्य लिखी होनी चाहिए और जब तक इसके विरुद्ध कोई बात सिद्ध न हो सके तब तक तिथि को प्रविवरण के प्रकाशन की तिथि माना जाएगा।**

धारा 56 के अनुसार प्रविवरण में कम्पनी अधिनियम की अनुसूची II के भाग I में निर्दिष्ट बातें होनी चाहिये और अनुसूची II के भाग II में निर्दिष्ट रिपोर्टें प्रदर्शित होनी चाहिए। अनुसूची के भाग III में भाग I और II की व्याख्या दी गयी है।

7.3.1 प्रविवरण में निर्दिष्ट की जाने वाली बातें

अनुसूची II के भाग I में निम्नलिखित बातें दी गयी हैं जिन्हें प्रविवरण में निर्दिष्ट किया जाना चाहिए:

1 कम्पनी का मुख्य उद्देश्य।

2 सीमा नियम पर हस्ताक्षर करने वालों के नाम, व्यवसाय और पते तथा उनके द्वारा अभिदत्त शेयरों की संख्या।

3 शेयरों की संख्या और उनकी श्रेणियाँ, यदि कोई हों।

4 यदि शोध्य पूर्वाधिकार शेयर निर्गमित करने का इरादा हो तो उनकी संख्या, शोधन की तिथि या यदि तिथि निश्चित नहीं है तो शोधन के लिए आवश्यक नोटिस की अवधि तथा शोधन की प्रस्तावित विधि।

5 निदेशक के योग्यता शेयरों की संख्या यदि ऐसी कोई संख्या अन्तर्नियम द्वारा निश्चत की गयी हो।

6 निदेशकों, प्रबन्ध निदेशक या मैनेजर के नाम, पते और व्यवसाय और इसके साथ-साथ इनकी नियुक्ति, पारिश्रमिक और पद से हटाये जाने पर क्षतिपूर्ति के लिए अन्तर्नियम या अनुबंध में दिया गया कोई प्रावधान।

7 (i) न्यूनतम अभिदान की राशि जिसकी प्राप्ति पर निदेशक शेयरों के आवंटन का कार्य शुरू कर सकें, (ii) अभिदान सूची के खुलने और बंद होने का समय, (iii) प्रत्येक शेयर के आवेदन और आवंटन पर देय राशि, (iv) पिछले दो वर्षों में यदि कोई आवंटन किया गया था तो आवंटित शेयरों का ब्यौरा और यदि कोई राशि उन पर दी गयी थी तो वह राशि।

8 ऐसे किसी अनुबंध या व्यवस्था का सारांश जिनसे किसी व्यक्ति (जैसे कि कम्पनी का प्रवर्तक) को कम्पनी के शेयर या ऋणपत्र के अभिदान के लिए कोई विकल्प या प्राथमिक अधिकार दिये गये हैं; इसके साथ देय राशि और इस विकल्प के इन व्यक्तियों द्वारा प्रयोग किये जाने की अवधि और इन व्यक्तियों के नाम, पते और व्यवसाय भी दिये जाने चाहिए।

9 पिछले दो वर्षों में नकदी के अतिरिक्त अन्य किसी प्रतिफल के बदले में निर्गमित शेयरों या ऋणपत्रों के विवरण और उस प्रतिफल की राशि जिसके लिए ये निर्गमित किये गये थे।

10 निर्गमित किये जाने वाले प्रत्येक अंश पर देय प्रीमियम की राशि और निर्गमन की प्रस्तावित तिथि; और जहाँ पर एक ही श्रेणी के शेयर विभिन्न प्रीमियम पर या सम मूल्य पर (at par) या बट्टे पर और अन्य प्रीमियम पर निर्गमित किये जाने हैं तो इस विभिन्नता के कारण।

11 यदि कम्पनी के शेयरों या ऋणपत्रों के निर्गमन का अभिगोपन (underwriting) हुआ है तो अभिगोपकों (underwriters) के नाम और निदेशकों का मत कि अभिगोपकों के पास अभिगोपन का दायित्व पूरा करने के लिए प्रर्याप्त साधन हैं।

12 उन विक्रेताओं के नाम, पते और व्यवसाय जिनसे कम्पनी ने कोई सम्पत्ति प्राप्त की है और नकद, शेयरों या ऋणपत्रों के रूप में उनको दी गयी या देय राशि।

13 उस प्रत्येक व्यक्ति (कम्पनी के अधिकारी या प्रवर्तक सहित) का नाम, हुलिया, पता और व्यवसाय जिसे शेयरों या ऋणपत्रों के अभिदान के लिए या अभिदान के लिए सहमत होने के लिए या उनका अभिगोपन करने के लिए पिछले दो वर्षों में कोई कमीशन दिया गया हो; दी गयी राशि और अभिगोपन कमीशन की दर तथा अधिकारी या प्रवर्तक को दिया गया या देय कोई लाभ।

14 प्रारम्भिक व्ययों की राशि या अनुमानित राशि और उन व्यक्तियों के नाम जिन्होंने इन खर्चों का भुगतान किया है या जिन्हें इनका भुगतान करना है।

15 पिछले दो वर्षों में किसी प्रवर्त्तक या अधिकारी को दिया गया या दिया जाने वाला कोई लाभ या राशि और इस भुगतान या दिये गये लाभ का प्रतिफल।

16 प्रबन्ध निदेशक या मैनेजर की नियुक्ति अथवा उसके पारिश्रमिक के निर्धारण के सम्बन्ध में हुए प्रत्येक अनुबंध की तिथि, पक्षकार और सामान्य प्रकृति।

17 यदि कम्पनी के कोई अंकेक्षक हैं तो उनके नाम और पते।

18 प्रत्येक प्रवर्त्तक और निदेशक के हित, यदि कोई है, की प्रकृति और सीमा का पूरा उल्लेख इन दो स्थितियों में: (i) कम्पनी के प्रवर्त्तन में, या (ii) प्रविवरण के निर्गमन तिथि से दो वर्ष के अन्दर कम्पनी द्वारा प्राप्त की गयी किसी सम्पत्ति में।

19 यदि कम्पनी की शेयर पूँजी विभिन्न श्रेणी के शेयरों में विभाजित है तो विभिन्न श्रेणी के शेयरों के मत देने तथा लाभांश और पूँजी संबंधी अधिकार।

20 यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा (क) कम्पनी के सदस्यों पर (i) कम्पनी की सभाओं में उपस्थित होने, विचार व्यक्त करने या मतदान करने के सम्बंध में या (ii) शेयरों के अंतरण के अधिकार के संबंध में, या (ख) निदेशकों पर प्रबन्ध अधिकारों के संबंध में, प्रतिबन्ध लगाए गये हैं तो उनकी प्रकृति और सीमा।

21 यदि कोई कम्पनी पहले से व्यवसाय कर रही है तो वह अवधि जिससे यह व्यवसाय कर रही है। यदि कम्पनी कोई ऐसा व्यवसाय अपने हाथ में लेना चाहती है जो तीन साल से कम समय से चल रहा है तो वह व्यवसाय जितने समय से चल रहा है, वह अवधि।

22 यदि कम्पनी या इसकी सहायक कम्पनियों की किसी रिजर्व या लाभ का पूँजीकरण किया गया है तो इसका विवरण और पिछले दो वर्षों में परिसम्पत्तियों के पुनर्मूल्यांकन से यदि कोई आधिक्य हुआ है तो उसका विवरण और ऐसे आधिक्य के प्रयोग किये जाने की विधि।

23 यदि कम्पनी पहले से व्यवसाय कर रही हो तो प्रविवरण निर्गमन होने से पांच वर्ष पूर्व के प्रत्येक वित्तीय वर्ष के लिए लाभ-हानि व परिसम्पत्तियों एवं देयताओं के बारे में अंकेक्षकों की रिपोर्ट और दिये गये लाभांश की दर। इसमें प्रत्येक श्रेणी के शेयर के विवरण भी होने चाहिए जिन पर उन वर्षों में लाभांश दिए गए हैं।

24 एक उचित समय और स्थान जहाँ तुलन पत्रों और लाभ-हानि खातों, यदि कोई हों, की प्रतियों, जिन पर अंकेक्षकों की रिपोर्ट आधारित होती है, की जाँच की जा सके।

25 ऐसे शेयर बाजार/शेयर बाजारों के नाम जिनमें प्रस्तावित शेयरों और ऋणपत्रों के क्रय-विक्रय और अधिकृत दर (official quotations) के लिए प्रार्थना पत्र दिया गया हो।

प्रविवरण में आवेदन पत्र का एक कोरा फार्म भी होना चाहिए जिसमें स्पष्ट रूप से छपा होना चाहिए कि आवेदन किसी फर्ज़ी व्यक्ति के नाम से न किया जाए। उसमें यह भी छपा होना चाहिए कि आवेदन एक ही नाम से किया जाए, संयुक्त नाम से नहीं।

7.3.2 प्रविवरण में दी जाने वाली रिपोर्टें

ऊपर दी गयी बातों के अतिरिक्त, अनुसूची के भाग II के अनुसार प्रविवरण में निम्नलिखित रिपोर्टों को भी देना आवश्यक है:

1 अंकेक्षक की रिपोर्ट जिसमें निम्नलिखित बातें दिखायी गयी हों:
   - i) गत पाँच वर्षों में प्रत्येक वर्ष का लाभ-हानि,
   - ii) पिछले लेखों की तिथि पर परिसम्पत्तियाँ और देयताएँ,
   - iii) गत पाँच वर्षों के दौरान कम्पनी द्वारा प्रत्येक श्रेणी के शेयरों पर दिये गये लाभांश की दर और
   - iv) यदि कोई सहायक कम्पनी है तो उसके बारे में भी ऐसे ही विवरण।

2 यदि कम्पनी कोई व्यवसाय क्रय करना चाहती है तो उस व्यवसाय के पिछले पाँच वर्षों के (i) लाभ-हानि पर और (ii) परिसम्पत्तियों और देयताओं पर एक चार्टर्ड एकाउंटेन्ट की रिपोर्ट उसके नाम सहित होनी चाहिए।

3 यदि निर्गमित शेयरों या ऋणपत्रों से प्राप्त राशि का या उसके एक भाग का उपयोग प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से किसी व्यवसाय के क्रय करने में किया जाना है तो ऊपर (2) में बतायी गई रिपोर्ट की भांति एक रिपोर्ट प्रदर्शित की जानी आवश्यक है।

7.3.3 कम्पनियों के रजिस्ट्रार के यहाँ प्रविवरण का पंजीकरण

धारा 60 के अनुसार प्रविवरण के प्रकाशन की तिथि से पहले प्रत्येक निदेशक या प्रस्तावित निदेशक द्वारा हस्ताक्षरित उसकी एक प्रति कम्पनी के रजिस्ट्रार को सौंपना आवश्यक होता है। प्रविवरण की प्रत्येक प्रति के मुखपृष्ठ पर छपा होना अनिवार्य है कि प्रविवरण की एक प्रति कम्पनी के रजिस्ट्रार को सौंप दी गयी है। रजिस्ट्रार को इसकी प्रति सौंपने की तिथि से 90 दिन के अन्दर प्रविवरण का निर्गमन कर दिया जाना चाहिए। यदि इसका निर्गमन इसके पंजीकरण के 90 दिन के बाद किया जाना है तो इसे एक ऐसा प्रविवरण माना जाएगा जिसकी एक प्रति रजिस्ट्रार को नहीं सौंपी गयी है।

इसके अतिरिक्त प्रविवरण की प्रति के साथ निम्नलिखित प्रलेख संलग्न किये जाने आवश्यक हैं:

i) यदि प्रविवरण में विशेषज्ञ की रिपोर्ट शामिल की गयी है तो प्रविवरण के निर्गमन के लिए उसकी अनुमति। ऐसे विशेषज्ञ का कम्पनी की स्थापना, प्रवर्तन या प्रबन्ध के साथ कोई संबंध या दिलचस्पी नहीं होनी चाहिए।

.i) प्रबन्ध निदेशक या मैनेजर की नियुक्ति या पारिश्रमिक के निर्धारण के लिए किये गये प्रत्येक अनुबंध की एक प्रति।

iii) प्रविवरण के निर्गमन की तिथि से पूर्व के दो वर्षों की अवधि में किए गए उन अनुबंधों को छोड़कर जो सामान्य व्यवसाय करने में किये गये हों, अन्य प्रत्येक महत्वपूर्ण अनुबंध की प्रति।

iv) यदि क्रय किये जाने वाले व्यवसाय के लाभ-हानि व परिसम्पत्तियों एवं देयताओं के संबंध में रिपोर्ट बनाने वालों ने इनमें समायोजन किए हैं तो ऐसे समायोजनों का विवरण और इनके कारण जो लिखित रूप में हो और उस पर उनके हस्ताक्षर हों।

v) प्रविवरण में यदि किन्हीं व्यक्तियों के कम्पनी के अंकेक्षक, परामर्शदाता, वकील, बैंकर, सॉलिसिटर के रूप में कार्य करने के लिए नाम दिए गए हैं तो उनकी लिखित सहमति।

vi) कम्पनी के अंतर्नियम (Articles of Association) में जिन व्यक्तियों के नाम कम्पनी निदेशक या निदेशकों के रूप में कार्य करने के लिए दिए गए हैं, उनकी स्वीकृति।

vii) यदि कोई अभिगोपन करार है तो उसकी प्रति। (34) 2

7.4 प्रविवरण के स्थान पर विवरण (Statement in lieu of Prospectus)

यह भी हो सकता है कि एक सार्वजनिक कम्पनी जनता को अपनी शेयर पूँजी के लिए अभिदान करने को आमन्त्रित न करे और इसके बजाय निजी तौर पर पूँजी का प्रबन्ध कर ले। ऐसी स्थिति में, धारा 70 के अनुसार उसके लिए शेयरों या ऋणपत्रों के किसी भी आवंटन से कम से कम तीन दिन पहले कम्पनियों के रजिस्ट्रार को 'प्रविवरण के स्थान पर विवरण' देना आवश्यक होता है। धारा 70 के अनुसार कम्पनी अधिनियम 1956 की अनुसूची III में प्रविवरण के स्थान पर विवरण का एक मॉडल प्रारूप दिया हुआ है।

इसी प्रकार जब एक निजी कम्पनी सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित की जाती है और यह अतिरिक्त धन जुटाना चाहती है तो धारा 44 का अनुसरण करते हुए यह जनता को अपनी शेयर पूँजी के लिए अभिदान करने को आमंत्रित करने के लिए प्रविवरण का निर्गमन कर सकती है। परन्तु यदि यह प्रविवरण निर्गमित नहीं करती है तो यह 'प्रविवरण के स्थान पर विवरण' प्रस्तुत करने के लिए बाध्य होती है। धारा 44 के अनुसार जब एक निजी कम्पनी सार्वजनिक कम्पनी में परिवर्तित की जाती है तो कम्पनी अधिनियम 1956 की अनुसूची IV में 'प्रविवरण के स्थान पर विवरण' का एक नमूना दिया गया है।

कम्पनी अधिनियम 1956 की अनुसूची III और IV पढ़ने के बाद यह पता लगता है कि इसकी विषयवस्तु लगभग वैसी ही है जैसी कि प्रविवरण की।

यदि कम्पनी द्वारा कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास प्रविवरण के स्थान पर विवरण जमा कराये बिना शेयरों या ऋणपत्रों का आवंटन किया जाता है तो आवंटिती आवंटन को कानूनी बैठक (Statutory meeting) होने

के बाद दो महीने के भीतर समाप्त कर सकता है या जहां कानूनी बैठक होने के बाद आवंटन किया जाना है तो आवंटन की तिथि के दो महीने के भीतर वह आवंटन को समाप्त कर सकता है।

यदि प्रविवरण के स्थान पर आवश्यक सूचना के साथ विवरण कम्पनियों के रजिस्ट्रार को प्रस्तुत नहीं किया जाता जहां कि ऐसा करना अनिवार्य है तो कम्पनी और इसके प्रत्येक निदेशक पर 1,000 रु. तक जुर्माना किया जा सकता है।

बोध प्रश्न क

1 प्रविवरण की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

2 एक प्रविवरण जनता को निर्गमित किया हुआ कब माना जाता है?

....

....

....

3 प्रविवरण के स्थान पर विवरण क्या होता है?

....

....

....

4 बताइये कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) एक निजी कम्पनी, रजिस्ट्रार को प्रविवरण के स्थान पर विवरण सौंपने के बाद ही शेयरों का आवंटन कर सकती है।

ii) एक सार्वजनिक कम्पनी प्रविवरण के निर्गमन के बिना ही शेयरों का आवंटन कर सकती है।

iii) एक कम्पनी तब तक प्रविवरण का निर्गमन नहीं कर सकती जब तक कि उसकी एक प्रति कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास न भेज दी जाए।

iv) एक प्रलेख तब तक प्रविवरण नहीं होता जब तक यह निगमित निकाय (body corporate) के शेयरों और ऋणपत्रों के लिए अभिदान करने का जनता को निमंत्रण न हो।

v) एक प्रविवरण पर तिथि होनी चाहिए और यह छपी हुई होनी चाहिए।

vi) एक प्रविवरण इसके पंजीकरण के 60 दिन के अन्दर निर्गमित होना चाहिए।

vii) एक सार्वजनिक कम्पनी जो मित्रों और रिश्तेदारों के बीच शेयरों को निर्गमित करती है उसे प्रविवरण के निर्गमन की आवश्यकता नहीं होती, लेकिन प्रविवरण के स्थान पर विवरण रजिस्ट्रार के पास जमा कराना आवश्यक होता है।

viii) एक प्रविवरण जिसमें विशेषज्ञों का कथन हो, उसमें ऐसे विशेषज्ञ की सहमति भी होनी चाहिए।

5 रिक्त स्थानों को भरिये:

i) जनता से निक्षेप आमंत्रित करने वाला नोटिस .... होता है।

ii) प्रविवरण के स्थान पर विवरण की विषयवस्तु .... जैसी ही होती है।

iii) कम्पनी को जनता को प्रविवरण तब तक निर्गमित नहीं करना चाहिए जब तक कि उसकी एक प्रति .... को न सौंप दी गयी हो।

iv) प्रविवरण के स्थान पर विवरण कम्पनियों के रजिस्ट्रार को एक .... कम्पनी द्वारा सौंपा जाता है जो कि जनता को अपनी शेयर पूँजी के लिए अभिदान करने को आमंत्रित नहीं करती।

7.5 न्यूनतम अभिदान (Minimum Subscription)

न्यूनतम अभिदान वह न्यूनतम राशि है जिसके बराबर कम्पनी द्वारा शेयर आवेदन पत्र प्राप्त होने चाहिए अन्यथा धारा 69 के अनुसार कम्पनी द्वारा आवेदकों को आवेदन राशि लौटानी होती है। न्यूनतम अभिदान की राशि प्रविवरण में दी जानी आवश्यक होती है और इससे पहले कि शेयरों का पहला आवंटन किया जा सके प्रविवरण के निर्गमन से 120 दिन के अन्दर इसके लिए अभिदान या आवेदन किया जाना चाहिए।

कम्पनी के निदेशक या सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वाले न्यूनतम अभिदान की राशि का निर्धारण करते हैं। यह वह राशि है जो उनकी राय में निम्नलिखित मदों में से प्रत्येक के लिए व्यवस्था करने के लिए, प्रत्येक मद के लिए आवश्यक राशि अलग से देते हुए, शेयरों के निर्गमन के द्वारा अवश्य ही जुटायी जानी चाहिए:

i) खरीदी गयी या खरीदी जाने वाली सम्पत्ति का क्रय मूल्य जिसका पूर्णतः या आंशिक रूप से, शेयरों के निर्गमन से प्राप्त राशि से भुगतान किया जाना है;

ii) अभिगोपन के लिए कमीशन या कम्पनी के शेयरों के अभिदान के लिए कोई अन्य कमीशन तथा कम्पनी द्वारा देय कोई भी प्रारंभिक व्यय;

iii) उक्त कार्यों के लिए कम्पनी द्वारा लिए गए ऋण की वापसी;

iv) कार्यशील पूँजी; और

v) कोई अन्य व्यय, जिसके उद्देश्य, प्रकृति और अनुमानित राशि का अलग-अलग उल्लेख होना चाहिए।

यदि कम्पनी को न्यूनतम अभिदान प्राप्त नहीं हुआ है और वह प्रविवरण के निर्गमन के 120 दिन के अन्दर शेयरों का आवंटन करने में असमर्थ रहती है तो इसे आवेदकों से प्राप्त समस्त राशि अगले 10 दिन के अन्दर बिना ब्याज के वापस करनी होगी। यदि प्रविवरण के निर्गमन के 130 दिन के अन्दर राशि वापस नहीं की जाती तो कम्पनी के निदेशक संयुक्ततः और पृथक्तः (jointly and severally) रूप से 130वां दिन समाप्त होने के बाद उस राशि को 12% ब्याज सहित लौटाने के लिए उत्तरदायी होंगे। लेकिन यदि कोई निदेशक यह सिद्ध कर दे कि राशि वापस करने में देरी उसकी लापरवाही या दुराचरण के कारण नहीं थी तो वह इस दायित्व से मुक्त हो सकता है।

7.6 प्रविवरण में मिथ्या निरूपण और इसके परिणाम

आपने यह तो जान ही लिया है कि निदेशक प्रविवरण में दी गयी सूचना के आधार पर ही कम्पनी के शेयरों या ऋणपत्रों के लिए आवेदन करते हैं। शेयरों के भावी क्रेता को प्रविवरण के द्वारा सच्ची जानकारी प्राप्त करने का अधिकार है। अतः प्रविवरण में केवल सच बातें ही होनी चाहिए। प्रविवरण को कम्पनी की सही स्थिति दर्शानी चाहिए। यदि प्रविवरण में मिथ्या कथन हैं तो आवंटिती के पास कम्पनी और प्रविवरण निर्गमित करने वालों के विरुद्ध कुछ उपचार हैं। लेकिन ये उपचार खुले बाजार में शेयर खरीदने वालों या सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वालों को उपलब्ध नहीं होते।

यह ध्यान रखिये कि प्रविवरण में मिथ्या कथन न हो, केवल इतना ही जरूरी नहीं है, यह भी आवश्यक है कि कोई महत्त्वपूर्ण तथ्य छिपाया न गया हो। इस बात का एक उदाहरण **रैक्स बनाम किलसैंट** (Rex Vs. Kylsant) का मुकदमा है।

एक कम्पनी ने एक प्रविवरण निर्गमित किया जिसमें कोई मिथ्या कथन नहीं था। एक कथन के द्वारा पिछले कुछ वर्षों में दिये गये लाभांश की दर बतायी गयी थी। यह एक सच्चा और यथार्थपूर्ण कथन था। लेकिन लाभांश व्यापारिक लाभों में से नहीं दिये गये थे बल्कि प्राप्त पूंजीगत लाभों में से दिये गये थे। यह तथ्य प्रविवरण में नही दिया गया था। यह निर्णय दिया गया कि इस तथ्य का न बताना कि लाभांश व्यापारिक लाभों में से नही दिये गये थे बल्कि प्राप्त पूँजीगत लाभों में से दिये गये थे जो कि एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है जिसकी चूक आवंटती को आवंटन को स्वीकार न करने का और कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत उपलब्ध उपचार का सहारा लेने का अधिकार देती है। यदि प्रविवरण में कोई ऐसी चूक है जो जनता को गुमराह करने के लिए है तो इसे असत्य माना जाएगा। **पीक बनाम गारने** (Peek Vs. Garney) के मामले में निर्गमित किये गये प्रविवरण में कुछ देयताओं के बारे में नहीं बताया गया था। इससे कमपनी के समृद्ध होने का गलत मत बना। प्रविवरण को असत्य घोषित किया गया।

आवंटिती को, जिसने प्रविवरण के विश्वास पर शेयरों के लिए आवेदन किया था और उस प्रविवरण में (i) मिथ्या कथन थे या (ii) महत्त्वपूर्ण तथ्य छोड़ दिये गये थे; कम्पनी, इसके प्रवर्त्तकों, निदेशकों और विशेषज्ञों के विरुद्ध उपचार प्राप्त हैं।

यह ध्यान रखिये कि किसी हानि या क्षति के लिए क्षतिपूर्ति दावा करने का अधिकार केवल उस व्यक्ति को उपलब्ध है जिसने उस प्रविवरण के विश्वास पर, शेयरों या ऋणपत्रों के लिए अभिदान किया है, जिसमें मिथ्या कथन हैं। इस प्रकार शेयरों को खुले बाजार में खरीदने वाले बाद के क्रेता को कम्पनी, या निदेशकों या प्रवर्त्तकों के विरुद्ध कोई उपचार प्राप्त नहीं है।

7.6.1 कम्पनी के विरुद्ध उपचार

वह व्यक्ति जिसने प्रविवरण में दिये गये कथनों पर विश्वास करके कम्पनी से शेयर खरीदे, यदि यह दिखा सकता है कि प्रविवरण में कोई मिथ्या कथन है या कोई महत्त्वपूर्ण तथ्य छोड़ दिया गया तो वह (i) शेयर खरीदने के अनुबंध को समाप्त कर सकता है और (ii) क्षतिपूर्ति का दावा कर सकता है। इसके लिए उसे यह दिखाना होगा कि प्रविवरण में मिथ्या कथन या चूक थी। इसके अतिरिक्त उसे यह भी दिखाना होगा कि मिथ्या कथन या चूक (i) तथ्य की थी न कि विधि संबंधी या केवल मत की अभिव्यक्ति की; (ii) महत्त्वपूर्ण थी और (iii) उसने उस पर वास्तव में विश्वास किया था।

अनुबंध को निरस्त करना (Rescission of Contract) : यदि वह शेयर खरीदने के अनुबंध को समाप्त करना चाहता है तो (i) शेयरों के आवंटन के बाद उचित समय के अन्दर, (ii) कम्पनी के समापन की कार्यवाही शुरू होने से पहले और (iii) कोई ऐसा कार्य, जो अनुबंध को समाप्त करने के अधिकार से असंगत हो जैसे शेयरों की बिक्री या कम्पनी की सामान्य सभा में उपस्थिति या लाभांश स्वीकार करना, करने से पहले उसे अनुबंध समाप्त कर देना चाहिए।

कपट से हुई क्षति : आवंटिती का, प्रविवरण में मिथ्याकथन या महत्त्वपूर्ण तथ्य की छूट होने की स्थिति में, दूसरा अधिकार कपट से हुई क्षति के लिए कम्पनी पर दावा करने का है। कम्पनी केवल तभी उत्तरदायी ठहरायी जाएगी जब यह सिद्ध कर दिया जाता है कि ऐसा प्रविवरण कम्पनी द्वारा या उसके द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा निर्गमित किया गया था। ऐसे दावे में सफल होने के लिए आवंटिती को ऊपर (क) के अन्तर्गत दी गयी शर्तों को पूरा करने के अतिरिक्त यह भी सिद्ध करना होगा कि (i) जो कम्पनी की ओर से कार्य कर रहे थे उन्होंने कपटपूर्वक कार्य किया, (ii) जो कम्पनी की ओर से कार्य करने का दावा कर रहे हैं वे कम्पनी द्वारा प्राधिकृत हैं और (iii) उसे हानि या क्षति हुई है।

यह ध्यान रखना आवश्यक है कि शेयरों का आवंटिती शेयर भी अपने पास रखे और कम्पनी से क्षतिपूर्ति भी ले, ये दोनों काम नहीं कर सकता।

7.6.2 कम्पनी के प्रवर्तकों और निदेशकों के विरुद्ध उपचार

धारा 62 में प्रावधान है कि जहां लोगों को शेयरों या ऋणपत्रों के लिए अभिदान करने को प्रविवरण के निर्गमन द्वारा आमंत्रित किया जाता है, तो उन सभी की जिन्होंने प्रविवरण के विश्वास पर शेयरों के लिए अभिदान किया, प्रविवरण में कोई मिथ्या और भ्रामक कथन से हुई हानि की क्षतिपूर्ति के लिए निम्नलिखित व्यक्ति उत्तरदायी होंगे :

i) प्रत्येक वह व्यक्ति जो प्रविवरण के निर्गमन के समय कम्पनी का निदेशक है;

ii) प्रत्येक वह व्यक्ति जिसने प्रविवरण में अपना नाम निदेशक के रूप में देने की सहमति दी हो और जिसका नाम दिया गया हो या जिसका नाम प्रविवरण में भावी निदेशक के रूप में दिया गया हो;

iii) कम्पनी का प्रत्येक प्रवर्त्तक; और

iv) प्रत्येक व्यक्ति (विशेषज्ञ सहित) जिसने प्रविवरण के निर्गमन को प्राधिकृत किया हो। लेकिन एक विशेषज्ञ प्रविवरण में दी गयी अपनी रिपोर्ट में दिये गये मिथ्या कथनों के लिए ही उत्तरदायी है।

शेयरों का आवंटिती प्रविवरण में शामिल कपटपूर्ण निरूपणों के लिए कम्पनी के विरुद्ध या निदेशकों के विरुद्ध दावा कर सकता है। यदि वह निदेशकों पर दावा करना चाहता है तो उसे अनुबंध निरस्त करने की आवश्यकता नहीं है।

उपलब्ध बचाव : प्रवर्त्तक, निदेशक या कोई अन्य व्यक्ति (विशेषज्ञ को छोड़कर) जो प्रविवरण के निर्गमन के

लिए उत्तरदायी है, यदि निम्नलिखित बातों में से कोई एक सिद्ध कर दे तो वह दायित्व से बच सकता है।

i) कि प्रविवरण के निर्गमन से पहले उसने निदेशक के रूप में कार्य करने की अपनी सहमति वापस ले ली थी और प्रविवरण का निर्गमन उसकी सहमति या प्राधिकार के बगैर किया गया; या

ii) कि प्रविवरण उसकी जानकारी या सहमति के बगैर निर्गमित किया गया था और इसके निर्गमन का पता चलते ही उसने उचित ढंग से इसकी सार्वजनिक सूचना दे दी थी; या

iii) कि उसे प्रविवरण के निर्गमन के बाद लेकिन आवंटन से पहले अपनी सहमति वापस ले ली थी और इसकी उचित सार्वजनिक सूचना दे दी थी; या

iv) कि उसके पास यह विश्वास करने का पर्याप्त आधार था कि कथन सत्य थे और वह इमानदारी से उन्हें सत्य ही मानता था; या

v) कि विवरण सत्य था और वह विशेषज्ञ की रिपोर्ट का समुचित संक्षेप था; या

vi) कि कथन किसी सरकारी अधिकारी का था या एक अधिकृत प्रलेख पर आधारित था।

7.6.3 विशेषज्ञों के विरुद्ध उपचार

बहुधा विशेषज्ञों के कथन भी प्रविवरण में होते हैं। विशेषज्ञ शब्द के अन्तर्गत इंजीनियर, मूल्यांकक, लेखापाल या कोई भी ऐसा व्यक्ति शामिल किया जाता है जिसका पेशा उसके कथन को प्राधिकार प्रदान करता है।

एक विशेषज्ञ केवल अपने ही मिथ्या कथन, गलत रिपोर्ट या मूल्यांकन, जिसे प्रविवरण में शामिल किया गया है, के लिए उत्तरदायी होता है। साथ ही धारा 62 के अन्तर्गत वह क्षतिपूर्ति करने के लिए भी उत्तरदायी होता है। फिर भी वह इस दायित्व से बच सकता है यदि वह यह सिद्ध कर दे कि:

i) अपनी सहमति देने के पश्चात् उसने प्रविवरण की एक प्रति कम्पनियों के रजिस्ट्रार को पंजीकरण के लिए भेजे जाने से पहले अपनी सहमति लिखित रूप में वापस ले ली थी, या

ii) प्रविवरण के कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास पंजीकरण के लिए भेजे जाने के पश्चात् और आवंटन से पहले, मिथ्या कथन का पता चलने पर, उसने अपनी सहमति लिखित रूप में वापस ले ली थी और इसके कारणों सहित इसकी उचित सार्वजनिक सूचना दे दी थी; या

iii) कथन के लिये वह सक्षम था तथा कथन के सही होने का विश्वास करने का उसके पास उचित आधार था।

7.6.4 प्रविवरण में मिथ्या कथन के लिये आपराधिक दायित्व

अधिनियम की धारा 63 में मिथ्या कथनों के लिये आपराधिक दायित्व का प्रावधान है। इस धारा के अनुसार यदि प्रविवरण में कोई मिथ्या कथन है तो प्रविवरण के निर्गमन को प्राधिकृत करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को दो वर्ष तक के कारावास के दंड या 5,000 रु. तक जुर्माना या दोनों प्रकार के दण्ड दिये जा सकते हैं, जब तक वह यह सिद्ध न कर दे

क) कि कथन महत्त्वहीन था, या

ख) कि कथन की सत्यता में विश्वास करने का उसके पास उचित आधार था और उसने उस पर प्रविवरण के निर्गमन के समय तक विश्वास किया।

धारा 63(2) के अन्तर्गत विशेषज्ञों को आपराधिक दायित्व से मुक्त रखा गया है।

अधिनियम में किसी व्यक्ति को पैसा निवेश करने के लिये कपटमय ढंग के प्रेरित करने पर भी दंड निर्दिष्ट किया गया है। धारा 68 के अनुसार, यदि कोई व्यक्ति जानबूझकर या लापरवाही से कोई ऐसा कथन, वचन या भविष्यवाणी करता है जो मिथ्या या भ्रामक या धोखे देने वाला या जो महत्वपूर्ण तथ्यों को बेईमानी से छिपाता है जिससे कि किसी अन्य व्यक्ति को कम्पनी के शेयरों के लिये अभिदान करने को प्रेरित किया जाता है या प्रेरित करने का प्रयत्न किया जाता है, तो ऐसा व्यक्ति दो वर्ष तक के कारावास या 10,000 रु. तक जुर्माने या दोनों तरह से दण्डित किया जा सकता है।

बोध प्रश्न ख

1 'न्यूनतम अभिदान' का क्या अर्थ है?

....

....

....

2 प्रविवरण में मिथ्या कथनों के लिये उपलब्ध उपचार बताइये।

....

....

....

3 ऐसे व्यक्ति का आपराधिक दायित्व क्या है जो ऐसे प्रविवरण के निर्गमन को प्राधिकृत करता है जिसमें मिथ्या कथन हों?

....

....

....

4 बताइये कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) कोई भी कम्पनी पहली बार शेयरों के आवंटन का कार्य तब तक नहीं कर सकती जब तक कि प्रविवरण में न्यूनतम अभिदान के रूप में बतायी गयी राशि का अभिदान न कर दिया गया हो।

ii) यदि किसी व्यक्ति ने खुले बाजार में शेयर खरीदे हैं और उस प्रविवरण को नहीं पढ़ा है जिसमें मिथ्या कथन हैं तो वह भी कम्पनी शेयर खरीदने के अनुबंध को समाप्त कर सकता है।

iii) न्यूनतम अभिदान राशि वह न्यूनतम राशि है जो सीमानियम के हस्ताक्षरकर्त्ता को कम्पनी को अवश्य देनी है।

iv) यदि शेयरों के आवंटिती को यह पता चलता है कि प्रविवरण में मिथ्या कथन हैं तो वह शेयर भी अपने पास रख सकता है और कम्पनी पर क्षति के लिए दावा भी कर सकता है।

v) एक निदेशक प्रविवरण में मिथ्या कथनों के लिए होने वाले दायित्वों से बच सकता है यदि वह यह सिद्ध कर दे कि उसके पास यह विश्वास करने के लिए उचित आधार है कि जिस कथन को असत्य कहा जा रहा है वह सत्य है।

vi) प्रविवरण में मिथ्या कथनों के लिए एक विशेषज्ञ उत्तरदायी नहीं है।

5 नीचे दिये गये वाक्यों के लिए उचित विकल्प चुनिये:

i) जहां प्रविवरण में मिथ्या कथन होते हैं, उन व्यक्तियों पर, जिन्होंने इसके निर्गमन को प्राधिकृत किया है, जितना जुर्माना हो सकता है उसकी राशि:
(क) 1,000 रु. है
(ख) 2,000 रु. है
(ग) 5,000 रु. है

ii) प्रविवरण के स्थान पर विवरण निर्गमित किया जाना होता है:
(क) एक सार्वजनिक कम्पनी द्वारा जो पूँजी की निजी तौर पर व्यवस्था करती है
(ख) एक निजी कम्पनी द्वारा
(ग) प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी द्वारा

7.7 सारांश

प्रविवरण एक सार्वजनिक कम्पनी द्वारा निर्गमित किया जाता है जिसके द्वारा जनता को कम्पनी की शेयर पूँज़ी या ऋणपत्र के लिए अभिदान करने को आमंत्रित किया जाता है। इस प्रकार पूरे देश में फैले लोगों से

कम्पनी बड़ी मात्रा में राशि एकत्र करती है। निवेशकों के हितों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए कम्पनी अधिनियम 1956 ने प्रविवरण के निर्गमन के संबंध में विस्तृत प्रावधान किये हैं।

कम्पनी अधिनियम, 1956 प्रविवरण की विषयवस्तु नियत करता है। जनता को निर्गमित किये गये प्रत्येक प्रविवरण में वे सभी बातें और रिपोर्टें होनी चाहिएं जिनका शामिल किया जाना विधि द्वारा अनिवार्य है। इस प्रकार, निवेशकों को कम्पनी के बारे में पूरी सूचना प्राप्त होती है। तब वे यह निर्णय ले सकते हैं कि कम्पनी की शेयर पूँजी के लिए वे अभिदान करें या नहीं।

कम्पनी अधिनियम यह अपेक्षा करता है प्रविवरण का निर्गमन करने वाले उन सभी तथ्यों को सही-सही बतायेंगे जिन्हें बताना आवश्यक होता है। यदि प्रविवरण में कोई महत्वपूर्ण सूचना छोड़ दी गयी है तो इसके भयंकर परिणाम होंगे। इसलिए यदि प्रविवरण में दिये गये कुछ कथन असत्य हैं या कुछ छोड़ दिये गये हैं तो विधि में प्रवर्त्तकों, निदेशकों व विशेषज्ञों आदि के दीवानी और आपराधिक दायित्व का प्रावधान है।

यदि आवंटिती को प्रविवरण में मिथ्या कथनों का पता चलता है तो वह शेयर खरीदने के अनुबंध को समाप्त कर सकता है। प्रविवरण में मिथ्या कथनों के कारण उसके द्वारा उठायी गयी हानि के लिए वह क्षतिपूर्ति का दावा कर सकता है।

7.8 शब्दावली

न्यूनतम अभिदान (Minimum Subscription) : यह वह राशि जो प्रवर्त्तकों, निदेशकों की राय में कम्पनी अधिनियम 1956 में दी गयी बातों के लिए शेयरों के निर्गमन द्वारा जुटानी आवश्यक है।

प्रविवरण (Prospectus) : यह कम्पनी द्वारा निर्गमित एक प्रलेख है जिसके द्वारा कम्पनी की शेयर पूँजी के लिए अभिदान करने को जनता को आमंत्रित किया जाता है।

प्रविवरण के स्थान पर विवरण (Statement in lieu of Prospectus) : यह विवरण कम्पनियों के रजिस्ट्रार के यहां उस सार्वजनिक कम्पनी द्वारा फाइल करना आवश्यक होता है जो निजी तौर पर पूँजी की व्यवस्था कर रही है।

7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एम.सी. कुच्छल: *आधुनिक भारतीय कम्पनी अधिनियम* (दिल्ली: श्री महावीर बुक डिपो, 1989) अध्याय 7

एन.डी. कपूर, दिनकर पगोर एवं भारत भूषण: *कम्पनी अधिनियम* (नई दिल्ली: सुल्तान चंद एण्ड संस, 1990) अध्याय 5

7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 4 i) गलत ii) सही iii) सही iv) सही v) सही vi) गलत vii) सही viii) सही।

5 i) प्रविवरण ii) प्रविवरण iii) कम्पनियों के रजिस्ट्रार iv) सार्वजनिक

ख 4 i) सही ii) गलत iii) गलत iv) गलत v) गलत vi) सही।

5 i) ग ii) क

7.11 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

1 प्रविवरण शब्द की परिभाषा दीजिए।

2 प्रविवरण का उद्देश्य क्या है?

3 वे कुछ विवरण बताइये जो प्रविवरण में शामिल करने आवश्यक हैं।

4 "जनता को निर्गमित" का क्या अर्थ है, उदाहरण दीजिए।

5 'प्रविवरण के स्थान पर विवरण' क्या होता है?

6 'न्यूनतम अभिदान' का संक्षेप में स्पष्टीकरण दीजिए।

7 प्रविवरण में दिये गये असत्य कथनों के विश्वास पर आवेदन करने वाले शेयरों के आवंटिती को (i) कम्पनी व (ii) कम्पनी के निदेशकों के विरुद्ध क्या उपचार उपलब्ध हैं।

8 प्रविवरण में मिथ्या कथन के फलस्वरूप आवंटिती द्वारा क्षतिपूर्ति के लिए दावा किए जाने की स्थिति में निदेशकों को क्या उपचार उपलब्ध है?

9 कारण बताते हुए निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

i) रमेश ने प्रविवरण के आधार पर एक कम्पनी के 100 शेयरों के लिए आवेदन किया। क्या वह शेयर खरीदने का अपना आवेदन पत्र वापस ले सकता है?

ii) एक कम्पनी ने एक प्रविवरण निर्गमित किया जिसमें मिथ्याकथन थे। मोहन को प्रविवरण की एक प्रति प्राप्त हुई लेकिन उसने शेयरों के लिए आवेदन नहीं किया। बाद में मोहन ने 1000 शेयर खुले बाजार में खरीदे। जब उसे मिथ्याकथनों के बारे में पता चला तो वह अनुबंध को निरस्त करना चाहता है। क्या वह सफल होगा?

iii) एक प्रविवरण में महत्वपूर्ण तथ्यों के असत्य कथन थे। एक अभिदानकर्त्ता को इन मिथ्याकथनों से हानि हुई। वह शेयर रखना चाहता है और हानि की क्षतिपूर्ति का दावा करना चाहता है। क्या वह ऐसा कर सकता है?

iv) एक कम्पनी के निदेशकों ने एक प्रविवरण के निर्गमन को प्राधिकृत किया। उस प्रविवरण में कुछ ऐसे कथन थे जिन्हें निदेशक सत्य मानते थे लेकिन जो वास्तव में असत्य थे। क्या निदेशकों को उत्तरदायी ठहराया जा सकता है ?

v) नरेश ने एक कम्पनी के 500 शेयरों के लिए फर्जी नाम से आवेदन किया। उसी नाम में शेयर आवंटित कर दिये गये। क्या वह उत्तरदायी होगा?

vi) शेयरों के आवंटिती सुरेश को प्रविवरण में मिथ्याकथनों का पता लगा। लेकिन उसने 9 महीने तक कम्पनी के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की और कम्पनी की एक साधारण सभा में भी उपस्थित हुआ। अब वह अनुबंध को निरस्त करना चाहता है। क्या वह सफल होगा?

vii) गोपाल ने एक प्रविवरण के आधार पर कम्पनी के शेयरों के लिए आवेदन किया। प्रविवरण में एक मिथ्याकथन था। शेयर गोपाल को आवंटित किये गये जिसने उन्हें वीरेंद्र को हस्तांतरित कर दिया। क्या वीरेंद्र मिथ्याकथन के आधार पर अनुबंध को निरस्त कर सकता है?

संकेत

i) रमेश आवंटन से पहले किसी भी समय अपना प्रस्ताव वापस ले सकता है।

ii) नहीं, मोहन अनुबंध को निरस्त नहीं कर सकता क्योंकि उसने शेयर खुले बाजार में खरीदे हैं और वह प्रविवरण से प्रेरित नहीं हुआ।

iii) हां, वह क्षतिपूर्ति का दावा कर सकता है (धारा 62)।

iv) नहीं। वे दायित्व से मुक्त हो सकते हैं यदि ये सिद्ध कर दें कि उन्होंने ईमानदारी से कथन के सही होने का विश्वास किया।

v) हां, उसे पाँच वर्ष तक के कारावास का दण्ड दिया जा सकता है।

vi) नहीं, वह 9 महीने बाद और साधारण सभा में उपस्थित होने के बाद अनुबंध को निरस्त नहीं कर सकता। उसने अपना यह अधिकार खो दिया है।

vii) वीरेंद्र अनुबंध को निरस्त करने के लिए कोई कार्यवाही नहीं कर सकता। शेयरों का मौलिक आवंटिती ही अनुबंध निरस्त कर सकता है।

नोट: ये प्रश्न आप के अभ्यास के लिए हैं। इन के उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। प्रश्नों का उत्तर लिख कर आप स्वयं अपनी प्रगति की जाँच कर सकते हैं।

B.COM-07

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

कम्पनी विधि

खंड

3

पूंजी और प्रबंध

इकाई 8

शेयर तथा ऋण पूंजी 5

इकाई 9

शेयरों का आबंटन 22

इकाई 10

कंपनी की सदस्यता 39

इकाई 11

निदेशक 56

खंड 3 पूंजी और प्रबंध

खंड 1 और 2 में आपने कंपनी के प्रवर्तन और गठन की प्रक्रिया तथा संबंधित प्रमुख प्रलेखों की प्रकृति और महत्व के संबंध में अध्ययन किया। कंपनी के निगमित हो जाने के पश्चात् प्रवर्तकों को इस संबंध में जो दूसरा महत्वपूर्ण कार्य करना होता है वह है शेयरों और डिबेंचरों को जारी करके कंपनी के लिए आवश्यक पूंजी की राशि जुटाना। इस खंड में आप उन विभिन्न प्रकार के शेयरों और डिबेंचरों के संबंध में पढ़ेंगे जिन्हें कंपनी द्वारा जारी किया जा सकता है। साथ ही आप शेयरों और डिबेंचरों को जारी करने के संबंध में उन कार्यविधियों का भी अध्ययन करेंगे जिनका पालन करना आवश्यक होता है। इस खंड में कंपनी की सदस्यता तथा निदेशकों की स्थिति से सम्बंधित नियमों की भी चर्चा की गयी है।

इकाई 8 में उन विभिन्न प्रकार के शेयरों और डिबेंचरों का विवेचन किया गया है जिन्हें कोई कंपनी जारी कर सकती है। उसमें सार्वजनिक जमा से संबंधित नियमों की भी चर्चा की गयी है।

इकाई 9 में शेयरों के आवंटन, शेयर प्रमाणपत्र के निर्गमन, शेयरों पर मांग, शेयरों की जब्ती और शेयरों के अभ्यर्पण संबंधी नियमों का विवेचन किया गया है।

इकाई 10 में किसी कंपनी की सदस्यता संबंधी नियमों का विवेचन किया गया है। इसमें बताया गया है कि शेयरधारी और सदस्य के बीच क्या अंतर होते हैं, सदस्य कैसे बना जा सकता है, सदस्यता के अंतरण के संबंध में किन प्रक्रियाओं का पालन करना होता है और सदस्यों के रजिस्टर को रखने के संबंध में किन-किन नियमों का पालन करना होता है।

इकाई 11 में निदेशकों की विधिक स्थिति का तथा उनकी नियुक्ति और उनको पद से हटाए जाने आदि संबंधी नियमों के संबंध में विवेचन किया गया है। इसमें यह भी बताया गया है कि उनके अधिकार, कर्तव्य और दायित्व क्या हैं।

इकाई 8 शेयर तथा ऋण पूंजी (Shares and Loan Capital)

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य
8.1 प्रस्तावना
8.2 शेयर पूंजी का अर्थ एवं उसके प्रकार
8.3 शेयर का अर्थ एवं उसके प्रकार
 8.3.1 शेयर का अर्थ
 8.3.2 शेयरों के प्रकार
8.4 स्टॉक का अर्थ
8.5 डिवेन्चर का अर्थ एवं उसके प्रकार
 8.5.1 अर्थ तथा लक्षण
 8.5.2 डिवेन्चरों के प्रकार
8.6 शेयर तथा डिवेन्चर में अन्तर
8.7 सार्वजनिक जमा
 8.7.1 जमा का अर्थ
 8.7.2 जमा तथा ऋण
 8.7.3 जमा तथा डिवेन्चर
 8.7.4 जमा की स्वीकृति से सम्बन्धित नियम
8.8 सारांश
8.9 शब्दावली
8.10 वोध प्रश्नों के उत्तर
8.11 स्वपरख प्रश्न

8.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- शेयर का अर्थ तथा उसके प्रकार को स्पष्ट कर सकें;
- पूंजी के प्रकार का वर्णन कर सकें;
- शेयर तथा स्टॉक में अन्तर स्पष्ट कर सकें;
- डिवेन्चर का अर्थ स्पष्ट कर सकें;
- डिवेन्चरों का वर्गीकरण कर सकें;
- शेयर तथा डिवेन्चर में अन्तर स्पष्ट कर सकें;
- 'जमा' शब्द का अर्थ स्पष्ट कर सकें; और
- कम्पनियों द्वारा 'जमा' स्वीकार करने से सम्बन्धित नियमों को सूचीबद्ध कर सकें।

8.1 प्रस्तावना

आप पढ़ चुके हैं कि सार्वजनिक कम्पनी शेयर तथा डिवेन्चर जारी करके तथा जनता से 'जमा' के रूप में धन स्वीकार करके आवश्यक धन एकत्रित करती है। इस इकाई में आप शेयर पूंजी के अर्थ, जारी किए जाने वाले शेयरों के प्रकार तथा डिवेन्चरों के अर्थ एवं प्रकार का अध्ययन करेंगे। जनता से जमा के रूप में धन स्वीकार करने से सम्बन्धित नियमों का वर्णन भी अन्त में किया गया है।

8.2 शेयर पूंजी का अर्थ एवं उसके प्रकार

आप जानते हैं कि किसी भी व्यापार को चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती है। 'पूंजी' शब्द से

सामान्यतः उस धनराशि से अर्थ लगाया जाता है, जिससे व्यापार आरम्भ किया जाता है। कम्पनी की स्थिति में, वहुत अधिक मात्रा में धन की आवश्यकता होती है, तव शेयर जारी करके यह राशि एकत्रित की जाती है। इस प्रकार जो धनराशि एकत्रित की जाती है, उसे कम्पनी की 'शेयर पूंजी' कहते हैं।

शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी अपने सीमानियम में शेयर पूंजी का उल्लेख करती है। सीमानियम के पूंजी खंड में पूंजी की राशि तथा इस राशि का निश्चित रकम वाले शेयरों में विभाजन का भी उल्लेख किया जाता है, उदाहरण के लिए, कम्पनी की शेयर पूंजी दस-दस रुपयों के शेयरों में वंटी हुई हो सकती है। शेयरों में धन लगाने वाले व्यक्ति को 'शेयरधारी' कहते हैं। **यहां यह स्मरण रहे कि डिबेन्चर जारी करके जो धनराशि एकत्रित की जाती है, वह कम्पनी की शेयर पूंजी का भाग नहीं होती है बल्कि यह कम्पनी को लम्बी अवधि का ऋण होती है।**

शेयरों की राशि एकत्रित करने के विभिन्न चरणों को ध्यान में रखते हुए, कम्पनी की शेयर पूंजी का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है:

1) **अभिहित या अधिकृत पूंजी** (Nominal or Authorised Capital): **इससे तात्पर्य उस राशि से है जो कम्पनी के सीमानियम में पूंजी वाक्य में लिखी होती है तथा इस राशि से ही कम्पनी का पंजीकरण किया जाता है।** यह कम्पनी की वह अधिकतम पूंजी होती है जो वह शेयर जारी करके एकत्रित कर सकती है। इसे कम्पनी की 'पंजीकृत पूंजी' भी कहते हैं, क्योंकि इसी राशि से कम्पनी का पंजीकरण कराया जाता है। यह राशि निश्चित रकम वाले शेयरों में विभाजित होती है। कम्पनी की वर्तमान तथा भावी पूंजी की आवश्यकताओं के आधार पर इस पूंजी की राशि को निश्चित किया जाता है। अधिकृत पूंजी की राशि को निर्धारित विधि का पालन करके बढ़ाया या घटाया जा सकता है।

2) **निर्गमित पूंजी** (Issued Capital) : यह अधिकृत पूंजी का वह भाग है जिसे खरीदने के लिए जनता के समक्ष रखा जाता है। कम्पनी के लिए यह एकदम आवश्यक नहीं है कि वह सारी अधिकृत पूंजी आरम्भ में ही एक साथ जारी कर दे। निर्गमित पूंजी से वास्तव में आशय उस पूंजी से है जिसके लिए शेयर जारी या आवंटित किए गये हैं। अतः किसी भी हालत में निर्गमित पूंजी, अधिकृत पूंजी से अधिक नहीं हो सकती। अधिक से अधिक यह अधिकृत पूंजी की राशि के वरावर हो सकती है। अधिकृत पूंजी का वह भाग जिसे अभी जनता के समक्ष नहीं रखा गया है, उसे 'अनिर्गमित पूंजी' (unissued capital) कहते हैं।

3) **अभिदत्त पूंजी** (Subscribed Capital): निर्गमित पूंजी का वह भाग जिसके लिए जनता ने वास्तव में आवेदन किया है, वह अभिदत्त पूंजी कहलाती है। अन्य शब्दों में, यह निर्गमित पूंजी का वह भाग है जिसके लिए जनता से आवेदन पत्र प्राप्त हो चुके हैं तथा उन्हें ये शेयर आवंटित किए जा चुके हैं। अतः अभिदत्त पूंजी की राशि किसी भी हालत में निर्गमित पूंजी से अधिक नहीं हो सकती है, क्योंकि कम्पनी को जितने शेयर जारी करने हैं, वह उससे अधिक शेयर आवंटित ही नहीं कर सकती। जब कम्पनी को जितने शेयर निर्गमित करने थे, वह सव जनता ने ले लिए हैं, तव निर्गमित पूंजी एवं अभिदत्त पूंजी की रकम एक समान होती है। **निर्गमित एवं अभिदत्त पूंजी का यह अन्तर केवल लेखाकारों की दृष्टि में ही होता है। कानून इस अन्तर को नहीं मानता तथा इन्हें एक ही अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है।**

4) **मांग की गई पूंजी या याचित पूंजी** (Called up Capital): यह निर्गमित पूंजी के अंकित मूल्य का वह भाग है जिसके लिए कम्पनी ने सदस्यों से मांग की है। सामान्यतः कम्पनी आवंटित शेयरों पर पूर्ण राशि की एक साथ ही मांग नहीं करती। वल्कि शेयरों पर राशि विभिन्न किश्तों में मांगी जाती है जैसे कि आवेदन राशि, आबंटन राशि, प्रथम मांग, द्वितीय मांग, आदि, आदि) कम्पनी जितनी किश्त की मांग करती है, उस राशि को मांग की गई या याचित पूंजी कहते हैं तथा जिस राशि की मांग कम्पनी ने अभी नहीं की है उसे 'अयाचित पूंजी' कहते हैं, तथा शेयरधारी इस राशि को अदा करने के लिए वरावर उत्तरदायी रहते हैं।

5) **प्रदत्त पूंजी** (Paid up Capital): यह मांगी गई पूंजी का वह भाग है जो कि शेयरधारियों से वास्तव में प्राप्त हुआ है। उदाहरण के लिए, एक कम्पनी ने शेयरधारियों से 5 लाख रुपये की मांग की, परन्तु उसे वास्तव में 4,90,000 रुपये प्राप्त हुए, इस स्थिति में 4,90,000 रुपये प्रदत्त पूंजी कहलाती है। आवंटन तथा मांग की वह राशि जिसकी प्राप्ति कम्पनी को अभी नहीं हुई है, वह 'मांग की वकाया राशि' कहलाती है। उपर्युक्त उदाहरण में 10,000 रुपये मांग की वकाया राशि है। यदि कोई भी वकाया राशि नहीं है, उस स्थिति में प्रदत्त पूंजी तथा याचित पूंजी की राशि एकदम वरावर होगी।

6) **रिजर्व पूंजी** (Reserve Capital): अयाचित पूंजी का वह भाग जिसके वारे मे कम्पनी ने विशेष प्रस्ताव

द्वारा निर्णय किया है कि उसके लिए मांग तभी की जाएगी जब कम्पनी का समापन करना होगा और इसी कार्य के लिए ही उसका उपयोग किया जाएगा। इस भाग को 'रिजर्व पूंजी' कहते हैं। इस बकाया राशि की मांग कम्पनी अपने जीवन काल में नहीं कर सकती। रिजर्व पूंजी को न्यायालय की अनुमति के बिना ईक्विटी पूंजी में परिवर्तित नहीं किया जा सकता तथा पूंजी को घटाने के समय इसे रद्द भी नहीं किया जा सकता। रिजर्व पूंजी का उपयोग कम्पनी के समापन के समय केवल लेनदारों के लिए ही होता है।

8.3 शेयर का अर्थ एवं इसके प्रकार

8.3.1 शेयर का अर्थ

आप जानते ही हैं कि कम्पनी की पूंजी एक निश्चित राशि की विभिन्न इकाइयों में विभाजित होती है। इस प्रकार की प्रत्येक इकाई को 'शेयर' कहते हैं। कम्पनी अधिनियम की धारा 2(46) में शेयर की परिभाषा इस प्रकार से की गई है, "शेयर का अर्थ कम्पनी की शेयर पूंजी में हिस्से से है, तथा यदि स्टॉक तथा शेयर में स्पष्ट अथवा निहित ढंग से अन्तर न किया गया हो, तो शेयर में स्टॉक भी शामिल किया जाता है।" यह परिभाषा अपने आप में सरल है, परन्तु यह पूर्ण परिभाषा नहीं है क्योंकि इससे शेयर की प्रकृति के बारे में स्पष्ट पता नहीं चलता है।

Borelands Trustee V. Steel Bros. Co. Ltd. के केस में **न्यायाधीश फ़ार्वेल** ने शेयर की परिभाषा इस प्रकार की है, "शेयर, कम्पनी में शेयरधारी का हित है जो प्रथमतः दायित्व एवं लाभांश तथा इसके बाद शेयरधारी के हित की दृष्टि से मुद्रा के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। इसके साथ-साथ इसमें ऐसे अनेक अनुबन्ध भी होते हैं जो शेयरधारियों द्वारा परस्पर कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों तथा अन्तर्नियमों के अनुसार किए जाते हैं।"

इस प्रकार शेयर का अर्थ धन-राशि न होकर, ऐसे हित से होता है जिसे धन-राशि में व्यक्त किया जा सकता है, तथा वह अनुबन्ध में निहित अनेक अधिकारों से बनता है।

Commissioner of Income-Tax V. Standard Vacuum Oil Company के केस में भारत के सुप्रीम कोर्ट ने शेयर की परिभाषा इस प्रकार की है, "कम्पनी के शेयर का अर्थ एक धन-राशि न होकर, ऐसे हित से है जिसे मुद्रा में व्यक्त किया जा सकता है तथा अन्तर्नियमों द्वारा विभिन्न अधिकार शेयरधारियों को दिए जाते हैं जिसके अनुसार शेयरधारी व कम्पनी में एक अनुबन्ध होता है।"

शेयर के साथ कम्पनी में विभिन्न अधिकारों एवं दायित्वों का योग होता है। शेयरधारी के अधिकार उसी अनुपात में होते हैं जिस अनुपात में उसके पास कम्पनी की शेयर पूंजी है। **शेयरधारी को एक शेयर प्रमाण-पत्र जारी किया जाता है जिसमें यह स्पष्ट किया जाता है कि कम्पनी की पूंजी में उसकी पूंजी का कितना अनुपात या हिस्सा है।** शेयर प्रमाण-पत्र में यह भी स्पष्ट किया जाता है कि शेयरधारी कितने शेयरों का धारक या स्वामी है।

कम्पनी का शेयर एक दावा योग्य सम्पत्ति है, इसका अर्थ है कि सम्बन्धित सम्पत्ति अभी उस व्यक्ति के भौतिक अधिकार में नहीं है, परन्तु वह कानूनी कार्यवाही के द्वारा उस सम्पत्ति पर अपना अधिकार कर सकता है। भारतीय माल विक्रय अधिनियम की धारा 2 (7) के अन्तर्गत शेयर को 'माल' की श्रेणी में रखा गया है। कम्पनी अधिनियम की धारा 82 के अनुसार शेयर को चल सम्पत्ति माना गया है जिसे कम्पनी के अन्तर्नियम में निर्धारित विधि के अनुसार हस्तांतरित किया जा सकता है। परन्तु इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि शेयर उस अर्थ में चल सम्पत्ति नहीं है जैसे कि कपड़े की एक गांठ या गेहूं की बोरी चल सम्पत्ति होती है। अन्य चल सम्पत्ति की तरह शेयर को केवल सुपुर्दगी मात्र से इसका स्वामित्व हस्तांतरित नहीं किया जा सकता। यद्यपि शेयरों का स्वामित्व दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरित किया जा सकता है, परन्तु यह परक्राम्य प्रलेख (negotiable instrument) नहीं है।

8.3.2 शेयरों के प्रकार

कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 86 के अनुसार, शेयरों द्वारा सीमित ऐसी कम्पनी, जिसका निर्माण कम्पनी अधिनियम 1956 के लागू होने के बाद किया गया है अथवा अधिनियम लागू होने के बाद यह शेयर जारी करती है, तो उसकी शेयर पूंजी दो प्रकार की हो सकती है — क) पूर्वाधिकार शेयर पूंजी तथा

(ख) ईक्विटी शेयर पूंजी। इस प्रकार सार्वजनिक कम्पनी केवल दो प्रकार के ही शेयर निर्गमित कर सकती है—(क) ईक्विटी शेयर तथा, (ख) पूर्वाधिकार शेयर।

ईक्विटी शेयर (Equity Shares)
ऐसे सब शेयर जो पूर्वाधिकार शेयर नहीं हैं, ईक्विटी शेयर होते हैं। इस प्रकार के शेयरों पर कोई विशेष पूर्वाधिकार प्राप्त नहीं होते तथा इनके अधिकार एवं दायित्व कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा नियमित होते हैं। कानून की दृष्टि में, ईक्विटी शेयरधारी कम्पनी के मालिक नहीं होते हैं, क्योंकि कम्पनी का अपना पृथक, विधिक अस्तित्व होता है। पूर्वाधिकार शेयरधारियों को एक निश्चित दर से लाभांश चुकाने के पश्चात् ईक्विटी शेयरधारियों को लाभांश दिया जाता है। इन शेयरों पर लाभांश की दर स्थिर नहीं होती, बल्कि यह प्रति वर्ष लाभ की राशि के अनुसार बदलती रहती है। कम्पनी के समापन के समय भी अन्य सब दावों का निबटारा करने के पश्चात् ही ईक्विटी शेयरधारियों के दावों को निबटाया जाता है। ईक्विटी शेयरधारियों को विभिन्न प्रस्तावों पर मतदान करने का अधिकार होता है तथा यह उसी अनुपात में होता है जिस अनुपात में उसके पास प्रदत्त ईक्विटी पूंजी के शेयर हैं, जबकि पूर्वाधिकार शेयरधारियों को सामान्यतः मतदान का अधिकार नहीं होता है।

पूर्वाधिकार शेयर (Preference Shares)
कम्पनी अधिनियम की धारा 85 (1) के अन्तर्गत, पूर्वाधिकार शेयर वे होते हैं जो निम्नलिखित दो शर्तों को पूरा करते हैं:

क) इन्हें लाभांश के रूप में एक निश्चित रकम अथवा निश्चित दर से लाभांश प्राप्त करने का प्राथमिक अधिकार होता है, तथा
ख) कम्पनी के समापन के समय, इन शेयरधारियों को अपनी शेयर पूंजी वापस प्राप्त करने का पूर्वाधिकार प्राप्त होता है। दूसरे शब्दों में, पूर्वाधिकार शेयरधारियों द्वारा अदा की गई रकम का भुगतान ईक्विटी शेयरधारियों को भुगतान करने से पहले किया जाता है।

उपरोक्त दोनों शर्तों से यह स्पष्ट हो जाता है कि पूर्वाधिकार शेयरों पर लाभांश प्राप्त करने का पूर्वाधिकार होता है। परन्तु लाभांश की राशि अथवा लाभांश की दर निश्चित होती है। इसी प्रकार, कम्पनी के समापन के समय, पूर्वाधिकार शेयरों पर उनकी रकम ईक्विटी शेयरों से पहले वापस की जाती है।

पूर्वाधिकार शेयरों के प्रकारः
पूर्वाधिकार शेयर निम्नलिखित प्रकार के होते हैं:

i) **संचयी पूर्वाधिकार शेयर** (Cummulative Preference Shares): इन शेयरधारियों को एक निश्चित दर से लाभांश प्राप्त करने का अधिकार है चाहे कम्पनी को लाभ हुआ है या नहीं इससे इनके अधिकार पर कोई असर नहीं पड़ता। यदि किसी वर्ष अपर्याप्त लाभ की राशि के कारण इन्हें पूर्ण लाभांश नहीं दिया जा सका है, तो जो लाभांश नहीं दिया जा सका है, उसे प्राप्त करने का अधिकार आगामी वर्षों में ले जाया जाता है। इन शेयरों पर देय लाभांश तब तक संचित होता रहता है जब तक कि उसका पूर्ण रूप से भुगतान न हो जाए। क्योंकि ऐसे शेयरों पर लाभांश संचित होता रहता है, अतः इन्हें संचयी पूर्वाधिकार शेयर कहते हैं। ऐसे शेयरों पर लाभांश संचित होता रहता है जब तक कि उसका पूर्णतः भुगतान न कर दिया जाए। यहां पर यह ध्यान रहे कि यदि अन्तर्नियमों में अन्य प्रकार से स्पष्ट नहीं किया गया हो तब समस्त पूर्वाधिकार शेयर संचयी ही माने जाते हैं।

ii) **असंचयी पूर्वाधिकार शेयर** (Non-Cummulative Preference Shares): ये ऐसे शेयर होते हैं जिन पर लाभांश संचित नहीं होता रहता। यदि किसी वर्ष लाभ नहीं होता है, अथवा लाभ की राशि अपर्याप्त है, तो इन शेयरधारियों को या तो कुछ भी प्राप्त नहीं होगा अथवा आंशिक लाभांश प्राप्त होगा तथा लाभांश की बकाया राशि की मांग आगामी वर्षों में नहीं की जा सकती। सरल शब्दों में, इन शेयरों पर अदत्त लाभांश संचित नहीं होता बल्कि उसी वर्ष समाप्त हो जाता है अर्थात् उस वर्ष का लाभांश पाने का अधिकार हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है।

iii) **अवशिष्ट भागी पूर्वाधिकार शेयर** (Participating Preference Shares) : ये ऐसे शेयर होते हैं जिन्हें एक निश्चित दर से लाभांश प्राप्त करने का अधिकार होता है, परन्तु इसके साथ ही इन्हें ईक्विटी शेयरधारियों को एक निर्धारित दर से लाभांश देने के बाद बचे हुए लाभ में से भी हिस्सा लेने का अधिकार रहता है। समापन के समय यदि पूर्वाधिकारी व ईक्विटी शेयरधारियों को देय राशि का भुगतान करने के पश्चात् कुछ राशि शेष बचती है, तो इन शेयरधारियों को इन अतिरिक्त परिसम्पत्तियों में से भी भाग प्राप्त करने का अधिकार होता है। इस प्रकार के शेयर केवल तभी निर्गमित किए जा सकते हैं जबकि सीमानियम या अन्तर्नियमों या निर्गमन की शर्तों में इसकी स्पष्ट व्यवस्था हो।

iv) **गैर-अवशिष्ट भागी पूर्वाधिकार शेयर** (Non-participating Preference Shares) : इस प्रकार के शेयरधारियों को केवल एक निश्चित दर से लाभांश पाने का अधिकार होता है, तथा ये शेष बचे हुए लाभ में हिस्सा नहीं बंटाते। यदि अन्तर्नियम इस बारे में मौन हैं तब सभी पूर्वाधिकार शेयर गैर-अवशिष्ट भागी पूर्वाधिकार शेयर समझे जाते हैं।

v) **परिवर्तनीय पूर्वाधिकार शेयर** (Convertible Preference Shares) : इस प्रकार के शेयरधारियों को एक निश्चित समय के भीतर अपने शेयर, ईक्विटी शेयर में बदलने का अधिकार होता है।

vi) **अपरिवर्तनीय पूर्वाधिकार शेयर** (Non-convertible Preference Shares) : ऐसे पूर्वाधिकार शेयर, जिनके शेयरधारियों को अपने पूर्वाधिकार शेयर, ईक्विटी शेयर में बदलने का अधिकार नहीं होता है, उन्हें अपरिवर्तनीय पूर्वाधिकार शेयर कहते हैं।

vii) **मोचनीय पूर्वाधिकार शेयर** (Redeemable Preference Shares) : शेयरों पर जो राशि कम्पनी को प्राप्त हो जाती है वह सामान्यतः कम्पनी के जीवन काल में वापस नहीं की जाती बल्कि समापन के समय ही वापस की जाती है। शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा अधिकार दिए जाने पर, वह ऐसे पूर्वाधिकार शेयर निर्गमित कर सकती है जिनका एक निश्चित अवधि के बाद या कम्पनी की इच्छा पर मोचन किया जा सकता है या पूंजी वापस की जा सकती है। इस प्रकार ऐसे शेयरों पर प्राप्त राशि कम्पनी के जीवन काल में ही वापस की जा सकती है। ऐसे शेयरों को मोचनीय पूर्वाधिकार शेयर कहते हैं।

कम्पनी अधिनियम की धारा 80 के अन्तर्गत, ऐसे शेयर निम्नलिखित शर्तों पर निर्गमित किए जा सकते हैं:

क) केवल उन्हीं शेयरों का मोचन हो सकता है जो पूर्णदत्त हैं।

ख) ऐसे शेयरों का मोचन केवल कम्पनी के उसी लाभ में से किया जा सकता है जो लाभांश बांटने के लिए उपलब्ध होगा या मोचन के उद्देश्य से निर्गमित किए गये नये शेयरों पर प्राप्त राशि में इनका मोचन किया जा सकता है।

ग) यदि शेयरों का मोचन प्रीमियम पर करना है, तो देय प्रीमियम की राशि का प्रावधान कम्पनी के लाभों में से अथवा शेयर प्रीमियम खाते में से किया जाना चाहिए।

घ) यदि लाभों में से इन शेयरों का मोचन किया जाना है, तो मोचन पर देय राशि के बराबर रकम "पूंजी मोचन निधि खाते" (Capital Redemption Reserve Account) में अंतरित की जानी चाहिए।

संशोधन अधिनियम, 1988 ने एक नयी धारा 80-A जोड़ी है जो 15 जून 1988 से लागू हुई। इस धारा के अनुसार ऐसे सभी पूर्वाधिकार शेयर जिनका मोचन नहीं हुआ है, उन सब शेयरों का अनिवार्यतः मोचन संशोधन अधिनियम, 1988 के लागू होने के पांच वर्षों के भीतर हो जाना चाहिए। धारा 80(5-A) के अनुसार 15 जून 1988 के बाद, कोई भी कम्पनी अमोचनीय पूर्वाधिकार शेयर निर्गमित नहीं कर सकती अथवा ऐसे शेयर निर्गमित नहीं कर सकती जिनका मोचन निर्गमन की तिथि के दस वर्ष के पश्चात् होना है। इस प्रकार अब कम्पनी केवल ऐसे मोचनीय पूर्वाधिकार शेयर निर्गमित कर सकती है जिनका मोचन निर्गमन की तारीख के दस वर्ष के भीतर होना हो। यहां आपको यह याद रखना चाहिए कि पूर्वाधिकार शेयरों के मोचन को कम्पनी की अधिकृत पूंजी में कटौती या कमी नहीं समझा जाना चाहिए।

viii) **अमोचनीय पूर्वाधिकार शेयर** (Irredeemable Preference Shares) : ये शेयर कम्पनी की स्थायी पूंजी का भाग होते हैं। इस प्रकार के शेयरों की राशि केवल कम्पनी के समापन के समय ही वापस की जाती है, उससे पहले नहीं। **कम्पनी संशोधन अधिनियम, 1988 ने इस प्रकार के शेयरों के निर्गमन पर प्रतिबन्ध लगा दिया है।** समस्त अमोचनीय पूर्वाधिकार शेयरों का मोचन 15-6-1988 के पांच वर्षों के भीतर कर दिया जाना आवश्यक है तथा यदि निर्गमन की तिथि के दस वर्षों के भीतर इनका मोचन नहीं करना है, तो निर्गमन की शर्तों के अनुसार अथवा संशोधन अधिनियम, 1988 के लागू होने के दस वर्षों के भीतर, इनमें से जो भी पहले हो, इनका मोचन कर दिया जाना चाहिए।

ix) **संचयी परिवर्तनीय पूर्वाधिकार शेयर** (Cummulative Convertible Preference Shares) : भारत सरकार ने एक अधिसूचना 1985 में जारी करके, इस प्रकार के शेयर आरम्भ किए थे। नई परियोजनाओं के लिए वित्तीय साधन जुटाने के लिए इस प्रकार के शेयर निर्गमित किए जा सकते हैं जैसे विस्तार, विविधीकरण, आधुनिकीकरण तथा कार्यशील पूंजी की आवश्यकता की पूर्ति के लिए। इस प्रकार के शेयरों का अंकित मूल्य सामान्यतः 100 रुपये होगा तथा लाभांश की दर 10 प्रतिशत

होगी। निर्गमित ईक्विटी शेयरों की राशि के बराबर तक इन्हें निर्गमित किया जा सकता है। इस प्रकार के शेयरों को तीन वर्षों के बाद परन्तु पांच वर्ष से पहले ही ईक्विटी शेयरों में अनिवार्यतः परिवर्तित कर दिया जाना चाहिए।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो गया होगा कि विभिन्न कारकों के आधार पर पूर्वाधिकार शेयर विभिन्न प्रकार के होते हैं। चित्र 8.1 देखकर आपको इन्हें समझने में सहायता मिलेगी।

चित्र 8.1

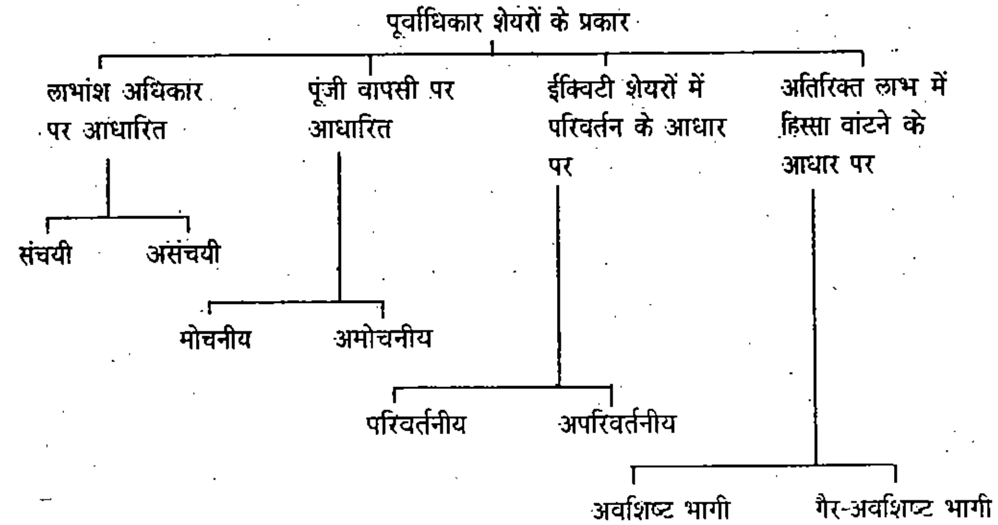

8.4 स्टॉक का अर्थ

स्टॉक किसी व्यक्ति की शेयरपूंजी के संकलित जोड़ को कहते हैं। सरल शब्दों में, इससे हमारा आशय कुछ शेयरों को एक बंडल में एक साथ रखने से है। स्टॉक को मुद्रा के रूप में व्यक्त किया जाता है न कि शेयरों की संख्या में। शेयरों के मूल अंकित-मूल्य की परवाह किए बिना ही इसे कितने ही भागों में विभाजित किया जा सकता है। स्टॉक का मुख्य लाभ यही है कि अब वह व्यक्ति इसके किसी भी भाग को हस्तांतरित कर सकता है।

आपने अधिनियम की धारा 2(46) में पढ़ा है कि जब तक अन्तर स्पष्ट न किया जाए शेयर में स्टॉक भी शामिल होते हैं। अतः यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत किया जाए, तब कम्पनी साधारण प्रस्ताव पास करके पूर्ण-दत्त शेयरों को स्टॉक में परिवर्तित कर सकती है। इससे आपको यह पूर्णतः स्पष्ट हो गया होगा कि **कम्पनी आरम्भ में ही स्टॉक निर्गमित नहीं कर सकती।** जब शेयरों को स्टॉक में परिवर्तित किया जाता है, तो ऐसा करने के तीस दिन के भीतर इस परिवर्तन की सूचना कम्पनियों के रजिस्ट्रार को अवश्य दे देनी चाहिए। शेयर को स्टॉक में बदलने पर, सदस्यों के रजिस्टर में सदस्य के पास कितने शेयर हैं, इस सूचना के स्थान पर यह लिखा जाना चाहिए कि सदस्य के पास कितनी राशि का स्टॉक है। उदाहरण के लिए, एक सदस्य के पास यदि दस-दस रुपये के एक हजार पूर्ण-दत्त ईक्विटी शेयर हैं, तब जब इन्हें स्टॉक में परिवर्तित किया जाता है, तो वह 10,000 रुपये मूल्य के स्टॉक का स्वामी माना जाता है।

शेयरों को स्टॉक में परिवर्तित कर देने पर उसके धारक और कम्पनी के सम्बन्धों में कोई परिवर्तन नहीं होता, स्टॉकधारी अभी भी कम्पनी का सदस्य रहता है। स्टॉकधारी को अपने स्टॉक के मूल्य के अनुरूप लाभांश, कम्पनी की सभाओं में मताधिकार तथा अन्य मामलों के सम्बन्ध में ठीक वैसे ही अधिकार मिलते हैं जैसे कि उन शेयरों के शेयरधारी को होते हैं जिनसे स्टॉक उत्पन्न हुआ है। शेयरों के समान स्टॉक को भी हस्तांतरित किया जा सकता है। जिस प्रकार कम्पनी पूर्ण-दत्त शेयरों को स्टॉक में परिवर्तित कर सकती है, उसी प्रकार साधारण प्रस्ताव के द्वारा कम्पनी स्टॉक को पुनः पूर्ण-दत्त शेयरों में बदल सकती है।

शेयर तथा स्टॉक में अन्तर

इस इकाई के 8.4 में आप पढ़ चुके हैं कि स्टॉक में शेयर के सभी विशेष लक्षण विद्यमान होते हैं, परन्तु फिर भी इन दोनों में कई अन्तर हैं। इन दोनों में मुख्य अन्तर निम्नलिखित हैं:

शेयर	स्टॉक
i) शेयर अंशतः प्रदत्त या पूर्ण-दत्त हो सकता है।	i) स्टॉक सदैव पूर्ण-दत्त होता है।
ii) शेयर आरम्भ में ही जनता को निर्गमित किए जा सकते हैं।	ii) स्टॉक को आरम्भ में जनता को निर्गमित नहीं किया जा सकता।
iii) शेयर का एक अंकित मूल्य होता है।	iii) स्टॉक का अंकित मूल्य नहीं होता।
iv) शेयरों का एक पृथक क्रमांक होता है, जिसके द्वारा यह दूसरे शेयरों से भिन्न होता है।	iv) स्टॉक का कोई क्रमांक नहीं होता है, बल्कि इसका समेकित मूल्य होता है।
v) शेयर को पूर्णतः ही हस्तांतरित किया जा सकता है अर्थात् इसे छोटे-छोटे भागों में हस्तांतरित नहीं किया जा सकता।	v) स्टॉक को छोटे-छोटे भागों में हस्तांतरित किया जा सकता है।
vi) सभी शेयर एक ही मूल्य के होते हैं।	vi) स्टॉक भिन्न-भिन्न राशियों का हो सकता है।
vii) शेयर किसी भी कम्पनी के द्वारा निर्गमित किए जा सकते हैं चाहे वह सार्वजनिक कम्पनी है या निजी कम्पनी।	vii) शेयरों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी ही स्टॉक निर्गमित कर सकती है।

बोध प्रश्न क

1) कम्पनी की शेयर पूंजी से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

2) शेयर पूंजी के दो प्रकार के नाम बताइए।

....

....

....

3) पूर्वाधिकार शेयर की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

4) रिजर्व पूंजी क्या होती है?

....

....

....

5) मोचनीय पूर्वाधिकार शेयर क्या होते हैं?

....

....

....

6) निम्नलिखित को ध्यान से पढ़िए तथा सही उत्तर के सामने सही (√) का निशान लगाइए।

i) कम्पनी की अधिकृत शेयर पूंजी

क) सीमानियम में उल्लिखित होती है ( )

ख) अन्तर्नियम में उल्लिखित होती है ( )

ग) कहीं भी उल्लिखित नहीं होती है ( )

ii) कम्पनी की शेयर पूंजी से आशय
   क) ईक्विटी शेयर पूंजी से है ( )
   ख) पूर्वाधिकार शेयर पूंजी से है ( )
   ग) ईक्विटी एवं पूर्वाधिकार शेयर पूंजी से है ( )
   घ) ईक्विटी व पूर्वाधिकार शेयर पूंजी व डिबेन्चर से है ( )

iii) कम्पनी की अभिदत्त पूंजी
   क) कभी भी निर्गमित पूंजी से अधिक नहीं हो सकती ( )
   ख) कभी भी निर्गमित पूंजी से कम नहीं हो सकती ( )
   ग) सदैव निर्गमित पूंजी के बराबर होती है ( )

iv) जब शेयरों को स्टॉक में परिवर्तित किया जाता है, तब इसकी सूचना
   क) 15 दिनों के भीतर रजिस्ट्रार के पास भेजी जानी चाहिए ( )
   ख) 30 दिनों के भीतर रजिस्ट्रार के पास भेजी जानी चाहिए ( )
   ग) सदस्यों के अलावा और किसी अन्य को देनी आवश्यक नहीं है ( )

v) कम्पनी अपने सारे अथवा कुछ पूर्ण-दत्त शेयरों को स्टॉक में परिवर्तित कर सकती है
   क) एक विशेष प्रस्ताव पारित करके ( )
   ख) एक साधारण प्रस्ताव पारित करके ( )
   ग) कम्पनी लॉ बोर्ड की अनुमति प्राप्त करके ( )
   घ) केन्द्र सरकार की अनुमति से ( )

7) बताएं कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत :
   i) शेयर पूंजी से आशय उस राशि से है जो कम्पनी ने शेयर व डिबेन्चर निर्गमित करके एकत्रित की है।
   ii) कम्पनी के समापन के समय कम्पनी के लेनदारों के लिए रिजर्व पूंजी उपलब्ध होती है।
   iii) शेयर तथा स्टॉक आरम्भ में ही सीधे जनता को निर्गमित किए जा सकते हैं।
   iv) कोई भी कम्पनी, जब भी चाहे, अपने शेयरों को स्टॉक में परिवर्तित कर सकती है।
   v) ईक्विटी शेयरधारियों को एक निश्चित दर से लाभांश प्राप्त करने का अधिकार होता है।
   vi) पूर्वाधिकार शेयरधारियों को, सामान्यतः, मतदान का अधिकार नहीं होता है।
   vii) कम्पनी अमोचनीय पूर्वाधिकार शेयर निर्गमित नहीं कर सकती।
   viii) मोचन के उद्देश्य से निर्गमित नये शेयरों की राशि में से मोचनीय पूर्वाधिकार शेयरों का मोचन नहीं किया जा सकता।

8.5 डिबेन्चर का अर्थ एवं उसके प्रकार

8.5.1 अर्थ तथा लक्षण

जनता से धन उधार लेने का सबसे सामान्य तरीका डिबेन्चर ज़ारी करना है। डिबेन्चर कम्पनी द्वारा निर्गमित सील-युक्त ऐसा दस्तावेज़ है जो ऋण-पत्रधारी के पास कम्पनी का ऋण का प्रमाण-पत्र होता है, अर्थात् कम्पनी अपनी सील लगाकर डिबेन्चरधारी को अपनी ऋणग्रस्तता की स्वीकृति देती है। डिबेन्चर का प्रमुख लक्षण कम्पनी द्वारा ऋण की स्वीकृति है। **न्यायाधीश चिट्टी** के अनुसार, "डिबेन्चर से आशय उस दस्तावेज से है जिससे ऋण उत्पन्न हो या उसकी स्वीकारोक्ति की जाए, और जिस दस्तावेज से इनमें से कोई एक शर्त पूर्ण होती हो।" कम्पनी अधिनियम की धारा 2(12) के अनुसार, "डिबेन्चर के अन्तर्गत डिबेन्चर स्टॉक, बांड तथा कम्पनी की अन्य प्रतिभूतियां शामिल होती हैं, चाहे इनसे कम्पनी की परिसम्पत्तियों पर कोई प्रभार (charge) निर्मित होता हो, अथवा नहीं।" सरल शब्दों में, डिबेन्चर ऐसा दस्तावेज होता है जिससे या तो ऋण उत्पन्न होता है या ऋण की स्वीकारोक्ति होती है।

डिबेन्चर में इसके निर्गमित करने से सम्बन्धित शर्तें लिखी होती हैं। डिबेन्चर में यह लिखा हो सकता है कि कम्पनी एक निश्चित तिथि को रकम वापस करेगी, और तब तक एक निश्चित ब्याज दर से डिबेन्चरधारी को ब्याज दिया जाता रहेगा। साधारणतः, डिबेन्चर किसी प्रभार से रक्षित होते हैं या कम्पनी की सम्पत्ति बंधक रखी जाती है, परन्तु ये बिना कोई प्रभार उत्पन्न किए भी निर्गमित किए जा सकते हैं, जैसे कि आरक्षित डिबेन्चर।

'डिबेन्चर' की उपर्युक्त परिभाषा से इसके मुख्य लक्षण प्रकट होते हैं, जो इस प्रकार हैं:

1) डिबेन्चर एक प्रमाण-पत्र की तरह होता है तथा इस पर कम्पनी की सील अंकित होती है। परन्तु डिबेन्चर की वैधता के लिए सील का लगा होना आवश्यक नहीं होता।

2) यह इसके धारक को कम्पनी द्वारा लिए गये ऋण की स्वीकारोक्ति का प्रमाण-पत्र होता है।

3) डिबेन्चर में सामान्यतः एक तिथि या वह अवधि निर्दिष्ट होती है जब कि मूलधन वापस किया जाएगा। परन्तु अमोचनीय डिबेन्चर निर्गमित करने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होता।

4) इसमें यह प्रावधान होता है कि जब तक मूलधन वापस न कर दिया जाए तब तक निश्चित अन्तराल पर निश्चित तारीखों को ब्याज की रकम दी जाती रहेगी।

5) डिबेन्चर सामान्यतः कम्पनी की सम्पत्तियों पर प्रभार उत्पन्न करते हैं। यह प्रभार अस्थायी या स्थायी प्रकृति का हो सकता है। किन्तु कम्पनी की परिसम्पत्तियों पर प्रभार उत्पन्न किए बिना भी डिबेन्चर निर्गमित किए जा सकते हैं।

6) जिस प्रकार शेयरों को मुक्त रूप से हस्तांतरित किया जाता है, उसी प्रकार डिबेन्चरों को भी हस्तांतरित किया जाता है।

7) डिबेन्चर साधारणतः श्रेणियों में निर्गमित किए जाते हैं, किन्तु किसी व्यक्ति को निर्गमित एक अकेला ऋण-पत्र भी वैध होता है।

8) डिबेन्चरधारी को कम्पनी की सभाओं में मतदान का अधिकार नहीं होता।

8.5.2 डिबेन्चरों के प्रकार

कम्पनी विभिन्न प्रकार के डिबेन्चर निर्गमित कर सकती है, जिनका वर्गीकरण जमानत, स्थायित्व परिवर्तनशीलता तथा रिकार्ड के आधार पर किया जा सकता है।

आइए अब विभिन्न प्रकार के डिबेन्चरों का अध्ययन करते हैं।

1) **पंजीकृत तथा वाहक डिबेन्चर** (Registered and Bearer Debentures) : पंजीकृत डिबेन्चर किसी विशेष व्यक्ति के नाम निर्गमित किए जाते हैं और उस व्यक्ति का नाम कम्पनी के डिबेन्चर रजिस्टर में दर्ज होता है। डिबेन्चरधारी का नाम डिबेन्चर प्रमाण-पत्र पर लिखा होता है। इस प्रकार के डिबेन्चरों को शेयरों के समान हस्तांतरण-विलेख के द्वारा हस्तांतरित किया जा सकता है। इन डिबेन्चरों पर ब्याज की राशि उस व्यक्ति को अदा की जाती है जिसका नाम कम्पनी के डिबेन्चरधारियों के रजिस्टर में लिखा होता है। वाहक डिबेन्चर वे होते हैं जो वाहक को देय होते हैं (अर्थात् डिबेन्चरधारी को)। वाहक डिबेन्चरों के धारकों का रिकार्ड रखने के लिए कोई रजिस्टर नहीं रखा जाता। परक्राम्य लिखत के ही समान, वाहक डबेन्चरों को केवल सुपुर्दगी मात्र से हस्तांतरित किया जा सकता है। इन डिबेन्चरों पर ब्याज की राशि प्रमाण-पत्र में संलग्न कूपन के आधार पर अदा की जाती है।

2) **रक्षित तथा अरक्षित डिबेन्चर** (Secured and Unsecured Debentures) : कम्पनी की किसी विशिष्ट परिसम्पत्ति पर स्थायी प्रभार उत्पन्न करके या कम्पनी की सामान्य परिसम्पत्तियों पर प्रभार उत्पन्न करके जब डिबेन्चर निर्गमित किए जाते हैं तो वे रक्षित या जमानती डिबेन्चर कहलाते हैं। रक्षित डिबेन्चरों को बंधक (mortgage) डिबेन्चर भी कहते हैं। इसके विपरीत अरक्षित डिबेन्चर वे होते हैं जिनके लिए कम्पनी की किसी भी परिसम्पत्ति पर कोई प्रभार नहीं होता। अरक्षित डिबेन्चरों को गैर-जमानती डिबेन्चर भी कहते हैं। इस प्रकार के डिबेन्चरधारी कम्पनी के अरक्षित लेनदार होते हैं। सुदृढ़ आर्थिक स्थिति वाली प्रतिष्ठित कम्पनियां ही अरक्षित डिबेन्चर निर्गमित कर पाती हैं।

3) **मोचनीय तथा अमोचनीय डिबेन्चर** (Redeemable and Irredeemable Preference Shares) : मोचनीय डिबेन्चर वे होते हैं जिनका एक निश्चित अवधि के बाद भुगतान कर दिया जाएगा। ऐसे डिबेन्चरों का मोचन होने के बाद, इन्हें पुनः निर्गमित किया जा सकता है जब तक इन्हें रद्द न कर दिया जाए। मोचन के बाद इनके पुनः निर्गमन करने पर इनके धारकों को वही अधिकार व विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं जैसे उन डिबेन्चरों का कभी मोचन ही नहीं हुआ हो। इसके विपरीत अमोचनीय डिबेन्चरों की रकम किसी निश्चित तिथि को नहीं वापस की जाती तथा ऐसे डिबेन्चरधारी कम्पनी को ऋण की रकम तब तक लौटाने के लिए बाध्य नहीं कर सकते जब तक कम्पनी चल रही है और वह ब्याज की राशि चुकाने में कोई चूक नहीं करती। अमोचनीय डिबेन्चरों को स्थायी (perpetual) डिबेन्चर भी कहते

हैं। यहां यह स्मरण रहे कि **डिबेन्चर, चाहे वह मोचनीय हैं अथवा अमोचनीय, कम्पनी के समापन पर उनकी राशि तुरन्त वापस करनी पड़ती है।** कम्पनियां आम तौर पर मोचनीय डिबेन्चर ही निर्गमित करती हैं।

4) **परिवर्तनीय तथा अपरिवर्तनीय डिबेन्चर:** परिवर्तनीय डिबेन्चर वे होते हैं जब धारकों को यह विकल्प दिया जाता है कि वे एक निश्चित अवधि के पश्चात् नियत विनिमय दर से, अपने डिबेन्चरों को कम्पनी के ईक्विटी शेयरों में परिवर्तित कर सकते हैं। इस प्रकार से परिवर्तन होने पर ड़िबेन्चरधारी कम्पनी के सदस्य बन जाते हैं। इसके विपरीत, अपरिवर्तनीय डिबेन्चरों की स्थिति में डिबेन्चरधारियों को अपने डिबेन्चर, ईक्विटी शेयर में परिवर्तित करने का विकल्प प्राप्त नहीं होता है।

डिबेन्चरों के वर्गीकरण को चित्र 8.2 में दर्शाया गया है।

चित्र 8.2

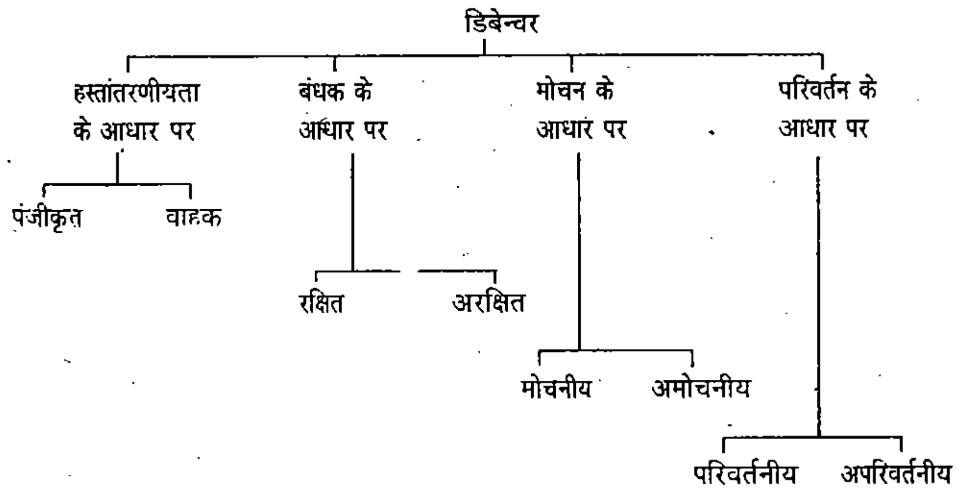

8.6 शेयर तथा डिबेन्चर में अन्तर

आप पढ़ चुके हैं कि जिस प्रकार कम्पनी की शेयर पूंजी की एक समान राशि की इकाई 'शेयर' होती है, ठीक उसी तरह कम्पनी की ऋण-पूंजी की एक इकाई डिबेन्चर होती है । परन्तु शेयर तथा डिवेन्चर में अन्तर जानना आवश्यक है क्योंकि इनसे सम्बन्धित अधिकार व दायित्व दोनों दशा में अलग-अलग होते हैं। इन दोनों में मुख्य अन्तर निम्नलिखित हैं:

1) शेयरधारी कम्पनी के स्वामी होते हैं जवकि डिबेन्चरधारी कम्पनी के लेनदार होते हैं। अतः शेयरधारियों का कम्पनी के कल्याण में अनेक प्रकार का हित होता है, जवकि डिवेन्चरधारियों का कम्पनी में वहुत सीमित हित होता है, उनकी दिलचस्पी निश्चित समय पर ब्याज प्राप्त करने तक ही सीमित होती है।

2) शेयरधारियों को कम्पनी के स्वामित्व अधिकार होते हैं जबकि डिवेन्चरधारियों को केवल लेनदार के अधिकार ही प्राप्त होते हैं।

3) शेयरधारी को कम्पनी की साधारण सभा में भाग लेने व मतदान करने का अधिकार होता है, इस प्रकार वह कम्पनी के कार्य-संचालन पर नियन्त्रण कर सकता है। वे निदेशक मंडल के गठन तथा अन्य वरिष्ठ प्रवन्धकीय पदों की नियुक्ति को प्रभावित कर सकते हैं। परन्तु डिवेन्चरधारियों को किसी भी सभा में मतदान करने का अधिकार नहीं होता, अतः वे कम्पनी के संचालन पर कोई भी प्रभाव नहीं डाल सकते।

4) शेयरधारी को लाभ होने पर लाभांश प्राप्त करने का अधिकार होता है। लाभांश की दर प्रतिवर्ष भिन्न हो सकती है, क्योंकि लाभांश की दर उपलव्ध लाभ की राशि पर निर्भर करती है। इसके विपरीत डिवेन्चरधारियों को निश्चित दर से व्याज प्राप्त करने का अधिकार है। कम्पनी को लाभ हुआ है या नहीं, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता।

5) शेयरधारियों को दिया जाने वाला लाभांश वर्ष-प्रति-वर्ष लाभ की राशि के अनुसार घट-वढ़ सकता है, परन्तु डिवेन्चरधारियों को निश्चित तिथि पर निश्चित दर पर व्याज दिया जाता है।

6) शेयरों पर लाभांश केवल तभी दिया जाता है जब इसके सम्बन्ध में प्रस्ताव शेयरधारियों की वार्षिक साधारण सभा में पास कर दिया जाता है, जबकि डिबेन्चरों पर व्याज का भुगतान करने के लिए इस प्रकार की कोई अनुमति आवश्यक नहीं होती।

7) शेयरों पर लाभांश, लाभ पर प्रभार नहीं होता। जबकि डिबेन्चरों पर देय व्याज की राशि, लाभ पर प्रभार होती है तथा कर दायित्व की गणना करते समय व्याज की राशि लाभ में से घटाई जाती है।

8) शेयरधारियों का कम्पनी के जमा हुए लाभ पर अधिकार होता है और सामान्यतः यह उन्हें वोनस शेयरों के रूप में दे दिया जाता है, जबकि डिबेन्चरधारियों को व्याज प्राप्त करने के पश्चात् ऐसा कोई भी अधिकार प्राप्त नहीं होता।

9) जब तक कम्पनी कार्य करती रहती है तब तक शेयरधारियों को उनकी पूंजी लौटाई नहीं जाती (मोचनीय पूर्वाधिकार शेयरों को छोड़कर)। जबकि डिबेन्चर एक निश्चित अवधि के लिए निर्गमित किए जाते हैं, उसके बाद उन्हें यह रकम लौटा दी जाती है।

10) कम्पनी अपने शेयरों को बाज़ार में से नहीं खरीद सकती जबकि वह अपने डिबेन्चरों को खरीद सकती है और फिर उन्हें या तो रद्द कर सकती है या पुनः जारी कर सकती है।

11) कम्पनी के समापन की दशा में, जब तक सभी बाहरी लेनदारों का पूर्ण भुगतान नहीं हो जाता, तब तक शेयरधारी अपनी पूंजी की मांग नहीं कर सकते। डिबेन्चर क्योंकि रक्षित लेनदार होते हैं अतः पूंजी लौटाने के सम्बन्ध में उन्हें शेयरधारियों की अपेक्षा अग्रता प्राप्त होती है।

बोध प्रश्न ख

1) डिबेन्चर क्या होता है?

....

....

....

2) वाहक डिबेन्चर क्या है?

....

....

....

3) परिवर्तनीय डिबेन्चर क्या होते हैं?

....

....

....

4) रिक्त स्थान भरिए:

i) डिबेन्चर कम्पनी की .... पूंजी होते हैं।

ii) शेयरधारी कम्पनी का .... होता है और डिबेन्चरधारी कम्पनी का .... होता है।

iii) परिवर्तनीय डिबेन्चरों को .... में परिवर्तित किया जाता है।

iv) डिबेन्चरधारी कम्पनी की सभाओं में मतदान .... कर सकते।

v) पूंजी वापस लौटाने के सम्बन्ध में, डिबेन्चरों को शेयरों की अपेक्षा .... अधिकार प्राप्त होता है।

vi) डिबेन्चरों का कम्पनी की सम्पत्ति पर .... माना जाता है।

5) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) पंजीकृत डिबेन्चर को परक्राम्य लिखत समझा जाता है।

ii) डिबेन्चरधारियों को कम्पनी की सभाओं में मतदान करने का अधिकार होता है।

iii) डिबेन्चरधारी प्रायः कम्पनी का रक्षित लेनदार होता है।

iv) जिन डिवेन्चरों का मोचन हो चुका है, उन्हें पुनः जारी नहीं किया जा सकता।
v) कम्पनी के लिए डिवेन्चरों का एक रजिस्टर रखना आवश्यक है।
vi) निश्चित दर से व्याज प्राप्त करने के अलावा डिवेन्चरधारियों को लाभ में से भी हिस्सा वांटने का अधिकार होता है।
vii) डिवेन्चरों पर व्याज केवल तभी दिया जाता है जव कम्पनी को लाभ हुआ हो।

8.7 सार्वजनिक जमा (Public Deposits)

अव तक आपने कम्पनी द्वारा धन एकत्रित करने के दो मुख्य साधनों—शेयर एवं डिवेन्चर के वारे में पढ़ा। अल्पकालीन पूंजी की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जनता से जमा स्वीकार करना एक अन्य महत्वपूर्ण स्रोत है। यह वित्त एकत्रित करने का एक बहुत ही आसान तरीका है। जनता को कम्पनी में धन जमा करने के लिए आकर्षित करने के उद्देश्य से प्रायः कम्पनियां अधिक ऊंची व्याज दर का लालच देती थी तथा प्रायः अपनी सीमा या सामर्थ्य से अधिक जमा स्वीकार कर लेती थी। परिणामस्वरूप, अनेक कंपनियां देय तिथियों को रकम वापस नहीं लौटा सकीं और कुछ कम्पनियों का तो दिवाला तक निकल गया। जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करने के लिए और यह सुनिश्चित करने के लिए कि कम्पनियां अंधाधुंध उधार नहीं लें, संशोधन अधिनियम 1974 में दो नयी धाराएं 58 A तथा 58 B जोड़ी गई हैं। अव कम्पनियों द्वारा जनता से जमा स्वीकार करने के तरीके व सीमा को नियमित करने के लिए सरकार को पूर्ण अधिकार प्राप्त है। इसके लिए कम्पनी (जमा स्वीकृति) नियम, 1975 वनाए गये हैं।

8.7.1 जमा का अर्थ

कम्पनी अधिनियम की धारा 58-A के स्पष्टीकरण के अनुसार, 'जमा' से तात्पर्य मुद्रा को कम्पनी के पास जमा कराने से है और इसमें कम्पनी द्वारा उधार ली गई राशि भी शामिल होती है। जमा में सभी प्रकार की जमा शामिल हैं, चाहे वह जनता से हैं या निजी स्रोतों से। इसमें अंतःकम्पनी जमा भी शामिल होते हैं।

कम्पनी द्वारा प्राप्त की जाने वाली अनेक राशियों को इस धारा के अन्तर्गत 'जमा' नहीं माना जाता। निम्नलिखिंत राशियों को जमा नहीं माना जाता:

i) ऐसी कोई राशि जो केंद्र या राज्य सरकार या स्थानीय प्राधिकरण या विदेशी सरकार से प्राप्त हुई है।
ii) किसी बैंकिंग कम्पनी या भारतीय स्टेट बैंक या उसके नियंत्रित बैंकों या किसी सहकारी बैंक से ऋण के रूप में प्राप्त हुई राशि।
iii) वित्तीय संस्थाओं से प्राप्त ऋण की राशि। ये संस्थाएं हैं भारतीय औद्योगिक वित्त निगम, राज्य वित्त निगम, यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया, औद्योगिक विकास बैंक, जीवन वीमा निगम आदि।
iv) किसी अन्य कम्पनी से प्राप्त राशि।
v) कर्मचारियों से जमानत के रूप में जमा राशि।
vi) कम्पनी के व्यापार के लिए, व्यापार के सामान्य अनुक्रम में किसी क्रय या विक्रय या अन्य किसी एजेंट द्वारा जमानत के रूप में या एडवांस के रूप में प्राप्त राशि अथवा ग्राहकों को वस्तुएं सप्लाई करने या सेवाएं प्रदान करने के लिए प्राप्त हुई अग्रिम राशि।
vii) किन्हीं शेयरों, स्टॉक या डिवेन्चरों की खरीद के लिए जमा की गई राशि, जिनका अभी आवंटन नहीं हुआ है।
viii) न्यास के रूप में प्राप्त राशि या कोई मार्गस्थ राशि।

8.7.2 जमा तथा ऋण

कुछ व्यक्तियों के मतानुसार जमा एक प्रकार का ऋण ही है, परन्तु यह सत्य नहीं है। कोई विशिष्ट लेन-देन जमा है या ऋण, इसके संवंध में हमें पक्षकारों के वास्तविक इरादे तथा सभी सम्वन्धित परिस्थितियों को ध्यान में रखकर निर्णय करना चाहिए। जमा तथा ऋण, दोनों ही दशाओं में रकम वापस की जाती है। दोनों में वास्तव में मुख्य अन्तर इस संवंध में है कि रकम कव वापस लौटानी है। ऋण जैसे ही लिया जाता है वह देय हो जाता है, परन्तु जमा की स्थिति में ऐसा नहीं है। जमा की स्थिति में, पूर्वनिर्धारित परिपक्वता की तिथि पर रकम देय होती है या जमा के करार की शर्तों के अनुसार देय होती है। सरल शब्दों में, ऋण के विपरीत, जमा राशि को वापस लौटाने का दायित्व तुरन्त उत्पन्न नहीं होता।

8.7.3 जमा तथा डिबेन्चर

कुछ व्यक्ति जमा तथा डिबेन्चरों को एक ही श्रेणी में रखते हैं, क्योंकि दोनों ही दशाओं में ऋणग्रस्तता का तत्व होता है। परन्तु यह कहना सत्य नहीं है। जमा की गई राशि, जमा स्वीकार करने की तिथि या जमा का नवीकरण करने की तिथि के छः माह बाद परन्तु 36 माह से पहले देय होती है। इस प्रकार जमा की अवधि को सीमित कर दिया गया है जबकि डिबेन्चरों के लिए ऐसी कोई समय सीमा निश्चित नहीं की गई है। इसके अतिरिक्त, डिबेन्चरों के विपरीत, जमा को हस्तांतरित भी नहीं किया जा सकता।

8.7.4 जमा की स्वीकृति से सम्बन्धित नियम

गैर-बैंकिंग तथा गैर वित्तीय कम्पनियों द्वारा जमा स्वीकार करने को रिजर्व बैंक द्वारा नियंत्रित किया जाता है। नई धारा 58-A के अनुसार, गैर बैंकिंग तथा गैर वित्तीय कम्पनियों द्वारा जमा स्वीकार करने पर नियन्त्रण केन्द्र सरकार को दे दिया गया है। केन्द्र सरकार ने इस सम्बन्ध में अपने अधिकार एवं कार्य कम्पनी लॉ बोर्ड को सौंप दिए हैं।

कम्पनी द्वारा जमा स्वीकार करने से सम्बन्धित नियम निम्नलिखित हैं:

1) ऐसी कम्पनी जो जनता से जमा स्वीकार करने की इच्छुक है उसे समाचार पत्रों में सार्वजनिक विज्ञापन देना होगा, तथा इस विज्ञापन में कम्पनी की वित्तीय स्थिति, प्रबन्धकीय ढांचा तथा अन्य सम्बन्धित विवरण देना होगा। इस विज्ञापन में कम्पनी की नवीनतम (latest) अंकेक्षित तुलन-पत्र का संक्षिप्त विवरण भी दिया जाना चाहिए तथा यह भी स्पष्ट किया जाना चाहिए कि प्रस्तावित जमा राशि का उपयोग किन कार्यों के लिए किया जाएगा।

   इस विज्ञापन की एक प्रतिलिपि रजिस्ट्रार के पास भी भेजी जानी चाहिए। यदि इस कार्य के लिए कम्पनी कोई सार्वजनिक विज्ञापन नहीं देना चाहती, तो इस विज्ञापन के स्थान पर एक विवरण रजिस्ट्रार के पास जमा कराना चाहिए।

2) कम्पनी द्वारा भावी जमाकर्ता को एक फार्म देना चाहिए जिससे वह जमा के लिए आवेदन कर सके। इस फार्म में जमाकर्ता द्वारा हस्ताक्षर करके इस आशय की घोषणा की जानी चाहिए कि वह जो राशि जमा करा रहा है वह उस धन में से नहीं कर रहा है जो उसने किसी से ऋण या जमा के रूप में स्वीकार किया है।

3) कम्पनी द्वारा प्रत्येक जमाकर्ता को जमा के लिए एक रसीद दी जानी चाहिए। इस रसीद में जमा कराने की तिथि, जमाकर्ता का नाम व पता, जमा की राशि, ब्याज दर तथा राशि वापस लौटाने की तिथि लिखी होनी चाहिए।

4) कम्पनी जो जमा स्वीकार करती है उसकी अवधि छः माह से कम और 36 माह से अधिक नहीं होनी चाहिए। एक वित्तीय कम्पनी 60 माह तक के लिए जमा स्वीकार कर सकती है।

   कम्पनी अल्पकालीन (short-term) जमा भी स्वीकार कर सकती है, जिसकी अवधि 3 माह से पहले और छः माह के बाद तक नहीं हो सकती है अर्थात् 3 माह से 6 माह तक की अवधि के लिए जमा स्वीकार किया जा सकता है। परन्तु इसके लिए निम्नलिखित दो शर्तों का पालन करना आवश्यक है:
   क) धन की आवश्यकता अल्पकालीन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हो,
   ख) ऐसी अल्पकालीन जमा की राशि प्रदत्त पूंजी तथा मुक्त रिजर्वों (free reserves) के 10 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए।

   परन्तु किसी भी दशा में जमा की राशि 3 माह से पहले वापस नहीं की जानी चाहिए।

5) कम्पनी 'मांग पर देय' जमा न तो स्वीकार कर सकती है और न ही नवीकरण कर सकती है।

6) अपनी प्रदत्त पूंजी तथा मुक्त रिजर्वो के 25 प्रतिशत तक ही कम्पनी जमा राशि स्वीकार कर सकती है, अर्थात् कम्पनियों को जमा द्वारा असीमित धनराशि प्राप्त करने की अनुमति नहीं है। इसके अतिरिक्त, कम्पनी अपनी प्रदत्त पूंजी तथा मुक्त रिजर्व के 10 प्रतिशत तक अरक्षित डिबेन्चरों के रूप में अथवा अपने शेयरधारियों से जमा के रूप में अथवा कम्पनी के निदेशकों की गारंटी पर जमा स्वीकार कर सकती है।

   वित्तीय कम्पनी अपनी पूंजी एवं मुक्त रिजर्वों के दस गुना तक जमा स्वीकार कर सकती है। इस संदर्भ में प्रदत्त पूंजी में पूर्वाधिकार एवं ईक्विटी शेयर पूंजी, दोनो ही शामिल होते हैं।

7) कोई भी सरकारी कम्पनी अपनी प्रदत्त पूंजी एवं मुक्त रिजर्वों के 35 प्रतिशत से अधिक जमा स्वीकार नहीं कर सकती।

8) 1 अप्रैल, 1987 से कोई भी कम्पनी 14 प्रतिशत वार्षिक व्याज दर से अधिक दर पर न तो जमा आमन्त्रित करेगी, या स्वीकार करेगी न किसी भी रूप में नवीकरण करेगी।

9) कम्पनी द्वारा स्वीकृत प्रत्येक जमा का, जव तक उसका नवीकरण न हो जाए, जमा की शर्तों के अनुसार भुगतान कर दिया जाना चाहिए। यदि कोई कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों या केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित नियमों का उल्लंघन करके जमा राशि स्वीकार करती है, तो जमा स्वीकार करने की तिथि के 30 दिन के भीतर वह राशि वापस लौटा दी जानी चाहिए। केन्द्र सरकार, यदि उचित समझे तो, इस 30 दिन की अवधि को वढ़ा सकती है। परन्तु यह अवधि अगले 30 दिन से अधिक नहीं बढ़ाई जा सकती।

10) यदि कोई कम्पनी उपर्युक्त प्रावधानों के अनुसार जमा राशि को वापस लौटाने में त्रुटि करती है तो कम्पनी को दंडित किया जा सकता है और जुर्माने की राशि, वापस न की गई जमा राशि के दुगुने से कम नहीं हो सकती तथा जुर्माने की वसूल राशि में से न्यायालय, जमाकर्ता को उसकी वकाया राशि का भुगतान कर देगा। इसके अतिरिक्त, कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी को पांच वर्ष तक कारावास तथा जुर्माने का दंड दिया जा सकता है।

11) यदि कोई कम्पनी धारा 58A(2) के प्रावधानों के विरुद्ध या निर्धारित सीमा से अधिक जमा राशि आमन्त्रित या स्वीकार करती है, तो इसके लिए दंड यों होंगे:
   क) यदि जमा स्वीकार करने के संबंध में नियमों का उल्लंघन हुआ है, तव दंड या जुर्माने की राशि, स्वीकार की गई जमा राशि से कम नहीं होगी।
   ख) यदि जमा आमन्त्रित करने के सम्वन्ध में नियमों का उल्लंघन हुआ है, तो कम्पनी पर एक लाख रुपये तक का जुर्माना किया जा सकता है, परन्तु यह जुर्माना 5,000 रुपये से कम नहीं होगा।

   इन दोनों ही परिस्थितियों में, जब नियमों का उल्लंघन करके जमा राशि स्वीकार या आमन्त्रित की जाती है, तो कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी को पांच वर्ष तक के कारावास और जुर्माने का दंड दिया जा सकता है।

12) प्रत्येक कम्पनी जो जमा स्वीकार करती है, उसे जमा के लिए एक या अधिक रजिस्टर रखने चाहिए तथा इन रजिस्टरों में दर्ज अन्तिम प्रविष्टि के कम से कम आठ वर्ष वाद तक इन रजिस्टरों को पूर्ण रूप से सुरक्षित रखना चाहिए।

13) ऐसी प्रत्येक कम्पनी जो जमा स्वीकार करती है, उसे प्रति वर्ष 30 जून से पहले रजिस्ट्रार और रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के पास एक विवरण भेजना होगा जिसमें 31 मार्च तक जमा राशि का व्योरा दिया जाना चाहिए।

यदि जमा की शर्तों के अनुसार, कोई कम्पनी जमा राशि की सम्पूर्ण राशि या आंशिक राशि वापस लौटाने में त्रुटि करती है तो इसके लिए धारा 58 A को संशोधन अधिनियम, 1988 द्वारा संशोधित किया गया है। इसके अनुसार कम्पनी लॉ वोर्ड स्वयं या किसी जमाकर्ता के आवेदन करने पर, कम्पनी को आदेश दे सकता है कि जमा राशि को तुरन्त वापस कर दिया जाए अथवा कुछ शर्तें निर्धारित कर सकता है जिनके अनुसार निश्चित अवधि के भीतर जमा राशि वापस कर दी जानी चाहिए। परन्तु ऐसा कोई भी आदेश देने से पूर्व कम्पनी लॉ बोर्ड, कम्पनी तथा अन्य व्यक्तियों को अपना पक्ष प्रस्तुत करने का पूर्ण अवसर प्रदान करेगा।

ऐसा कोई भी व्यक्ति जो वोर्ड के इस आदेश का पालन करने में त्रुटि करता है, उसे तीन वर्ष तक के कारावास तथा त्रुटि के प्रत्येक दिन के लिए 50 रुपये तक जुर्माने से दंड दिया जा सकता है।

बोध प्रश्न ग

1) 'जमा' से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

2) उन चार मदों को सूचीबद्ध कीजिए जिन्हें 'जमा' नहीं माना जाता।

....

....

....

3) जमा स्वीकार करने की अवधि की समय सीमा बताइए।

....

....

....

4) रिक्त स्थानों की पूर्ति कजिए:
   i) जमा स्वीकार करने से सम्बन्धित नियम, कम्पनी अधिनियम की धारा .... में दिए गये हैं।
   ii) कोई कम्पनी अपनी कुल प्रदत्त-पूंजी तथा मुक्त रिजर्वों के योग के .... तक जनता से जमा स्वीकार कर सकती है।
   iii) कोई वित्तीय कम्पनी अपनी प्रदत्त-पूंजी तथा मुक्त रिजर्वों के .... तक जमा स्वीकार कर सकती है।
   iv) कोई गैर वित्तीय कम्पनी अधिक से अधिक .... माह तक के लिए जमा स्वीकार कर सकती है।
   v) कोई कम्पनी मांग पर देय जमा स्वीकार या नवीकरण .... कर सकती है।

8.8 सारांश

पूंजी से तात्पर्य उस धनराशि से है जिससे कम्पनी अपना व्यापार आरम्भ करती है। कम्पनी के सीमानियम में एक पूंजी खंड होता है जिसमें वह राशि लिखी जाती है जिससे कम्पनी का पंजीकरण कराया जाता है। इस राशि को अधिकृत या पंजीकृत पूंजी कहते हैं । निर्गमित पूंजी वह राशि होती है जिसके शेयर वास्तव में निर्गमित व आवंटित कर दिए गए हों।

कम्पनी की शेयर पूंजी विभिन्न प्रकार के शेयरों में विभाजित होती है। कम्पनी केवल दो प्रकार के ही शेयर निर्गमित कर सकती है–पूर्वाधिकार तथा ईक्विटी। ईक्विटी शेयरधारी कम्पनी के वास्तविक स्वामी होते हैं, परन्तु उन्हें लाभांश तथा पूंजी वापसी के सम्बन्ध में कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं होता। पूर्वाधिकार शेयरधारियों को लाभांश देने के बाद ही ईक्विटी शेयरधारियों को लाभांश प्राप्त करने का हक होता है, उससे पहले नहीं। ईक्विटी शेयरधारियों को कम्पनी की सभाओं में भाग लेने व मतदान करने का अधिकार होता है। इसके विपरीत पूर्वाधिकार शेयरधारियों को दो विशेष अधिकार प्राप्त हैं —(i) निश्चित दर पर लाभांश प्राप्त करने का अधिकार, तथा (ii) कम्पनी के समापन के समय पूंजी वापस प्राप्त करने का अधिकार। पूर्वाधिकार शेयर भी अनेक प्रकार के होते हैं, जैसे संचयी और असंचयी, अवशिष्ट भागी और गैर-अवशिष्ट भागी, मोचनीय और अमोचनीय, परिवर्तनीय और अपरिवर्तनीय।

कम्पनी डिवेन्चर निर्गमित करके भी धन उधार ले सकती है। डिबेन्चर कम्पनी द्वारा दी गई ऋणग्रस्तता की स्वीकृति है। डिवेन्चरधारियों को एक निश्चित दर से व्याज प्राप्त करने का अधिकार है, चाहे कम्पनी को कोई लाभ हुआ हो या नहीं। डिवेन्चर प्रायः सुरक्षित होते हैं। ये परिवर्तनीय तथा अपरिवर्तनीय भी हो सकते हैं।

कम्पनी जनता से धन जमा के रूप में स्वीकार कर सकती है। परन्तु जमा राशि की अधिकतम सीमा निर्धारित की गई है। जमा राशि कम से कम छः माह और अधिक से अधिक 36 माह तक के लिए स्वीकार की जा सकती है। जमा राशि पर देय व्याज की दर कम्पनी लॉ वोर्ड द्वारा निश्चित की जाती है, इस समय यह दर 14%वार्षिक है। सरकार ने जनता से जमा राशि स्वीकार करने के सम्वन्ध में कुछ नियम निर्धारित किए हैं तथा इन नियमों का कठोरता से पालन किया जाना चाहिए, पालन न किए जाने पर दंड की व्यवस्था है।

8.9 शब्दावली

शेयर (Share) : वह इकाई जिसमें कम्पनी की पूंजी बंटी होती है, शेयर कहलाती है।

निर्गमित पूंजी (Issued Capital) : पूंजी की वह राशि जो कम्पनी ने जनता को निर्गमित की है।

पूर्वाधिकार शेयर (Preference Share) : वे शेयर जिन्हें लाभांश प्राप्त करने का पूर्वाधिकार व कम्पनी के समापन के समय अपनी पूंजी पहले प्राप्त करने का अधिकार है।

स्टॉक (Stock) : किसी सदस्य के पूर्ण प्रदत्त शेयरों का जोड़।

रिजर्व पूंजी (Reserve Capital) : अयाचित पूंजी का वह भाग जो केवल कम्पनी के समापन के समय ही मांगा जा सकता है।

डिबेन्चर (Debenture) : कम्पनी द्वारा ऋणग्रस्तता की स्वीकृति का प्रलेख।

वाहक डिबेन्चर (Bearer Debenture) : ऐसे डिबेन्चर जिन्हें सुपुर्दगी मात्र से हस्तांतरित किया जा सके।

साधारण डिबेन्चर (Naked Debentures) : वे डिबेन्चर जो किसी परिसम्पत्ति के बंधक द्वारा रक्षित नहीं होते।

अरक्षित डिबेन्चर (Unsecured Debentures) : ऐसे डिबेन्चर जिनका किसी परिसम्पत्ति पर बंधक या प्रभार नहीं होता।

रक्षित डिबेन्चर (Secured Debentures) : ऐसे डिबेन्चर जो कम्पनी की किसी परिसम्पत्ति पर प्रभार या बंधकत्व द्वारा सुरक्षित होते हैं।

परिवर्तनीय डिबेन्चर (Convertible Debentures) : ऐसे डिबेन्चर जिन्हें पूर्णतः या अंशतः ईक्विटी शेयरों में परिवर्तित किया जा सके।

मोचनीय डिबेन्चर (Redeemable Debentures) : ऐसे डिबेन्चर जिनकी राशि एक नियत अवधि के पश्चात् वापस लौटानी है।

जमा (Deposits) : कम्पनी के पास जमा की गई धनराशि, इसमें ऋण की राशि भी शामिल होती है।

8.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 6) i) क ii) ग iii) क iv) ख v) ख
7) i) गलत ii) सही iii) गलत iv) गलत v) गलत vi) सही vii) सही viii) गलत

ख 4) i) ऋण ii) स्वामी, लेनदार iii) शेयरों iv) नहीं v) अग्र vi) प्रभार
5) i) गलत ii) गलत iii) सही iv) गलत v) सही vi) गलत vii) गलत

ग 4) i) 58A ii) 25 प्रतिशत iii) दस गुना iv) 36 v) नहीं

8.11 स्वपरख प्रश्न

1) 'पंजीकृत पूंजी' से क्या तात्पर्य है? शेयर पूंजी के दो प्रकार क्या हैं?

2) 'रिजर्व पूंजी' क्या होती है? क्या रिजर्व पूंजी पर कोई प्रभार उत्पन्न किया जा सकता है?

3) 'शेयर' शब्द से आप क्या समझते हैं? शेयर तथा स्टॉक में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

4) पूर्वाधिकार शेयरों के मोचन सम्बन्धी प्रावधान बताइए।

5) शेयर तथा डिबेन्चर में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

6) कम्पनी के जमा स्वीकार करने संबंधी विधियों, सीमाओं एवं शर्तों का वर्णन कीजिए।

7) यदि कोई कम्पनी, कम्पनी (जमा स्वीकृति) नियमन, 1975 के किसी प्रावधान का उल्लंघन करती है, तो इसके क्या परिणाम होते हैं?

नोट : इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 9 शेयरों का आबंटन (Allotment of Shares)

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 शेयरों का आबंटन
- 9.2.1 आबंटन की सूचना
- 9.2.2 शेयरों के आवंटन सम्बन्धी नियम
- 9.2.3 आवंटन की विधि
- 9.2.4 आबंटन का विवरण

9.3 अनियमित आबंटन तथा उसके परिणाम
9.4 छूट पर शेयर निर्गमित करना
9.5 प्रीमियम पर शेयर निर्गमित करना
9.6 शेयर प्रमाणपत्र
- 9.6.1 शेयर प्रमाणपत्र जारी करना
- 9.6.2 शेयर प्रमाणपत्र का प्रभाव
- 9.6.3 शेयर प्रमाणपत्र की दूसरी प्रति

9.7 शेयर वारंट
- 9.7.1 शेयर वारंट सम्बन्धी नियम
- 9.7.2 शेयर प्रमाणपत्र एवं शेयर वारंट में अन्तर

9.8 शेयरों पर मांग
- 9.8.1 वैध मांग के आवश्यक तत्व
- 9.8.2 मांग का अग्रिम भुगतान

9.9 शेयरों को जब्त करना
9.10 जब्त शेयरों का पुनः निर्गमन
9.11 शेयरों का अभ्यर्पण
9.12 सारांश
9.13 शब्दावली
9.14 बोध प्रश्नों के उत्तर
9.15 स्वपरख प्रश्न

9.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- शेयरों के आबंटन के अर्थ की व्याख्या कर सकें;
- आवंटन संबंधी नियमों का वर्णन कर सकें;
- अनियमित आबंटन के परिणामों का वर्णन कर सकें;
- उन परिस्थितियों को सूचीवद्ध कर सकें जिनमें शेयरों को छूट पर तथा प्रीमियम पर जारी किया जाता है;
- शेयर प्रमाणपत्र तथा शेयर वारंट का अर्थ एवं उनमें अन्तर को स्पष्ट कर सकें;
- वैध मांग के आवश्यक तत्वों का वर्णन कर सकें;
- उन परिस्थितियों का वर्णन कर सकें जिनमें शेयर जब्त किए जाते हैं व उन्हें पुनः जारी किया जाता है; और
- शेयरों के अभ्यर्पण के नियमों की व्याख्या कर सकें।

9.1 प्रस्तावना

इकाई 8 में आपने विभिन्न प्रकार के शेयरों एवं डिवेन्चरों के वारे में पढ़ा। कम्पनी अधिनियम में शेयरों के आवंटन की विस्तृत कार्यविधि का वर्णन किया गया है, और प्रत्येक कम्पनी को इसका पालन करना पड़ता

है। इस इकाई में आप इस कार्यविधि का अध्ययन करेंगे तथा शेयरों के आवंटन सम्वन्धी नियमों का भी अध्ययन करेंगे। इसके अतिरिक्त आप अनियमित आवंटन के परिणामों, शेयरों को छूट या प्रीमियम पर जारी करने तथा शेयरों को जब्त करने एवं जब्त किए गये शेयरों के पुनः निर्गमन के वारे में भी पढेंगे।

9.2 शेयरों का आबंटन

यह तो आप जानते ही हैं कि सार्वजनिक कम्पनी जनता को कम्पनी में धन लगाने के लिए निमन्त्रित करती है तथा इस उद्देश्य के लिए एक प्रविवरण-पत्र जारी किया जाता है। इस नियन्त्रण के जवाब में, भावी निवेशक निर्धारित आवेदन-पत्र भेजकर कम्पनी के शेयर खरीदने का प्रस्ताव करते हैं। यदि कम्पनी उनके आवेदन-पत्र को स्वीकार कर लेती है, तब वह उन्हें शेयर आबंटित कर देती है। आबंटन पत्र जारी किए जाने पर, प्रस्ताव कम्पनी द्वारा स्वीकृत किया गया माना जाता है तथा कम्पनी और आवेदक के बीच एक वैध अनुवन्ध उत्पन्न हो जाता है। इस प्रकार **आबंटन शेयर खरीदने के प्रस्ताव की कम्पनी द्वारा स्वीकृति देना होता है।**

कम्पनी अधिनियम में 'आवंटन' शब्द की कहीं भी परिभाषा नहीं की गई है। किसी निश्चित व्यक्ति के आवेदन के उत्तर में जव कम्पनी का निदेशक मंडल उसे निश्चित संख्या में शेयर विनियोजित करता है, तो इसे 'आवंटन' करना कहते हैं। सरल शब्दों में, कम्पनी की अविनियोजित पूंजी में से किसी निश्चित व्यक्ति को, निश्चित संख्या में शेयरों के विनियोजन को आवंटन करना कहते हैं।

9.2.1 आबंटन की सूचना

आवंटन, किसी आवेदक द्वारा कम्पनी के शेयर खरीदने के प्रस्ताव की स्वीकृति है, तथा किसी अन्य स्वीकृति के समान, इसकी भी सूचना दी जानी चाहिए। जव तक प्रस्ताव की स्वीकृति की उचित ढंग से सूचना नहीं दी जाती, तव तक वैध अनुवन्ध उत्पन्न नहीं होता है। अतः, आवंटिती को आवंटन की सूचना अवश्य ही दी जानी चाहिए। यदि आवंटन पत्र को डाक में सही तरीके से भेजा गया है, अर्थात् उस पर ठीक पता लिख कर उचित मूल्य का स्टाम्प लगाया गया है, तो वैध अनुबन्ध हो जाएगा, चाहे वह डाक द्वारा देर से पहुंचे या मार्ग में ही खो जाए। इस आबंटन पत्र में आवेदन किए गये शेयरों की संख्या व आबंटित शेयरों की संख्या के अतिरिक्त आबंटिती को एक निश्चित समय के भीतर कम्पनी के बैंकर के पास आबंटन पर देय राशि जमा कराने के लिए कहा जाता है। परन्तु ऐसा तव तक नहीं होता जब तक आंशिक आबंटन की स्थिति हो या अतिरिक्त आवेदन-पत्र राशि में से आवंटन पर देय राशि को विनियोजित कर लिया जाता है।

9.2.2 शेयरों के आबंटन सम्बन्धी नियम

शेयरों के आवंटन सम्वन्धी नियमों का हम मुख्यतः दो शीर्षकों के अन्तर्गत अध्ययन कर सकते हैं — (अ) सामान्य नियम, तथा (व) कानूनी नियम।

सामान्य नियम (General Rules)
यह तो आप जानते ही हैं कि कंपनी के निश्चित संख्या में शेयर खरीदने के प्रस्ताव की स्वीकृति को आवंटन कहते हैं। अतः वैध स्वीकृति के सामान्य नियमों का अवश्य पालन किया जाना चाहिए। शेयरों के आबंटन से सम्बन्धित सामान्य नियम निम्नलिखित हैं:

i) **आबंटन उचित अधिकारी द्वारा किया जाना चाहिए।** शेयर आबंटित करना निदेशक मंडल का कार्य है। किन्तु निदेशक मंडल अपने इस अधिकार को, कम्पनी के अन्तर्नियमों के अनुसार, किसी व्यक्ति या व्यक्तियों को सौंप सकता है। उचित प्राधिकार के बिना किया गया आबंटन व्यर्थ करार कर दिया जाता है।

ii) **आबंटन उचित समय के भीतर किया जाना चाहिए।** कम्पनी के शेयर खरीदने के प्रस्ताव को उचित समय के भीतर स्वीकार किया जाना चाहिए अन्यथा आवेदक शेयर लेने से मना कर सकता है, क्योंकि उचित समय व्यतीत हो जाने पर प्रस्ताव समाप्त हो जाता है। 'उचित समय' क्या है, यह प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

iii) **आबंटन की सूचना अवश्य दी जानी चाहिए।** आवेदक को शेयरों के आबंटन की सूचना दी जानी आवश्यक है। उचित तरीके से आवेदक का पता लिखकर व उचित मूल्य का स्टाम्प लगाकर डाक से भेजे गये आवंटन पत्र को उचित सूचना माना जाता है। यदि आवंटन पत्र मिलने में देर हो जाए या

मार्ग में ही गुम हो जाए, तब भी आवंटिती आवंटन से बाध्य होता है। G ने एक कम्पनी में शेयरों के लिए आवेदन किया। आवंटन-पत्र उसे डाक से भेजा गया किन्तु वह उसे नहीं मिला। निर्णय दिया गया कि G कम्पनी के शेयरधारी के रूप में बाध्य है। **[Household Fire Insurance Co. Ltd. V. Grant]**

iv) **आबंटन पूर्ण एवं शर्तरहित होना चाहिए।** शेयरों का आवंटन आवेदन की शर्तों के अनुरूप होना चाहिए। यदि आवंटन उन शर्तों के अनुरूप नहीं है, तो यद्यपि आवेदक को शेयर आबंटित किए जा चुके हैं, वह उन शेयरों को स्वीकार करने से इंकार कर सकता है। यदि शर्तों का पालन नहीं किया जाता तो उसे आबंटन को तुरन्त अस्वीकार कर देना चाहिए। उसके मौन रहने या स्वीकार कर लेने पर उसका अनुबन्ध रद्द करने का अधिकार समाप्त हो जाता है।

कानूनी नियम (Legal Rules)

आपको यह याद रखना चाहिए कि निजी कम्पनी द्वारा शेयरों के आवंटन पर कम्पनी अधिनियम द्वारा कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया है। परन्तु अधिनियम द्वारा सार्वजनिक कम्पनी द्वारा शेयरों के आवंटन पर कुछ प्रतिबन्ध लगाए गये हैं।

जब कोई सार्वजनिक प्रस्ताव नहीं किया जाता : जब कोई सार्वजनिक कम्पनी जनता के सामने शेयर खरीदने के लिए प्रस्ताव आमन्त्रित नहीं करती बल्कि वह अपने निजी साधनों से पूंजी एकत्रित करती है तो वह प्रथम आबंटन तब तक नहीं कर सकती जब तक कि शेयरों के प्रथम आबंटन से कम-से-कम तीन दिन पहले कम्पनी के रजिस्ट्रार के पास वह 'प्रविवरण के बदले में विवरण' जमा नहीं करा देती। यदि इस नियम के विपरीत शेयर आबंटित किए जाते हैं, तो उसे 'अनियमित आबंटन' कहते हैं तथा यह आवेदक के चाहने पर रद्द किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, कम्पनी के ऐसे प्रत्येक अधिकारी पर जो इस आवंटन के लिए उत्तरदायी है, 1,000 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है।

जब जनता से प्रस्ताव आमन्त्रित किए जाते हैं : जब कोई कम्पनी अपने शेयर जनता के समक्ष रखती है तब निम्नलिखित नियमों का पालन करना चाहिए:

i) **प्रविवरण (Prospectus):** यह अवश्य जारी किया जाना चाहिए तथा इसकी एक कापी रजिस्ट्रार के पास जमा कराई जानी चाहिए। यहां आप यह ध्यान रखें कि प्रविवरण जारी करते ही कम्पनी शेयर आबंटित नहीं कर सकती। प्रविवरण जारी करने की तिथि के पश्चात् पांचवा दिन आरम्भ होने से पहले आबंटन नहीं किया जा सकता। उक्त पांचवें दिन की गणना उस दिन से की जाती है जिस दिन प्रविवरण को प्रकाशित किया गया अथवा किसी अन्य प्रकार से जनता को सूचित किया गया। पांचवां दिन आरम्भ होने के समय को 'अभिदान सूची का आरम्भ' (opening of the subscription list) कहते हैं। इस प्रावधान का मुख्य उद्देश्य यह है कि जनता को सोचने-विचारने का पर्याप्त अवसर दिया जाए कि वह कम्पनी में धन लगाना चाहती है या नहीं। कम्पनी अधिनियम में अभिदान सूची बन्द करने के समय के बारे में कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है। इसका अर्थ यह हुआ कि कम्पनी, जब तक चाहे, वह अभिदान सूची को खुला रख सकती है। स्टॉक एक्सचेंज नियमों के अनुसार जब कम्पनी के शेयर किसी भी स्टॉक एक्सचेंज में सूचीयत (listed) हैं, तब अभिदान सूची कम-से-कम तीन दिन तक अवश्य ही खुली रहनी चाहिए। ऐसी स्थिति में, प्रविवरण में सामान्यतः अभिदान सूची बन्द होने की तारीख दी होती है।

ii) **न्यूनतम अभिदान (Minimum Subscription):** कोई भी कम्पनी न्यूनतम अभिदान राशि (जो कि निर्गमित राशि का 90 प्रतिशत है) प्राप्त किए बिना जनता को शेयर आवंटित नहीं कर सकती, तथा यह भी आवश्यक है कि आवेदन-पत्र के साथ प्राप्त हुई यह राशि कम्पनी द्वारा नकद प्राप्त कर ली गई हो। यदि निर्गमित राशि की 90 प्रतिशत न्यूनतम अभिदान राशि प्राप्त नहीं होती, तो अभिदान सूची बन्द होने के 90 दिन के भीतर सम्पूर्ण राशि आवेदकों को वापस लौटा दी जानी चाहिए। यदि इस राशि को वापस करने में दस दिनों से अधिक देर होती है, तो इस देर की अवधि के लिए कम्पनी, 15% वार्षिक दर से ब्याज देने के लिए उत्तरदायी होती है।

iii) **आवेदन राशि (Application Money):** यह वह राशि होती है जो शेयर खरीदने के लिए आवेदन-पत्र के साथ जमा कराई जाती है। आवेदन राशि, शेयर के अंकित मूल्य के 5 प्रतिशत से कम नहीं होनी चाहिए।

iv) **आवेदन राशि किसी अनुसूचित बैंक में जमा कराई जानी चाहिए:** आवेदकों से प्राप्त समस्त आवेदन राशि किसी अनुसूचित बैंक में जमा करा दी जानी चाहिए और वह तब तक बैंक में जमा रहेगी जब तक कि कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र नहीं मिल जाता।

v) **स्टॉक एक्सचेंज में बिकने वाले शेयरों का आबंटन:** कम्पनी अधिनियम की धारा 73(1) के अनुसार, प्रत्येक ऐसी कम्पनी जो प्रविवरण जारी करके जनता से शेयर खरीदने के लिए आवेदन स्वीकार करने को इच्छुक है, उसे प्रविवरण जारी करने से पहले, एक या अधिक स्टॉक एक्सचेंजों में कम्पनी के शेयर बिकने के लिए अनुमति प्राप्त करने के उद्देश्य से आवेदन कर देना चाहिए। इस प्रकार अब शेयरों का स्टॉक एक्सचेंजों में सूचीयन करना अनिवार्य हो गया है। प्रविवरण में उस स्टॉक एक्सचेंज या स्टॉक एक्सचेंजों का नाम दिया जाना चाहिए जहां पर यह आवेदन किया गया है। यदि अभिदान सूची बन्द होने की तिथि से दस सप्ताह के भीतर यह अनुमति प्राप्त नहीं होती, तो आवेदकों से प्राप्त सारी राशि वापस कर दी जानी चाहिए। यदि राशि लौटाने का दायित्व आरम्भ होने की तिथि से 8 दिनों के भीतर यह रकम नहीं लौटाई जाती, तो कम्पनी के निदेशक ब्याज सहित उस राशि को वापस करने के लिए उत्तरदायी होते हैं और यह ब्याज की दर 4% से कम और 15% वार्षिक से अधिक नहीं होनी चाहिए। परन्तु यदि निदेशक यह सिद्ध कर दें कि राशि लौटाने में उनसे कोई लापरवाही या दुराचरण नहीं हुआ है, तो वे ब्याज चुकाने के दायित्व से बच सकते हैं।

शेयरों का उत्तरवर्ती आबंटन (Further Issue of Shares): यदि कम्पनी बाद में कभी शेयर जारी करती है तो आबंटन सम्बन्धी उपर्युक्त नियम ही लागू होते हैं, परन्तु न्यूनतम अभिदान राशि का नियम लागू नहीं होता।

9.2.3 आबंटन की विधि

जब कम्पनी अपने बैंकों से समस्त आवेदन-पत्र प्राप्त कर लेती है, तो वह उनकी एक शेयर आवेदन सूची तैयार करती है। यहां यह ध्यान रहे कि केवल उन्हीं आवेदकों के नाम इस सूची में शामिल किए जाने चाहिए जिन्होंने आवेदन राशि का भुगतान कर दिया है, क्योंकि आवेदन राशि के बिना जमा किया गया आवेदन-पत्र व्यर्थ होता है। निदेशक यह ध्यान रखेंगे कि आबंटन सम्बन्धी समस्त नियमों का पालन किया जा रहा है। तब वे शेयर आबंटन की प्रक्रिया आरम्भ करेंगे। यदि कम्पनी को जितने शेयर निर्गमित करने थे, उतने ही शेयरों के लिए आवेदन प्राप्त हुए हैं, तब तो आबंटन में कोई कठिनाई नहीं होती। इस दशा में निदेशक, प्रत्येक आवेदक को उतने शेयर आबंटित कर सकता है जितने मांगे हैं। लेकिन वास्तव में कठिनाई अति-अभिदान (over-subscription) की स्थिति में उत्पन्न होती है। कम्पनी को जितने शेयर निर्गमित करने हैं, जब उस संख्या से अधिक शेयरों के लिए आवेदन प्राप्त होते हैं, तो इसे अति-अभिदान की स्थिति कहते हैं। अति-अभिदान की स्थिति में, स्वाभाविक है, कि आवेदकों द्वारा मांगे गए शेयरों से कम संख्या में शेयर आबंटित किए जाएंगे, इसे हम आंशिक आबंटन कहते हैं। जिस स्टॉक एक्सचेंज में कम्पनी के शेयर सूचीयत हैं, उसके परामर्श से आबंटन का आधार तय किया जाता है। सरकार द्वारा बनाए गये दिशा-निर्देशों में इस तथ्य पर बल दिया गया है कि आबंटन इस प्रकार से किया जाए जिससे छोटे निवेशकों के हितों को बढ़ावा मिले तथा अधिक से अधिक व्यक्तियों को शेयर आबंटित किए जाएं। कोई व्यक्ति उपलब्ध शेयरों का बहुत बड़ा भाग स्वयं न ले सके, इसके लिए यह व्यवस्था की गई है कि एक व्यक्ति अपने नाम में एक से अधिक आवेदन नहीं जमा करा सकता।

अति-अभिदान की स्थिति में, शेयर या तो लाटरी निकाल कर अथवा आनुपातिक (pro rata) आधार पर आबंटित किए जाते हैं अर्थात् व्यक्ति द्वारा आवेदन किए गये शेयरों की संख्या के अनुपात में। इस बात की सुरक्षा करने के लिए कि आवेदक को जब कम संख्या में शेयर आबंटित किए जाएं तो वह उन्हें स्वीकार करने से मना न कर दे, आवेदन-पत्र में प्रायः यह वाक्य शामिल किया जाता है, "मैं/हम, उतने शेयर या कम संख्या में शेयर आबंटित किए जाने पर, उन्हें स्वीकार करने के लिए सहमत हूँ/हैं"।

पूँजी-निर्गम-नियंत्रक (Controller of Capital Issues) द्वारा जारी किए गए नवीनतम निर्देशक सिद्धांतों के अनुसार ईक्विटी शेयरों की स्थिति में कम्पनियों को यह विकल्प दिया गया है कि पूंजी-निर्गम-नियंत्रक से जितनी राशि के लिए अनुमति माँगी गई है यदि वे चाहें तो उससे 15 प्रतिशत और अधिक राशि की अति अभिदत्त ईक्विटी को अपने पास रख सकती हैं।

जब किसी व्यक्ति को आवेदन-पत्र में मांगे गये शेयरों की संख्या से कम शेयर आबंटित किए जाते हैं, तो अतिरिक्त आवेदन राशि को वापस नहीं लौटाया जाता है बल्कि इसे आबंटन खाते में अन्तरित कर दिया जाता है और भविष्य में उसके द्वारा देय आबंटन राशि के प्रति इसे समायोजित कर लिया जाता है।

कम-अभिदान (under subscription) की स्थिति में, निदेशक मंडल को केवल इस बात का ध्यान करना पड़ता है कि न्यूनतम अभिदान राशि प्राप्त हो गई है या नहीं। न्यूनतम अभिदान राशि प्राप्त होने पर वे आबंटन का कार्य शुरू कर सकते हैं। जब निदेशक मंडल प्रस्ताव पारित करके आबंटन को पक्का करता है

और यदि किसी कारण से किसी आवेदक को शेयर आबंटित नहीं किए जा सके हैं तो उसे आवेदन राशि के रेखांकित चैक के साथ खेद-पत्र भेज दिया जाता है।

9.2.4 आबंटन का विवरण

आप शेयरों के आबंटन के नियमों एवं विधियों का अध्ययन कर चुके हैं। कम्पनी अधिनियम की धारा 75 के अनुसार, जब शेयर पूंजी वाली कोई कम्पनी अपने शेयरों का आबंटन करती है, तो उसे आबंटन करने के 30 दिनों के भीतर रजिस्ट्रार को एक रिपोर्ट भेजनी पड़ती है, जिसे 'आबंटन का विवरण' कहते हैं। इस विवरण में आबंटित शेयरों की संख्या एवं उनके अंकित मूल्य सम्बन्धी विवरण, आबंटितियों के नाम, पते व व्यवसाय, तथा आबंटन पर भुगतान की गई या देय राशि आदि का विवरण दिया जाता है।

नकदी के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के प्रतिफल के लिए यदि शेयर आबंटित किए गये हैं, तो कम्पनी को रजिस्ट्रार के निरीक्षण के लिए वह लिखित अनुबन्ध प्रस्तुत करना होगा जिसके आधार पर वे शेयर उन्हें आबंटित किए गये हैं अथवा उन सेवाओं का अनुबन्ध दिखाना होगा जिनके लिए उन्हें ये शेयर आबंटित किए गये हैं।

जब छूट पर शेयर जारी किए जाते हैं तो कम्पनी द्वारा इस सम्बन्ध में पास किये गये प्रस्ताव की एक प्रतिलिपि तथा कम्पनी लॉ बोर्ड की अनुमति भी रजिस्ट्रार के पास प्रस्तुत की जानी चाहिए।

बोनस शेयरों के निर्गमन की दशा में कम्पनी को इन शेयरों की संख्या, उनका अंकित मूल्य तथा आबंटितियों के नाम, पते, व्यवसाय आदि का पूर्ण विवरण रजिस्ट्रार के पास भेजना चाहिए। बोनस शेयर जारी करने का अधिकार देने वाले प्रस्ताव की एक प्रति भी रजिस्ट्रार के पास भेजी जानी चाहिए।

जब जब्त किए गये शेयरों को पुनः निर्गमित किया जाता है तब आबंटन का विवरण भेजना आवश्यक नहीं होता, क्योंकि इसे आबंटन नहीं माना जाता, बल्कि यह तो शेयरों का पुनः विक्रय मात्र है। (26) 3

9.3 अनियमित आबंटन तथा उसके परिणाम

यदि वैध आबंटन सम्बन्धी नियमों का पालन किए बिना कम्पनी शेयर आबंटित करती है, तो इसे 'अनियमित आबंटन' (**irregular allotment**) कहा जाता है। निम्नलिखित परिस्थितियों में शेयरों का आबंटन अनियमित माना जाता है:

1) यदि न्यूनतम अभिदान की राशि प्राप्त करने से पहले ही शेयर आवंटित कर दिए जाते हैं।
2) यदि शेयरों के अंकित मूल्य के 5 प्रतिशत से कम आवेदन राशि के रूप में प्राप्त करने पर शेयर आबंटित किए जाते हैं।
3) यदि आवेदन राशि किसी अनुसूचित बैंक में जमा कराए विना, आवंटन किया जाता है।
4) ऐसी कम्पनी की स्थिति में जो जनता को शेयर खरीदने के लिए प्रविवरण जारी नहीं करती, यदि प्रथम आबंटन की तिथि से तीन दिन पहले रजिस्ट्रार के पास प्रविवरण के बदले में विवरण फाइल किये विना आबंटन किया जाता है।
5) यदि प्रविवरण जारी करने की तिथि के दस दिनों के भीतर कम्पनी अपने शेयरों को सूचीयत कराने के लिए एक या अधिक मान्य शेयर बाजार में अनुमति के लिए आवेदन नहीं करती अथवा यदि अनुमति के लिए आवेदन तो कर दिया गया है परन्तु अभिदान सूची बन्द करने की तिथि से 10 सप्ताह के भीतर स्टॉक एक्सचेंज से यह अनुमति प्राप्त नहीं होती और आवंटन कर दिया जाता है तो वह अनियमित आबंटन होता है।
6) यदि प्रविवरण जारी करने की तिथि के पांचवें दिन के समाप्त होने से पहले आवंटन कर दिया जाता है।

परिणाम

अनियमित आबंटन के निम्नलिखित परिणाम होते हैं:

i) **आबंटिती के विकल्प पर व्यर्थनीयः** उपर्युक्त पहली चार परिस्थितियों में आवेदक के विकल्प पर आबंटन व्यर्थनीय होता है। परन्तु इस अधिकार का प्रयोग कम्पनी की सांविधिक सभा की तिथि के दो माह के भीतर, या जब कम्पनी के लिए सांविधिक सभा बुलाना आवश्यक नहीं है या जब सांविधिक

सभा बुलाने के बाद आवंटन किया गया है तो आवंटन की तिथि के दो माह के भीतर प्रयोग किया जाना चाहिए, उसके बाद नहीं। यहां यह आवश्यक नहीं है कि उक्त निर्धारित अवधि के भीतर आवंटिती कानूनी कार्यवाही आरम्भ करे, बल्कि आवश्यकता इस बात की है कि वह आवंटन को रद्द करने के अपने इरादे की सूचना प्रभावशाली ढंग से कम्पनी को दे दे। यदि कम्पनी का समापन हो गया है या उसके समापन की क्रिया आरम्भ हो गई है, तब भी आवंटन को रद्द करने का विकल्प रहता है।

ii) **जुर्माना:** यदि अभिदान सूची खोलने के समय का पालन नहीं किया जाता अर्थात् अभिदान सूची के खुलने से पहले ही आवंटन किए जाने पर आवंटन तो वैध रहता है, परन्तु कम्पनी व उसके प्रत्येक निदेशक पर, जो त्रुटि के लिए उत्तरदायी है, 5,000 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है।

iii) **आबंटन व्यर्थ होता है:** उपर्युक्त पांचवीं स्थिति में यदि सूचीयन के लिए आवेदन किया ही नहीं गया हो अथवा स्टॉक एक्सचेंज में शेयरों की बिक्री के लिए अनुमति प्राप्त करने के लिए आवेदन को अस्वीकार कर दिया गया हो (अनुमति प्राप्त नहीं हुई) तो आवंटन व्यर्थ होता है। इस दशा में 8 दिनों के भीतर सम्पूर्ण रकम लौटा दी जानी चाहिए, अन्यथा कम्पनी के निदेशक व्याज सहित यह राशि लौटाने के लिए उत्तरदायी हो जाते हैं तथा यह व्याज की दर त्रुटि की अवधि पर निर्भर करती है। परन्तु यह 4 प्रतिशत वार्षिक से कम तथा 15 प्रतिशत वार्षिक से अधिक नहीं हो सकती।

iv) **निदेशकों का दायित्व:** कम्पनी के जो निदेशक अनियमित आबंटन के लिए उत्तरदायी हैं, वे कम्पनी या आवेदक को होने वाली किसी भी हानि या खर्च के लिए मुआवजा देने के लिए उत्तरदायी होते हैं। परन्तु यह हानि, खर्च या मुआवज़ा प्राप्त करने के सम्बन्ध में कार्यवाही आबंटन के दो वर्षों के भीतर आरम्भ कर दी जानी चाहिए।

9.4 छूट पर शेयर निर्गमित करना (Issue of Shares at a Discount)

आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी की शेयर पूंजी निश्चित मूल्य वाले शेयरों में विभाजित होती है। कम्पनी, शेयरों को उनके अंकित मूल्य से कम मूल्य पर निर्गमित कर सकती है, इस दशा में 'शेयरों को छूट पर निर्गमित' किया गया कहा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि कम्पनी का दस रुपये वाला शेयर नौ रुपये पर जारी किया जाता है, तो इसका अर्थ यह हुआ कि वह शेयर एक रुपये की छूट पर जारी किया गया। शेयरों को छूट पर निर्गमित करने को सामान्यतः प्रोत्साहित नहीं किया जाता और यही कारण है कि कम्पनी अधिनियम ने शेयरों के छूट पर निर्गमन करने पर कड़े प्रतिबन्ध लगाए हैं।

कंम्पनी अधिनियम की धारा 79 के अनुसार कम्पनी अपने शेयर छूट पर निर्गमित कर सकती है बशते निम्नलिखित शर्तों का पालन किया जाए:

1) जो शेयर छूट पर निर्गमित किए जाने हों, वे उसी वर्ग के हों जो पहले निर्गमित किए जा चुके हैं अर्थात् कोई भी शेयर प्रथम बार ही छूट पर निर्गमित नहीं किया जा सकता।

2) कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने की अनुमति प्राप्त हुए कम-से-कम एक वर्ष बीत चुका हो। इसका अर्थ यह हुआ कि कम्पनी अपने कार्यकाल के पहले वर्ष में ही शेयर छूट पर निर्गमित नहीं कर सकेगी।

3) छूट पर शेयर निर्गमित करने के सम्बन्ध में कम्पनी की साधारण सभा में प्रस्ताव पारित करके अधिकार दिया जाना चाहिए तथा कम्पनी लॉ वोर्ड द्वारा इसकी अनुमति दी जानी चाहिए।

4) प्रस्ताव में छूट की अधिकतम दर दी जानी चाहिए, जो किसी भी दशा में 10 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। यदि कम्पनी लॉ वोर्ड अनुमति दे तो वह 10 प्रतिशत से अधिक ऊंची दर की भी अनुमति दे सकता है।

5) कम्पनी लॉ वोर्ड से अनुमति प्राप्त होने के पश्चात् दो माह के भीतर निर्गमन कर दिया जाना चाहिए या कम्पनी लॉ वोर्ड द्वारा बढ़ायी गयी अवधि के भीतर शेयरों को छूट पर निर्गमित कर देना चाहिए।

6) शेयरों के निर्गमन सम्बन्धी प्रत्येक प्रविवरण में शेयरों पर दिए गये छूट की राशि का तथा उस तिथि पर छूट का वह भाग जो अभी अपलिखित (write off) नहीं हुआ है, उसका विवरण दिया जाना चाहिए।

यदि उपर्युक्त प्रावधानों का उल्लंघन करके छूट पर शेयर नि...मत किए गये हैं, तो कम्पनी तथा उसके प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 50 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, शेयरों के वे आवंटिती, जो स्वयं को कम्पनी का सदस्य पंजीकृत करने की अनुमति देते हैं, शेयरों के सम्पूर्ण मूल्य का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होते हैं।

प्रीमियम पर शेयर निर्गमित करना (Issue of Shares at a Premium)

अनेक परिस्थितियां हो सकती हैं जब कम्पनी अपने शेयरों को अंकित मूल्य से अधिक पर निर्गमित करता है। इसे शेयरों को प्रीमियम पर निर्गमन करना कहते हैं। उदाहरणार्थ, जब 10 रुपये अंकित मूल्य के शेयर को 12 रुपये प्रति शेयर पर जारी किया जाता है तो यह प्रीमियम पर शेयर निर्गमन है तथा दो रुपये प्रति शेयर प्रीमियम की राशि है। शेयरों को प्रीमियम पर निर्गमित करने के सम्बन्ध में अधिनियम में कोई प्रतिबन्ध नहीं हैं। यदि बाजार में कम्पनी की प्रतिष्ठा अच्छी है तो वह अपने शेयरों को प्रीमियम पर बेच सकती है।

यद्यपि कम्पनी अधिनियम में शेयरों को प्रीमियम पर निर्गमित करने के सम्बन्ध में किन्हीं शर्तों की व्यवस्था नहीं की गई है, परन्तु प्रीमियम के रूप में प्राप्त राशि के उपयोग को नियन्त्रित किया गया है। प्रीमियम राशि को लाभ नहीं माना जा सकता और इसलिए इसका उपयोग लाभांश भुगतान करने के लिए नहीं किया जा सकता। प्रीमियम की राशि को एक अलग 'शेयर प्रीमियम खाते' में अन्तरित किया जाना चाहिए। यदि कम्पनी नकद के अतिरिक्त किसी अन्य प्रतिफल के बदले प्रीमियम पर शेयर निर्गमित करती है, तो प्रीमियम के बराबर राशि ''शेयर प्रीमियम खाते'' में अन्तरित कर दी जानी चाहिए।

'शेयर प्रीमियम खाते' की राशि का उपयोग केवल उन्हीं उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है जिनका वर्णन अधिनियम की धारा 78 में किया गया है। ये उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

i) कम्पनी के सदस्यों को पूर्णदत्त बोनस शेयर निर्गमित करने के लिए;
ii) कम्पनी के प्रारम्भिक व्ययों को अपलिखित करने के लिए;
iii) कम्पनी के शेयरों को जारी करने पर हुए व्यय, दिए गये कमीशन, या छूट की राशि को अपलिखित करने के लिए;
iv) कम्पनी के पूर्वाधिकार शेयरों या डिबेन्चरों के मोचन पर देय प्रीमियम का भुगतान करने के लिए।

कम्पनी के तुलन-पत्र में शेयर प्रीमियम राशि को अवश्य दिखाया जाना चाहिए, और यदि पूर्णतः या अंशतः इस राशि का उपयोग हो चुका है, तो यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि उपयोग किस प्रकार हुआ है। शेयर प्रीमियम राशि को कम्पनी का मूल रिजर्व नहीं समझना चाहिए क्योंकि यह पूंजीगत रिजर्व की तरह होता है।

बोध प्रश्न क

1) शेयरों के आवंटन से क्या आशय है?

....

....

....

2) 'अभिदान सूची खुलने' से क्या आशय है?

....

....

....

3) उन चार महत्वपूर्ण शर्तों को सूचीबद्ध कीजिए जिनके पूर्ण किए जाने पर ही कम्पनी शेयरों का आवंटन कर सकती है।

....

....

....

....

....

4) अनियमित आवंटन क्या होता है?

....

....

....

....

5) अनियमित आवंटन का क्या प्रभाव होता है?

....

....

....

....

6) उन उद्देश्यों को सूचीवद्ध कीजिए जिनके लिए शेयर प्रीमियम राशि का उपयोग किया जा सकता है।

....

....

....

....

7) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:
   i) कम्पनी के शेयरों का आवंटन .... के प्रस्ताव द्वारा किया जाना चाहिए।
   ii) प्रत्येक शेयर पर आवेदन राशि, शेयर के अंकित मूल्य से .... से कम नहीं होनी चाहिए।
   iii) यदि कम्पनी निर्गमित राशि का .... प्राप्त नहीं करती, तो वह शेयर आबंटित नहीं कर सकती।
   iv) यदि कम्पनी अभिदान सूची के बन्द होने की तिथि के .... दिनों के भीतर न्यूनतम अभिदान राशि प्राप्त नहीं करती, तो इसे .... दिनों के भीतर वह राशि वापिस लौटा देनी चाहिए।
   v) कम्पनी, ... की अनुमति से शेयरों को छूट पर जारी कर सकती है।
   vi) जब्त किए गये शेयरों के पुनः निर्गमन को शेयरों का आवंटन .... नहीं माना जा सकता।
   vii) अभिदान सूची खुलने की तिथि से तात्पर्य, प्रविवरण जारी करने के दिन से .... दिन के आरम्भ से है।

8) वताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत:
   i) प्रविवरण जारी करने के तुरन्त वाद कम्पनी शेयर आबंटित कर सकती है।
   ii) जव तक न्यूनतम अभिदान राशि प्राप्त नहीं हो जाती तव तक कम्पनी शेयर आबंटित नहीं कर सकती।
   iii) अति-अभिदान की दशा में, निदेशक आवेदन किए गये सभी शेयरों को आवंटित कर सकते हैं।
   iv) कम्पनी नकद के अतिरिक्त किसी अन्य प्रतिफल के बदले शेयर जारी नहीं कर सकती।
   v) व्यापार आरम्भ करने का अधिकार प्राप्त करने के छः माह के भीतर कम्पनी शेयरों को छूट पर जारी कर सकती है।
   vi) प्रीमियम पर शेयरों के निगर्मन पर कोई प्रतिवन्ध नहीं होता।
   vii) शेयर प्रीमियम राशि में से लाभांश का भुगतान किया जा सकता है।
   viii) अनियमित आवंटन व्यर्थ होता है।

9.6 शेयर प्रमाणपत्र (Share Certificate)

शेयर प्रमाण-पत्र कम्पनी द्वारा अपनी सार्वमुद्रा (Common seal) के अधीन निर्गमित प्रमाणपत्र होता है जिसमें किसी सदस्य द्वारा लिए गये शेयर तथा प्रत्येक अंश पर भुगतान की गई राशि निर्दिष्ट होती है। शेयर

प्रमाण-पत्र आवंटिती (allottee) या शेयरों के हस्तांतरिती के स्वामित्व का प्रत्यक्ष प्रमाण है। यह इस तथ्य की घोषणा है कि जिस व्यक्ति के नाम शेयर प्रमाण-पत्र जारी किया जाता है तथा जिसे यह दिया जाता है, वह व्यक्ति कम्पनी का सदस्य है। परन्तु यहां यह ध्यान रहे कि शेयर प्रमाणपत्र, परक्राम्य प्रलेख (negotiable instrument) नहीं होता है।

शेयर प्रमाणपत्र का रूप किसी भी प्रकार का हो सकता है, परन्तु एक वैध शेयर प्रमाणपत्र में निम्नलिखित ब्योरा अवश्य दिया जाना चाहिए:

i) कम्पनी का नाम; ii) शेयरधारी का नाम व पता; iii) उसके द्वारा लिए गये शेयरों की संख्या; iv) शेयरों का क्रमांक; v) प्रत्येक शेयर पर भुगतान की गयी राशि; vi) निर्गमन की तिथि; vii) शेयर प्रमाणपत्र की संख्या; viii) स्टॉम्प, तथा ix) दो निदेशकों तथा सचिव के हस्ताक्षर।

प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को, जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में सदस्य के रूप में लिखा गया है, कोई शुल्क दिए बिना अपने सब शेयरों के सम्बन्ध में एक शेयर प्रमाणपत्र प्राप्त करने का अधिकार है। शेयर प्रमाणपत्र को उसमें वर्णित सदस्य का उसमें निर्दिष्ट शेयरों पर स्वामित्व होने का प्रथमदृष्ट्या (prima facie) प्रमाण माना जाता है।

9.6.1 शेयर प्रमाणपत्र जारी करना

कम्पनी अधिनियम में वह समय-सीमा निर्धारित की गयी है जिसके अंतर्गत शेयर प्रमाण-पत्र सुपुर्द कर दिया जाना चाहिए। अधिनियम की धारा 113 के अनुसार, शेयर आबंटन की तिथि के तीन माह के भीतर तथा हस्तांतरण के पंजीयन की तिथि के दो माह के भीतर, प्रत्येक कम्पनी को शेयर प्रमाणपत्र, आबंटिती या हस्तांतरिती को सुपुर्द कर देने चाहिए। परन्तु उपयुक्त परिस्थितियों में कम्पनी लॉ बोर्ड इस अवधि को नौ माह तक बढ़ा सकता है।

यदि इन नियमों का पालन करने में त्रुटि की जाती है, तो कम्पनी तथा उसके प्रत्येक ऐसे दोषी अधिकारी पर, देरी के प्रत्येक दिन के लिए 500 रुपये तक का जुर्माना किया जा सकता है।

यदि कम्पनी शेयर प्रमाण-पत्र जारी करने में त्रुटि करती है तो वह सदस्य कम्पनी लॉ बोर्ड के पास अपनी शिकायत फाइल कर सकता है। तब कम्पनी लॉ बोर्ड, गलती दूर करने के लिए कम्पनी को सूचना देगा। यदि यह सूचना प्राप्त करने की तिथि से 10 दिन के भीतर कम्पनी इस गलती का सुधार नहीं करती, तब कम्पनी लॉ बोर्ड कम्पनी तथा उसके किसी भी अधिकारी को यह आदेश दे सकता है कि आदेश में निर्दिष्ट अवधि के भीतर गलती को ठीक कर दिया जाए।

9.6.2 शेयर प्रमाणपत्र का प्रभाव

आप पढ़ चुके हैं कि शेयर प्रमाणपत्र उसमें निर्दिष्ट व्यक्ति का उन शेयरों पर स्वामित्व होने का प्रथमदृष्ट्या प्रमाण होता है। शेयर प्रमाणपत्र के निम्नलिखित प्रभाव होते हैं:

i) **स्वामित्व का प्रमाण:** शेयर प्रमाणपत्र जारी कर दिए जाने पर उसमें जिस व्यक्ति का नाम लिखा होता है, कंपनी उन शेयरों पर उस व्यक्ति के स्वामित्व से इंकार नहीं कर सकती, वशर्ते उस व्यक्ति ने उन शेयरों को पूर्ण सद्विश्वास में तथा वैध हस्तांतरण विलेख के अन्तर्गत प्राप्त किया हो। परन्तु यह धारक के स्वामित्व की अंतिम कसौटी नहीं है। यदि किसी व्यक्ति ने जाली हस्तांतरण के आधार पर शेयर प्राप्त किए हैं, तो कम्पनी शेयरों का हस्तांतरण पंजीकृत करने से मना कर सकती है। आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि शेयर प्रमाणपत्र केवल स्वामित्व का प्रमाण है, यह स्वामित्व विलेख नहीं है। यह परक्राम्य लिखत भी नहीं है जिसकी सुपुर्दगी देने मात्र से स्वामित्व हस्तांतरित हो सके।

ii) **भुगतान के संबंध में बिबंध** (Estoppel as to payment): यह तो आप जानते ही हैं कि शेयर प्रमाण-पत्र में वह राशि लिखी होती है जो उन पर भुगतान की गई है। बाद में कम्पनी यह नहीं कह सकती कि शेयर प्रमाणपत्र में लिखी राशि का भुगतान नहीं हुआ है। उदाहरण के लिए यदि शेयर प्रमाणपत्र में यह लिखा है कि वे पूर्णदत्त हैं तो कम्पनी यह नहीं कह सकती कि वे शेयर पूर्णदत्त नहीं हैं।

9.6.3 शेयर प्रमाणपत्र की दूसरी प्रति

शेयर प्रमाणपत्र का नवीनीकरण अथवा उसके बदले दूसरी प्रति निम्नलिखित परिस्थितियों में जारी की जा सकती है:

अ) यह सिद्ध हो जाने पर कि प्रमाणपत्र नष्ट या गुम हो गया है; अथवा
ब) विरूपित अथवा विकृत या कट-फट जाने के कारण कम्पनी को लौटा दिये जाने पर।

शेयर प्रमाणपत्र पर यह तथ्य स्पष्ट तौर से लिखा जाना चाहिए कि यह दूसरी प्रति है। शेयर प्रमाणपत्र की दूसरी प्रति जारी करने के लिए कम्पनी दो रुपये प्रति शेयर प्रमाणपत्र से अधिक शुल्क नहीं ले सकती।

यदि कम्पनी कपट के इरादे से शेयर प्रमाणपत्र का नवीनीकरण करती है या दूसरी प्रति जारी करती है, तो कम्पनी पर 10,000 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है तथा कम्पनी के प्रत्येक दोषी अधिकारी को छः माह तक के कारावास अथवा 10,000 रुपये तक जुर्माने या दोनों से दंडित किया जा सकता है।

9.7 शेयर वारंट (Share Warrant)

शेयर वारंट ऐसा दस्तावेज है जिसमें यह लिखा होता है कि उसका वाहक उसमें निर्दिष्ट शेयरों का स्वामी है। शेयर वारंट कम्पनी की सार्वमुद्रा के अन्तर्गत जारी किया जाता है तथा इसमें यह स्पष्ट लिखा जाता है कि इसका वाहक इसमें निर्दिष्ट शेयरों का अधिकारी है। वाहक दस्तावेज होने के कारण, केवल सुपुर्दगी मात्र से इसे हस्तांतरित किया जा सकता है। अतः शेयर वारंट का धारक उसमें निर्दिष्ट शेयरों का हकदार होता है।

9.7.1 शेयर वारंट सम्बन्धी नियम

शेयरों द्वारा सीमित सार्वजनिक कम्पनी अपनी सार्वमुद्रा के अन्तर्गत निम्नलिखित परिस्थितियों में शेयर वारंट जारी कर सकती है:
अ) यदि इसके लिए अन्तर्नियमों द्वारा अधिकार दिया जाए;
ब) शेयर पूर्णदत्त होने चाहिए; तथा
स) केन्द्र सरकार की पूर्व अनुमति प्राप्त कर ली गई है।

उपर्युक्त से आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि केवल सार्वजनिक कम्पनी ही पूर्णदत्त शेयरों के बदले शेयर वारंट जारी कर सकती हैं। **यह शेयर प्रमाणपत्र के बदले जारी किया जाता है।**

शेयर वारंट जारी करने पर कम्पनी अपने सदस्यों के रजिस्टर से उस सदस्य का नाम काट देती है जिसे शेयर वारंट जारी किए गये हैं तथा उसके स्थान पर यह विवरण लिख दिया जाता है कि इनके बदले शेयर वारंट जारी कर दिए गये हैं तथा शेयर वारंट जारी करने की तिथि भी लिख दी जाती है।

शेयर वारंट का धारक, जब भी चाहे, अपने शेयर वारंट को कम्पनी को समर्पण करके रद्द करा सकता है। कम्पनी के अन्तर्नियमों के अधीन, कोई भी शेयर वारंट धारक, निदेशक मंडल द्वारा निर्धारित फीस दे कर अपना नाम कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में दर्ज करवा सकता है।

शेयर वारंट जारी किए जाने पर शेयरधारी का नाम सदस्यों के रजिस्टर में से काट दिया जाता है, अतः कम्पनी के लिए यह जानना सम्भव नहीं होता कि वह लाभांश का भुगतान किसे करे। अतः लाभांश का भुगतान करने के लिए शेयर वारंट के साथ कूपन लगा दिए जाते हैं, तथा कम्पनी के पास कूपन प्रस्तुत करने पर ही उन्हें लाभांश का भुगतान किया जाता है।

शेयर वारंट धारक सामान्यतः कम्पनी का सदस्य नहीं होता। यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों में तत्सम्बन्धी प्रावधान है तो शेयर वारंट धारक को कम्पनी का सदस्य माना जा सकता है और तब वह कम्पनी की सभाओं में भाग लेने तथा मतदान करने का अधिकारी होता है।

9.7.2 शेयर प्रमाणपत्र तथा शेयर वारंट में अन्तर

आप शेयर प्रमाणपत्र और शेयर वारंट की प्रकृति के बारे में पढ़ चुके हैं, अतः आप अब इन दोनों में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे। इन दोनों में निम्नलिखित अन्तर हैं:

i) शेयर प्रमाणपत्र निजी व सार्वजनिक, दोनों प्रकार की कम्पनियां जारी कर सकती हैं, जबकि शेयर वारंट केवल सार्वजनिक कम्पनियां ही जारी कर सकती हैं।

ii) शेयर प्रमाणपत्र का निर्गमन पूर्णदत्त या अपूर्णदत्त दोनों ही प्रकार के शेयरों के लिए किया जाता है परन्तु शेयर वारंट केवल पूर्णदत्त शेयरों के बदले ही जारी किए जा सकते हैं।

iii) शेयर प्रमाणपत्र जारी करना कम्पनी का सांविधिक कर्तव्य होता है तथा इसके लिए केन्द्र सरकार की अनुमति नहीं लेनी पड़ती, परन्तु शेयर वारंट जारी करने के लिए केन्द्र सरकार की अनुमति अवश्य ही लेनी होती है।

iv) शेयर प्रमाणपत्र का धारक कम्पनी का सदस्य होता है। परन्तु शेयर वारंट के धारक को सामान्यतः कम्पनी का सदस्य नहीं समझा जाता, क्योंकि शेयर वारंट जारी करते समय शेयरधारी का नाम सदस्यों के रजिस्टर में से काट दिया जाता है। परन्तु यदि अन्तर्नियमों में तत्सम्बन्धी प्रावधान हो तो अन्तर्नियमों में निर्दिष्ट उद्देश्यों के लिए उन्हें कम्पनी का सदस्य समझा जा सकता है।

v) शेयर प्रमाणपत्र का हस्तांतरण, एक हस्तांतरण-विलेख भरकर उसे शेयर प्रमाणपत्र के साथ कम्पनी के पास जमा कराके किया जाता है, परन्तु शेयर वारंट का हस्तांतरण वारंट की सुपुर्दगी देने से ही हो जाता है।

vi) शेयरों के हस्तांतरण करने पर स्टाम्प फीस चुकाई जाती है, परन्तु शेयर वारंट के हस्तांतरण पर स्टाम्प फीस चुकाने की कोई आवश्यकता नहीं होती।

vii) शेयर प्रमाणपत्र परक्राम्य लिखत नहीं होता है, परन्तु शेयर-वारंट को परक्राम्य लिखत माना जाता है।

बोध प्रश्न ख

1) शेयर प्रमाणपत्र क्या होता है?

....

....

....

....

2) शेयर प्रमाणपत्र जारी करने का क्या उद्देश्य है?

....

....

....

3) शेयर प्रमाणपत्र कम्पनी के ऊपर दो प्रकार के विवंध (estoppel) लगाता है, उन्हें सूचीवद्ध कीजिए।

....

....

....

4) शेयर वारंट क्या होता है?

....

....

....

5) शेयर वारंट जारी करने से सम्बन्धित शर्तों को सूचीवद्ध कीजिए।

....

....

....

....

6) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:
   i) शेयर प्रमाणपत्र ………… होता है।
   ii) प्रत्येक कम्पनी को आवंटन की तिथि के ………… माह के भीतर शेयर प्रमाणपत्र जारी कर देने चाहिए।
   iii) शेयर वारंट केवल ………… से ही हस्तांतरणीय होता है।
   iv) शेयर वारंट पर लाभांश ………… द्वारा दिया जाता है।
   v) शेयर वारंट केवल ………… द्वारा ही जारी किए जा सकते हैं।

7) वताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:
   i) शेयर प्रमाणपत्र जारी करने के लिए केन्द्र सरकार की अनुमति आवश्यक है।
   ii) शेयर प्रमाणपत्र पूर्णदत्त अथवा अपूर्णदत्त हो सकता है।
   iii) शेयर प्रमाणपत्र को केवल सुपुर्दगी मात्र से हस्तांतरित किया जा सकता है।
   iv) यदि यह सिद्ध किया जा सके कि मूल शेयर प्रमाणपत्र नष्ट या गुम हो गया है तो शेयरधारी उसकी दूसरी प्रति प्राप्त करने का अधिकारी होता है।
   v) शेयर वारंट परक्राम्य लिखत होता है।
   vi) शेयर वारंट मूलतः निर्गमित नहीं किए जा सकते।
   vii) अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत किए जाने पर ही शेयर वारंट जारी किए जा सकते हैं।

9.8 शेयरों पर मांग

जव कम्पनी शेयर निर्गमित करती है तो आवेदनकर्ताओं से साधारणतः शेयरों के पूरे मूल्य की मांग एक किश्त में नहीं की जाती। आरम्भ में उनसे केवल आवेदन राशि (application money) की ही मांग की जाती है तथा शेष राशि का भुगतान वाद में किया जाता है। शेयरों के आवंटन के समय कुछ राशि देय होती है, इसे 'आवंटन राशि' (allotment money) कहते हैं। शेष राशि कम्पनी किस्तों में मांग करती है। प्रत्येक किस्त को 'मांग' (call) कहा जाता है। यहां आप यह याद रखें कि आवेदन करते समय तथा आवंटन पर जो राशि भुगतान की जाती है उन्हें 'मांग' नहीं कहते हैं।

'मांग' की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है, मांग कम्पनी द्वारा शेयरधारियों से की गई वह मांग है कि वे प्रत्येक शेयर पर वकाया राशि का पूर्ण अथवा अंशतः भुगतान कर दें तथा यह मांग कम्पनी अपने जीवन-काल में कभी भी कर सकती है।

9.8.1 वैध मांग के आवश्यक तत्व

अधिनियम की धारा 36(2) के अनुसार, शेयरों पर देय अदत्त राशि, सदस्य पर कम्पनी के ऋण के रूप में देय मानी जाती है। अतः जव कम्पनी ने शेयरधारियों से कोई मांग की है, तो शेयरधारी मांगी गई राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होता है। परन्तु इस ऋण या मांग की राशि भुगतान करने का दायित्व तभी उत्पन्न होगा जव वैध मांग की गई हो। वैध मांग के आवश्यक तत्व निम्नलिखित हैं:

i) निदेशक मंडल के प्रस्ताव द्वारा ही मांग की जा सकती है। यह प्रस्ताव उचित रूप से वुलाई गई निदेशक मंडल की सभा में पारित किया जाना चाहिए।

ii) प्रस्ताव में मांग की राशि, भुगतान के समय तथा स्थान का वर्णन अवश्य होना चाहिए।

iii) एक ही वर्ग के सभी शेयरों पर समान रूप से मांग की जानी चाहिए अर्थात् एक ही वर्ग के शेयरधारियों में कोई भेद-भाव नहीं करना चाहिए।

iv) मांग करने के अधिकार की प्रकृति न्यास जैसी है, अतः निदेशकों द्वारा इस अधिकार का उपयोग पूर्ण-सद्‌निष्ठापूर्वक तथा कम्पनी के लाभ के लिए किया जाना चाहिए। निदेशकों को स्वयं अपने लाभ के लिए मांग नहीं करनी चाहिए, यदि कोई मांग निदेशकों के लाभ के लिए की गई है तो वह मांग वैध नहीं होती।

v) अन्तर्नियमों के प्रावधानों के अनुसार मांग की जानी चाहिए, कुछ नियम इस प्रकार हैं:
   (अ) प्रत्येक मांग की अधिकतम राशि शेयर के अंकित मूल्य के 25 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए।
   (व) दो मांगों के वीच कम-से-कम एक माह का अन्तर होना चाहिए।

(स) प्रत्येक सदस्य को कम-से-कम 14 दिन का नोटिस अवश्य देना चाहिए।
(द) निदेशक मंडल को मांग का खंडन (revoke) या स्थगित करने का अधिकार होता है।

यदि उपर्युक्त नियमों का उल्लंघन करके कोई मांग की गई है तो उसे अवैध मांग माना जाता है तथा शेयरधारी उस मांग का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं होते।

9.8.2 मांग का अग्रिम भुगतान (Calls in Advance)

कम्पनी अधिनियम की धारा 92(1) के द्वारा कम्पनी को अधिकार दिया गया है कि वह किसी भी शेयरधारी से ऐसी बकाया राशि स्वीकार कर सकती है जिसके लिए अभी कम्पनी ने मांग नहीं की है। इसके अनुसार, अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत किए जाने पर, कम्पनी किसी भी शेयरधारी से अदत्त धन के लिए मांग किए बिना भी उससे वह सारी अदत्त धनराशि या उसके कुछ भाग का भुगतान स्वीकार कर सकती है।

परन्तु शेयरधारी को इस अग्रिम भुगतान के लिए कोई अतिरिक्त मतदान अधिकार तब तक प्राप्त नहीं होता जब तक कि यह राशि मांग के रूप में वास्तव में देय न बन जाए। यहां यह स्मरण रखें कि अग्रिम राशि का भुगतान केवल कम्पनी के हित में ही स्वीकार किया जाना चाहिए।

धारा 93 के अनुसार, यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा अधिकार दिया हो, तो वह प्रत्येक शेयर पर प्रदत्त राशि के अनुपात में लाभांश दे सकती है। अन्तर्नियमों में मांग की अग्रिम राशि पर ब्याज देने का प्रावधान किया जा सकता है। परन्तु ब्याज की दर 6 प्रतिशत वार्षिक से अधिक नहीं हो सकती, जब तक कि कम्पनी ने अपनी साधारण सभा में अन्यथा निर्णय न लिया हो। ऐसे शेयरधारी जिन्होंने मांग के बिना ही अग्रिम राशि का भुगतान कर दिया है, वे उस अग्रिम राशि व उस पर देय ब्याज के लिए कम्पनी के लेनदार माने जाते हैं। जब अग्रिम राशि पर ब्याज देने का निर्णय किया जाता है, तो लाभ न होने पर यह ब्याज पूंजी में से भी दिया जा सकता है। बाद में, जब कभी भी कम्पनी 'मांग' करती है तो प्राप्त अग्रिम राशि को उस मांग के प्रति समायोजित किया जाता है तथा तब शेयरधारी उसके लिए मतदान का अधिकार भी प्राप्त कर लेते हैं।

9.9 शेयरों को ज़ब्त करना (Forefeiture of Shares)

आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी अपने शेयरधारियों से शेयर की सम्पूर्ण राशि एक ही किस्त में नहीं मांगती। जब कभी भी आवश्यकता होती है तब मांग की जाती है। यदि कोई शेयरधारी निर्धारित समय के भीतर किसी वैध मांग की राशि का भुगतान करने में त्रुटि करता है, तो कम्पनी को दो विकल्प उपलब्ध हैं: (i) कम्पनी राशि वसूल करने के लिए मुकदमा दायर कर सकती है, अथवा (ii) कम्पनी उन शेयरों को जब्त कर सकती है। पहला विकल्प एक लम्बी प्रक्रिया है, अतः कम्पनियां साधारणतः दूसरे विकल्प अर्थात् शेयरों को जब्त करने की विधि को ही अपनाती है।

'ज़ब्ती' शब्द से आशय है उन शेयरों को सदस्य से ले लेना। इससे शेयरधारी का अपनी सम्पत्ति पर अधिकार छिन जाता है। शेयरों को केवल तभी ज़ब्त किया जा सकता है जब कम्पनी के अन्तर्नियमों में इस सम्बन्ध में प्रावधान हो। आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी मांग या मांग की किस्त के भुगतान न किए जाने के कारण ही शेयरों को ज़ब्त किया जा सकता है, सदस्यों द्वारा देय किसी अन्य ऋण के लिए नहीं।

शेयरों की ज़ब्ती के सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम लागू होते हैं:

i) शेयरों को ज़ब्त करने का अधिकार अन्तर्नियमों में दिया होना चाहिए।

ii) मांग का भुगतान नहीं किए जाने पर ही शेयरों को ज़ब्त किया जा सकता है। किसी अन्य आधार पर शेयरों की ज़ब्ती अवैध होती है।

iii) कम्पनी द्वारा शेयरधारी को मांग की एक उचित सूचना भेजकर मांगी गई धनराशि को एक निश्चित अवधि के भीतर भुगतान कर देने की चेतावनी दी जानी चाहिए तथा इस चेतावनी में यह भी स्पष्ट लिखा जाना चाहिए कि धन का भुगतान नहीं करने पर शेयर ज़ब्त कर लिए जाएंगे। शेयरधारी को भुगतान करने के लिए कम-से-कम 14 दिन की सूचना अवश्य दी जानी चाहिए। इस सूचना में देय धनराशि की ठीक-ठीक राशि भी लिखी जानी चाहिए। यदि इस सूचना में कोई भी कमी रह जाती है, तो ज़ब्ती अवैध हो जाती है।

iv) निदेशक मंडल को शेयरों को ज़ब्त करने के सम्बन्ध में प्रस्ताव अवश्य पारित करना चाहिए।

v) शेयरों को ज़ब्त करने के अधिकार का उपयोग सद्भावनापूर्वक एवं कम्पनी के हित के लिए ही करना चाहिए। यदि किसी मित्र का दायित्व समाप्त करने के लिए शेयरों को ज़ब्त किया जाता है, तो यह अवैध होगा।

ज़ब्ती का प्रभाव

अ) शेयरधारी, ज़ब्त किए गये शेयरों के सम्बन्ध में कम्पनी का सदस्य नहीं रहता। वह अपने सब अधिकार खो देता है। शेयरों पर भुगतान की गई राशि कम्पनी द्वारा ज़ब्त कर ली जाती है। शेयर ज़ब्त किए जाने पर, उस व्यक्ति का नाम सदस्यों के रजिस्टर से काट दिया जाता है।

ब) भुगतान न की गई राशि के लिए, कम्पनी शेयरधारी पर मुकदमा दायर नहीं कर सकती। परन्तु अन्तर्नियमों के द्वारा उसे अदत्त मांग की राशि के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है तथा शेयरधारी पर मुकदमा चलाया जा सकता है, परन्तु शेयरों को ज़ब्त करने की तिथि के तीन वर्षों के भीतर कार्यवाही करनी चाहिए।

स) यदि शेयरों को ज़ब्त करने के 12 माह के भीतर कम्पनी का समापन हो जाता है तो कम्पनी के भूतपूर्व शेयरधारी को अंशदाताओं की तालिका 'B' में रखा जा सकता है।

द) ज़ब्ती के पश्चात्, वे शेयर कम्पनी की सम्पत्ति बन जाते है, तथा कम्पनी जिस प्रकार भी चाहे उनका निपटारा कर सकती है। साधारणतः ज़ब्त किए गये शेयरों को पुनः जारी कर दिया जाता है।

यदि शेयरों को गलत ढंग से ज़ब्त किया गया है, तो सम्बन्धित शेयरधारी ज़ब्ती को रद्द कराने के लिए कम्पनी पर मुकदमा कर सकता है। परन्तु यदि ज़ब्त किए गये शेयरों के पुनः जारी किए जाने के कारण यह सम्भव नहीं हो तब कम्पनी पर हर्जाने के लिए मुकदमा किया जा सकता है।

9.10 ज़ब्त शेयरों का पुनः निर्गमन (Reissue of Forefeited Shares)

शेयरों के ज़ब्त किए जाने पर, वे कम्पनी की सम्पत्ति बन जाते हैं तथा ज़ब्त किए गये शेयरों की सीमा तक, कम्पनी की प्रदत्त पूंजी घट जाती है। अतः, ज़ब्त किए गये शेयरों को प्रायः पुनः जारी कर दिया जाता है। ज़ब्त किए गये शेयरों को किसी भी मूल्य पर जारी किया जा सकता है अर्थात् छूट पर भी। परन्तु **छूट की राशि उन शेयरों पर ज़ब्त राशि से अधिक नहीं हो सकती।** निदेशक मंडल द्वारा प्रस्ताव पारित करके शेयरों को पुनः जारी किया जा सकता है। शेयरों के पुनः जारी किए जाने पर, शेयरों का क्रेता उन शेयरों पर समस्त भावी मांगों का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा, वह उस मांग के लिए भी उत्तरदायी होता है जिसके लिए शेयरों को ज़ब्त किया गया है। क्रेता का नाम सदस्यों के रजिस्टर में दर्ज कर लिया जाता है तथा यदि मूल शेयरधारी ने शेयर प्रमाण-पत्र कम्पनी को लौटा दिए हैं, तो उन्हीं शेयरों को क्रेता के नाम जारी कर दिया जाता है, अन्यथा एक नया प्रमाणपत्र क्रेता के नाम जारी किया जाता हैं।

शेयरों की ज़ब्ती के सम्बन्ध में की गई किसी अनियमितता या क्रियाविधि में की गई किसी अवैधता से शेयरों के क्रेता के स्वामित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इस सम्बन्ध में यह याद रखना चाहिए कि ज़ब्त किए गये शेयरों को पुनः जारी करने को शेयरों का विक्रय कहते हैं, यह शेयरों का आवंटन नहीं कहलाता। अतः आबंटन विवरण रजिस्ट्रार के पास फाइल करना भी आवश्यक नहीं है।

9.11 शेयरों का अभ्यर्पण (Surrender of Shares)

शेयरधारी के स्वेच्छा से कार्य को अभ्यर्पण कहते हैं, इसके अन्तर्गत शेयरधारी अपने शेयर कम्पनी के पास रद्द करने के लिए वापिस भेज देता है। न तो कम्पनी अधिनियम में और न ही तालिका 'A' में शेयरों के अभ्यर्पण के सम्बन्ध में कोई प्रावधान हैं। परन्तु कम्पनी के अन्तर्नियमों में अपूर्ण-दत्त शेयरों के अभ्यर्पण के सम्बन्ध में ऐसी परिस्थितियों में प्रावधान किया जा सकता है जब कि शेयरों को ज़ब्त करना न्यायोचित हो।

जब कम्पनी को शेयरों का अभ्यर्पण किया जाता है, तो शेयरधारी को कुछ भी राशि वापिस नहीं की जाती। ऐसा इसलिए है कि यदि कुछ राशि वापिस की जाती है तो यह कम्पनी द्वारा अपने शेयरों का क्रय करना माना जाएगा जो कम्पनी अधिनियम की धारा 77 के अनुसार वर्जित है।

यदि अन्तर्नियमों द्वारा शेयरों के अभ्यर्पण की अनुमति दी जाए तो निम्नलिखित परिस्थितियों में शेयरों का

अभ्यर्पण किया जा सकता है:

i) यदि शेयरों का अभ्यर्पण उसी अंकित मूल्य के नये शेयरों के बदले स्वीकार किया जाता है, क्योंकि इससे कम्पनी की शेयर पूंजी में कोई कमी नहीं होती है।

ii) यदि परिस्थितियां ऐसी हों कि वहां पर शेयरों की जब्ती पूर्णतः न्यायोचित है, क्योंकि अभ्यर्पण ज़ब्ती का छोटा मार्ग है।

यदि उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त, किसी अन्य कारणों से शेयरों के अभ्यर्पण को स्वीकार किया जाता है, तो यह अवैध होता है।

वैध अभ्यर्पण की स्थिति में, वह व्यक्ति कम्पनी का सदस्य नहीं रहता, परन्तु उसका नाम अंशदाताओं की तालिका 'B' में लिखा जा सकता है। ऐसा इसलिए है कि यदि अभ्यर्पण के 12 माह के भीतर कम्पनी का समापन हो जाता है, तो वह भूतपूर्व सदस्य की हैसियत से उत्तरदायी होगा। यदि शेयरों का अभ्यर्पण गैर-कानूनी तरह से हुआ है तथा उन शेयरों को कम्पनी ने पुनः जारी न कर दिया हो, तो कितना भी समय बीत चुकने के बाद कभी भी वह व्यक्ति सदस्यों के रजिस्टर में अपना नाम लिखे जाने के लिए आवेदन कर सकता है।

शेयरों की ज़ब्ती तथा अभ्यर्पण, दोनों ही दशाओं में उस शेयरधारी की सदस्यता समाप्त हो जाती है। परन्तु ज़ब्ती की स्थिति में यह अनिवार्यतः या कम्पनी द्वारा जबरदस्ती से की जाती है, परन्तु शेयरों का अभ्यर्पण सदस्य द्वारा स्वैच्छिक कार्य है, जिससे कि वह शेयरों के ज़ब्त किए जाने की बदनामी से बच सके।

बोध प्रश्न ब

1) 'मांग' से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

2) वैध मांग के तीन लक्षणों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

3) शेयरों को ज़ब्त करने के कारण बताइए।

....

....

....

4) शेयरों का अभ्यर्पण कब वैध होता है?

....

....

....

5) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत:

   i) कम्पनी का कोई भी निदेशक अपने आप 'मांग' कर सकता है।

   ii) मांग की नोटिस में देय राशि, भुगतान की तिथि तथा भुगतान का स्थान लिखा होना चाहिए।

   iii) शेयरों पर की जाने वाली मांग समान रूप से की जानी चाहिए।

   iv) शेयरों की ज़ब्ती का अर्थ पूंजी में कमी करना नहीं माना जाता।

   v) शेयरों की ज़ब्ती किसी मांग या किसी अन्य ऋण का भुगतान न करने के कारण की जा सकती है।

vi) ज़ब्त किए गये शेयरों को या तो रद्द किया जा सकता है या फिर निदेशक मंडल की इच्छानुसार पुनः जारी क्रिया जा सकता है।

vii) ज़ब्त शेयरों को छूट पर जारी किया जा सकता है, परन्तु छूट की राशि उन शेयरों पर ज़ब्त की गई राशि से अधिक नहीं होनी चाहिए।

viii) शेयरों का अभ्यर्पण और शेयरों को ज़ब्त करना एक समान है।

9.12 सारांश

शेयर या डिवेन्चर जारी करके धन एकत्रित करने की प्रक्रिया में शेयरों का आवंटन एक महत्वपूर्ण कदम है। जव कोई व्यक्ति किसी विज्ञापन अथवा प्रविवरण के आधार पर कम्पनी के कुछ शेयर खरीदने के लिए आवेदन करता है और कम्पनी उसके प्रस्ताव को स्वीकार करके उसे शेयर आवंटित कर देती है, तो इससे कम्पनी और उस आवेदक के मध्य एक वैध अनुवन्ध उत्पन्न हो जाता है। जव तक न्यूनतम अभिदान राशि कम्पनी को प्राप्त नहीं हो जाती तव-तक कम्पनी को आवंटन नहीं करना चाहिए।

जव तक शेयरों के अंकित मूल्य के 5 प्रतिशत के वरावर आवेदन राशि प्राप्त नहीं हो जाती तथा इस प्राप्त राशि को किसी अनुसूचित वैंक में जमा नहीं कराया जाता, तव तक आवंटन नहीं किया जाना चाहिए। कम्पनी के शेयरों को किसी एक या अधिक मान्य स्टॉक एक्सचेज में सूचीयत होना चाहिए। यदि शेयर सूचीयत नहीं हैं, तो आवंटन अनियमित होता है।

शेयरों को सम मूल्य पर या छूट पर या प्रीमियम पर जारी किया जा सकता है। शेयरों को छूट पर केवल तभी जारी किया जा सकता है जव शेयरधारियों की सभा में एक प्रस्ताव पारित किया गया हो तथा कम्पनी लॉ वोर्ड से इसकी अनुमति प्राप्त हो गई हो। जव शेयर प्रीमियम पर जारी किए जाते हैं तो प्रीमियम की राशि का उपयोग लाभांश वितरित करने के लिए नहीं किया जा सकता। प्रीमियम राशि का उपयोग केवल आरम्भिक खर्चों या पूंजीगत हानियों को अपलिखित करने के लिए या वोनस शेयरों के जारी करने के लिए ही किया जा सकता है।

शेयर प्रमाणपत्र, सदस्य का उन शेयरों पर स्वामित्व का प्रमाण होता है। जब किसी व्यक्ति को शेयर आवंटित किए जाते है तो उसे कम्पनी से शेयर प्रमाणपत्र प्राप्त करने का अधिकार होता है। शेयर प्रमाणपत्र कम्पनी की सार्वमुद्रा के अधीन जारी किया जाता है तथा इसमें सदस्य का नाम व पता, प्रमाणपत्र संख्या, शेयरों की संख्या, प्रति शेयर भुगतान की गई राशि आदि का विवरण दिया होता है। यदि मूल शेयर प्रमाण-पत्र गुम हो जाता है अथवा नष्ट या कट-फट जाता है तो कुछ शर्तों के अधीन कम्पनी उसके बदले दूसरा शेयर प्रमाण-पत्र दे सकती है।

शेयर वारंट ऐसा दस्तावेज़ है जिससे यह प्रकट होता है कि उसमें लिखे शेयरों का स्वामी वारंट का धारक है। इसे सुपुर्दगी मात्र से हस्तांतरित किया जा सकता है।

शेयरों की सम्पूर्ण राशि एक ही किस्त में नहीं मांगी जाती। शेयरों के आबंटन के पश्चात् कम्पनी शेयरों पर वकाया राशि एक या दो किस्तों में मांग सकती है। प्रत्येक मांग निदेशक मंडल द्वारा प्रस्ताव पारित करके, समान रूप से, कम्पनी के लाभ के लिए तथा कम्पनी के अन्तर्नियमों के प्रावधानों के अनुरूप की जानी चाहिए।

यदि कोई शेयरधारी निर्धारित समय के अन्दर मांग की राशि का भुगतान नहीं करता, तो उसके शेयरों को ज़ब्त किया जा सकता है। परन्तु शेयर ज़ब्त करने से पहले कम्पनी द्वारा शेयरधारी को उचित सूचना अवश्य दी जानी चाहिए। ज़ब्ती केवल तभी वैध होती है जब इसके लिए निदेशक मंडल ने प्रस्ताव पारित किया हो। ज़ब्त किए गये शेयरों को पुनः जारी किया जा सकता है, इसे शेयरों का आबंटन नहीं कहते बल्कि यह तो पहले से जारी शेयरों की पुनः विक्री है।

शेयरधारी द्वारा जव शेयर स्वेच्छा से कम्पनी को रद्द करने के लिए दिए जाते हैं, तो इसे शेयरों का अभ्यर्पण कहते हैं। शेयरों का अभ्यर्पण केवल तभी स्वीकार किया जाना चाहिए जव उनकी जव्ती न्यायोचित हो।

9.13 शब्दावली

आबंटन (Allotment): किसी व्यक्ति को उसके आवेदन करने पर निश्चित संख्या में शेयर देना।

छूट पर शेयर जारी करना (Issue of shares at discount): शेयरों के अंकित मूल्य से कम मूल्य पर शेयर जारी करना।

प्रीमियम पर शेयर जारी करना (Issue of shares at premium): अंकित मूल्य से अधिक मूल्य पर शेयर जारी करना।

शेयर प्रमाणपत्र (Share certificate): कम्पनी की सार्वमुद्रा के अधीन जारी प्रमाणपत्र जिसमें किसी सदस्य द्वारा लिए गये शेयरों की संख्या व भुगतान की गई राशि लिखी होती है।

शेयर वारंट (Share warrant): कम्पनी की सार्वमुद्रा के अधीन जारी ऐसा दस्तावेज़ जो उसके वाहक को उसमें निर्दिष्ट संख्या वाले शेयरों का स्वामी बतलाता है।

मांग (Call): शेयरधारी द्वारा कम्पनी को देय एक किस्त।

जब्ती (Forefeiture): मांग की राशि का भुगतान न करने पर शेयरों को वापस ले लेना, इससे शेयरधारी का उन शेयरों पर अधिकार छिन जाता है।

शेयरों का अभ्यर्पण (Surrender of shares): शेयरों को स्वेच्छा से कम्पनी को लौटाना।

9.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 7) i) निदेशक मंडल ii) पांच प्रतिशत iii) 90 प्रतिशत iv) 90, 10 v) कम्पनी लॉ वोर्ड vi) नहीं vii) पांचवें

8) i) गलत ii) सही iii) गलत iv) गलत v) गलत vi) सही vii) गलत viii) गलत

ख 6) i) स्वामित्व का प्रमाण ii) तीन iii) सुपुर्दगी iv) कूपनों v) सार्वजनिक कम्पनियों

7) i) गलत ii) सही iii) गलत iv) सही v) सही vi) सही vii) सही

ग 5) i) गलत ii) सही iii) सही iv) सही v) गलत vi) सही vii) सही viii) गलत

9.15 स्वपरख प्रश्न

1) शेयरों के आबंटन की विधि का वर्णन कीजिए।
2) अनियमित आबंटन क्या होता है? इसके क्या परिणाम होते हैं?
3) आबंटन के विवरण से क्या तात्पर्य है?
4) कोई कम्पनी किन परिस्थितियों में शेयरों को छूट पर जारी कर सकती है?
5) शेयरों को प्रीमियम पर कब जारी किया जा सकता है? प्रीमियम राशि का उपयोग किन उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है?
6) शेयर प्रमाणपत्र क्या होता है? यह कब जारी किया जाना चाहिए? कम्पनी क्या शेयर प्रमाणपत्र की दूसरी प्रति जारी कर सकती है, यदि हां, तो कब?
7) शेयर वारंट क्या है? शेयर प्रमाणपत्र तथा शेयर वारंट में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
8) 'मांग' से क्या आशय है? वैध मांग के आवश्यक लक्षण क्या हैं?
9) शेयरों को जब्त करने की विधि की व्याख्या कीजिए। ज़ब्ती का क्या प्रभाव होता है? शेयरों की ज़ब्ती, शेयरों के अभ्यर्पण से किस प्रकार भिन्न होती है?

नोटः इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 10 कम्पनी की सदस्यता (Membership in a Company)

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 सदस्य एवं शेयरधारी
- 10.2.1 सदस्य की परिभाषा
- 10.2.2 सदस्य एवं शेयरधारी में अन्तर
- 10.2.3 सदस्य कौन वन सकता है?
- 10.2.4 सदस्यों की संख्या

10.3 सदस्य वनने की विधियां
10.4 सदस्यता की समाप्ति
10.5 सदस्यों के अधिकार
10.6 सदस्यों के दायित्व
10.7 शेयरों का हस्तांतरण
- 10.7.1 शेयर हस्तांतरित करने की विधि
- 10.7.2 कोरा हस्तांतरण
- 10.7.3 जाली हस्तांतरण

10.8 शेयरों का पारेषण
10.9 हस्तांतरण एवं पारेषण में अन्तर
10.10 सदस्यों का रजिस्टर
- 10.10.1 सदस्यों की सूची
- 10.10.2 सदस्यों का विदेशी रजिस्टर
- 10.10.3 रजिस्टर का निरीक्षण
- 10.10.4 रजिस्टर को वन्द रखना
- 10.10.5 रजिस्टर में संशोधन

10.11 सारांश
10.12 शव्दावली
10.13 वोध प्रश्नों के उत्तर
10.14 स्वपरख प्रश्न

10.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- सदस्य के अर्थ को स्पष्ट कर सकें;
- सदस्य एवं शेयरधारी में अन्तर कर सकें;
- सदस्य बनने की विधियों का वर्णन कर सकें;
- उन परिस्थितियों की व्याख्या कर सकें जिनमें कोई व्यक्ति सदस्य नहीं रहता;
- सदस्यों के अधिकार एवं दायित्वों को सूचीवद्ध कर सकें;
- शेयरों के हस्तांतरण की विधि का वर्णन कर सकें;
- हस्तांतरण एवं पारेषण में अन्तर स्पष्ट कर सकें; और
- सदस्यों के रजिस्टर को रखने से सम्वन्धित नियमों का वर्णन कर सकें।

10.1 प्रस्तावना

आप पहले पढ़ चुके हैं कि पंजीकृत कम्पनी का अपना पृथक निगमित अस्तित्व होता है तथा यह अपने

सदस्यों से अलग होती है। 'सदस्य' तथा 'शेयरधारी' शब्दों को एक दूसरे के समानार्थक शब्दों के रूप में प्रयोग किया जाता है। परन्तु कानून की दृष्टि से इन दोनों में बहुत ही बारीक अन्तर है। इस इकाई में आप 'सदस्य' शब्द के वास्तविक अर्थ, सदस्य बनने की विधियों, सदस्यता समाप्त होने की परिस्थितियों तथा सदस्यों के अधिकार एवं दायित्वों के सम्बन्ध में अध्ययन करेंगे। इसके अतिरिक्त, आप शेयर हस्तांतरित करने की विधि, शेयरों के हस्तांतरण एवं पारेषण में अन्तर तथा सदस्यों के रजिस्टर को रखने से सम्बन्धित नियमों के बारे में भी पढ़ेंगे।

10.2 सदस्य एवं शेयरधारी (Member and Shareholder)

सामान्यतः प्रयोग में 'सदस्य' एवं 'शेयरधारी', इन दोनों शब्दों को पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किया जाता है। परन्तु कानून की दृष्टि से इन दोनों में अन्तर है। 'शेयरधारी' वह व्यक्ति होता है जिसके पास शेयर हैं या जो शेयरों का स्वामी है, जबकि 'सदस्य' वह व्यक्ति होता है जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिखा होता है। कुछ स्थितियों में, एक व्यक्ति कम्पनी का सदस्य हो सकता है परन्तु शेयरधारी नहीं अथवा वह शेयरधारी तो हो सकता है परन्तु सदस्य नहीं। उदाहरण के लिए, बिना शेयर-पूंजी वाली गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी में सदस्य तो होंगे परन्तु शेयरधारी नहीं होंगे। इसी प्रकार जब कोई शेयरधारी अपने शेयर किसी अन्य व्यक्ति को बेच देता है तो वह शेयरधारी तो नहीं रहता परन्तु वह उस समय तक कम्पनी का सदस्य बना रहता है जब तक सदस्यों के रजिस्टर में हस्तांतरिती (transferee) का नाम न लिख लिया जाए।

10.2.1 सदस्य की परिभाषा

कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 41 के अनुसार, सदस्य से तात्पर्य (i) सीमानियम पर अभिदाता के रूप में हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति, तथा (ii) ऐसे प्रत्येक व्यक्ति से है जिसने लिखित रूप में कम्पनी का सदस्य बनना स्वीकार किया है तथा जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिख लिया गया है। अतः जब कोई व्यक्ति कम्पनी के सीमानियम पर अभिदाता के रूप में हस्ताक्षर करता है तो उसे शेयर आबंटित करने से पहले कम्पनी का सदस्य मान लिया जाता है। अन्य परिस्थितियों में, किसी व्यक्ति का नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिखने से पहले, उसके द्वारा शेयरों के आबंटन के लिए लिखित आवेदन-पत्र होना आवश्यक है। सदस्यता की सच्ची कसौटी यही है कि यह देखा जाए कि उस व्यक्ति का नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिखा है या नहीं। यदि उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिखा हुआ है, केवल तभी उसे सदस्य समझा जाता है।

10.2.2 सदस्य एवं शेयरधारी में अन्तर

यद्यपि 'सदस्य' एवं 'शेयरधारी' शब्दों को समानार्थक शब्दों के रूप में प्रयोग किया जाता है, फिर भी इन दोनों में पर्याप्त अन्तर है। इन दोनों में मुख्य अन्तर निम्नलिखित हैं:

i) गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी जिनकी शेयर-पूंजी नहीं होती है उनके सदस्य तो होते हैं परन्तु शेयरधारी नहीं होते हैं।

ii) जब कोई व्यक्ति अपने शेयर हस्तांतरित कर देता है तो वह उन शेयरों का धारक नहीं रहता परन्तु वह उस समय तक कम्पनी का सदस्य बना रहता है जब तक कि उसके नाम के स्थान पर हस्तांतरिती का नाम सदस्यों के रजिस्टर में नहीं लिख दिया जाता।

iii) मृत सदस्य के वैधानिक प्रतिनिधि, उस सदस्य की मृत्यु होते ही तुरन्त शेयरधारी वन जाते हैं परन्तु जव तक उनका नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिखा नहीं जाता तब तक वे सदस्य नहीं वनते।

iv) शेयर वारंट का वाहक या धारक शेयरधारी तो अवश्य होता है परन्तु वह सदस्य नहीं होता। आप जानते ही हैं कि जब शेयर-वारंट जारी किए जाते हैं, तो सदस्य का नाम सदस्यों के रजिस्टर से काट दिया जाता है। परन्तु कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा शेयर वारंट के धारक को सदस्यता के अधिकार दिए जा सकते हैं।

v) ऐसे व्यक्ति, जिसके शेयरों को ज़ब्त कर लिया गया है या जिसने अपने शेयरों का कम्पनी को अभ्यर्पण (surrender) कर दिया है, यदि उसके सदस्य न होने की तिथि से वारह माह के भीतर कम्पनी का समापन हो जाता है, तो उस व्यक्ति का नाम अंशदाताओं की सूची में शामिल किया जाता है, यद्यपि अव वह कम्पनी का शेयरधारी नहीं रहा है।

Kedar Nath Agarwal V. Jay Engineering Works Ltd. के मामले में निर्णय दिया गया कि कम्पनी

का 'सदस्य' उसका 'शेयरधारी' तो हो सकता है, परन्तु 'शेयरधारी' कम्पनी का 'सदस्य' भी हो, यह आवश्यक नहीं।

उपर्युक्त चर्चा से यह स्पष्ट हो गया होगा कि कम्पनी के शेयरों को रखने वाला व्यक्ति शेयरधारी कहलाता है, जबकि सदस्य वे व्यक्ति होते हैं जो कम्पनी को निगमित संस्था का रूप देते हैं तथा जिनके नाम सदस्यों के रजिस्टर में शामिल होते हैं।

10.2.3 सदस्य कौन बन सकता है ?

कम्पनी अधिनियम में कहीं भी यह स्पष्टतः नहीं बताया गया है कि कम्पनी का सदस्य कौन बन सकता है। इसमें कहीं ऐसी अयोग्यताओं का भी वर्णन नहीं किया गया है जिसके कारण किसी व्यक्ति को कम्पनी का सदस्य बनने से रोका जाए। अधिनियम में केवल यही व्यवस्था है कि कोई भी व्यक्ति जो लिखित रूप में कम्पनी का सदस्य बनना स्वीकार करता है, वह उसका सदस्य बन सकता है। यह तो आप जानते ही हैं कि कम्पनी में शेयर खरीदने का अनुबन्ध अन्य अनुबन्ध के समान ही है। अतः, केवल वही व्यक्ति कम्पनी के सदस्य बन सकते हैं जो अनुबन्ध करने में सक्षम हैं। परन्तु जहां तक सदस्य की सक्षमता का सम्बन्ध है, भारतीय अनुबन्ध अधिनियम के नियम लागू होते हैं। इसका यह अर्थ हुआ कि **अवयस्क, अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्ति तथा ऐसे व्यक्ति जिन्हें अनुबन्ध करने के लिए अयोग्य घोषित किया गया है, कम्पनी के सदस्य नहीं बन सकते।**

आइए, अब कुछ विशेष प्रकार के सदस्यों की स्थिति की चर्चा करते हैं।

i) **अवयस्कः** अनुबन्ध अधिनियम की धारा 11 के अनुसार अवयस्क अनुबन्ध करने के अयोग्य होता है, अतः वह कम्पनी का सदस्य नहीं बन सकता। **Palanippa V. Official Liquidator, Pasupathi Bank Ltd.** के मामले में एक पिता ने अपनी अवयस्क पुत्री को अवयस्क बतलाकर, उसके नाम शेयर खरीदने के लिए आवेदन किया। बाद में, कम्पनी का समापन हो गया। निर्णय दिया गया कि यह आवंटन व्यर्थ है तथा अवयस्क या उसके पिता को अंशदाता के रूप में उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। परन्तु यदि कम्पनी को उसकी अवयस्कता की जानकारी नहीं है और उसके शेयर आबंटित कर दिए गये हैं तो कम्पनी आवंटन को रद्द कर सकती है तथा उसके नाम को सदस्यों के रजिस्टर में से काट सकती है। अवयस्क भी, अवयस्कता के दौरान कभी भी आवंटन को रद्द कर सकता है। प्रत्येक परिस्थिति में कम्पनी को अवयस्क से प्राप्त राशि वापस करनी होगी। यदि दोनों में से किसी भी पक्ष द्वारा आवंटन को रद्द नहीं किया जाता, तो अवयस्क का नाम सदस्यों के रजिस्टर में बना रहेगा, परन्तु फिर भी अवयस्क का कोई व्यक्तिगत उत्तरदायित्व नहीं होता अर्थात् वह किसी 'मांग' (call) का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं है।

अवयस्क जब कभी भी वयस्क होता है, तब भी वह अपने दायित्व से इंकार कर सकता है, भले ही उसने अवयस्कता के दौरान लाभांश प्राप्त किया हो **(Sadiq Ali V. Jai Kishori)**। परन्तु वह अपने दायित्व से उस समय इंकार नहीं कर सकता जब उसने वयस्क होने के बाद लाभांश प्राप्त किया है तथा जानबूझकर कम्पनी को यह विश्वास दिलाया है कि वह कम्पनी का सदस्य है **(Fazalbhoy V. The Credit Bank of India Ltd.)**। अतः, यह कम्पनी के अपने हित में है कि वह केवल पूर्णदत्त शेयर ही अवयस्क को आवंटित करे क्योंकि अन्यथा अवयस्क से शेयरों पर बकाया राशि वसूल नहीं की जा सकती।

अधिनियम में ऐसा कोई भी नियम नहीं है जिसके अनुसार अवयस्क को पूर्णदत्त शेयरों का हस्तांतरिती बनने से रोका जा सके। **Miss Nandita Jain V. Bennet Coleman and Company Ltd.** के मामले में कम्पनी लॉ बोर्ड ने यह निर्णय दिया कि अपने संरक्षक के माध्यम से कार्य करने वाले किसी अवयस्क द्वारा पूर्णदत्त शेयरों का हस्तांतरण पंजीकरण कराने के लिए किया गया अनुबन्ध वैध एवं बाध्य होता है। ऐसी स्थिति में सदस्यों के रजिस्टर में प्रविष्टि इस प्रकार होगी, " A (अवयस्क) अपने संरक्षक के द्वारा ....।"

यदि अवयस्क के नाम कुछ शेयर हस्तांतरित किए जाते हैं, तब भी हस्तांतरक (transferor) उन शेयरों पर की जाने वाली भावी 'मांगों' के लिए उत्तरदायी होगा, भले ही उसे हस्तांतरिती की अवयस्कता की जानकारी नहीं थी। यदि शेयरों का हस्तांतरण पंजीकरण करने के समय कम्पनी को हस्तांतरिती के अवयस्क होने की जानकारी है, तो कम्पनी अवयस्क के नाम शेयर हस्तांतरण को पंजीकृत करने से इंकार कर सकती है, परन्तु पूर्णदत्त शेयरों का हस्तांतरण पंजीकृत किया जा सकता है।

ii) **कम्पनीः** कम्पनी, कानूनी व्यक्ति होने के कारण, अनुवन्ध करने में सक्षम है। अतः, यदि कम्पनी के सीमानियम या अन्तर्नियम इस सम्वन्ध में अधिकार दें, तो एक कम्पनी किसी अन्य कम्पनी की सदस्य वन सकती है। परन्तु कोई भी कम्पनी स्वयं सदस्य नहीं वन सकती। एक नियंत्रित कम्पनी अपनी नियंत्रक कम्पनी की सदस्य नहीं वन सकती।

iii) **साझेदारी फर्मः** साझेदारी फर्म को कानून की दृष्टि में विधिक व्यक्ति नहीं माना जाता अर्थात् उसका अपने सदस्यों से पृथक अस्तित्व नहीं होता। अतः फर्म अपने नाम से कम्पनी के शेयर नहीं खरीद सकती। परन्तु साझेदारी फर्म, साझेदारों के व्यक्तिगत नामों में शेयर रख सकती है और उस स्थिति में सदस्यों के रजिस्टर में उन्हें संयुक्त शेयरधारी के रूप में शामिल किया जाता है। परन्तु अधिनियम की धारा 25 के अन्तर्गत लायसेन्स दी गई ऐसी कम्पनियां, जिनका उद्देश्य लाभ कमाना नहीं है, साझेदारी फर्म उनकी सदस्य वन सकती है।

iv) **संयुक्त हिन्दू परिवारः** संयुक्त हिन्दू परिवार अपने 'कर्ता' के नाम से कम्पनी के शेयर रख सकता है। इस प्रकार 'कर्ता' को ही कम्पनी का सदस्य माना जाता है तथा 'कर्ता' का ही नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिखा जाता है।

v) **दिवालियाः** यदि कम्पनी का कोई सदस्य दिवालिया घोषित हो गया है, उसे तव तक कम्पनी का सदस्य माना जाता है जब तक उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में है। वह अपने शेयरों के लिए मतदान भी कर सकता है, परन्तु उसके शेयरों पर लाभांश सरकारी प्रतिनिधि या रिसीवर को दिया जाता है।

vi) **विदेशी व्यक्तिः** विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम, 1973 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया से सामान्य या विशेष अनुमति प्राप्त करके, विदेशी व्यक्ति कम्पनी का सदस्य वन सकता है। परन्तु, यदि वह बाद में विदेशी शत्रु बन जाता है तो कम्पनी के सदस्य के रूप में उसके अधिकार स्थगित कर दिए जाते हैं।

vii) **विवाहित महिलाः** विवाहित महिला अनुबन्ध करने के लिए सक्षम है अतः वह कम्पनी की सदस्य वन सकती है।

viii) **न्यासी (Trustee):** धारा 153 के अनुसार, किसी भी स्पष्ट, गर्भित या प्रलक्षित न्यास की सूचना सदस्यों के रजिस्टर में दर्ज नहीं की जाएगी। अतः न्यासी, इस स्थिति/हैसियत से कम्पनी का सदस्य नहीं बन सकता। परन्तु न्यासी, अपने नाम से सदस्य बन सकता है।

ix) **संयुक्त धारकः** कम्पनी के शेयर दो या अधिक व्यक्तियों के संयुक्त नाम में हो सकते हैं। सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में, संयुक्त शेयरधारियों को पृथक सदस्य गिना जाता है, परन्तु निजी कम्पनी की स्थिति में अधिनियम की धारा 3(1)(iii) के प्रयोजन के लिए संयुक्त शेयरधारियों को एक सदस्य ही माना जाता है। शेयरों के संयुक्तधारी, स्वयं को जिस भी क्रम में चाहें, पंजीकृत करा सकते हैं तथा वे अपने संयुक्त शेयरों को इस ढंग से पृथक-पृथक भी करवा सकते हैं जिससे वह कम्पनी की सभा में भाग ले सकें तथा मतदान कर सकें। जव तक अन्तर्नियमों में अन्यथा प्रावधान न किया गया हो, कम्पनी एक से अधिक शेयर प्रमाणपत्र देने के लिए वाध्य नहीं है। कम्पनी उस व्यक्ति को लाभांश का भुगतान करेगी, जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में सवसे ऊपर दर्ज है। इसी प्रकार, संयुक्त शेयरधारियों में से प्रथम शेयरधारी की दी गई सूचना को सव शेयरधारियों को दी गई सूचना माना जाता है। यह ध्यान रहे कि संयुक्त शेयरधारी, कम्पनी को देय मांग की राशि के लिए संयुक्त रूप से एवं पृथक-पृथक उत्तरदायी होते हैं। संयुक्त शेयरधारियों के शेयरों का हस्तांतरण केवल तभी प्रभावकारी होता है जव यह उन सवके द्वारा संयुक्त रूप से किया जाए।

10.2.4 सदस्यों की संख्या

आप पहले पढ़ चुके हैं कि सार्वजनिक कम्पनी में सदस्यों की न्यूनतम संख्या सात तथा निजी कम्पनी में न्यूनतम संख्या दो होती है। अतः इस बात का हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि कभी भी सदस्यों की संख्या इस वैधानिक संख्या से कम न हो जाए। धारा 45 के अनुसार यदि सदस्यों की संख्या वैधानिक न्यूनतम संख्या से कम हो जाती है तथा कम्पनी छः माह तक व्यापार करती रहती है, तव सदस्यों का दायित्व असीमित हो जाता है। इसके अतिरिक्त, सदस्यों की संख्या वैधानिक न्यूनतम से कम हो जाने पर, न्यायालय द्वारा कम्पनी का समापन भी किया जा सकता है।

10.3 सदस्य बनने की विधियां

कोई भी व्यक्ति निम्नलिखित विधियों में से किसी भी प्रकार कम्पनी का सदस्य वन सकता है:

1) **सीमानियम पर अभिदाता के रूप में हस्ताक्षर करके**: कम्पनी के सीमानियम पर हस्ताक्षर करने वाला व्यक्ति कम्पनी के निगमन पर स्वतः उसका सदस्य वन जाता है। उसे सदस्य कहलाने के लिए शेयरों के लिए आवेदन करने व आवंटन की आवश्यकता नहीं होती, वे अभिदान के आधार पर ही सदस्य वन जाते हैं। यदि उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में नहीं लिखा जाता, तव भी उसे कम्पनी का सदस्य माना जाता है।

2) **आवेदन तथा आबंटन के द्वारा**: प्रत्येक वह व्यक्ति जो लिखित रूप से कम्पनी का सदस्य वनने के लिए सहमत होता है तथा जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिखा जाता है, वह भी कम्पनी का सदस्य होता है। शेयरों के लिए आवेदन, शेयर खरीदने का एक प्रस्ताव है, तथा आवंटन उस प्रस्ताव की स्वीकृति है। इस सम्वन्ध में अनुवन्ध अधिनियम के प्रस्ताव एवं स्वीकृति के नियम लागू होते हैं। इस प्रकार, यदि किसी व्यक्ति ने कुछ शर्तों के सहित आवेदन किया है, तो कंपनी को उन शर्तों के अनुसार ही आवंटन करना चाहिए, अन्यथा आवंटिती उन शेयरों को स्वीकार करने के लिए वाध्य नहीं होता है।

3) **शेयरों के हस्तांतरण द्वारा**: यह तो आप जानते ही हैं कि सार्वजनिक कम्पनी के शेयर स्वतंत्रतापूर्वक हस्तांतरित किए जा सकते हैं। अतः कोई भी व्यक्ति खुले वाजार में शेयर खरीद सकता है तथा उन शेयरों को अपने नाम पंजीकृत करा सकता है। शेयरों का हस्तांतरण जव कम्पनी द्वारा पंजीकृत कर लिया जाता है, तव हस्तांतरिती कम्पनी का सदस्य वन जाता है।

4) **शेयरों के संचरण द्वारा**: कोई व्यक्ति कानूनी प्रक्रिया के द्वारा सदस्य वन सकता है अर्थात् पारेषण **(transmission)** द्वारा। किसी सदस्य की मृत्यु होने पर, उसके कानूनी प्रतिनिधियों को कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में, मृत व्यक्ति के नाम के स्थान पर अपना नाम लिखवा लेने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। ऐसी स्थिति में हस्तांतरण विलेख **(instrument of transfer)** का होना आवश्यक नहीं है।

5) **योग्यता शेयर लेने के लिए सहमति देने पर**: जव किसी सार्वजनिक कम्पनी का निदेशक, योग्यता शेयर खरीदने व उनका भुगतान करने के लिए अपनी लिखित सहमति रजिस्ट्रार के पास फाइल करता है, तो उसकी स्थिति उसी समान होती है जो कि सीमानियम पर अभिदाताओं की होती है तथा कम्पनी के निगमन पर उस व्यक्ति को कम्पनी सदस्य वन गया मान लिया जाता है।

6) **निषेध द्वारा (By estoppel)**: यदि किसी व्यक्ति का नाम सदस्यों के रजिस्टर में गलती से लिख दिया गया है तथा यह पता होने पर भी वह अपना नाम वहां वने रहने की अनुमति देता है, तो फिर वह व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि वह सदस्य नहीं है, अर्थात् निषेध का नियम उस पर लागू होता है। परन्तु अधिनियम की धारा 41 में निर्दिष्ट नियम के अनुसार, व्यक्ति द्वारा लिखित रूप में सदस्य वनने की सहमति अवश्य दी जानी चाहिए, अतः केवल इस कारण कि किसी व्यक्ति का नाम सदस्यों के रजिस्टर में सदस्य के रूप में लिख दिया गया है, वह कम्पनी का सदस्य नहीं माना जा सकता।

10.4 सदस्यता की समाप्ति

आप पढ़ चुके हैं कि जव किसी व्यक्ति का नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिख दिया जाता है, तो वह कम्पनी का सदस्य वन जाता है। तदनुसार, जव किसी व्यक्ति का नाम सदस्यों के रजिस्टर में से हटा दिया जाता है तो वह कम्पनी का सदस्य नहीं रहता। किसी व्यक्ति की कम्पनी की सदस्यता निम्नलिखित किसी भी स्थिति में समाप्त समझी जाती है:

1) **शेयरों का हस्तांतरण**: यदि वह अपने शेयर किसी अन्य व्यक्ति के नाम हस्तांतरित कर देता है तथा कम्पनी इस हस्तांतरण को पंजीकृत कर लेती है तव हस्तांतरक का नाम सदस्यों के रजिस्टर में से काट दिया जाता है।

2) **शेयरों का पारेषण**: किसी सदस्य की मृत्यु या पागल हो जाने पर, उसके शेयर उसके कानूनी प्रतिनिधियों के नाम पारेषित हो जाते हैं।

3) **शेयरों की ज़ब्ती**: शेयरों पर मांग राशि का भुगतान नहीं करने पर तथा अन्तर्नियमों में वर्णित अन्य कारणों के लिए शेयरों को जव्त किया जा सकता है। शेयरों के जव्त किए जाने पर सदस्यता समाप्त हो जाती है।

4) **शेयरों का अभ्यर्पण**: जव कोई सदस्य वैध तरीके से अपने शेयर कम्पनी को अभ्यर्पित कर देता है, तो वह सदस्य नहीं रहता।

5) **सदस्य का दिवालियापन**: जब किसी सदस्य को दिवालिया घोषित किया जाता है तो उसके शेयर सरकारी प्रतिनिधि या रिसीवर में निहित हो जाते हैं। यह सरकारी रिसीवर इन शेयरों को बेच सकता है तथा जब हस्तांतरिती का नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिख दिया जाता है तो दिवालिया व्यक्ति कम्पनी का सदस्य नहीं रहता।

6) **कम्पनी का समापन**: कम्पनी के समापन पर सदस्यता समाप्त हो जाती है, परन्तु वह अंशदाता के रूप में उत्तरदायी रहता है।

7) **अनुबन्ध रद्द करने पर**: जब कोई सदस्य मिथ्यावर्णन, अथवा प्रविवरण में गलत वर्णन करने अथवा अनियमित आवंटन के आधार पर शेयर लेने के अनुबन्ध को रद्द करता है, तो उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है।

8) **ग्रहणाधिकार को प्रवर्तित करके** (Enforcement of lien): जब कम्पनी का शेयरों पर ग्रहणाधिकार होता है और उसे प्रवर्तित कराने के लिए वे शेयर बेच दिए जाते हैं अथवा न्यायालय की डिक्री (decree) के निष्पादन के लिए शेयर बेच दिए जाते हैं, तब सदस्यता समाप्त हो जाती है।

9) **शेयरों का मोचन**: यदि किसी सदस्य के पास मोचनीय पूर्वाधिकार शेयर हैं, तो उन शेयरों के मोचन पर सदस्यता समाप्त हो जाती है।

10) **शेयर वारंट जारी करने पर**: जब पूर्णदत्त शेयरों के बदले शेयर वारंट जारी किए जाते हैं, तो यद्यपि वह कम्पनी का शेयरधारी बना रहता है परन्तु उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में से हटा दिया जाता है।

11) **न्यायालय के आदेश पर**: कम्पनी अधिनियम की धारा 402 के अन्तर्गत जब न्यायालय किसी सदस्य के शेयर खरीदने का आदेश देता है, तो उस व्यक्ति की सदस्यता समाप्त हो जाती है।

10.5 सदस्यों के अधिकार

कम्पनी अधिनियम द्वारा सदस्यों को अनेक अधिकार प्रदान किए गये हैं, कुछ महत्वपूर्ण अधिकार निम्नलिखित हैं:

i) आवेदन करके व निर्धारित शुल्क का भुगतान करने पर सीमानियम एवं अन्तर्नियमों की प्रतिलिपि प्राप्त करने का अधिकार।

ii) निर्धारित अवधि के भीतर शेयर प्रमाणपत्र प्राप्त करने का अधिकार।

iii) अन्तर्नियमों के अनुरूप शेयर हस्तांतरित करने का अधिकार।

iv) सदस्यों के रजिस्टर में अपना नाम शामिल कराने का अधिकार।

v) पूंजी में वृद्धि किए जाने पर बढ़े हुए शेयरों को प्राप्त करने की प्राथमिकता का अधिकार।

vi) सभाओं की सूचना प्राप्त करने, उनमें उपस्थित होने, प्रॉक्सी नियुक्त करने तथा मतदान करने का अधिकार।

vii) वार्षिक साधारण सभा में निदेशकों, अंकेक्षकों आदि की नियुक्तियों में भाग लेने का अधिकार।

viii) सदस्यों के रजिस्टर, डिबेन्चरधारियों के रजिस्टर तथा वार्षिक विवरणों की जांच करने का अधिकार।

ix) सदस्यों के रजिस्टर में परिशुद्धि कराने के लिए कम्पनी लॉ बोर्ड को आवेदन करने का अधिकार।

x) जब निदेशक मंडल कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा बुलाने में असमर्थ होते हैं, तो कम्पनी लॉ बोर्ड से यह सभा बुलाने के लिए आवेदन करने का अधिकार अथवा जब भी आवश्यकता हो कम्पनी की असाधारण सभा बुलाने का अधिकार।

xi) वार्षिक साधारण सभा से पहले तुलन-पत्र, लाभ-हानि खाते व निदेशकों की रिपोर्ट प्राप्त करने का अधिकार।

xii) विशेष सूचना वाले प्रस्तावों के लिए उचित सूचना प्राप्त करने का अधिकार।

xiii) साधारण सभा की कार्यवाही का विवरण प्राप्त करने का अधिकार, परन्तु इसके लिए उसे कम्पनी को आवेदन करना पड़ेगा।

xiv) कम्पनी के मामलों की जांच करने के लिए; कम्पनी लॉ बोर्ड के पास याचिका प्रस्तुत करने का अधिकार।

xv) अन्याय एवं कुप्रवन्ध की स्थिति में कम्पनी लॉ बोर्ड से सहायता प्राप्त करने के लिए याचिका प्रस्तुत करने का अधिकार।

xvi) कम्पनी के समापन के लिए उच्च न्यायालय में याचिका प्रस्तुत करने का अधिकार।

उपर्युक्त से आपने गौर किया होगा कि सदस्यों के ये अधिकार कम्पनी के प्रवन्धकों को ठीक मार्ग पर चलाने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इन अधिकारों का वे कितने प्रभावकारी ढंग से उपयोग करते हैं, यह एक अलग प्रश्न है।

10.6 सदस्यों के दायित्व

कम्पनी की प्रकृति पर सदस्यों का दायित्व निर्भर करता है। तद्नुसार इसका वर्णन निम्न प्रकार किया गया है:

i) **असीमित कम्पनी**: ऐसी कम्पनी का प्रत्येक सदस्य, उस अवधि के दौरान जव वह कम्पनी का सदस्य था, कम्पनी द्वारा लिए गये समस्त ऋणों के लिए उत्तरदायी होता है।

ii) **गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी**: कम्पनी के सीमानियम के दायित्व खंड में दी गई प्रत्येक सदस्य द्वारा गारंटी की राशि की सीमा तक वह उत्तरदायी होता है।

iii) **शेयरों द्वारा सीमित कम्पनी**: अधिकांश कम्पनियां इस प्रकार की होती हैं। ऐसी कम्पनी की स्थिति में प्रत्येक सदस्य द्वारा खरीदे गये शेयरों पर अदत्त राशि तक वह उत्तरदायी होता है। यदि उसने शेयरों पर सम्पूर्ण राशि का भुगतान कर दिया है, तो उसका दायित्व शून्य होगा।

आपको यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि सीमानियम या अन्तर्नियमों के अन्तर्गत किसी भी सदस्य द्वारा कम्पनी को देय राशि उनके द्वारा कम्पनी को देय ऋण समझा जाता है। यदि किसी ऐसी शेयरधारी की मृत्यु हो जाती है जिसके पास अपूर्ण-दत्त शेयर थे, तव अदत्त राशि के लिए मृतक की सम्पत्ति या उसके कानूनी उत्तराधिकारी उत्तरदायी होते हैं।

यदि किसी भी समय कम्पनी के सदस्यों की संख्या वैधानिक न्यूनतम [सार्वजनिक कम्पनी में 7 तथा निजी कम्पनी में 2] से कम हो जाती है, तथा कम्पनी इस कम संख्या से ही 6 माह से अधिक समय तक व्यापार करती रहती है, तो कम्पनी का प्रत्येक सदस्य उक्त 6 माह की अवधि के वाद निर्मित किए गये ऋणों के लिए पृथक-पृथक उत्तरदायी होते हैं।

बोध प्रश्न क

1) किसी कम्पनी के 'सदस्य' शब्द से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

2) सदस्य और शेयरधारी में अन्तर वताइए।

....

....

....

3) कम्पनी का सदस्य वनने के चार तरीकों की सूची वनाइए।

....

....

....

....

4) वे तीन परिस्थितियां बताइए जब कोई व्यक्ति कम्पनी का सदस्य नहीं रहता।

....

....

....

5) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलतः
   i) 'सदस्य' एवं 'शेयरधारी' शब्दों का एक ही अर्थ है।
   ii) अवयस्क कम्पनी का सदस्य नहीं बन सकता।
   iii) विदेशी व्यक्ति कम्पनी का सदस्य नहीं बन सकता।
   iv) जब किसी सदस्य के शेयर ज़ब्त कर लिए जाते हैं तो वह सदस्य नहीं रहता।
   v) पूंजी की वृद्धि किए जाने पर शेयर खरीदने में प्राथमिकता प्राप्त करने का सदस्यों को अधिकार है।
   vi) प्रविवरण के भ्रामक होने के आधार पर कोई सदस्य कम्पनी से शेयर खरीदने के अनुबन्ध को रद्द नहीं कर सकता।
   vii) जब पूर्णदत्त शेयरों के बदले में शेयर वारंट जारी किए जाते हैं तो उस व्यक्ति की कम्पनी में सदस्यता समाप्त नहीं हो जाती।

10.7 शेयरों का हस्तांतरण (Transfer of Shares)

सार्वजनिक कम्पनी के शेयर चल सम्पत्ति होते हैं तथा अन्तर्नियमों के अनुरूप उन्हें हस्तांतरित किया जा सकता है। कम्पनी के अन्तर्नियम हस्तांतरण की विधि तो निर्धारित कर सकते हैं परन्तु वे सदस्यों के शेयर हस्तांतरण के अधिकार पर पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं लगा सकते। पूंजी वाली निजी कम्पनी, धारा 3(1) (iii) के अन्तर्गत अन्तर्नियमों द्वारा शेयरों के स्वतन्त्र हस्तांतरण पर प्रतिबन्ध लगाती है। परन्तु सार्वजनिक कम्पनियों के शेयरों को अधिनियम तथा अन्तर्नियमों के नियमों के अधीन हस्तांतरित किया जा सकता है।

कोई भी व्यक्ति जो कम्पनी का सदस्य है तथा जिसका नाम कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में लिखा हुआ है, वह शेयरों को वैध रूप से हस्तांतरित कर सकता है। मृत सदस्य के कानूनी प्रतिनिधि, कम्पनी के सदस्य न होते हुए भी, वैध हस्तांतरण कर सकते हैं। शेयरों के हस्तांतरण से सम्बन्धित कानूनी नियम कम्पनी अधिनियम की धारा 108 से 112 तक में दिए गये हैं।

10.7.1 शेयर हस्तांतरित करने की विधि

शेयर हस्तांतरण की प्रक्रिया कम्पनी को शेयर हस्तांतरित करने के आवेदन देने के साथ ही आरम्भ होती है। इस आवेदन को तकनीकी भाषा में विलेख या हस्तांतरण विलेख कहते हैं। हस्तांतरण विलेख पर स्टाम्प लगी होनी चाहिए तथा इस पर हस्तांतरक एवं हस्तांतरिती दोनों के हस्ताक्षर होने चाहिए, अन्यथा शेयरों के हस्तांतरण को पंजीकृत नहीं किया जाएगा। इसमें हस्तांतरिती का नाम, पता व व्यवसाय आदि का विवरण लिखा जाना चाहिए। हस्तांतरण विलेख के साथ शेयर प्रमाण-पत्र या आवंटन-पत्र नत्थी करके कम्पनी को सुपुर्द किया जाना चाहिए।

प्रत्येक हस्तांतरण विलेख निर्धारित फार्म में होना चाहिए तथा इस पर कुछ भी लिखने से पहले इसे निर्धारित अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए और वह अधिकारी इस प्रपत्र पर वह तिथि अंकित करेगा जब विलेख उसके सामने प्रस्तुत किया गया। इस प्रपत्र में हस्तांतरित किए जाने वाले शेयरों के भिन्न क्रमांक नम्बर, हस्तांतरित करने के लिए दिया जाने वाला मूल्य तथा हस्तांतरक व हस्तांतरिती के हस्ताक्षर अवश्य होने चाहिए।

प्रत्येक हस्तांतरण विलेख पर भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 के अनुसार उचित मूल्य के स्टाम्प लगे होने चाहिए तथा स्टाम्पों को उचित रीति से रद्द कर दिया जाना चाहिए। यदि किसी विलेख पर उचित मूल्य के स्टाम्प नहीं लगाए जाते, तो उस विलेख को अधूरा माना जाता है।

जव हस्तांतरण विलेख हर तरह से पूर्ण कर दिया गया है तव यह कम्पनी को सुपुर्द कर दिया जाना चाहिए:

(i) ऐसे शेयर जो किसी मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज में खरीदे-वेचे जाते हैं, उपर्युक्त प्रस्तुति के पश्चात् सदस्यों का रजिस्टर प्रथम वार वंद होने से पहले अथवा निर्धारित अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करने की तिथि के 12 माह के भीतर, इन दोनों तिथियों में से जो वाद में हो, कम्पनी को प्रस्तुत किए जाने चाहिए।

(ii) अन्य स्थितियों में, निर्धारित अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करने की तिथि के दो माह के भीतर कम्पनी को प्रस्तुत किया जाना चाहिए [धारा 108 (1-A)]।

यदि हस्तांतरक द्वारा अंशतः दत्त शेयरों के हस्तांतरण के लिए आवेदन किया जाता है तो कम्पनी को इस हस्तांतरण का पंजीकरण तव तक नहीं करना चाहिए जव तक कम्पनी इसके वारे में हस्तांतरिती को सूचना न दे दे तथा सूचना प्राप्त होने की तिथि से दो सप्ताह के भीतर हस्तांतरिती इस सम्बन्ध में कोई आपत्ति नहीं उठाता [धारा 110(2)]।

जव निर्धारित समय के भीतर, पूर्ण रूप से निष्पादित व स्टाम्पित हस्तांतरण विलेख को शेयर प्रमाणपत्र या आवंटन-पत्र के साथ कम्पनी को सुपुर्द कर दिया जाता है, तो शेयर हस्तांतरण को पूर्ण माना जाता है, भले ही अभी कम्पनी ने हस्तांतरण को पंजीकृत किया हो अथवा नहीं।

यदि कम्पनी किसी शेयर के हस्तांतरण का पंजीयन करने से इंकार करती है तो उसे दो माह के भीतर हस्तांतरक एवं हस्तांतरिती को इस आशय की सूचना कारण सहित देनी चाहिए। इंकार से प्रभावित व्यक्ति हस्तांतरण का पंजीयन नहीं करने के विरुद्ध, अस्वीकृति की सूचना प्राप्त होने के दो माह के भीतर कम्पनी लॉ वोर्ड के पास अपील कर सकता है।

शेयरों के हस्तांतरण के सभी आवेदन निदेशक मंडल की सभा में विचार के लिए रखे जाते हैं तथा सचिव या इस प्रयोजन के लिए नियुक्त समिति यदि हस्तांतरण पंजीकृत करने की सिफारिश करती है, तो उसी सभा में एक प्रस्ताव पारित करके हस्तांतरण को स्वीकार कर लिया जाता है।

निदेशक मंडल द्वारा प्रस्ताव पारित करने के पश्चात्, शेयर प्रमाणपत्र के पीछे आवश्यक प्रविष्टियां की जाती हैं जिनसे शेयरों के हस्तांतरिती को शेयरधारी प्रकट किया जाता है। यह ध्यान रखें कि हस्तांतरिती कंम्पनी का सदस्य केवल तभी वनता है जव कम्पनी द्वारा हस्तांतरण पंजीकृत किया जाता है।

हस्तांतरण के पंजीयन होने पर, सदस्यों के रजिस्टर में से हस्तांतरक का नाम हटा कर उसके स्थान पर हस्तांतरिती का नाम लिख दिया जाता है। हस्तांतरक उन शेयरों का उस समय तक स्वामी माना जाता है जव तक उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में से हटा नहीं दिया जाता।

हस्तांतरिती को एक नया शेयर प्रमाणपत्र जारी किया जा सकता है अथवा पुराने शेयर प्रमाणपत्र को उसके नाम पृष्ठांकित किया जा सकता है।

10.7.2 कोरा हस्तांतरण (Blank Transfer)

जव हस्तांतरण विलेख पर हस्तांतरक अपने हस्ताक्षर कर देता है परन्तु हस्तांतरिती का नाम व अन्य विवरण नहीं लिखा जाता और शेयर प्रमाणपत्र के साथ यह विलेख हस्तांतरिती को दे दिया जाता है, तो यह कोरा हस्तांतरण कहलाता है।

क्योंकि इस हस्तांतरण विलेख में हस्तांतरिती का नाम नहीं लिखा होता, अतः इस कोरे हस्तांतरण विलेख एवं शेयरों की सुपुर्दगी देने मात्र से हस्तांतरिती इन शेयरों को फिर से वेच सकता है। शेयर बेचते समय हस्तांतरिती (विक्रेता) को इस विलेख पर हस्ताक्षर करने की कोई आवश्यकता नहीं होती। कोरा विलेख देने का मुख्य लाभ यही है कि क्रेता इस पर अपना नाम लिखे विना या हस्ताक्षर किए विना, इन शेयरों को पुनः वेच सकता है। इस प्रकार शेयरों के हस्तांतरण से सम्बन्धित विधि का पालन किए विना कोरे हस्तांतरण से शेयरों को आसानी से वेचा जा सकता है। कोरे हस्तांतरण विलेख की सहायता से शेयरों के क्रय-विक्रय की प्रक्रिया को अनेक वार किया जा सकता है।

हस्तांतरण में सुविधा के अतिरिक्त, कोरे हस्तांतरण से स्टाम्प फीस तथा पंजीयन फीस के खर्च से भी वचा जा सकता है। जव यह कोरा विलेख किसी ऐसे व्यक्ति के हाथ में आता है, जो अपने नाम में शेयरों को

पंजीकृत कराना चाहता है, तो वह इस पर अपना नाम, पता आदि भरकर, स्वयं को कम्पनी के पास सदस्य पंजीकरण करा सकता है। प्रथम विक्रेता को इन शेयरों का हस्तांतरक माना जाता है और जब तक इन शेयरों का हस्तांतरण कम्पनी के पास पंजीकृत नहीं हो जाता, तब तक वह उन शेयरों का स्वामी बना रहता है। समस्त मध्यवर्ती (intervening) क्रेता एवं विक्रेता स्टाम्प शुल्क से बच जाते हैं। कोरे हस्तांतरण से कर दायित्व से बचा या कम किया जा सकता है, क्योंकि इस लेन-देन को पुस्तकों में दर्ज ही नहीं किया जाता।

कोरा हस्तांतरण विलेख, वैध हस्तांतरण विलेख होता है, परन्तु इसे विनिमय साध्य विलेख नहीं माना जा सकता। शेयर प्रमाण-पत्र के साथ जो भी व्यक्ति कोरे हस्तांतरण विलेख को प्राप्त करता है, उसे उसमें अपना नाम लिखने का अधिकार है तथा वह कम्पनी के पास स्वयं को सदस्य के रूप में पंजीकृत करा सकता है।

कोरे हस्तांतरण की प्रथा का दुरुपयोग किया गया, अतः कोरे हस्तांतरण विलेख की अवधि पर कुछ प्रतिबन्ध लगाए गये हैं। अधिनियम में अब यह व्यवस्था की गई है कि हस्तांतरण विलेख पर कुछ भी लिखने से पहले उस पर कम्पनियों के रजिस्ट्रार की मोहर व तिथि अंकित की जानी चाहिए तथा सूचीयत प्रतिभूतियों के लिए यह विलेख 12 माह की अवधि तक तथा अन्य प्रतिभूतियों के लिए दो माह तक वैध रहता है। इस प्रकार अब हस्तांतरण विलेख निश्चित अवधि तक ही प्रचलन में रहता है, अतः इसकी बुराइयों को कुछ सीमा तक दूर कर दिया गया है।

10.7.3 जाली हस्तांतरण (Forged Transfer)

ऐसे किसी भी हस्तांतरण विलेख, जिस पर हस्तांतरक के जाली हस्ताक्षर बनाए जाते हैं, उसे जाली हस्तांतरण विलेख कहते हैं तथा ऐसे जाली हस्तांतरण विलेख के आधार पर जो हस्तांतरण किए जाते हैं, वे 'जाली हस्तांतरण' कहलाते हैं।

जाली हस्तांतरण कानूनी दृष्टि से पूर्णतः व्यर्थ होते हैं तथा उससे हस्तांतरिती को कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता। यदि जाली हस्तांतरण विलेख के आधार पर कम्पनी ने वास्तविक सदस्य के नाम को सदस्यों के रजिस्टर से हटा दिया है, तो शेयरों का वास्तविक स्वामी सदस्यों के रजिस्टर में पुनः अपना नाम लिखे जाने की मांग कर सकता है।

यदि कम्पनी ने जाली विलेख के आधार पर नया शेयर प्रमाणपत्र किसी ऐसे व्यक्ति के नाम जारी कर दिया हो जिसने पूर्ण सद्विश्वास में एवं मूल्य देकर शेयर खरीदे हों तथा जिसे विलेख के जाली होने की जानकारी न हो, तो कम्पनी ऐसे व्यक्ति के स्वत्व के अधिकार से इंकार नहीं कर सकती, क्योंकि शेयर प्रमाणपत्र कम्पनी को ऐसा करने से रोकता है। परन्तु जाली विलेख जमा कराने वाले व्यक्ति को कम्पनी की क्षतिपूर्ति करनी होगी। इस प्रकार की स्थिति से बचने के लिए, कम्पनियां साधारणतः हस्तांतरक को हस्तांतरण की सूचना देती है ताकि यदि वह आपत्ति करना चाहे तो वह आपत्ति उठा सकता है।

10.8 शेयरों का पारेषण (Transmission of Shares)

आप यह तो जानते ही हैं कि हस्तांतरण, शेयरधारी का स्वैच्छिक कार्य है। इसके विपरीत जब कानून के प्रवर्तन द्वारा शेयरों का हस्तांतरण होता है, तो इसे शेयरों का पारेषण कहते हैं। कम्पनी सामान्यतः शेयरों का हस्तांतरण केवल तभी पंजीकृत करती है जब उसे उचित तरह से निष्पादित हस्तांतरण विलेख प्राप्त होता है। परन्तु सदस्य की मृत्यु, पागलपन या दिवालिया होने पर हस्तांतरण विलेख को निष्पादित करना प्रायः असम्भव ही होता है, तब कानून के प्रवर्तन द्वारा वे शेयर उसके कानूनी प्रतिनिधि या सरकारी अधिकारी या रिसीवर को पारेषित हो जाते हैं। कम्पनी के अन्तर्नियमों में संचरण के सम्बन्ध में नियम प्रायः दिए होते हैं।

शेयरों के पारेषण की स्थिति में हस्तांतरण विलेख आवश्यक नहीं होता, परन्तु जो व्यक्ति शेयरों पर अपना स्वत्व बतलाता है, उसे कम्पनी से शेयरों को अपने नाम में पारेषित करने के लिए आवेदन करना पड़ता है। वसीयतनामे, मृत्यु के प्रमाणपत्र या उत्तराधिकार के प्रमाणपत्र के आधार पर कम्पनी शेयरों को पारेषित करती है।

कम्पनी के किसी सदस्य की मृत्यु हो जाने पर, उसके कानूनी प्रतिनिधि वैध-रूप से उन शेयरों को किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित कर सकते हैं, हालांकि हस्तांतरण विलेख निष्पादित करने के समय वे स्वयं कम्पनी के सदस्य नहीं थे।

यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों में व्यवस्था हो तो कम्पनी पारेषण को पंजीकृत करने से भी मना कर सकती है, परन्तु इस अधिकार का प्रयोग पूर्ण सद्भावना से तथा कम्पनी के हित के लिए किया जाना चाहिए। पारेषण का पंजीयन मना करने पर, पीड़ित पक्ष कम्पनी लॉ बोर्ड के समक्ष ठीक उसी प्रकार अपील कर सकता है जैसे कि हस्तांतरण के मना करने पर की जाती है।

शेयरों के पारेषण की स्थिति में क्योंकि कोई हस्तांतरण विलेख नहीं होता, अतः स्टाम्प फीस भी नहीं देनी पड़ती।

10.9 हस्तांतरण एवं पारेषण में अन्तर

शेयरों का हस्तांतरण, हस्तांतरक का स्वैच्छिक कार्य है जबकि पारेषण कानून के प्रवर्तन द्वारा होता है। दोनों ही स्थितियों में अंतिम प्रभाव एक समान ही है अर्थात् शेयरों का स्वामित्व एक व्यक्ति से दूसरे को हस्तांतरित होता है। शेयरों के हस्तांतरण एवं शेयरों के पारेषण में निम्नलिखित मुख्य अन्तर हैं:

हस्तांतरण	पारेषण
i) यह शेयरधारी का स्वैच्छिक कार्य है।	i) यह कानून के प्रवर्तन का नतीजा है।
ii) हस्तांतरण विलेख निष्पादित करना आवश्यक होता है।	ii) इसमें हस्तांतरिती को अपने उत्तराधिकार का प्रमाण देना होता है।
iii) स्टाम्प फीस दी जाती है।	iii) कोई स्टाम्प फीस नहीं दी जाती।
iv) किसी प्रतिफल के बदले शेयर हस्तांतरित किए जाते हैं।	iv) प्रतिफल के बिना दूसरे व्यक्ति को शेयर पारेषित हो जाते हैं।
v) कम्पनी हस्तांतरण का पंजीयन करने के लिए फीस लेती है।	v) पारेषण के पंजीयन के लिए कोई फीस नहीं ली जाती।

बोध प्रश्न ख

1) शेयरों के हस्तांतरण से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

2) जाली हस्तांतरण क्या है?

....

....

....

3) कोरा हस्तांतरण क्या होता है?

....

....

....

4) उन परिस्थितियों को सूचीबद्ध कीजिए जिनमें शेयरों का पारेषण होता है।

....

....

....

....

5) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत :
   i) कम्पनी के शेयर चल सम्पत्ति हैं जिन्हें अन्तर्नियमों में निर्दिष्ट नियमों के अनुसार हस्तांतरित किया जा सकता है।
   ii) सार्वजनिक कम्पनी के शेयरों को हस्तांतरित करने के अधिकार को अन्तर्नियमों द्वारा कम किया जा सकता है।
   iii) हस्तांतरण विलेख का किसी निर्धारित प्रारूप में होना अनिवार्य नहीं है।
   iv) हस्तांतरण विलेख में कोई भी प्रविष्टि करने से पहले उसे निर्धारित अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए।
   v) हस्तांतरण विलेख पर स्टाम्प लगाना आवश्यक नहीं है।
   vi) यदि कोई कम्पनी शेयरों का हस्तातंरण पंजीयन करने से मना कर देती है, तो उसे दो माह के भीतर हस्तांतरक तथा हस्तांतरिती को इस इंकार की सूचना अवश्य दे देनी चाहिए।
   vii) हस्तांतरिती कम्पनी का सदस्य उस समय बनता है जब हस्तांतरण विलेख कम्पनी के पास प्रस्तुत किया जाता है।
   viii) कानून के प्रवर्तन के द्वारा शेयरों का पारेषण होता है।
   ix) जाली हस्तांतरण की स्थिति में, वास्तविक स्वामी कम्पनी को सदस्यों के रजिस्टर में पुनः अपना नाम लिखने के लिए बाध्य कर सकता है।

10.10 सदस्यों का रजिस्टर

कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 150 के अनुसार प्रत्येक कम्पनी के लिए सदस्यों का रजिस्टर रखना अनिवार्य है। इस रजिस्टर में निम्नलिखित विवरण दिया होना चाहिए :

i) प्रत्येक सदस्य का नाम, पता एवं व्यवसाय (यदि कोई है तो);

ii) प्रत्येक सदस्य द्वारा लिए गये शेयरों की संख्या, उनका क्रमांक तथा प्रत्येक शेयर पर भुगतान की गई या भुगतान के लिए स्वीकृत राशि का विवरण;

iii) प्रत्येक व्यक्ति के सदस्य के रूप में सदस्य रजिस्टर में नाम लिखे जाने की तिथि;

iv) वह तिथि जब कोई व्यक्ति कम्पनी का सदस्य नहीं रहता; तथा

v) यदि कम्पनी ने शेयरों को स्टॉक में परिवर्तित कर दिया है, तो रजिस्टर में प्रत्येक सदस्य के नाम के आगे उसके द्वारा रखे गये स्टॉक की राशि लिखनी चाहिए। शेयरों से सम्बन्धित विवरण के स्थान पर यह विवरण दिया जाना चाहिए।

संयुक्त शेयरधारियों की स्थिति में, सदस्यों के रजिस्टर में सभी संयुक्त शेयरधारियों के नाम लिखे जाने चाहिए तथा प्रथम संयुक्त शेयरधारी के नाम सभाओं आदि की सूचना भेजी जानी चाहिए।

किसी भी स्पष्ट, गर्भित या प्रलक्षित न्यास की सूचना सदस्यों के रजिस्टर में लिखी जानी चाहिए।

यदि उपर्युक्त पद्धति के अनुसार रजिस्टर रखने में त्रुटि की जाती है, तो कम्पनी तथा प्रत्येक दोषी अधिकारी पर त्रुटि के प्रत्येक दिन के लिए 50 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है।

सदस्यों के रजिस्टर को आधुनिकतम रखना चाहिए तथा समय-समय पर होने वाले परिवर्तनों को इसमें लिख दिया जाना चाहिए।

सदस्यों के रजिस्टर को कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में रखना चाहिए। साधारण सभा में विशेष प्रस्ताव पारित करके तथा इस प्रस्तावित विशेष-प्रस्ताव की रजिस्ट्रार को पूर्व सूचना दे दिए जाने पर, इस रजिस्टर को पंजीकृत कार्यालय वाले नगर, कस्बे अथवा गांव में किसी अन्य स्थान पर भी रखा जा सकता है।

अधिनियम की धारा 164 के अनुसार सदस्यों का रजिस्टर, सदस्यता का प्रथमदृष्ट्या प्रमाण होता है, निश्चायक प्रमाण नहीं। यह इस रजिस्टर में दिए गये विवरण का प्रथम दृष्ट्या प्रमाण होता है।

सदस्यों के रजिस्टर का प्रारूप सरकार ने निर्धारित कर रखा है। कम्पनी यदि चाहे तो वह इसी प्रारूप को अपना सकती है या इससे निकटतम मिलते-जुलते प्रारूप को अपना सकती है। विभिन्न प्रकार के शेयरों के लिए भिन्न-भिन्न रंगों के रजिस्टर रखने चाहिए।

10.10.1 सदस्यों की सूची

आप जानते हैं कि प्रत्येक कम्पनी को अपने सदस्यों का एक रजिस्टर रखना पड़ता है। यदि कम्पनी के सदस्यों की संख्या बहुत अधिक है, तो प्रत्येक सदस्य के खाते को शीघ्र देखने के लिए, कम्पनी को सदस्यों की एक सूची तैयार करनी चाहिए।

कम्पनी अधिनियम की धारा 151 के अनुसार, ऐसी प्रत्येक कम्पनी जिसके सदस्यों की संख्या 50 से अधिक है, उसे सदस्यों के रजिस्टर के साथ सदस्यों की सूची रखना भी अनिवार्य है। यदि सदस्यों के रजिस्टर को ही इस तरह से रखा गया है कि वह सदस्यों की सूची का भी काम करता है, तव अलग से सदस्यों की सूची रखना आवश्यक नहीं है।

सदस्यों की सूची को उसी स्थान पर रखा जाना चाहिए जहां सदस्यों का रजिस्टर रखा जाता है। सूची में प्रत्येक सदस्य का खाता ढूंढने के लिए पर्याप्त संकेत होना चाहिए जिससे कि सदस्य के वारे में आवश्यक सूचना सरलता से प्राप्त की जा सके।

यदि सदस्यों के रजिस्टर में कोई परिवर्तन किया जाता है, तो सदस्यों के रजिस्टर में परिवर्तन करने की तिथि से 14 दिनों के भीतर इस सूची में भी आवश्यक परिवर्तन कर दिया जाना चाहिए।

10.10.2 सदस्यों का विदेशी रजिस्टर

यदि कम्पनी के अन्तर्नियम इस सम्बन्ध में प्राधिकृत करें, तो कम्पनी विदेश में रहने वाले सदस्यों के लिए, भारत से वाहर किसी अन्य देश या राज्य में एक शाखा रजिस्टर भी रख सकती है। ऐसे विदेशी रजिस्टर के रखने के आरम्भ करने की तिथि के 30 दिनों के भीतर रजिस्ट्रार को इसके रखे जाने के स्थान के वारे में सूचना अवश्य दे देनी चाहिए। यदि इस रजिस्टर को रखने के स्थान में कोई परिवर्तन किया जाता है या इसका रखना वन्द किया जाता है, तव भी परिवर्तन या वन्द करने के 30 दिनों के भीतर रजिस्ट्रार को सूचित किया जाना चाहिए।

विदेशी रजिस्टर को भारत में रखे गये सदस्यों के रजिस्टर का एक भाग माना जाता है। प्रत्येक विदेशी रजिस्टर का प्रतिलिपि रजिस्टर भी रखना चाहिए। विदेशी रजिस्टर में की गई प्रत्येक प्रविष्टि की सूचना भारत में स्थित मुख्य कार्यालय में भेजी जानी चाहिए, इसके आधार पर प्रतिलिपि रजिस्टर में प्रविष्टि कर दी जाती हैं।

10.10.3 रजिस्टर का निरीक्षण

कम्पनी के सदस्यों का रजिस्टर एक सार्वजनिक दस्तावेज़ है तथा यह सार्वजनिक निरीक्षण के लिए खुला होता है। कम्पनी का सदस्य कोई शुल्क दिए विना सदस्यों के रजिस्टर तथा सूची का निरीक्षण कर सकता है, परन्तु अन्य व्यक्ति को प्रत्येक निरीक्षण के लिए दस रुपये शुल्क देना पड़ता है। यह रजिस्टर प्रत्येक दिन कार्य समय के दौरान कम-से--कम दो घंटों के लिए खुला रहना चाहिए, यह नियम उस समय लागू नहीं होगा जव अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार जव रजिस्टर वंद कर दिया गया है। निरीक्षण करने के अधिकार में उसकी नकल लेने का अधिकार भी शामिल है।

एक रुपया प्रति 100 शब्दों के लिए फीस दे कर आवेदन करने पर, कम्पनी से रजिस्टर व सूची की प्रतिलिपि प्राप्त की जा सकती है। आवेदन प्राप्त होने के 10 दिन के भीतर (अवकाश के दिनों को छोड़कर) कम्पनी को यह प्रतिलिपि दे देनी चाहिए।

यदि रजिस्टर का निरीक्षण करने से, किसी को मना किया जाता है अथवा आवेदन करने पर 10 दिन के भीतर प्रतिलिपि नहीं भेजी जाती तो कम्पनी तथा उसके प्रत्येक दोषी अधिकारी पर प्रत्येक अपराध के लिए त्रुटि की अवधि के प्रत्येक दिन के लिए 50 रुपये जुर्माना किया जा सकता है।

10.10.4 रजिस्टर को बन्द रखना

कम्पनी अधिनियम की धारा 154 के अनुसार कम्पनी सदस्यों के रजिस्टर को वर्ष में 45 दिनों के लिए वन्द कर सकती है, अर्थात यह रजिस्टर वर्ष में कुल मिलाकर 45 दिनों से अधिक वन्द नहीं रखा जा सकता। परन्तु किसी भी एक समय पर निरन्तर 30 दिनों से अधिक के लिए इस रजिस्टर को वन्द नहीं रखा जा सकता। जिस जिले में कम्पनी का पंजीकृत कार्यालय स्थित है, उस जिले में प्रसारित होने वाले समाचार पत्रों में, रजिस्टर वन्द करने से कम-से-कम 7 दिन पहले विज्ञापन दे कर सूचना देनी चाहिए।

कम्पनी को वार्षिक साधारण सभा के समय तथा वोनस शेयर जारी करने से पहले, सदस्यों के रजिस्टर को अवश्य वन्द करना पड़ता है। सदस्यों का रजिस्टर वन्द होने की अवधि के दौरान, किसी भी शेयर के हस्तांतरण का पंजीयन नहीं किया जाता। इस नियम का पालन न किए जाने पर प्रत्येक ऐसे दिन के लिए जव रजिस्टर अनाधिकृत रूप से वन्द रखा गया है, 500 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है।

10.10.5 रजिस्टर में संशोधन (Rectification of Register)

आप पढ़ चुके हैं कि सदस्यों के रजिस्टर में लिखा विवरण प्रथम दृष्ट्या (prima facie) ठीक या सत्य माना जाता है। यदि इस रजिस्टर में कुछ गलतियां हैं, तो इससे सदस्यों के हितों पर प्रभाव पड़ सकता है।

कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 की धारा 111 के अनुसारः

अ) यदि बिना किसी पर्याप्त कारण के किसी व्यक्ति का नाम इस रजिस्टर में लिख दिया गया है; अथवा

ब) यदि उसका नाम रजिस्टर में लिखने के बाद बिना किसी पर्याप्त कारण के उसमें से हटा दिया जाता है, तो पीड़ित पक्ष रजिस्टर में संशोधन कराने के लिए कम्पनी लॉ बोर्ड के पास आवेदन कर सकता है।

कम्पनी लॉ बोर्ड सम्बन्धित पक्षों को सुनने के पश्चात् या तो आवेदन को अस्वीकार कर सकता है या अपील को खारिज कर सकता है या रजिस्टर में संशोधन के लिए आदेश दे सकता है। यदि पीड़ित पक्ष को कुछ हानि हुई है, तो कम्पनी लॉ बोर्ड, कम्पनी को हर्जाना देने का आदेश भी दे सकता है।

बोध प्रश्न ग

1) सदस्यों के रजिस्टर से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

2) कम्पनी को सदस्यों की सूची कब रखनी होती है?

....

....

....

3) सदस्यों का रजिस्टर एवं सूची कहां रखी जानी चाहिए?

....

....

....

4) जव कम्पनी सदस्यों का रजिस्टर वन्द करना चाहती है तो उसे क्या करना चाहिए?

....

....

....

5) सदस्यों के रजिस्टर का निरीक्षण कौन कर सकता है?

....

....

....

....

6) वताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत:
   i) सदस्यों का रजिस्टर रखना कम्पनी की इच्छा पर निर्भर है।
   ii) जव कम्पनी के सदस्यों की संख्या 100 से अधिक हो जाती है तव इसे सदस्यों की सूची रखनी चाहिए।
   iii) उन दिनों को छोड़कर जव सदस्यों का रजिस्टर वन्द रखा जाता है, सदस्यों द्वारा निरीक्षण के लिए यह प्रतिदिन कार्य-काल के दौरान कम-से-कम दो घंटों के लिए खुला रहना चाहिएं।
   iv) किसी भी वर्ष में कम्पनी सदस्यों के रजिस्टर को एक समय में 30 दिन से अधिक वन्द कर सकती है।
   v) किसीं भी एक समय पर कम्पनी सदस्यों के रजिस्टर को 21 दिन से अधिक वन्द नहीं कर सकती।
   vi) सदस्यों का रजिस्टर वन्द होने की अवधि के दौरान शेयरों के हस्तांतरण का पंजीयन नहीं हो सकता।
   vii) रजिस्टर में कोई गलती होने पर, पीड़ित पक्ष संशोधन कराने के लिए न्यायालय में आवेदन कर सकता है।

10.11 सारांश

कोई भी ऐसा व्यक्ति, जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में शामिल होता है, 'सदस्य' कहलाता है। सदस्य और शेयरधारी, इन दोनों शब्दों को समानार्थी अर्थ में प्रयोग किया जाता है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक शेयरधारी, सदस्य हो तथा यह भी आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक सदस्य, शेयरधारी हो। शेयर-पूंजी के विना वाली कम्पनियों में केवल सदस्य ही होते हैं।

ऐसा कोई भी व्यक्ति जो अनुवन्ध करने के लिए सक्षम है, वह कम्पनी का सदस्य वन सकता है। सार्वजनिक कम्पनी में सदस्यों की न्यूनतम संख्या 7 से कम और निजी कम्पनी में न्यूनतम संख्या 2 से कम नहीं होनी चाहिए।

निम्नलिखित में से किसी भी विधि से कोई व्यक्ति कम्पनी का सदस्य वन सकता है: (i) सीमानियम पर अभिदाता के रूप में हस्ताक्षर करके, (ii) लिखित रूप में शेयर लेने के लिए सहमति देने पर, (iii) योग्यता शेयर लेने पर, iv) निषेध द्वारा, (v) हस्तांतरण या पारेषण के द्वारा।

कोई व्यक्ति इन परिस्थितियों में कम्पनी का सदस्य नहीं रहता: (i) शेयर हस्तांतरित करने पर; (ii) उसकी मृत्यु, या पागल होने या दिवालिया होने पर; (iii) शेयर ज़ब्त होने पर; (iv) शेयरों का अभ्यर्पण किए जाने पर; (v) दिवालिया घोषित होने पर; (vi) कम्पनी के समापन पर; (vii) शेयर लेने का अनुबन्ध रद्द करने पर; (viii) कम्पनी द्वारा शेयरों पर ग्रहणाधिकार करने पर; (ix) शेयरों के मोचन पर; (x) शेयर वारंट जारी किए जाने पर; तथा (xi) न्यायालय के आदेश पर।

कम्पनी अधिनियम तथा अन्तर्नियमों के नियमों के अनुसार सार्वजनिक कम्पनी के शेयर स्वतन्त्रतापूर्वक हस्तांतरित किए जा सकते हैं। शेयरों को 'हस्तांतरण विलेख' भरकर हस्तांतरित किया जाता है। इस विलेख को निर्धारित अधिकारी के समक्ष अवश्य प्रस्तुत करना चाहिए, वह इस पर प्रस्तुत करने की तिथि अंकित कर देता है। सूचीयत प्रतिभूतियों के लिए यह विलेख 12 माह तथा अन्य प्रतिभूतियों के लिए 2 माह तक वैध होता है। हस्तांतरण विलेख के साथ शेयर प्रमाणपत्र भी कम्पनी के पास जमा कराना चाहिए। यदि सब कुछ नियमित है तो निदेशक मंडल एक प्रस्ताव पारित करके हस्तांतरण का पंजीयन कर देते हैं। यदि शेयरों के हस्तांतरण को पंजीकृत करने से इंकार कर दिया जाता है, तो हस्तांतरण के पंजीयन के लिए आवेदन करने की तिथि के दो माह के भीतर हस्तांतरिती को इसकी सूचना अवश्य दी जानी चाहिए।

कानून के प्रवर्तन द्वारा शेयरों के हस्तांतरण को शेयरों का पारेषण कहते हैं। किसी सदस्य की मृत्यु, पागल या दिवालिया होने पर, उसके कानूनी प्रतिनिधियों द्वारा अपने अधिकार के सम्बन्ध में आवश्यक प्रमाण देने पर, शेयर कानूनी प्रतिनिधियों के नाम पंजीकृत कर दिए जाते हैं। पारेषण की दशा में कोई स्टाम्प फीस नहीं लगती तथा प्रतिफल भी नहीं होता।

प्रत्येक कम्पनी के लिए निर्धारित प्रारूप में अपने सदस्यों का रजिस्टर रखना अनिवार्य है, इसमें सदस्यों के सम्बन्ध में निर्धारित सूचना दी होती है। यह रजिस्टर कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में रखा जाना चाहिए तथा प्रत्येक दिन यह निरीक्षण के लिए दो घंटों के लिए खुला रखना चाहिए।

प्रत्येक ऐसी कम्पनी जिसमें सदस्यों की संख्या 50 से अधिक है, उसे सदस्यों की सूची भी रखनी पड़ती है। कम्पनी किसी स्थानीय (local) समाचार पत्र में कम-से-कम 7 दिन की पूर्व सूचना दे कर सदस्यों के रजिस्टर को वन्द कर सकती है। एक समय पर यह रजिस्टर 30 दिनों से अधिक समय के लिए बन्द नहीं किया जा सकता तथा वर्ष में कुल मिलाकर 45 दिन से अधिक दिन वन्द नहीं रखा जा सकता।

यदि किसी व्यक्ति का नाम सदस्यों के रजिस्टर में गलती से लिख दिया गया है या उसका नाम गलती से हटा दिया गया है, तो वह कम्पनी लॉ बोर्ड के पास रजिस्टर में संशोधन के लिए आवेदन कर सकता है।

10.12 शब्दावली

सदस्य (Member) : प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में दर्ज है।

शेयरधारी (Shareholder) : वह व्यक्ति जिसके पास शेयर हैं या जो उनका स्वामी है।

शेयरों का हस्तांतरण (Transfer of Shares) : हस्तांतरण-विलेख को स्वेच्छा से निष्पादित करके शेयरों का स्वामित्व हस्तांतरित करना।

शेयरों का पारेषण (Transmission of Shares) : कानून के प्रवर्तन द्वारा शेयरों का हस्तांतरण।

कोरा हस्तांतरण (Black Transfer) : हस्तांतरक, हस्तांतरण विलेख पर अपने हस्ताक्षर करता है तथा अन्य स्थान खाली छोड़ दिए जाते हैं।

जाली हस्तांतरण (Forged Transfer) : ऐसा हस्तांतरण विलेख जिस पर हस्तांतरक के हस्ताक्षर जाली हैं।

सदस्यों का रजिस्टर (Register of Members) : ऐसा रजिस्टर जिसमें सदस्यों के नाम, पते तथा अन्य विवरण लिखा होता है।

सदस्यों की सूची (Index of Members) : सदस्यों का खाता ढूंढने में सुविधा हो, इसीलिए यह सूची वनाई जाती है।

विदेशी रजिस्टर (Foreign Register) : भारत से वाहर विदेशों में रहने वाले सदस्यों का रजिस्टर।

रजिस्टर को बन्द करना (Closure of Register) : वह अवधि जव यह रजिस्टर वन्द होता है और इस अवधि में कोई भी हस्तांतरण या पंजीयन नहीं होता।

रजिस्टर का संशोधन (Rectification of Register) : रजिस्टर में कोई गलती होने पर, कोई भी व्यक्ति कम्पनी लॉ बोर्ड के पास संशोधन के लिए आवेदन कर सकता है।

10.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 5 i) सही ii) सही iii) गलत iv) सही v) सही vi) गलत vii) गलत

ख 5 i) सही ii) गलत iii) गलत iv) सही v) गलत vi) सही vii) गलत viii) सही ix) सही

ग 6 i) गलत ii) गलत iii) सही iv) गलत v) गलत vi) सही vii) गलत

10.14 स्वपरख प्रश्न

1) सदस्य एवं शेयरधारी में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

2) कौन व्यक्ति कम्पनी का सदस्य वन सकता है? क्या अवयस्क, साझेदारी फर्म, कम्पनी का सदस्य वन सकती हैं?

3) क्या कोई लिखित करार के विना कोई व्यक्ति कम्पनी का सदस्य वन सकता है?

4) कोई सदस्य कम्पनी का सदस्य कव नहीं रहता?

5) सदस्यों के अधिकारों एवं दायित्वों की संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

6) शेयरों को हस्तांतरित करने की विधि का वर्णन कीजिए।

7) शेयरों के हस्तांतरण एवं पारेषण में अन्तर बताइए।

8) कोरा हस्तांतरण क्या है? इसके क्या दोष हैं? उन्हें किस प्रकार दूर किया गया है?

9) सदस्यों के रजिस्टर को बन्द करने से सम्बन्धित कम्पनी अधिनियम, 1956 के क्या प्रावधान हैं? क्या प्रत्येक वार्षिक साधारण सभा से पहले रजिस्टर को बन्द करना अनिवार्य है?

10) सदस्यों के रजिस्टर में संशोधन करने के सम्बन्ध में वैधानिक प्रावधान क्या-क्या हैं?

नोट : इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए, परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 11 निदेशक (Directors)

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 निदेशक की परिभाषा
11.3 निदेशकों की स्थिति
11.4 निदेशकों एवं निदेशक पदों की संख्या
11.5 निदेशकों की योग्यताएं
11.6 निदेशकों की अयोग्यताएं
11.7 निदेशकों की नियुक्ति
11.8 निदेशक पद रिक्त होना
11.8.1 निदेशक द्वारा अवकाश ग्रहण करना
11.8.2 निदेशक द्वारा त्याग-पत्र
11.9 निदेशकों को हटाना
11.10 निदेशकों के अधिकार
11.11 निदेशकों के कर्तव्य
11.12 निदेशकों के दायित्व
11.13 निदेशकों की सभाएं
11.14 सारांश
11.15 शब्दावली
11.16 बोध प्रश्नों के उत्तर
11.17 स्वपरख प्रश्न

11.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- निदेशक की परिभाषा कर सकें;
- निदेशकों की कानूनी स्थिति का वर्णन कर सकें;
- निदेशकों की योग्यताओं एवं अयोग्यताओं का वर्णन कर सकेंगे;
- निदेशकों की नियुक्ति करने की विधि स्पष्ट कर सकेंगे;
- उन परिस्थितियों को सूचीवद्ध कर सकें जिनमें निदेशक का पद रिक्त हो जाता है;
- निदेशक को पद से हटाने की विधि को वता सकें;
- निदेशकों के अधिकार, कर्तव्य एवं दायित्वों का वर्णन कर सकें; और
- निदेशकों की सभाओं से सम्वन्धित नियमों का वर्णन कर सकें।

11.1 प्रस्तावना

आपने इकाई 10 में कंम्पनी की सदस्यता के वारे में पढ़ा। आप जानते ही हैं कि कम्पनी के सदस्यों की संख्या सामान्यतः वहुत अधिक होती है तथा वे सारे देश में फैले होते हैं। अतः कम्पनी के प्रवन्ध संचालन के लिए वे कुछ व्यक्तियों का चुनाव करते हैं, ऐसे निर्वाचित व्यक्तियों को निदेशक कहते हैं। निदेशक मुख्यतः कम्पनी की नीतियों को निर्धारित करने तथा कम्पनी के काम को निर्देशित तथा नियन्त्रित करने का कार्य करते हैं। इस इकाई में आप निदेशकों की कानूनी स्थिति, उनकी योग्यताओं एवं अयोग्यताओं, उनकी नियुक्ति की विधि तथा उनके अधिकार, कर्तव्यों एवं दायित्वों के वारे में अध्ययन करेंगे।

11.2 निदेशक की परिभाषा

निदेशक, शेयरधारियों द्वारा कम्पनी के काम को चलाने, निदेशित करने, प्रवन्ध तथा देख-भाल करने के लिए निर्वाचित व्यक्ति होते हैं। वे कम्पनी के समस्त कार्यों का प्रवन्ध एवं नियंत्रण रखते हैं। दिन-प्रतिदिन के कार्यों के लिए अन्य प्रवन्धकीय अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है।

कम्पनी अधिनियम की धारा 2(13) के द्वारा निदेशक की परिभाषा इस प्रकार की गई है, "निदेशक पद पर आसीन व्यक्ति निदेशक होता है, चाहे उसे किसी भी नाम से पुकारा जाए।" यह परिभाषा सम्मिलित प्रकार की है, व्यापक नहीं है। 'निदेशक' शब्द का अर्थ स्पष्ट करने के लिए हम यह कह सकते हैं कि निदेशक वह व्यक्ति होता है जो कम्पनी के निदेशन, व्यवहारों, प्रवन्ध तथा देख-रेख पर नियन्त्रण रखता है। यह निर्णय करने के लिए कोई व्यक्ति निदेशक है अथवा नहीं, हमें उसके पद और कार्यों की प्रकृति को ध्यान से देखना चाहिए।

अधिनियम की धारा 303 की प्रथम व्याख्या के अनुसार ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसके निर्देशों एवं आदेशों के अनुसार कम्पनी का निदेशक मंडल सामान्यतः कार्य करता है, कम्पनी का निदेशक माना जाता है। यदि कोई व्यक्ति निदेशक के कार्यों को करता है, तव चाहे उसे इस पदनाम से न भी पुकारा जाए, उसे कम्पनी का निदेशक समझा जाएगा। अतः इस वात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि उसे किस नाम से पुकारा जाता है। परन्तु ऐसे विशेषज्ञ जो अपने पेशे से सम्वन्धित सलाह देते हैं, उन्हें निदेशक नहीं समझा जाता है।

यहां यह स्मरण रहे कि कोई व्यक्ति ही निदेशक हो सकता है। अधिनियम की धारा 253 के अनुसार कोई निगमित संस्था, संगठन या फर्म को किसी कम्पनी का निदेशक नियुक्त नहीं किया जा सकता।

11.3 निदेशकों की स्थिति

निदेशकों की कानूनी स्थिति को स्पष्ट करना सरल कार्य नहीं है, क्योंकि कम्पनी अधिनियम में इसको कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है। न्यायाधीश वोवेन के अनुसार, "निदेशकों को कभी एजेंट कहा जाता है तो कभी न्यासी तथा कभी प्रवन्ध साझेदार कहा जाता है। परन्तु इनमें से प्रत्येक सम्बोधन इन व्यक्तियों के सम्पूर्ण अधिकारों एवं दायित्वों का परिचय देने के अर्थ में प्रयुक्त नहीं किए जाते, वल्कि इनका प्रयोग केवल किसी एक समय पर अथवा किसी विशेष उद्देश्य के लिए किया जाता है।" इस प्रकार निदेशक की वास्तविक स्थिति केवल एजेंट या न्यासी या प्रवन्ध साझेदार की नहीं होती, वल्कि इन सव स्थितियों का मिश्रण होती है। आइए, अव हम विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत निदेशक की कानूनी स्थिति का अध्ययन निम्नलिखित प्रकार से करते हैं:

एजेंटों के रूप में : कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति होने के कारण कोई भी कार्य स्वयं नहीं कर सकती। कम्पनी के प्रवन्ध संचालन का कार्य किसी व्यक्ति को सुपुर्द करना अनिवार्य हो जाता है, इन व्यक्तियों को निदेशक कहते हैं। ये कम्पनी के शेयरधारियों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं तथा उन्हें कम्पनी का एजेंट कहा जा सकता है। कम्पनी एवं उसके निदेशकों के मध्य प्रधान तथा एजेंट का सम्वन्ध होता है। अतः एजेंसी कानून के सामान्य नियम, कम्पनी तथा उसके निदेशकों के परस्पर सम्वन्धों को नियमित करते हैं। एजेंट के रूप में उनका यह कर्तव्य है कि वे उचित सावधानी व पूर्ण परिश्रम से व्यापार का संचालन करें। उन्हें, अधिनियम, सीमानियम व अन्तर्नियमों के द्वारा प्रदान किए गये अधिकारों के अन्तर्गत ही कार्य करना चाहिए। जव वे अपने अधिकारों के अन्तर्गत कम्पनी के लिए कोई कार्य या अनुवन्ध करते हैं, तो वे कम्पनी को उनसे वाध्य करते हैं। दूसरे शब्दों में, यदि वे अपने अधिकारों से वाहर कोई कार्य करते हैं तो उसके लिए वे व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होंगे। यह ध्यान रखें कि यदि निदेशक अपने अधिकारों से वाहर कोई कार्य करते हैं और ये कार्य कम्पनी की शक्तियों से वाहर नहीं हैं, तो कम्पनी अपनी साधारण सभा में ऐसे कार्यों का पुष्टिकरण कर सकती है।

कम्पनी को वाध्य करने के लिए यह आवश्यक है कि वह कार्य कम्पनी के नाम में किया जाना चाहिए। **निदेशक केवल कम्पनी के एजेंट होते हैं, अलग-अलग शेयरधारियों के नहीं।**

परन्तु यह कहना भी अपने आप में पूर्ण सत्य नहीं है कि निदेशक, कम्पनी के एजेंट होते हैं क्योंकि एजेंटों को निर्वाचित नहीं किया वल्कि उन्हें नियुक्त किया जाता है तथा द्वितीय, एजेंटों को कोई स्वतन्त्र अधिकार नहीं होते जवकि कुछ विषयों पर निदेशकों को स्वतन्त्र ...ार प्राप्त होते हैं।

न्यासियों के रूप में : न्यासी से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जो अन्य व्यक्तियों के हित के लिए परिसम्पत्ति की देख-भाल करता है। यद्यपि कठोर कानूनी अर्थ में निदेशक कम्पनी के न्यासी नहीं होते हैं, परन्तु फिर भी कुछ सीमा तक उन्हें न्यासी कहा जाता है। वे कम्पनी की सम्पत्ति एवं धन के अभिरक्षक होते हैं अतः इस कारण वे कम्पनी की सम्पत्ति एवं धन के उचित उपयोग के लिए पूरी तरह से उत्तरदायी होते हैं। यदि वे कम्पनी के धन या सम्पत्ति का दुरुपयोग करते हैं तो उन्हें या तो वापस करना होगा या प्रतिपूर्ति करनी पड़ेगी।

निदेशकों को अपने अधिकारों का उपयोग सत्यनिष्ठा से तथा कम्पनी की भलाई के लिए करना चाहिए, न कि अपने व्यक्तिगत स्वार्थों के लिए। निदेशक तथा कम्पनी के बीच न्यासवत् सम्बन्ध (**fiduciary relation**) होता है। निदेशकों से उतनी ही ईमानदारी व आचरण की अपेक्षा की जाती है जितनी कि एक न्यासी से की जाती है। आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि निदेशक कम्पनी के न्यासी होते हैं, पृथक-पृथक शेयरधारियों के नहीं।

परन्तु सही अर्थ में निदेशकों को कम्पनी का न्यासी कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि न्यासी की तरह निदेशक स्वयं अपने नाम से अनुबन्ध नहीं करते हैं। वह जिस कम्पनी का निदेशक है, वह उस कम्पनी के नाम से ही अनुबन्ध करता है तथा न्यासी की तरह वह कम्पनी की सम्पत्ति का स्वामी नहीं होता, क्योंकि सम्पत्ति तो कम्पनी के नाम में होती है निदेशकों के नाम नहीं।

प्रबंधक साझेदार के रूप में : निदेशकों को कम्पनी का प्रबन्ध साझेदार भी कहा जाता है क्योंकि एक तरफ तो कम्पनी का सम्पूर्ण प्रबन्ध व सब मामलों पर नियंत्रण करने की जिम्मेदारी उन्हें सौंपी जाती है तो दूसरी तरफ वे कम्पनी के शेयरधारी भी होते हैं। वे कम्पनी के शेयरधारी के रूप में स्वयं अपने हित के लिए तथा कम्पनी की भलाई के लिए कम्पनी के प्रबन्ध संचालक का कार्य करते हैं।

परन्तु वास्तविक अर्थ में वे कम्पनी के प्रबन्धक साझेदार नहीं हैं, क्योंकि उनका दायित्व उनके द्वारा खरीदे गये शेयरों के मूल्यों तक ही सीमित होता है जबकि साझेदारों का दायित्व असीमित होता है। इसके अतिरिक्त, जिस प्रकार एक साझेदार अपने कार्यों से अन्य साझेदारों को वाध्य करता है, उस तरह से निदेशक को अन्य निदेशकों तथा शेयरधारियों को वाध्य करने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

कर्मचारियों के रूप में : निदेशक तो शेयरधारियों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं, अतः वे कम्पनी के कर्मचारी (employee) नहीं कहलाये जाने चाहिए। परन्तु निदेशक, कम्पनी के साथ विशेष अनुवन्ध करके कम्पनी का वेतनभोगी कर्मचारी बन सकता है और उस स्थिति में उसे कम्पनी का कर्मचारी माना जाएगा तथा कर्मचारियों को उपलब्ध लाभों को प्राप्त करने का हकदार भी माना जाएगा।

अतः, उपर्युक्त विश्लेषण से यह पूर्णतः स्पष्ट हो गया है कि निदेशक न तो कम्पनी के एजेंट हैं, न ही वे न्यासी हैं, न ही वे प्रबन्धक साझेदार हैं और न ही वे कम्पनी के कर्मचारी हैं। वास्तव में, वे इन सव स्थितियों में कार्य करते हैं। वास्तव में निदेशक के अधिकारों तथा पूंजी सम्बन्धी मामलों के लिए, निदेशकों व कम्पनी के मध्य न्यासवत् सम्बन्ध होता है।

11.4 निदेशकों एवं निदेशक पदों की संख्या

कम्पनी अधिनियम ने कम्पनी के निदेशकों की न्यूनतम संख्या निर्धारित कर रखी है। अधिनियम की धारा 252 के अनुसार,
(अ) प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी में कम-से-कम तीन निदेशक अवश्य होने चाहिएं, तथा
(व) अन्य कम्पनियों में कम-से-कम दो निदेशक अवश्य होने चाहिए।

कम्पनी अधिनियम ने निदेशकों की न्यूनतम संख्या तो निर्धारित की है, परन्तु अधिकतम संख्या के वारे में अधिनियम मौन है। इस वैधानिक न्यूनतम संख्या को ध्यान में रखते हुए, कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा निदेशक मंडल की न्यूनतम व अधिकतम संख्या निर्धारित की जा सकती है। अन्तर्नियमों द्वारा निर्धारित परिसीमा के अन्दर, कम्पनी एक साधारण सभा में एक साधारण प्रस्ताव पारित करके, निदेशकों की संख्या को घटा या वढ़ा सकती है [धारा 258]।

यदि कोई सार्वजनिक कम्पनी या निजी कम्पनी जो सार्वजनिक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, निदेशकों की संख्या को अन्तर्नियमों में निर्धारित अधिकतम संख्या से वढ़ाना चाहती है, तो वह केन्द्र सरकार की अनुमति

से ऐसा कर सकती है। परन्तु जब निदेशकों की कुल संख्या प्रस्तावित वृद्धि के कारण 12 से अधिक नहीं हो रही हो, तब केन्द्र सरकार की अनुमति प्राप्त करना आवश्यक नहीं है [धारा 259]।

निदेशक पदों की संख्या : कोई व्यक्ति एक साथ, एक ही समय में 20 से अधिक कम्पनियों का निदेशक नहीं बन सकता। यदि कोई व्यक्ति पहले से ही 20 कम्पनियों में निदेशक के पद पर नियुक्त है और उसे किसी अन्य कम्पनी का निदेशक नियुक्त किया जाता है, तो उसकी नियुक्ति तब तक प्रभावी नहीं होती, जब तक वह नई नियुक्ति के 15 दिन के अंदर-अंदर किसी ऐसी कम्पनी का निदेशक-पद न त्याग दे जिसमें वह पहले निदेशक के पद पर था। यदि नई नियुक्ति की तिथि से 15 दिनों के भीतर ऐसा चुनाव नहीं किया जाता, तो नई नियुक्ति व्यर्थ समझी जाती है।

बीस कम्पनियों की संख्या की गणना करते समय निम्नलिखित को उसमें शामिल नहीं किया जाएगा:

i) असीमित कम्पनी;

ii) ऐसी निजी कम्पनी जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित (subsidiary) अथवा नियंत्रक कम्पनी (holding company) नहीं है;

iii) ऐसी संस्था जो लाभ के उद्देश्य से कार्य न कर रही हो;

iv) ऐसी कम्पनी जिसमें वह व्यक्ति एक वैकल्पिक निदेशक है।

यदि कोई व्यक्ति उपर्युक्त नियमों के विपरीत 20 से अधिक कम्पनियों में निदेशक के पद पर रहता है या इस रूप में कार्य करता है, तो उस पर पहली 20 कम्पनियों के बाद प्रत्येक कम्पनी के लिए 5,000 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है।

11.5 निदेशकों की योग्यताएं (Qualifications of Directors)

कम्पनी अधिनियम के द्वारा निदेशक के पद पर नियुक्त होने के लिए शैक्षणिक योग्यता निर्धारित नहीं की है। अधिनियम में यह भी निर्धारित नहीं किया है कि निदेशक होने के लिए उसे योग्यता शेयर लेने होंगे। निदेशक के लिए कम्पनी के शेयर रखना तथा कम्पनी का सदस्य होना भी आवश्यक नहीं है। परन्तु **कम्पनी के अन्तर्नियमों में सामान्यतः निदेशकों के योग्यता शेयरों के सम्बन्ध में प्रावधान होता है।** ऐसे शेयरों को योग्यता शेयर (Qualification Share) कहते हैं। निदेशकों द्वारा ये शेयर खरीदने इसलिए आवश्यक बनाए गए हैं ताकि उनका भी कम्पनी में कोई वित्तीय जोखिम हो। तालिका 'A' के नियमन 66 में यह व्यवस्था की गई है कि निदेशक के पास कम-से-कम एक शेयर अवश्य होना चाहिए। अन्तर्नियमों में योग्यता शेयरों की संख्या अथवा उनका मूल्य लिखा होता है।

यदि अन्तर्नियमों में योग्यता शेयरों के सम्बन्ध में नियम है, तब प्रत्येक निदेशक को अपनी नियुक्ति की तिथि के दो माह के भीतर उन योग्यता शेयरों को प्राप्त कर लेना चाहिए। अन्तर्नियमों में ऐसा कोई भी नियम, जिसके द्वारा योग्यता शेयरों को प्राप्त करने की दो माह की अवधि को कम किया जाता है, तो वह व्यर्थ होता है। यहां आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि निदेशक के पद पर नियुक्त होने से पहले, उस व्यक्ति को योग्यता शेयर लेने आवश्यक नहीं होते हैं, बल्कि नियुक्ति के दो माह के भीतर उसे योग्यता शेयर प्राप्त कर लेने चाहिए।

योग्यता शेयरों का अंकित मूल्य 5,000 रुपये या यदि एक ही शेयर का अंकित मूल्य 5,000 रु. से अधिक हो, तो एक शेयर के अंकित मूल्य से अधिक नहीं होना चाहिए। अन्तर्नियमों में यदि इस राशि से अधिक मूल्य के योग्यता शेयर रखने की व्यवस्था की जाती है, तो वह अमान्य होती है।

शेयर वारंट के धारक को वारंट में निर्दिष्ट शेयरों का धारक नहीं माना जाता है [धारा 270 (4)]।

यदि कोई व्यक्ति निदेशक के पद पर नियुक्त होने की तिथि के दो माह के भीतर योग्यता शेयर प्राप्त नहीं करता, या बाद में किसी भी समय वह योग्यता शेयरों का धारक नहीं रहता, तो उसका पद स्वतः ही रिक्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त, दो माह की अवधि समाप्त होने के पश्चात् जितने समय तक वह निदेशक के रूप में कार्य करता है, उस पर प्रत्येक दिन के लिए 50 रुपये का जुर्माना किया जा सकता है।

निदेशक के पद पर नियुक्त होने वाला व्यक्ति योग्यता शेयरों को या तो कम्पनी से सीधे ही खरीद सकता है या फिर बाज़ार से खरीद सकता है।

योग्यता शेयर सम्बन्धी उपर्युक्त नियम निम्न पर लागू नहीं होते:
(i) जब तक अन्तर्नियमों में स्पष्टतः व्यवस्था न हो, तब तकनीकी निदेशकों के लिए; (ii) विशेष हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले निदेशक, (iii) केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त निदेशक तथा स्वतन्त्र निजी कम्पनी के निदेशकों पर।

11.6 निदेशकों की अयोग्यताएं (Disqualifications of Directors)

कम्पनी अधिनियम की धारा 274 में उन परिस्थितियों की सूची दी गई है जब कि व्यक्ति को निदेशक के पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता। किसी व्यक्ति को निदेशक के पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता यदि:

i) उसे सक्षम न्यायालय ने अस्वस्थ मस्तिष्क का पाया है;

ii) वह अनुन्मुक्त (undischarged) दिवालिया है;

iii) उसने दिवालिया घोषित किए जाने के लिए आवेदन किया है तथा यह आवेदन विचाराधीन है;

iv) उसे किसी न्यायालय ने नैतिक नीचता का अपराधी पाया है तथा उसे कम-से-कम छः माह के कारावास का दण्ड दिया गया हो तथा कारावास की समाप्ति की तिथि से अभी पांच वर्ष की अवधि समाप्त नहीं हुई हो;

v) उस व्यक्ति ने अकेले या संयुक्त शेयरधारी के रूप में अपने शेयरों पर की गई मांग की राशि का भुगतान नहीं किया है तथा मांग की राशि के भुगतान की अंतिम तिथि के पश्चात् छः माह बीत चुके हैं;

vi) उसे कम्पनी अधिनियम की धारा 203 के अन्तर्गत न्यायालय के आदेश से निदेशक के पद पर नियुक्त होने के लिए अयोग्य घोषित किया हो। यह कम्पनी के प्रवर्तन या प्रबन्ध में छल-कपट करने के लिए होती है।

केन्द्र सरकार, यदि चाहे तो, उपर्युक्त (iv) तथा (v) में दी गई अयोग्यताओं को समाप्त कर सकती है।

कोई निजी कम्पनी, जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी नहीं है, अपने अन्तर्नियमों द्वारा अन्य अयोग्यताएँ भी निर्धारित कर सकती है। इस प्रकार कोई सार्वजनिक कम्पनी या सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित निजी कम्पनी, अपने अन्तर्नियमों में उपर्युक्त अयोग्यताओं के अतिरिक्त और कोई अयोग्यता निर्धारित नहीं कर सकतीं।

बोध प्रश्न क

1) निदेशक की परिभाषा कीजिए।

....

....

....

2) उन स्थितियों को गिनाइए जिस रूप में निदेशक कार्य करता है।

....

....

....

....

3) सार्वजनिक तथा निजी कम्पनी में निदेशकों की न्यूनतम संख्या क्या है?

....

....

....

....

4) निदेशकों के 'योग्यता शेयरों' से आपका क्या तात्पर्य है?

....

....

....

5) कोई कम्पनी निदेशकों की संख्या किस प्रकार बढ़ा सकती है?

....

....

....

6) ऐसी चार स्थितियां बताइए जब कोई व्यक्ति निदेशक के पद पर नियुक्त होने के अयोग्य होता है।

....

....

....

....

7) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत।
   i) प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी में निदेशकों की न्यूनतम संख्या पांच तथा अन्य कम्पनियों में तीन होनी चाहिए।
   ii) केवल व्यक्ति को ही किसी कम्पनी का निदेशक किया जा सकता है।
   iii) निदेशक कम्पनी के न्यासी होते हैं तथा वे पृथक-पृथक शेयरधारी के अथवा कम्पनी के साथ अनुबन्ध करने वाले तीसरे पक्षों के न्यासी नहीं होते।
   iv) अन्तर्नियमों में निर्दिष्ट परिसीमा के भीतर, कम्पनी अपनी साधारण सभा में विशेष प्रस्ताव पारित करके, निदेशकों की संख्या में वृद्धि या कमी कर सकती है।
   v) एक व्यक्ति, एक समय में एक साथ 20 से अधिक कम्पनियों में निदेशक हो सकता है।
   vi) निदेशकों को अपनी नियुक्ति की तिथि के तीन माह के भीतर योग्यता शेयर प्राप्त कर लेने चाहिए।
   vii) यदि कोई कम्पनी निदेशकों की संख्या 12 से अधिक करना चाहती है तो उसे केन्द्र सरकार की अनुमति अवश्य प्राप्त करनी चाहिए।
   viii) यदि कोई व्यक्ति अपने शेयरों पर मांग की गयी राशि का छः माह से अधिक समय तक भुगतान नहीं करता, तो वह निदेशक के पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता।

11.7 निदेशकों की नियुक्ति

यह तो आप जानते ही हैं कि केवल व्यक्ति को ही निदेशक के पद पर नियुक्त किया जा सकता है। **कोई भी व्यक्ति, जो अनुबन्ध करने के योग्य है तथा जिसके पास योग्यता शेयर हैं, कम्पनी के निदेशक के पद पर नियुक्त होने के लिए उपयुक्त या योग्य होता है।** निदेशकों की नियुक्ति निम्नलिखित में से किसी भी तरीके से हो सकती है (1) अन्तर्नियमों द्वारा; (2) साधारण सभा में सदस्यों द्वारा; (3) निदेशक मंडल द्वारा; (4) केन्द्र सरकार द्वारा; तथा (5) तीसरे पक्षों द्वारा। आइए अब इनका विस्तार से अध्ययन करते हैं।

1) **अन्तर्नियमों द्वारा :** कम्पनी के प्रथम निदेशकों के नाम सामान्यतः अन्तर्नियमों में दिए होते हैं। यदि अन्तर्नियमों में उनके नाम नहीं दिए हों तब सीमानियम के हस्ताक्षरकर्ताओं को ही कम्पनी का प्रथम

निदेशक मान लिया जाता है तथा वे प्रथम साधारण वार्षिक सभा में निदेशकों की नियुक्ति होने के समय तक ही अपने पद पर कार्य कर सकते हैं।

किसी व्यक्ति को अन्तर्नियमों के द्वारा अथवा प्रविवरण में उसके निदेशक या प्रस्तावित निदेशक के रूप में नाम नहीं दिया जा सकता, जब तक उसने या उसके अधिकृत एजेंट ने

(i) निदेशक के रूप में कार्य करने के सम्बन्ध में लिखित सहमति रजिस्ट्रार के पास फाइल न कर दी हो; तथा (ii) निम्नलिखित में से कोई एक शर्त पूरी न कर दी हो—(अ) योग्यता शेयरों के लिए सीमानियम पर हस्ताक्षर कर दिए हों, या (ब) उसने कम्पनी से योग्यता शेयर ले लिए हों तथा उनके मूल्य का या तो भुगतान कर दिया हो या भुगतान करने की सहमति दे दी हो; या (स) उसने हस्ताक्षर करके रजिस्ट्रार के पास एक वचन दिया हो कि वह कम्पनी से योग्यता शेयर ले लेगा व उनका भुगतान कर देगा; या (द) उसने रजिस्ट्रार के पास इस आशय का शपथ-पत्र फाईल किया हो कि योग्यता शेयरों की संख्या, यदि कोई निर्धारित है, उसके नाम से पंजीकृत हैं।

परन्तु उपर्युक्त प्रतिबन्ध निम्नलिखित पर लागू नहीं होते :

(i) शेयर-पूंजी के बिना वाली कम्पनी; (ii) निजी कम्पनी; (iii) ऐसी कम्पनी जो सार्वजनिक कम्पनी बनने से पहले निजी कम्पनी थी; (iv) ऐसी कम्पनी जो व्यापार आरम्भ करने का अधिकार प्राप्त होने के एक वर्ष के पश्चात् प्रविवरण जारी करती है।

2) **साधारण सभा में शेयरधारियों द्वारा :** कम्पनी के प्रथम निदेशक, प्रथम साधारण वार्षिक सभा में निदेशकों की नियुक्ति होने तक, अपने पद पर कार्य कर सकते हैं। अधिनियम की धारा 255 के अनुसार, सार्वजनिक कम्पनी के निदेशकों की नियुक्ति, प्रत्येक वर्ष शेयरधारियों की वार्षिक साधारण सभा में की जानी चाहिए। जब तक अन्तर्नियमों में प्रत्येक वार्षिक साधारण सभा में सभी निदेशकों के रिटायर होने की व्यवस्था न हो, तब तक सार्वजनिक कम्पनी के कम-से-कम दो-तिहाई निदेशक बारी-बारी से रिटायर होने वाले होने चाहिए। अतः केवल एक-तिहाई निदेशक ही स्थायी या रिटायर न होने वाले या पदेन
(ex-officio) निदेशक हो सकते हैं।

बाद की प्रत्येक वार्षिक साधारण सभा में, बारी-बारी से रिटायर होने वाले निदेशकों की कुल संख्या के दो-तिहाई निदेशकों के एक-तिहाई या एक तिहाई की निकटतम संख्या को, अपने पद से रिटायर हो जाना चाहिए। जो निदेशक अपनी नियुक्ति की तिथि से सबसे अधिक समय तक अपने पद पर बने हुए हैं, वे ही सबसे पहले रिटायर होंगे। यदि कुछ निदेशक एक ही दिन नियुक्त हुए हों, तब परस्पर समझौता करके अथवा पर्चियां डालकर रिटायर होने के सम्बन्ध में निर्णय किया जा सकता है।

रिटायर होने वाले निदेशक पुनः निर्वाचित होने के लिए योग्य होते हैं। यदि रिटायर होने वाले निदेशक के अतिरिक्त और कोई अन्य व्यक्ति निदेशक के पद के लिए चुनाव लड़ना चाहता है, तो उसे सभा की तिथि से कम-से-कम 14 दिन पहले कम्पनी को लिखित रूप में सूचना दे देनी चाहिए। तत्पश्चात्, कम्पनी को ऐसे व्यक्ति के प्रत्याशी होने की सूचना सब सदस्यों को कम-से-कम सात दिन पहले दे देनी चाहिए, यह सूचना प्रत्येक सदस्य को अलग-अलग सूचना भेजकर या सार्वजनिक विज्ञापन दे कर दी जा सकती है ।

यदि निदेशकों के रिटायर होने से उत्पन्न रिक्त स्थानों को वार्षिक साधारण सभा में नहीं भरा जा सकता है, तो वह सभा अगले सप्ताह के उसी दिन, उसी समय व उसी स्थान पर होने तक के लिए स्थगित कर दी जाती है। यदि स्थगित सभा में भी रिटायर होने वाले निदेशकों के स्थान को भरा नहीं जा सका है तथा उस सभा में उक्त रिक्त स्थान को न भरने के सम्बन्ध में स्पष्ट निर्णय नहीं लिया गया है, तब रिटायर होने वाले निदेशकों को पुनर्नियुक्त हुआ माना जाता है।

यहां यह स्मरण रहे कि प्रत्येक निदेशक की नियुक्ति के लिए, जब तक उस सभा में कोई विपरीत फैसला एकमत से न लिया गया हो, अलग-अलग प्रस्ताव पारित किए जाने चाहिए। दूसरे शब्दों में, दो या अधिक निदेशकों की नियुक्ति एक प्रस्ताव पारित करके नहीं की जा सकती।

3) **निदेशक मंडल द्वारा :** निदेशक मंडल (Board of Directors) निम्नलिखित परिस्थितियों में निदेशक नियुक्त कर सकता है :

i) **अतिरिक्त निदेशक** (Additional Directors) : यदि अन्तर्नियमों द्वारा अधिकार दिया जाए, तो

निदेशक मंडल, अतिरिक्त निदेशक नियुक्त कर सकता है। परन्तु इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना चाहिए कि निदेशकों की कुल संख्या (अतिरिक्त निदेशक सहित), अन्तर्नियमों में निर्धारित निदेशकों की अधिकतम संख्या से अधिक नहीं होनी चाहिए। ऐसे अतिरिक्त निदेशक आगामी वार्षिक साधारण सभा की तिथि तक अपने पद पर बने रह सकते हैं।

ii) **वैकल्पिक निदेशक** (Alternate Director) : यदि कम्पनी के अन्तर्नियम इस सम्बन्ध में अधिकार दें, तो वैकल्पिक निदेशक की नियुक्ति की जा सकती है। वैकल्पिक निदेशक की नियुक्ति ऐसे निदेशक के स्थान पर की जा सकती है, जो उस राज्य से कम-से-कम तीन माह तक बाहर रहता है, जहां पर सामान्यतः निदेशक मंडल की सभाएं बुलाई जाती हैं। ऐसा वैकल्पिक निदेशक केवल तब तक अपने पद पर रहता है जब तक मूल निदेशक (जिसके स्थान पर उसकी नियुक्ति हुई है) उस राज्य में वापस नहीं आ जाता या मूल निदेशक का कार्यकाल समाप्त नहीं हो जाता।

iii) **आकस्मिक रिक्त स्थान** (Casual Vacancy) : यदि किसी निदेशक का पद किसी भी कारण से, उसका कार्यकाल समाप्त होने से पहले ही रिक्त हो जाता है, तो कम्पनी के अन्तर्नियमों में तत्सम्बन्धी नियमों के अनुसार, निदेशक मंडल इस रिक्त स्थान की पूर्ति कर सकता है। इस प्रकार की स्थिति किसी निदेशक की मृत्यु, त्यागपत्र देने, पागल होने, दिवालिए होने से उत्पन्न हो सकती है। आकस्मिक रिक्त स्थान को भरने के लिए जो निदेशक नियुक्त किया जाता है, उसके कार्यकाल की अवधि उसी अवधि के बराबर होगी, जिस अवधि तक वह निदेशक पदासीन रहता जिसके स्थान पर उसकी नियुक्ति हुई है।

4) **केन्द्र सरकार द्वारा :** केन्द्र सरकार या कम्पनी लॉ बोर्ड के लिखित आदेश प्राप्त होने पर, आदेश में लिखित संख्या में निदेशक, कम्पनी या शेयरधारियों या जनता के हितों की रक्षा के लिए नियुक्त किए जा सकते हैं। **ऐसे निदेशकों की नियुक्ति अन्याय (oppression) या कुप्रबन्ध (mismanagement) को रोकने के लिए की जाती है।** केन्द्र सरकार के निर्देशन पर कम्पनी लॉ बोर्ड निदेशकों की नियुक्ति का आदेश दे सकता है अथवा कम्पनी के कम-से-कम 100 सदस्यों के आवेदन पर अथवा दस प्रतिशत कुल मतदान की शक्ति रखने वालों के आवेदन पर यह नियुक्ति की जा सकती है। ऐसे निदेशकों को योग्यता शेयर रखने की आवश्यकता नहीं होती तथा उन्हें बारी-बारी से रिटायर होना भी आवश्यक नहीं है। परन्तु केन्द्र सरकार, ऐसे किसी भी निदेशक को कभी भी उसके पद से हटा कर उसके स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त कर सकती है।

5) **अन्य पक्षकारों द्वारा :** कम्पनी के अन्तर्नियम, तीसरे पक्षकारों को, कम्पनी के निदेशक मंडल में अपना नामित व्यक्ति नियुक्त करने का अधिकार दे सकती है। परन्तु ऐसे नामित निदेशकों की संख्या निदेशक मंडल की कुल संख्या के एक-तिहाई से अधिक नहीं होनी चाहिए। यहां पर तीसरे पक्षकारों से आशय डिबेंचरधारियों, वित्तीय संस्थाओं या बैंकों से है, जिन्होंने कम्पनी को ऋण प्रदान किया है। इस प्रकार की नियुक्ति करने का उद्देश्य यही है कि इस बात का ध्यान रखा जाए कि जिन उद्देश्यों के लिए ऋण प्रदान किया गया है, केवल उन्हीं उद्देश्यों के लिए उस राशि का उपयोग किया जाए। इन निदेशकों के लिए बारी-बारी से रिटायर होना आवश्यक नहीं है।

आप पढ़ चुके हैं कि प्रत्येक निदेशक की नियुक्ति के लिए अलग-अलग प्रस्ताव पारित किया जाना चाहिए। सामान्यतः, निदेशकों का निर्वाचन बहुमत के आधार पर होता है। इसका परिणाम यह हो सकता है कि अल्पमत वाले शेयरधारी अपनी प्रतिनिधि निदेशक मंडल में नियुक्त नहीं करवा पाते। अतः अधिनियम की धारा 265 के द्वारा अल्पमत वाले शेयरधारियों को निदेशक मंडल में अपना प्रतिनिधि नियुक्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है। यह अनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली को अपनाकर किया जाता है। कम्पनी के अन्तर्नियमों में यह प्रावधान हो सकता है कि कुल निदेशकों की संख्या के कम-से-कम दो-तिहाई निदेशक एकल हस्तांतरणीय मत (single transferable vote) द्वारा अथवा संचयी मत पद्धति (cumulative voting) या किसी अन्य प्रकार से नियुक्त किए जाएंगे। इस पद्धति के अनुसार निदेशकों की नियुक्ति तीन वर्ष में एक बार की जा सकती है तथा आकस्मिक रिक्त स्थानों को अन्तर्नियमों में निर्धारित रीति के अनुसार भरा जा सकता है।

11.8 निदेशक पद रिक्त होना (Vacation of Office by Directors)

कम्पनी अधिनियम की धारा 283 के अनुसार निम्नलिखित परिस्थितियों में निदेशक का पद रिक्त हुआ माना जाता है :

i) यदि वह अपनी नियुक्ति के दो माह के भीतर योग्यता-शेयर नहीं लेता, या वह योग्यता शेयरों का धारक न रहे;

ii) यदि किसी सक्षम न्यायालय ने उसे अस्वस्थ मस्तिष्क का पाया है;

iii) यदि उसने दिवालिया होने के लिए न्यायालय में आवेदन कर दिया है;

iv) यदि उसे दिवालिया घोषित कर दिया जाता है;

v) यदि उसे न्यायालय ने नैतिक नीचता का अपराधी पाया है तथा उसे इस अपराध के लिए छः मास के कारावास का दण्ड दिया गया है;

vi) उसने अपने शेयरों पर छः माह तक मांग की राशि का भुगतान नहीं किया है;

vii) यदि वह निदेशक मंडल की अनुमति के विना निदेशक मंडल की तीन सभाओं से लगातार अनुपस्थित रहता है अथवा तीन माह तक निदेशक मंडल की एक भी सभा में उपस्थित नहीं होता (इनमें से जो भी अवधि अधिक हो)। परन्तु यदि वह जानवूझकर अनुपस्थित नहीं रहता वल्कि बीमारी आदि के कारण अनुपस्थित रहा हो तो इस कारण से उसका पद रिक्त नहीं माना जाएगा;

viii) यदि वह केन्द्र सरकार से पूर्व अनुमति प्राप्त किए बिना, उस कम्पनी से जिसका वह निदेशक है, अपने निजी प्रयोग के लिए ऋण लेता है या ऋण के लिए गारंटी या अन्य प्रतिभूति स्वीकार करता है;

ix) यदि वह अधिनियम की धारा 299 का उल्लंघन करके, कम्पनी द्वारा किए गये अनुवन्ध में अपने स्वार्थ को निदेशक मंडल के समक्ष प्रकट नहीं करता;

x) यदि उसे धारा 203 के अन्तर्गत किसी न्यायालय ने निदेशक के पद पर नियुक्त करने के लिए अयोग्य घोषित किया है, इसके अनुसार कपटी व्यक्ति को कम्पनी का प्रवन्ध संचालन करने से रोका गया है;

xi) यदि उसे कम्पनी द्वारा साधारण प्रस्ताव पारित करके उसके पद से हटा दिया है;

xii) यदि उसे किसी पद पर होने के कारण नियुक्त किया गया है और अव वह उस पद पर नहीं है;

xiii) यदि उसे रजिस्ट्रार द्वारा कम्पनी की लेखा पुस्तकों तथा अन्य रिकार्ड की जांच से सम्वन्धित किसी अपराध के लिए अपराधी ठहराया है।

एक निजी कम्पनी जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी नहीं है, अपने अन्तर्नियमों द्वारा, अन्य आधार भी रख सकती है जिनके द्वारा निदेशक का पद रिक्त हुआ माना जाएगा।

निदेशक का पद रिक्त होने के सम्वन्ध में उपर्युक्त प्रावधान समस्त कम्पनियों पर लागू होते हैं चाहे वह सार्वजनिक कम्पनी है या निजी कम्पनी। उपर्युक्त किसी भी घटना के घटित होने पर, निदेशक को अपने पद से हटना पड़ेगा। ये नियम उन सभी निदेशकों पर लागू होते हैं चाहे वे किसी के भी द्वारा या किसी भी अवधि के लिए नियुक्त हुए हों। निदेशक मंडल को इनको कम करने या छूट देने का अधिकार नहीं है।

11.8.1 निदेशक द्वारा अवकाश ग्रहण करना

यह तो आपको ज्ञात ही है कि निदेशकों की कुल संख्या के दो-तिहाई निदेशक वारी-वारी से अवकाश ग्रहण करने वाले होते हैं। यदि वार्षिक साधारण सभा में अवकाश ग्रहण करने वाले निदेशक को पुनः निर्वाचित नहीं किया जाता, तो वह अपने पद से हटा हुआ माना जाता है।

11.8.2 निदेशक द्वारा त्याग-पत्र

कोई भी निदेशक अन्तर्नियमों में निर्धारित रीति के अनुसार अपना पद त्याग सकता है। यदि अन्तर्नियमों में इस संवन्ध में कोई नियम नहीं दिया गया है, तो वह कभी भी कम्पनी को उचित सूचना देकर पद त्याग सकता है। इस वात से कोई अन्तर नहीं पड़ता है कि कम्पनी उसका त्याग-पत्र स्वीकार करती है अथवा नहीं। एक वार त्याग-पत्र देने पर वह तत्काल प्रभावी होता है अथवा पद त्यागने के इरादे की स्पष्ट सूचना देने पर पद रिक्त हो जाता है। एक वार त्याग-पत्र दे दिए जाने के पश्चात उसे सम्वन्धित कम्पनी की सहमति के विना वापस नहीं लिया जा सकता है।

त्याग-पत्र कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय के पते पर भेजा जाना चाहिए। त्याग-पत्र का लिखित होना वेहतर होता है, परन्तु कभी मौखिक त्याग-पत्र को भी प्रभावी माना जाता है, जैसे कि यदि किसी निदेशक ने कम्पनी की साधारण सभा में मौखिक त्याग-पत्र दिया हो तो इसे वैध माना जाता है।

11.9 निदेशकों को हटाना (Removal of Directors)

किसी भी निदेशक को उसके कार्यकाल की अवधि समाप्त होने से पहले, निम्नलिखित द्वारा पद से हटाया जा सकता है: (अ) शेयरधारियों; या (ब) केन्द्र सरकार; या (स) कम्पनी लॉ बोर्ड। आइए अब इनका विस्तार से अध्ययन करते हैं।

अ) **शेयरधारियों द्वारा हटाया जाना :** कोई कम्पनी विशेष सूचना दे कर तथा साधारण प्रस्ताव पारित करके निदेशक को पद से हटा सकती है। परन्तु वे निम्नलिखित को पद से नहीं हटा सकते—(i) केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त निदेशकों को; (ii) निजी कम्पनी के आजीवन निदेशक को; (iii) विशेष हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले निदेशक को जैसे लेनदारों या डिबेंचरधारियों द्वारा नियुक्त निदेशक; तथा (iv) आनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति के अन्तर्गत नियुक्त निदेशक।

किसी निदेशक को उसके पद से हटाने के लिए किसी सभा की तिथि से कम-से-कम 14 दिन पहले कम्पनी को विशेष सूचना दी जानी चाहिए। इस प्रकार की सूचना प्राप्त होते ही, कम्पनी को उसकी एक प्रतिलिपि सम्बन्धित निदेशक को तत्काल भेज देनी चाहिए। ऐसे निदेशक को सभा में प्रस्ताव के प्रति अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अधिकार होता है।

यदि हटाए जाने वाले निदेशक ने कम्पनी को कोई लिखित प्रतिवेदन भेजा है, तो कम्पनी द्वारा अपने प्रत्येक सदस्य को इस प्रतिवदन की एक प्रतिलिपि भेज दी जानी चाहिए। यदि प्रतिवेदन के देर से प्राप्त होने के कारण इसकी प्रतिलिपि सदस्यों का न भेजी जा सकी हो, तो इस प्रतिवेदन को उस सभा में पढ़ा जा सकता है।

किसी निदेशक को उसके पद से हटाए जाने से उत्पन्न रिक्त स्थान को उसी सभा में भरा जा सकता है, परन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि सदस्यों को इसकी विशेष सूचना दी जानी चाहिए। इस प्रकार से नियुक्त किया गया निदेशक उस समय तक पद पर बना रहता है जिस समय तक उसका पूर्वगामी निदेशक, यदि उसे पद से हटाया नहीं जाता, तो पद पर बना रहता। इस प्रकार के रिक्त स्थान को निदेशक मंडल द्वारा आकस्मिक रिक्त स्थान की तरह भरा जा सकता है। परन्तु **हटाए गये निदेशक को पुनः नियुक्त नहीं किया जा सकता, वह पद से हटाए जाने के लिए कम्पनी से क्षतिपूर्ति की मांग कर सकता है।**

ब) **केन्द्र सरकार द्वारा हटाना :** कम्पनी लॉ बोर्ड की सिफारिश पर केन्द्र सरकार निदेशक को पद से हटा सकती है। केन्द्र सरकार, किसी निदेशक को हटाने के मामले को कम्पनी लॉ बोर्ड के पास सिफारिश देने के लिए भेज सकती है यदि वह यह समझती है कि सम्बन्धित व्यक्ति कपट, अपकरण (misfeasance), लापरवाही या विश्वास भंग करने का दोषी है या कम्पनी का व्यापार सुदृढ़ व्यावसायिक सिद्धान्तों के अनुसार संचालित नहीं किया गया है या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा कम्पनी का व्यापार संचालित किया गया हो या किया जा रहा हो जिससे कम्पनी जिस व्यापार, उद्योग या व्यवसाय का अंग हो, उसके हितों को गंभीर नुकसान हुआ हो या होने की सभावना हो। यदि कम्पनी लॉ बोर्ड सन्तुष्ट हो जाता है तो वह उस निदेशक को पद से हटाने के लिए सिफारिश कर सकता है। निदेशक के पद से हटाए गये निदेशक को पांच वर्ष की अवधि के लिए किसी कम्पनी के निदेशक या उसके प्रबन्ध से सम्बन्धित किसी पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता। परन्तु यदि केन्द्र सरकार चाहे तो, कम्पनी लॉ बोर्ड की पूर्व अनुमति से इस अवधि को समाप्त या छूट दे सकती है।

ऐसा निदेशक, जिसे उसके पद से हटाया गया है, पद छीने जाने के लिए कम्पनी से क्षतिपूर्ति की मांग नहीं कर सकता।

स) **कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा हटाना :** अन्याय व काम-काज में कुप्रबन्ध को रोकने के लिए यदि आवेदन दिया गया है तो सन्तुष्ट होने पर बोर्ड निदेशक को पद से हटा सकता है। ऐसा व्यक्ति किसी भी कम्पनी में प्रबन्धकीय पद पर पांच वर्ष तक नियुक्त नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त वह पद छीने जाने के लिए क्षतिपूर्ति की मांग भी नहीं कर सकता।

बोध प्रश्न ख

1) कम्पनी के प्रथम निदेशकों की नियुक्ति कैसे होती है?

....

....

....

2) वारी-वारी से रिटायर होने वाले निदेशक कौन हैं?

....

....

....

3) वैकल्पिक निदेशक से आपका क्या तात्पर्य है?

....

....

....

4) केन्द्र सरकार कब निदेशक नियुक्त कर सकती है?

....

....

....

5) उन चार परिस्थितियों को सूचीबद्ध कीजिए जब निदेशक का पद रिक्त हो जाता है।

....

....

....

....

6) कम्पनी के शेयरधारी किसी निदेशक को कैसे हटा सकते हैं?

....

....

....

....

7) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) अन्तर्नियमों में प्राय: प्रथम निदेशकों के नाम दिए होते हैं।

ii) यदि अन्तर्नियमों में वार्षिक साधारण सभा में सभी निदेशकों के रिटायर होने के सम्बन्ध में कोई नियमन हो, तो निदेशकों की कुल संख्या के कम-से-कम एक-तिहाई निदेशक वारी-वारी से रिटायर होंगे।

iii) रिटायर होने वाले निदेशक को पुनः नियुक्त नहीं किया जा सकता।

iv) वैकल्पिक निदेशक आगामी वार्षिक साधारण सभा तक अपने पद पर बने रह सकता है।

v) यदि निदेशक अपनी नियुक्ति की तिथि के दो माह के भीतर योग्यता-शेयर प्राप्त करने में असफल रहता है, तो निदेशक का पद रिक्त हो जाता है।

vi) यदि कोई निदेशक किसी अनुबन्ध में अपने निजी स्वार्थ को निदेशक मंडल के समक्ष प्रकट नहीं करता, तो निदेशक का पद रिक्त नहीं होता है।

vii) जब पद-त्याग करने के इरादे को स्पष्ट किया जाता है, तो पद त्याग तत्काल प्रभावी हो जाता है।

viii) निदेशक को उसके कार्यकाल की अवधि समाप्त होने से पहले नहीं हटाया जा सकता।

ix) जिस निदेशक को कम्पनी की बोर्ड द्वारा पद से हटाया गया हो वह पद छीने जाने के लिए क्षतिपूर्ति की मांग नहीं कर सकता।

x) यदि किसी नये निदेशक की नियुक्ति करनी हो, तो सभा की तिथि से कम-से-कम 21 दिन पहले कम्पनी को लिखित सूचना भेजी जानी चाहिए।

11.10 निदेशकों के अधिकार

आप जानते ही हैं कि कम्पनी के काम-काज का प्रवन्ध व नियन्त्रण करने के लिए निदेशकों की नियुक्ति की जाती है। अतः निदेशक मंडल को ऐसे समस्त कार्य करने का अधिकार होता है, जिन्हें कम्पनी कर सकती है। निदेशक, कम्पनी के सीमानियम एवं अन्तर्नियम तथा कम्पनी अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों से अपने अधिकार प्राप्त करते हैं।

अधिनियम की धारा 291 के अनुसार, इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन निदेशक मंडल उन सभी अधिकारों का प्रयोग तथा वे सभी कार्य कर सकता है, जिन्हें करने का कम्पनी को अधिकार है। अतः निदेशक मंडल किसी ऐसे अधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता, जिसे कम्पनी द्वारा केवल साधारण सभा में ही किया जा सकता है।

कम्पनी के अधिकारों को इस प्रकार दो भागों में विभाजित किया गया है : (i) निदेशक मंडल द्वारा प्रयोग किए जाने वाले अधिकार तथा (ii) शेयरधारियों द्वारा साधारण सभा में प्रयोग किए जाने वाले अधिकार। कम्पनी अधिनियम तथा अन्तर्नियमों द्वारा निर्धारित परिसीमाओं के अधीन, निदेशकों के अधिकार या शक्तियां सर्वोच्च होती हैं, तथा शेयरधारी एकमत से प्रस्ताव पारित करके उनके अधिकारों में कोई परिवर्तन या प्रतिवन्ध या हस्तक्षेप नहीं कर सकते। यदि शेयरधारी किसी निदेशक के कार्य से सन्तुष्ट नहीं हैं तो वे अन्तर्नियमों में परिवर्तन कर सकते हैं या उसे पद से हटाने के लिए आवश्यक कार्यवाही कर सकते हैं या उसे पुनः निर्वाचित करने से इंकार कर सकते हैं तथा उसके स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त कर सकते हैं।

निदेशकों को सामूहिक रूप से निदेशक मंडल के रूप में कार्य करना चाहिए। कम्पनी के काम-काज से सम्बन्धित विषयों पर कोई भी निदेशक स्वयं निर्णय नहीं ले सकता, समस्त निर्णय निदेशक मंडल की सभा में लिए जाने चाहिए या निदेशक मंडल के सदस्यों में प्रस्ताव के परिचालन द्वारा लिए जाने चाहिए। परन्तु मंडल को यह अधिकार है कि वह किसी विशेष मामले से सम्बन्धित अधिकारों को किसी एक निदेशक को या निदेशकों की समिति को सौंप दें।

यद्यपि, शेयरधारी सामान्यतः निदेशकों के अधिकारों को सीमित या उसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकते, परन्तु निम्नलिखित अपवादों में शेयरधारियों की साधारण सभा, निदेशक मंडल को प्राप्त अधिकारों में हस्तक्षेप कर सकती हैं:

i) जव निदेशकों के कार्य असद्भावपूर्ण हों तथा कम्पनी के हितों के प्रतिकूल हों, उदाहरण के लिए, जब उनका व्यक्तिगत स्वार्थ उनके कम्पनी के प्रति कर्तव्यों के प्रतिकूल हो;

ii) जव निदेशक मंडल किन्हीं वैध कारणों से कार्य करने के अयोग्य हो जाए, जैसे कि जब सभी निदेशक किसी विशेष अनुवन्ध में हित रखते हों;

iii) जव प्रवन्ध में गतिरोध उत्पन्न हो जाए अर्थात् जव निदेशक अपने अधिकारों का प्रयोग करने के लिए तैयार नहीं हों जैसे कि जव निदेशक किसी विषय पर समान संख्या में विपरीत मत रखते हैं और कोई निर्णय नहीं लिया जा सके।

निदेशक मंडल द्वारा प्रयोग किए जाने वाले अधिकार : कम्पनी अधिनियम की धारा 292 के अनुसार निम्नलिखित अधिकार केवल निदेशक मंडल की सभा में प्रस्ताव पारित करके ही प्रयुक्त किए जा सकते हैं:

क) शेयरों पर मांग करने का अधिकार;

ख) डिवेंचर जारी करने का अधिकार;

ग) डिवेंचरों के अतिरिक्त अन्य प्रकार से ऋण लेने का अधिकार;

घ) कम्पनी के धन को विनियोजित करने का अधिकार; तथा

ङ) ऋण देने का अधिकार।

निदेशक मंडल प्रथम दो अधिकारों को किसी समिति को सौंप नहीं सकता, परन्तु शेष तीन अधिकारों को किसी समिति या उप-समिति को सौंपा जा सकता है। परन्तु इस प्रकार से अधिकार सौंपने के लिए निदेशक मंडल की सभा में प्रस्ताव पारित किया जाना चाहिए तथा इस प्रस्ताव में अधिकारों की प्रकृति एवं सीमा का वर्णन भी कर दिया जाना चाहिए। शेयरधारी, कम्पनी की साधारण सभा में, उपर्युक्त अधिकारों के प्रयोग करने के सम्बन्ध में प्रतिबन्ध या शर्तें लगा सकते हैं।

निदेशक मंडल की सभा में प्रयुक्त किए जाने वाले अन्य अधिकार : धारा 292 में निर्दिष्ट अधिकारों के अतिरिक्त, कुछ अन्य अधिकार भी हैं जिन्हें केवल निदेशक मंडल की सभा में ही प्रयुक्त किया जा सकता है, ये निम्नलिखित हैं :

i) निदेशक मंडल में उत्पन्न होने वाले आकस्मिक रिक्त स्थानों को भरने का अधिकार;

ii) ऐसे अनुबन्ध को स्वीकृति देने का अधिकार जिसमें किसी निदेशक का स्वार्थ विद्यमान हो;

iii) जो व्यक्ति किसी अन्य कम्पनी का पहले से ही प्रबंध निदेशक या प्रबंधक हो, उसे प्रबन्ध निदेशक या प्रबन्धक नियुक्त करने का अधिकार;

iv) एक ही प्रबन्ध के अधीन कम्पनियों के शेयरों या डिबेंचरों में धन विनियोजित करने का अधिकार;

v) निदेशकों एवं निदेशक माने गये व्यक्तियों से अपनी शेयरधारिता प्रकट करने की सूचना प्राप्त करने का अधिकार;

vi) सदस्यों के स्वैच्छिक समापन की स्थिति में शोधन-क्षमता की घोषणा करने का अधिकार।

उपर्युक्त चर्चित अधिकारों में से अधिकार (iii) तथा (iv) का प्रयोग निदेशक मंडल की सभा में उपस्थित सभी सदस्यों की सर्वसम्मत सहमति प्राप्त करके ही किया जा सकता है। आपको यह याद रखना चाहिए कि प्रत्येक निदेशक का केवल एक ही मत (vote) होता है तथा उपर्युक्त (iii) तथा (iv) के अतिरिक्त अन्य सभी विषय साधारण बहुमत के आधार पर निर्णित किए जाते हैं। कोई निदेशक अपने स्थान पर प्रतिपुरुष (proxy) नियुक्त नहीं कर सकता अर्थात् वह अपने स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को निदेशक मंडल की सभा में भाग लेने व मतदान करने के लिए नियुक्त नहीं कर सकता।

साधारण सभा की अनुमति से प्रयुक्त किए जाने वाले अधिकार : धारा 293 के द्वारा निदेशक मंडल के अधिकारों पर कुछ प्रतिबन्ध लगाए गये हैं। कुछ ऐसे अधिकार हैं जिनके प्रयोग के लिए साधारण सभा में अनुमति प्राप्त करनी आवश्यक है, ये निम्नलिखित हैं :

i) कम्पनी के कारोबार को बेचने, पट्टे द्वारा किराए पर देने या अन्य प्रकार से निपटारा करने का अधिकार;

ii) किसी निदेशक द्वारा देय ऋण में कोई छूट देने या राशि लौटाने के लिए और समय देने का अधिकार;

iii) कम्पनी के कारोबार या सम्पत्ति के अनिवार्य अधिग्रहण पर मिली क्षतिपूर्ति को न्यास प्रतिभूतियों के अतिरिक्त कहीं और विनियोजित करने का अधिकार;

iv) कम्पनी की प्रदत्त पूंजी एवं स्वतन्त्र अधिकोषों के योग से अधिक ऋण लेने का अधिकार; तथा

v) धर्मार्थ एवं अन्य ऐसी निधियों के लिए 50,000 रुपये अथवा पिछले तीन वित्तीय वर्षों में कम्पनी के औसत लाभ के 5 प्रतिशत (इन दोनों में जो भी अधिक हो) से अधिक राशि का चंदा देने का अधिकार जो कम्पनी के व्यवसाय या उसके कर्मचारियों के कल्याण कार्यों से सीधे सम्बन्धित न हों।

यदि निदेशक साधारण सभा में अनुमति प्राप्त किए बिना ही कम्पनी की सम्पत्ति को बेच देते हैं या पट्टे पर किराए पर दे देते हैं, तो ऐसे व्यक्ति के स्वत्वाधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा जिसने उस सम्पत्ति को पूर्ण सद्विश्वास में एवं उचित सावधानीपूर्वक खरीदा या किराए पर लिया है। इसके अतिरिक्त, ऐसी कम्पनी पर भी यह नियम लागू नहीं होता जिसका सामान्य व्यवसाय ही सम्पत्ति को बेचना या पट्टे पर किराए पर देना है। यह भी ध्यान रहे कि एक स्वतंत्र निजी कम्पनी पर भी उपर्युक्त प्रतिबन्ध लागू नहीं होते। यहां पर यह भी याद रखना चाहिए कि धारा 293-B के द्वारा निदेशक मंडल को यह अधिकार दिया गया है कि वह किसी सीमा के बिना तथा साधारण सभा में अनुमति प्राप्त किए बिना राष्ट्रीय सुरक्षा कोष में अथवा केन्द्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए स्वीकृत किए गए किसी भी कोष में राशि दान के रूप में दे सकते हैं।

निदेशक मंडल के अधिकारों पर अन्य प्रतिबन्ध : धारा 293 में लगाए गए प्रतिबन्धों के अतिरिक्त, दो अन्य प्रतिबन्ध भी हैं :

i) **राजनैतिक उद्देश्य के लिए चन्दा देने पर प्रतिबन्ध :** धारा 293-A के अनुसार, कोई सरकारी कम्पनी या ऐसी कम्पनी जिसको अस्तित्व में आए तीन वित्तीय वर्ष से कम समय हुआ है, राजनैतिक उद्देश्यों के लिए चंदा नहीं दे सकती। अन्य कम्पनियां किसी राजनीतिक दल को या किसी व्यक्ति को राजनीतिक प्रयोजन के लिए, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से चंदा दे सकती हैं। परन्तु इस प्रकार से चंदे में दी जाने वाली राशि एकदम पहले के तीन वित्तीय वर्षों के औसत शुद्ध लाभ के पांच प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त इस प्रकार से चंदा देने के लिए निदेशक मंडल की सभा में प्रस्ताव भी पारित करना चाहिए।

प्रत्येक कम्पनी को चंदे की राशि का विवरण लाभ-हानि खाते में देना अनिवार्य है तथा जिस दल या व्यक्ति को चंदा दिया गया है, उसका नाम भी प्रकट करना अनिवार्य है।

ii) **एकल विक्रेता या क्रेता एजेंटों की नियुक्ति पर प्रतिबन्ध :** कम्पनी की साधारण सभा में अनुमति प्राप्त करके, निदेशक मंडल किसी क्षेत्र के लिए एकल विक्रेता या एकल क्रेता एजेंट नियुक्त कर सकता है, परन्तु यह नियुक्ति एक वार में पांच वर्षों से अधिक के लिए नहीं हो सकती।

निदेशकों के प्रबन्धकीय अधिकार

निदेशक, शेयरधारियों के निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं तथा उन्हें कम्पनी का कारोबार कम्पनी के हित में चलाने का अधिकार प्राप्त होता है। निदेशक मंडल के प्रवन्धकीय अधिकार निम्नलिखित हैं:

i) कम्पनी की ओर से तीसरे पक्षकारों के साथ अनुवन्ध करने का अधिकार;

ii) लाभांश की सिफारिश करने का अधिकार;

iii) कम्पनी के शेयरों का आवंटन, जब्त करना तथा हस्तांतरित करने का अधिकार;

iv) आकस्मिक रिक्त स्थान की पूर्ति करने का अधिकार;

v) डिवेंचरों के जारी करने के सम्बन्ध में शर्तें निश्चित करने का अधिकार,

vi) कम्पनी का प्रवन्ध निदेशक, प्रबन्धक या सैक्रेटरी नियुक्त करने का अधिकार;

vii) कम्पनी के कारोबार को कुशलतापूर्वक चलाने के लिए नीति निर्धारित करने व आवश्यक निर्देश जारी करने का अधिकार; तथा

viii) अधीनस्थ व्यक्तियों के काम की देख-भाल व नियन्त्रण करने का अधिकार।

11.11 निदेशकों के कर्तव्य

जैसा कि आप जानते ही हैं कि कम्पनी के प्रवन्ध संचालन में निदेशकों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता है तथा उन्हें व्यापक अधिकार भी दिए गये हैं। परन्तु उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे इन अधिकारों का प्रयोग सार्वजनिक हित के लिए तथा कम्पनी एवं उसके शेयरधारियों के हितों की रक्षा के लिए करेंगे।

निदेशकों के कर्तव्य कम्पनी की प्रकृति एवं आकार पर निर्भर करते हैं। कम्पनी अधिनियम तथा अन्तर्नियमों के प्रावधानों का पालन करते हुए उन्हें अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए। अन्तर्नियमों में दिए गये कर्तव्य अलग-अलग कम्पनियों में भिन्न हो सकते हैं। निदेशक कम्पनी के कारोबार की ओर लगातार ध्यान देने के लिए वाध्य नहीं होता। उसके कर्तव्य लगातार प्रकृति के न होकर रुक-रुककर उत्पन्न होने वाले होते हैं, तथा वे निदेशक मंडल की सभाओं में इन कर्तव्यों का पालन करते हैं।

निदेशकों के कर्तव्यों को मुख्यतः दो वर्गों में बांटा जा सकता है:

1) वैधानिक कर्तव्य; तथा
2) सामान्य कर्तव्य।

1) **वैधानिक कर्तव्य** (Statutory duties)

   निदेशकों के कुछ वैधानिक कर्तव्य इस प्रकार हैं:

   i) प्रत्येक निदेशक का यह कर्तव्य है कि वह कम्पनी में अपनी शेयरधारिता को प्रकट करे [धारा 308]।

   ii) कम्पनी के द्वारा किए जाने वाले अनुवन्धों में यदि निदेशक का व्यक्तिगत स्वार्थ है, तो उसे प्रकट करने का कर्तव्य [धारा 299]।

iii) निदेशक को उस [illegible] कम्पनी या उसकी सहायक कम्पनी से, जिसका वह निदेशक है, धारा 295 का उल्लंघन करके कोई ऋण नहीं लेना चाहिए।

iv) वैधानिक तथा वार्षिक साधारण सभा बुलाने तथा कम्पनी का तुलन-पत्र तथा लाभ-हानि खाते व अन्य विवरण को प्रस्तुत करने का कर्तव्य।

v) निर्धारित संख्या में सदस्यों द्वारा मांग किए जाने पर, कम्पनी की असाधारण सभा (**extraordinary general meeting**) बुलाने का कर्तव्य।

vi) धारा 309 को धारा 198 के साथ पढ़ते हुए, इनके विपरीत कोई पारिश्रमिक प्राप्त नहीं करना चाहिए।

vii) अधिनियम द्वारा निर्दिष्ट विवरण तथा प्रस्तावों को रजिस्ट्रार के पास फाइल करने का कर्तव्य।

viii) अधिनियम एवं अन्तर्नियमों के द्वारा निर्दिष्ट पुस्तकों व रजिस्टरों को रखने का कर्तव्य।

ix) अधिनियम तथा अन्तर्नियमों में वर्णित कर्तव्यों का पालन करना।

2) **सामान्य कर्तव्य (General duties)**

निदेशकों के कुछ कर्तव्य सामान्य प्रकृति के होते हैं तथा प्रत्येक निदेशक को उनका पालन करना पड़ता है। कुछ सामान्य अधिकार निम्नलिखित हैं:

i) **सद्विश्वासपूर्वक कार्य करने का कर्तव्यः** निदेशकों के सम्बन्ध कम्पनी के प्रति न्यासवत् प्रकृति के होते हैं, अर्थात् उनकी स्थिति विश्वास व न्यास पर आधारित है। अतः निदेशकों को कम्पनी व शेयरधारियों के हित में पूर्ण ईमानदारी एवं परिश्रमपूर्वक कार्य करना चाहिए। उन्हें कम्पनी के साथ कोई लेन-देन करते समय गुप्त लाभ अर्जित नहीं करना चाहिए। यदि कोई निदेशक कम्पनी में अपनी स्थिति का उपयोग करके गुप्त लाभ अर्जित करता है, तो वह इस लाभ को कम्पनी को लौटाने के लिए बाध्य होता है।

ii) **उचित सावधानीपूर्वक कार्य करने का कर्तव्यः** निदेशकों को अपने कर्तव्यों का पालन उचित सावधानीपूर्वक करना चाहिए। उनसे उतनी ही सावधानी, दक्षता एवं परिश्रम की अपेक्षा की जाती है, जितनी कि उन जैसे जानकार एवं स्तर के व्यक्तियों से अपेक्षित है। यदि वे कर्तव्य का पालन करने में उचित सावधानी या दक्षता का प्रदर्शन नहीं करते, तो वे लापरवाही बरतने के लिए उत्तरदायी होते हैं। परन्तु उन्हें निर्णय की भूलों (**errors of judgement**) के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता।

iii) **निदेशक मंडल की सभाओं में भाग लेने का कर्तव्यः** निदेशकों के कर्तव्य लगातार न होकर रुक-रुककर उत्पन्न होने वाले होते हैं, मंडल की सभाएं समय-समय पर होती रहती हैं, उनमें इन कर्तव्यों का पालन किया जाता है। अतः प्रत्येक निदेशक का यह कर्तव्य है कि वह मंडल की सभाओं में उपस्थित रहे। यद्यपि, निदेशक सभी सभाओं में उपस्थित होने के लिए आवद्ध नहीं है, परन्तु यदि वह अनुपस्थिति की अनुमति प्राप्त किए बिना कम्पनी की तीन सभाओं में लगातार अनुपस्थित रहता है या तीन माह तक (इनमें जो भी अवधि अधिक हो) निदेशक मंडल की सभी सभाओं में उपस्थित नहीं रहता, तो उसका पद स्वतः ही रिक्त माना जाएगा।

iv) **अधिकार प्रत्यायोजित न करने का कर्तव्यः** निदेशकों का कर्तव्य है कि वह अपने कर्तव्यों का स्वयं व्यक्तिगत रूप से पालन करें। उन्हें उनकी योग्यता, दक्षता व ईमानदारी के लिए इस पद पर नियुक्त किया जाता है, अतः यह नियम कि 'एक एजेंट अपने अधिकार किसी अन्य को नहीं सौंप सकता' निदेशकों पर भी लागू होता है। परन्तु यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों में अनुमति हो, तो कुछ कार्यों को वे अन्य व्यक्तियों को सौंप सकते हैं।

v) **हित प्रकट करने का कर्तव्यः** निदेशकों की न्यासवत् स्थिति के कारण उनका कर्तव्य है कि यदि कम्पनी के साथ किए गये किसी अनुबन्ध में निजी हित विद्यमान हैं, तो उन्हें मंडल की सभा में यह हित प्रकट कर देना चाहिए। ऐसा इसलिए आवश्यक रखा गया है जिससे कि निदेशक के निजी हित व कम्पनी के प्रति कर्तव्यों में परस्पर टकराव न हो। यहां यह ध्यान रहे कि किसी ऐसे अनुबन्ध के करने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है जिसमें निदेशक का निजी हित है, बल्कि आवश्यकता इस बात की है कि वह निजी हित को प्रकट कर दे।

11.12 निदेशकों के दायित्व

निदेशकों के दायित्व का वर्णन विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है।

1) **शेयरधारी के रूप में दायित्वः** शेयरधारी के रूप में निदेशक का दायित्व साधारण शेयरधारी के दायित्व के समान होता है। परन्तु कम्पनी अपने सीमानियम में परिवर्तन करके, सभी या कुछ निदेशकों के दायित्व को असीमित बना सकती है। परन्तु यह परिवर्तन केवल तभी प्रभावी होगा जब इसके लिए सम्बन्धित निदेशक ने अपनी सहमति दे दी हो। जब कभी भी शेयरों पर बकाया राशि की मांग की जाती है, तो वे निर्धारित समय के भीतर भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होते हैं। यदि छः माह से अधिक समय तक मांग राशि का भुगतान नहीं किया जाता, तो उसे निदेशक के पद को रिक्त करना पड़ेगा।

2) **बाहरी व्यक्तियों के प्रति दायित्वः** निदेशक, कम्पनी की ओर से कार्य करते हैं अतः वे बाहरी व्यक्तियों के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं होते हैं। परन्तु निम्नलिखित परिस्थितियों में वे बाहरी व्यक्तियों के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होते हैं:

   i) जब वे स्वयं अपने नाम में अनुबन्ध करते हैं, कम्पनी के नाम में नहीं। उदाहरण, जब वे किसी परक्राम्य लिखत पर कम्पनी का नाम लिखे बिना अपने हस्ताक्षर करते हैं, तो वह इस विपत्र के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होंगे।

   ii) जब निदेशक कम्पनी के अधिकारों से बाहर कोई कार्य करता है अर्थात् शक्ति बाह्य कार्य के लिए, तीसरे पक्षकारों के प्रति कम्पनी नहीं बल्कि निदेशक व्यतिगत रूप से उत्तरदायी होता है क्योंकि वह गर्भित आश्वासन भंग करने का दोषी है।

   iii) जब निदेशकों ने किसी ऐसे प्रविवरण को जारी करने की अनुमति दे दी है जिसमें असत्य कथन हैं या जो कम्पनी की वास्तविक स्थिति को नहीं प्रकट करता, तो निदेशक व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो जाते हैं।

   iv) यदि न्यूनतम अभिदान राशि निर्धारित समय के भीतर प्राप्त नहीं होती और निदेशक प्राप्त हुई आवेदन राशि को निर्दिष्ट समय के भीतर वापस नहीं करते, तो निदेशकों का व्यक्तिगत दायित्व उत्पन्न हो जाता है।

   v) शेयरों के अनियमित आवंटन करने पर।

   vi) निदेशकों के कपटपूर्ण आचरण के लिए, जैसे कि निदेशक ऐसे समय में माल खरीदते हैं या दायित्व उत्पन्न करते हैं जबकि उन्हें अच्छी तरह से ज्ञात है कि कम्पनी इस राशि का भुगतान नहीं कर सकेगी।

3) **कम्पनी के प्रति दायित्वः** निदेशक के पद के साथ-साथ उनके कम्पनी के प्रति कुछ दायित्व जुड़े होते हैं। निदेशक, निम्नलिखित परिस्थितियों में कम्पनी के प्रति उत्तरदायी होता है:

   i) **शक्ति बाह्य कार्यों के लिएः** शक्ति वाह्य कार्यों के लिए निदेशक, कम्पनी के प्रति उत्तरदायी होते हैं अर्थात् ऐसे कार्य जिन्हें करने का कम्पनी को कोई अधिकार नहीं है। जैसे, यदि वे पूंजी में से लाभांश वितरित कर देते हैं तो वे कम्पनी के प्रति हानि या हर्जाने के लिए उत्तरदायी होते हैं।

   ii) **लापरवाहीः** यदि निदेशक अपने कर्तव्यों का पालन लापरवाही से करते हैं, तो वे कम्पनी के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होते हैं। परन्तु उन्हें निर्णय सम्बन्धी भूलों के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता।

   iii) **न्यास भंग के लिए दायित्वः** निदेशकों की स्थिति कम्पनी के प्रति न्यासवत् प्रकृति की होती है। उन्हें पूर्ण ईमानदारी से कम्पनी के हित के लिए कार्य करना चाहिए। यदि निदेशक कोई गुप्त लाभ अर्जित करते हैं अथवा कम्पनी की सम्पत्ति का उपयोग निजी कार्यों के लिए करते हैं, तब वे कम्पनी के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

   iv) **अपकरण के लिए दायित्वः** अपकरण का अर्थ है जानबूझकर किया गया दुराचरण या लापरवाही जिसके परिणामस्वरूप कम्पनी को कुछ हानि होती है। अपकरण से उत्पन्न हानि के लिए निदेशकों से हर्जाना वसूल किया जा सकता है।

4) **आपराधिक दायित्व (criminal liability):** यदि निदेशक, अधिनियम के प्रावधानों का पालन नहीं करते हैं तो उन्हें आपराधिक दायित्व के लिए दोषी ठहराया जा सकता है तथा उन्हें कारावास या जुर्माने या

दोनों से दंडित किया जा सकता है। अधिनियम के अन्तर्गत कुछ परिस्थितियां निम्नलिखित हैं जब निदेशकों का आपराधिक दायित्व उत्पन्न होता है:

i) मिथ्यावर्णन वाले प्रविवरण को जारी करने पर।

ii) आवेदन राशि को किसी अनुसूचित बैंक में जमा न कराने पर।

iii) जनता को कपटमय ढंग से कम्पनी में धन लगाने के लिए उत्प्रेरित करने पर।

iv) निर्धारित सीमा से अधिक सार्वजनिक जमा स्वीकार करने या नियन्त्रित करने पर।

v) कम्पनी की पुस्तकों, प्रलेखों तथा अन्य महत्वपूर्ण दस्तावेजों को नष्ट या विकृत करना या उनमें परिवर्तन करना या उनका मिथ्याकरण करने पर।

vi) वार्षिक विवरण फाइल न करने पर।

vii) वार्षिक साधारण सभा बुलाने में त्रुटि करने पर।

viii) केन्द्र सरकार से अनुमति प्राप्त किए विना निदेशकों को ऋण प्रदान करने पर।

ix) उचित लेखा पुस्तकों के न रखने पर।

5) **सह-निदेशकों के कार्यों के लिए दायित्वः** निदेशक, अपने सह-निदेशकों के कार्यों के लिए तव तक उत्तरदायी नहीं होता जव तक कि वह स्वयं उस कार्य का सह-भागी न हो। एक निदेशक, अन्य निदेशकों का एजेंट नहीं होता है। उसे केवल इसी आधार पर उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता कि उसे कपट का ज्ञान होना चाहिए। परन्तु यदि कम्पनी का प्रवन्ध निदेशक या चेयरमैन लेखों को ठीक से समझे विना उन पर अपने हस्ताक्षर कर देते हैं, तो वे अपने दायित्व से नहीं वच सकते।

11.13 निदेशकों की सभाएं

आप पहले पढ़ चुके हैं कि निदेशक समय-समय पर अपनी सभाओं में अपने कर्तव्यों का सामूहिक रूप से पालन करते हैं। निदेशकों की सभाओं से सम्वन्धित नियम निम्नलिखित हैं:

i) प्रत्येक कम्पनी के निदेशक मंडल की सभा तीन कलेंडर महीने में कम-से-कम एक वार अवश्य की जानी चाहिए तथा प्रत्येक वर्ष में कम-से-कम चार सभाएं अवश्य होनी चाहिए। केन्द्र सरकार, सरकारी गजट में सूचना जारी करके किसी विशेष वर्ग की कम्पनियों को इस नियम से मुक्त कर सकती है। ऐसा छोटे आकार की कम्पनियों की सहायता के लिए किया गया है, क्योंकि उनके लिए तीन माह में एक सभा वुलाने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती।

यद्यपि अधिनियम में यह कहीं भी स्पष्ट नहीं किया गया है कि सभा किस स्थान पर वुलानी चाहिए। परन्तु अनुवन्धों का रजिस्टर तथा अन्य महत्वपूर्ण पुस्तकें व प्रलेख, क्योंकि कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में रखे जाते हैं, अतः इससे यह आभास होता है कि निदेशक मंडल की सभाएं पंजीकृत कार्यालय में या उसके निकट किसी स्थान पर की जानी चाहिए।

ii) प्रत्येक निदेशक को, भारत में उसके सामान्य पते पर, निदेशक मंडल की सभा की लिखित सूचना भेजी जानी चाहिए। अधिनियम में सूचना का कोई प्रारूप, या सूचना देने की विधि या कितने समय पहले सूचना दी जाए, इन सवके वारे में कोई स्पष्ट नियम नहीं है। अतः केवल कुछ मिनट पहले सूचना देना ही पर्याप्त होता है। यदि किसी निदेशक को मंडल की सभा की सूचना नहीं दी जाती, तो वह सभा अमान्य होती है।

iii) निदेशक मंडल की सभा के लिए कोरम (Quorum), मंडल की कुल संख्या के एक-तिहाई के वरावर या दो निदेशक, इनमें से जो भी अधिक हो, होता है। यदि किसी समय किसी विषय में निजी स्वार्थ वाले निदेशकों की संख्या, कुल संख्या के दो-तिहाई के वरावर या उससे अधिक है, तो शेष निदेशक जिनका उस मामले में कोई निजी स्वार्थ नहीं है, वही कोरम होते हैं, वशर्ते उनकी संख्या दो से कम नहीं होनी चाहिए। निदेशक मंडल की सभाओं में पूरी कार्यवाही के दौरान कोरम रहना चाहिए, केवल सभा के आरम्भ में कोरम होना ही पर्याप्त नहीं है।

iv) यदि कोरम के अभाव के कारण मंडल की सभा नहीं हो पाती, तो वह सभा अगले सप्ताह के उसी दिन, समय व स्थान के लिए स्थगित हो जाती है। यदि वह दिन सार्वजनिक अवकाश का दिन है, तो उससे अगले दिन सभा की जानी चाहिए।

v) यह भी आवश्यक है कि निदेशक मंडल की सभाओं की कार्यवाही का विवरण एक अलग रजिस्टर में लिखित रूप में रखना चाहिए,. इस रजिस्टर को 'कार्यवाही रजिस्टर' (Minute Book) कह सकते हैं। प्रत्येक सभा की कार्यवाही पर उस सभापति के हस्ताक्षर होने चाहिए जिसकी उपस्थिति में वे प्रस्ताव पारित किए गये थे अथवा अगामी सभा के सभापति द्वारा भी इन पर हस्ताक्षर किए जा सकते हैं। धारा 289 के अनुसार, परिचालन (circulation) के द्वारा भी प्रस्ताव पारित किए जा सकते हैं।

बोध प्रश्न ग

1) निदेशक अपने अधिकारों का प्रयोग किस प्रकार करते हैं?

....

....

....

2) उन चार अधिकारों को सूचीबद्ध कीजिए जिन्हें केवल निदेशक मंडल की सभाओं में ही प्रयोग किया जा सकता है।

....

....

....

....

3) निदेशक के चार महत्वपूर्ण कर्तव्यों को वताइए।

....

....

....

....

4) 'हित रखने वाला निदेशक' कौन होता है?

....

....

....

5) निदेशक मंडल की सभाओं की आवृति के सम्बन्ध में वैधानिक नियम क्या हैं?

....

....

....

6) निदेशकों की सभा के लिए कितना कोरम होना चाहिए?

....

....

....

7) वताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत:

i) कम्पनी के निदेशकों को ऐसे सब कार्य करने का अधिकार है जिन्हें करने का अधिकार कम्पनी को है।

ii) साधारण सभा में शेयरधारियों की अनुमति प्राप्त करके ही डिवेंचर जारी करने के अधिकार का प्रयोग किया जा सकता है।
iii) निदेशक मंडल को कम्पनी द्वारा घोषित लाभांश की दर की सिफारिश करने का अधिकार होता है।
iv) निदेशक मंडल द्वारा आकस्मिक रिक्त स्थानों को भरा जा सकता है।
v) किसी निदेशक द्वारा कम्पनी को देय ऋण की राशि में छूट या अवधि बढ़ाने का अधिकार निदेशकों को होता है।
vi) निदेशक को सदैव ही कम्पनी के सामान्य हित के लिए कार्य करना चाहिए।
vii) यदि किसी अनुवन्ध में किसी निदेशक का निजी स्वार्थ है, तो उसे यह स्वार्थ शेयरधारियों की साधारण सभा में प्रकट कर देना चाहिए।
viii) निदेशक मंडल की सभा चार महीने में कम-से-कम एक बार, तथा वर्ष में कम-से-कम तीन बार की जानी चाहिए।
ix) निदेशक मंडल की सभा के लिए कोरम, मंडल की कुल संख्या के एक-तिहाई या दो निदेशक, जो भी अधिक हो, होता है।

11.14 सारांश

क्योंकि कम्पनी कानून के द्वारा निर्मित कृत्रिम व्यक्ति है, अतः यह केवल मानव एजेंटों के द्वारा कार्य कर सकती है। इन एजेंटों को निदेशक कहते हैं। निदेशकों को सामूहिक रूप से 'निदेशक मंडल' के नाम से पुकारते हैं। निदेशक ही वे व्यक्ति हैं जो कम्पनी के सम्पूर्ण कारोवार का निर्देशन व नियन्त्रण करने के लिए उत्तरदायी होते हैं।

सार्वजनिक कम्पनी में कम-से-कम तीन निदेशक तथा अन्य कम्पनियों में कम-से- कम दो निदेशक अवश्य होने चाहिए। प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी तथा ऐसी निजी कम्पनी जो किसी सार्वजनिक कम्पनी की नियंत्रित कम्पनी नहीं है, उसमें निदेशकों की कुल संख्या तव तक 12 से अधिक नहीं हो सकती जव तक केन्द्र सरकार इसके लिए अनुमति न दे। कोई भी व्यक्ति एक ही समय पर 20 से अधिक कम्पनियों का निदेशक नियुक्त नहीं हो सकता।

ऐसे सभी व्यक्तियों को, जिन्हें संचालक के पद पर नियुक्त किया जाता है, रजिस्ट्रार के पास इस रूप में कार्य करने की अपनी लिखित सहमति फाइल करनी चाहिए। जव तक कोई व्यक्ति निदेशक रहता है तव तक उसके पास योग्यता-शेयर होने आवश्यक हैं। योग्यता-शेयरों का मूल्य 5,000 रुपये से अधिक नहीं होना चाहिए, यदि एक शेयर का मूल्य 5,000 रुपये से अधिक है तो योग्यता-शेयर एक होता है।

निदेशकों की वैधानिक स्थिति वहुत दिलचस्प है। कभी वे कम्पनी के एजेंट के रूप में कार्य करते हैं, कभी न्यासी के रूप में, तथा कभी कम्पनी के प्रवन्धक साझेदार के रूप में। उन्हें कम्पनी का अधिकारी भी माना जाता है।

प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जो अनुवन्ध करने के योग्य है, निदेशक वन सकता है। परन्तु अस्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति, अनुन्मुक्त दिवालिया, नैतिक नीचता का अपराधी व्यक्ति जिसे छः मास का कारावास हुआ हो, निदेशक बनने के अयोग्य होता है।

निदेशकों की नियुक्ति अन्तर्नियमों द्वारा, साधारण सभा में शेयरधारियों द्वारा, निदेशक मंडल द्वारा, तीसरे पक्षकारों द्वारा तथा केन्द्र सरकार द्वारा की जा सकती है। निदेशकों को आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर भी नियुक्त किया जा सकता है।

निदेशक का पद अनेक कारणों पर रिक्त हो जाता है, जैसे यदि वह नियुक्ति के दो माह के भीतर योग्यता-शेयर प्राप्त नहीं कर पाता, या वह योग्यता-शेयरों का धारक नहीं रहता या वह छः माह से अधिक समय तक मांग की राशि का भुगतान नहीं करता, या अनुमति प्राप्त किए विना वह मंडल की लगातार तीन सभाओं में उपस्थित नहीं होता या वह किसी अनुवन्ध में निजी स्वार्थ को प्रकट नहीं करता आदि।

कम्पनी के निदेशकों को शेयरधारियों द्वारा, केन्द्र सरकार द्वारा या कंम्पनी लॉ वोर्ड द्वारा पद से हटाया जा सकता है।

नियम ने निदेशकों को व्यापक अधिकार प्रदान किए हैं परन्तु इनका उपयोग सत्यनिष्ठा से कम्पनी के

हित के लिए किया जाना चाहिए। कुछ ऐसे भी अधिकार हैं जिनका प्रयोग केवल निदेशक मंडल की सभा में ही किया जा सकता है तथा कुछ अधिकार ऐसे हैं जिनका प्रयोग साधारण सभा में शेयरधारियों की सहमति से ही किया जा सकता है।

निदेशक कम्पनी के प्रति लापरवाही, न्यास भंग, शक्ति वाह्य कार्यों तथा जानवूझकर दुराचरण के लिए उत्तरदायी होते हैं। निदेशक, तीसरे पक्षकारों के प्रति कुछ परिस्थितियों में उत्तरदायी होते हैं जैसे जब वह स्वयं अपने नाम में कार्य करता है, प्रविवरण में किए गये मिथ्यावर्णन के लिए आदि। कम्पनी अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का पालन नहीं करने पर निदेशक आपराधिक दायित्व के लिए भी उत्तरदायी होते हैं।

11.15 शब्दावली

निदेशक (Director): ऐसा कोई भी व्यक्ति जो निदेशक के कार्य करता है।

न्यासी (Trustee): ऐसा व्यक्ति जो दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों के हित के लिए किसी सम्पत्ति को अपने पास रखता है।

योग्यता शेयर (Qualification Share): जब तक कोई व्यक्ति निदेशक के पद पर है तब तक शेयरों की वह न्यूनतम संख्या जो उसके पास सदैव रहनी चाहिए।

आकस्मिक रिक्त स्थान (Casual Vacancy): किसी निदेशक की मृत्यु, पागलपन या दिवालिया होने के परिणामस्वरूप हुआ रिक्त स्थान।

वैकल्पिक निदेशक (Alternate Director): ऐसा निदेशक जो मूल निदेशक के स्थान पर नियुक्त किया जाता है।

बारी-बारी से रिटायर होने वाले निदेशक (Rotational Director): ऐसे निदेशक जो बारी-बारी से रिटायर होते हैं।

कम्पनी के शक्ति बाह्य कार्य (Ultra-Vires the Company): कम्पनी के अधिकारों से बाहर के कार्य।

अपकरण (Misfeasance): जानवूझकर किया गया दुराचरण या लापरवाही।

आपराधिक दायित्व (Criminal Liability): जुर्माने या कारावास या दोनों से दंडनीय अपराध।

कोरम (Quorum): सदस्यों की व्यक्तिगत रूप से उपस्थित वह संख्या जिसके होने पर वैध कार्य किया जा सकता है।

11.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 7) i) गलत ii) सही iii) सही iv) गलत v) गलत vi) गलत vii) सही viii) सही

ख 7) i) सही ii) गलत iii) गलत iv) गलत v) सही vi) गलत vii) सही viii) गलत ix) सही x) गलत

ग 7) i) सही ii) गलत iii) सही iv) सही v) गलत vi) सही vii) गलत viii) गलत ix) सही

11.17 स्वपरख प्रश्न

1) कम्पनी के निदेशक कौन होते हैं? उनकी नियुक्ति कैसे की जाती है?

2) निदेशकों की संख्या तथा निदेशक-पदों की संख्या से सम्बन्धित नियमों का वर्णन कीजिए।

3) निदेशकों की वैधानिक स्थिति की चर्चा कीजिए।

4) निदेशकों की नियुक्ति के सम्बन्ध में कम्पनी अधिनियम द्वारा क्या प्रतिबन्ध लगाए गये हैं?

5) निदेशक पद के लिए क्या योग्यताएं व अयोग्यताएं हैं?

6) योग्यता-शेयर से क्या तात्पर्य है? निदेशक के रूप में कार्य करने से पहले क्या शेयरधारी होना या योग्यता-शेयरों को प्राप्त करना आवश्यक है?

7) वे कौन सी परिस्थितियां हैं जब निदेशक का पद रिक्त हो जाता है?

8) किसी निदेशक को उसके कार्यकाल की अवधि समाप्त होने से पहले पद से किस प्रकार हटाया जा सकता है?

9) निदेशकों के अधिकार एवं कर्तव्यों की व्याख्या कीजिए।

10) निदेशकों का कम्पनी के प्रति तथा तीसरे पक्षकारों के प्रति दायित्व को स्पष्ट कीजिए। क्या निदेशक को आपराधिक दायित्व के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है?

11) निदेशकों की सभाओं पर एक विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

नोट: इस इकाई को अच्छी तरह समझने लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए, परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एम. सी. कुच्छलः *आधुनिक भारतीय कम्पनी अधिनियम* (दिल्ली : श्री महाबीर बुक डिपो, 1990) अध्याय 8-14

एन.डी. कपूर, दिनकर पगारे तथा भारत भूषणः *कम्पनी अधिनियम* (नई दिल्ली : सुल्तान चंद एण्ड सन्स, 1988)

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-07

कम्पनी विधि

खंड

4

सभाएँ एवं समापन

इकाई 12

कम्पनी सचिव 5

इकाई 13

सभाएँ एवं प्रस्ताव 17

इकाई 14

समापन 34

खंड 4 सभाएं एवं समापन

आप जानते हैं कि कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति होती है जो स्वयं कार्य नहीं कर सकती। यह अपने मुख्य अधिकारियों के माध्यम से कार्य करती है, जो विभिन्न प्रकार की सभाओं में आवश्यक प्रस्ताव पारित करके नीति सम्बन्धी निर्णय लेते हैं। अतः इन सभाओं के कार्य-संचालन तथा विभिन्न प्रस्तावों को पारित करने से सम्बन्धित नियमों का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। आप यह भी जानते हैं कि कम्पनी का निर्माण कानून के द्वारा होता है, अतः कानून द्वारा निर्धारित तरीके के द्वारा ही इसका समापन किया जा सकता है। इस खंड में आप विभिन्न प्रकार की सभाओं एवं प्रस्तावों से सम्बन्धित नियमों, कम्पनी सचिव की भूमिका तथा कम्पनी के समापन की विधि का अध्ययन करेंगे। इस खंड में 3 इकाइयां हैं (इकाई 12 से 14 तक)।

इकाई 12 में कम्पनी सचिव की भूमिका का वर्णन है तथा उसकी नियुक्ति से सम्बन्धित नियमों, से हटाने, कर्तव्य, दायित्व, अधिकारों आदि का वर्णन किया गया है।

इकाई 13 में सभाओं का अर्थ एवं उनके महत्व का वर्णन किया गया है। इसमें विभिन्न प्रकार की सभाओं के कार्य संचालन सम्बन्धी नियमों, जिसमें सूचना, कोरम, प्रॉक्सी तथा मतदान शामिल है, की चर्चा की गई है। समय-समय पर विभिन्न सभाओं में पारित किए जाने वाले प्रस्तावों के प्रकारों का भी वर्णन किया गया है।

इकाई 14 में कम्पनी के समापन के विभिन्न तरीकों का वर्णन किया गया है तथा इस उद्देश्य के लिए अपनाई जाने वाली विधि का वर्णन किया गया है।

इकाई 12 कम्पनी सचिव (Company Secretary)

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 कम्पनी सचिव का अर्थ

12.3 कम्पनी सचिव की योग्यताएं

12.4 पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव

12.5 सचिव की नियुक्ति

12.6 सचिव को पद से हटाना

12.7 कम्पनी सचिव की स्थिति

12.8 सचिव के कर्तव्य

- 12.8.1 वैधानिक कर्तव्य
- 12.8.2 सामान्य कर्तव्य

12.9 सचिव के दायित्व

12.10 सचिव के अधिकार

12.11 सचिव की भूमिका

12.12 सारांश

12.13 शब्दावली

12.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.15 स्वपरख प्रश्न

12.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- कम्पनी सचिव की परिभाषा कर सकें;
- कम्पनी सचिव की योग्यताएं तथा उसकी नियुक्ति का वर्णन कर सकें;
- कम्पनी सचिव की स्थिति की व्याख्या कर सकें; और
- कम्पनी सचिव के कर्तव्यों एवं दायित्वों का वर्णन कर सकें।

12.1 प्रस्तावना

संयुक्त पूंजी वाली कम्पनी के प्रबन्ध में कम्पनी सचिव की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कम्पनी अधिनियम के प्रावधान इतने अधिक जटिल हो गये हैं कि उनका पालन करने के लिए निरन्तर ध्यान रखना पड़ता है। उच्च प्रबन्ध अधिकारियों के लिए कम्पनी के दैनिक प्रशासन के नियन्त्रण के साथ-साथ कम्पनी अधिनियमों के विभिन्न प्रावधानों का पालन करना लगभग असम्भव हो गया है। उच्च प्रबन्ध अधिकारियों को इस जिम्मेदारी से बचाने के लिए कम्पनी सचिव की नियुक्ति की जाती है। इस इकाई में आप कम्पनी सचिव का अर्थ, उसकी योग्यताएं व नियुक्ति तथा उसकी भूमिका के बारे में पढ़ेंगे। आप कम्पनी सचिव के कर्तव्यों एवं दायित्वों के बारे में भी अध्ययन करेंगे।

12.2 कम्पनी सचिव का अर्थ

सचिव, कम्पनी का एक अधिकारी होता है जिसकी नियुक्ति लिपिकीय अथवा प्रशासनिक कार्यों को करने के लिए की जाती है। आपको यह स्मरण रखना चाहिए कि कम्पनी के कारोबार को चलाना सचिव का कर्तव्य नहीं है, बल्कि उसका

मुख्य कर्तव्य यह सुनिश्चित करना है कि कम्पनी का कारोबार कम्पनी अधिनियम तथा अन्तर्नियमों के प्रावधानों के अनुसार चलाया जाए।

भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 (1974 में किए गये संशोधन) की धारा 2 (45) में सचिव की परिभाषा इस प्रकार की गई है, **ऐसा व्यक्ति, जिसके पास निर्धारित योग्यताएं हों, तथा इस अधिनियम द्वारा निर्धारित कार्यों को करने के लिए अथवा अन्य लिपिकीय या प्रशासनिक कार्यों को करने के लिए, जिसकी नियुक्ति होती है।**

कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 ने कम्पनी सचिव की परिभाषा इस प्रकार की है, **ऐसा व्यक्ति जो भारतीय इन्सटीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी का सदस्य हो [धारा 2 (1) (c)]**। कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 ने उक्त परिभाषा को धारा 2 (45) में दी गई परिभाषा में शामिल कर लिया है, अब इस धारा के अनुसार, "**सचिव का अर्थ, कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 2 (1) (c) में दिए गये कम्पनी सचिव से है, तथा इसमें ऐसे अन्य व्यक्ति भी शामिल हैं जिनके पास निर्धारित योग्यताएं हैं व जिनकी नियुक्ति ऐसे कार्यों को करने के लिए हुई है जो लिपिकीय या प्रशासनिक हैं या जो अधिनियम के अन्तर्गत सचिव द्वारा किए जा सकते हैं।**"
इस परिभाषा से आपने देखा होगा कि 1988 में किये गये संशोधन से भारतीय इन्सटीट्यूट ऑफ सैक्रेटरी के सदस्यों को वैधानिक मान्यता प्राप्त हो गई है।

सचिव की उपर्युक्त परिभाषा से निम्नलिखित तीन तथ्य उभरते हैं :

i) केवल किसी व्यक्ति को ही कम्पनी का सचिव नियुक्त किया जा सकता है। इस प्रकार एक फर्म या निगमित संस्था को कम्पनी का सचिव नियुक्त नहीं किया जा सकता।

ii) कम्पनी सचिव में केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित योग्यताएं होनी चाहिएं।

iii) कम्पनी सचिव के कार्य लिपिकीय या प्रशासनिक प्रकृति के होते हैं।

आपको यह स्मरण रहे कि कम्पनी सचिव को स्वतंत्र रूप से कोई कार्य नहीं करना है, बल्कि उसे निदेशक मंडल के पूर्ण नियन्त्रण में कार्य करना चाहिए। उसे कोई मौलिक अधिकार प्राप्त नहीं हैं, बल्कि उसे केवल वही अधिकार हैं जो निदेशक मंडल ने उसे सौंपे हैं। वह कम्पनी को बाध्य करने के लिए स्वयं कोई अनुबन्ध या कथन नहीं कर सकता।

12.3 कम्पनी सचिव की योग्यताएं

कम्पनी अधिनियम की धारा 2 (45) के अनुसार, केन्द्र सरकार द्वारा समय-समय पर निर्धारित योग्यताएं, कम्पनी सचिव में होनी चाहिएं।

कम्पनी अधिनियम की धारा 383-A के अनुसार, निर्धारित पूर्ण-दत्त शेयर पूंजी वाली प्रत्येक कम्पनी के लिए पूर्ण-कालिक सचिव नियुक्त करना अनिवार्य हो गया है। 1988 में बनाये गये नये नियमों के अनुसार, यह सीमा 25 लाख रुपये रखी गई है। अब दो तरह की योग्यताएं हैं — **पहली** ऐसी कम्पनियों के लिए जिनकी पूर्ण-दत्त शेयर पूंजी 25 लाख रु. या इससे अधिक है तथा **दूसरी** ऐसी कम्पनियों के लिए जिनकी पूर्ण-दत्त शेयर पूंजी इससे कम है।

25 लाख रुपये या उससे अधिक प्रदत्त पूंजी वाली कम्पनियों के लिए

i) प्रत्येक ऐसी कम्पनी, जिसकी दत्त शेयर पूंजी 25 लाख रुपये या अधिक है, उसके लिए पूर्ण-कालिक सचिव रखना अनिवार्य है।

ii) किसी भी व्यक्ति को तब तक पूर्ण-कालिक सचिव नियुक्त नहीं किया जा सकता जब तक कि वह भारतीय इन्सटीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी का सदस्य न हो।

25 लाख रुपये से कम प्रदत्त शेयर पूंजी वाली कम्पनियों के लिए

छोटी कम्पनियों के लिए पूर्ण-कालिक सचिव नियुक्त करना प्रायः सम्भव नहीं होता है। अतः, 25 लाख रुपये से कम दत्त शेयर-पूंजी वाली कम्पनियों के लिए पूर्ण-कालिक सचिव रखना अनिवार्य नहीं है। छोटे आकार वाली कम्पनियों के लिए किसी भी ऐसे व्यक्ति को कम्पनी सचिव के पद पर नियुक्त किया जा सकता है जिसके पास निम्नलिखित में से कोई भी योग्यता हो :

i) भारतीय इन्सटीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी का सदस्य;

ii) ऐसा व्यक्ति, जिसने भारतीय इन्सटीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी की इन्टरमीडियेट परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है;

iii) भारत के किसी भी विश्वविद्यालय द्वारा दी गई वाणिज्य में स्नातकोत्तर उपाधि या कम्पनी सचिव की उपाधि;

iv) किसी भी विश्वविद्यालय या इन्सटीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट अहमदाबाद, कलकत्ता, बंगलौर या लखनऊ द्वारा दी गई प्रबन्ध विज्ञान में स्नातकोत्तर उपाधि या डिप्लोमा;

v) भारतीय चार्टर्ड एकाउंटेंट्स इन्सटीट्यूट का सदस्य;

vi) किसी भी विश्वविद्यालय की कानून की उपाधि;

vii) भारतीय कॉस्ट एण्ड वर्क्स एकाउंटेंट्स इन्सटीट्यूट का सदस्य;

viii) दिल्ली प्रशासन के अधीन इन्सटीट्यूट ऑफ कॉमर्शियल प्रैक्टिस, दिल्ली द्वारा दिया गया कम्पनी सचिव का स्नातकोत्तर डिप्लोमा अथवा इंडियन लॉ इन्सटीट्यूट, नई दिल्ली द्वारा दिया जाने कम्पनी विधि एवं प्रबन्ध का डिप्लोमा;

ix) उदयपुर विश्वविद्यालय द्वारा दिया गया कम्पनी विधि एवं सचिवीय पद्धति का स्नातकोत्तर डिप्लोमा; अथवा

x) एसोसिएशन ऑफ सैक्रेटरीज़ एण्ड मैनेजर्स, कलकत्ता का सदस्य।

धारा 25 के अन्तर्गत पंजीकृत ऐसी कम्पनियां जो लाभ के लिए नहीं बनाई गई हैं, उनके लिए कम्पनी सचिव सम्बन्धी योग्यताओं के नियम लागू नहीं होते हैं।

उपर्युक्त वर्णित वैधानिक योग्यताओं के अतिरिक्त, कम्पनी सचिव में अन्य कुछ और भी योग्यताएं होनी चाहिएं। उसे उद्योग एवं व्यापार के ज्ञान के साथ-साथ, सामान्य ज्ञान अच्छा होना चाहिए, तभी वह निदेशकों को लाभदायक सेवाएं प्रदान कर सकेगा। व्यापार को प्रभावित करने वाले अन्य कानूनों को भी उसे अच्छी जानकारी होनी चाहिए। उसे अर्थशास्त्र, बैंकिंग तथा वित्त सम्बन्धित विषयों का ज्ञान भी होना चाहिए। उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली होना चाहिए क्योंकि तभी वह सबके साथ कार्य कर सकेगा तथा तभी उसके अधीन कर्मचारियों का सहयोग उसे प्राप्त होगा।

12.4 पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव (Secretary in whole-time Practice)

आप पहले पढ़ चुके हैं कि यहां पर कम्पनी सचिव से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है, जो भारतीय इन्सटीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी का सदस्य हो। कम्पनी सचिव किसी कम्पनी में, सचिव के रूप में पूर्ण-कालिक नौकरी स्वीकार कर सकता है अथवा वह अकेले या एक या अधिक इस व्यवसाय में लगे हुए व्यक्तियों के साथ, स्वतन्त्र रूप से कम्पनी सचिव के व्यवसाय को कर सकता है। कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 6 के अनुसार, केवल इन्सटीट्यूट के सदस्य ही भारत में या कहीं अन्यत्र, इस पेशे को कर सकते हैं बशर्ते उसने कौंसिल से प्रैक्टिस करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त कर लिया हो।

कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 ने पूर्ण-कालिक सचिव के विचार को आरम्भ किया है। अधिनियम की धारा 2 (45-A) के अनुसार, पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाले सचिव से तात्पर्य ऐसे सचिव से है जो कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 2(2) के अन्तर्गत प्रैक्टिस करने वाला सचिव है तथा जो कहीं पूर्ण-कालिक नौकरी नहीं कर रहा। इस प्रकार, इन्सटीट्यूट का प्रैक्टिस करने वाला सदस्य, जो कहीं पर भी पूर्ण-कालिक पद पर कार्यरत नहीं है, पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव कहलाता है।

इन्सटीट्यूट का सदस्य, अलग या कुछ अन्य सदस्यों के साथ मिलकर प्रैक्टिस कर सकता है। कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 ने उस क्षेत्र का वर्णन किया है जिसमें कम्पनी सचिव प्रैक्टिस कर सकते हैं। कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 2 (2) ने निम्नलिखित क्षेत्र निर्धारित किए हैं जिसमें कम्पनी सचिव अपनी प्रैक्टिस कर सकता है :

क) वह किसी कम्पनी का या कम्पनी के सम्बन्ध में, कम्पनी सचिव के रूप में कार्य करने का पेशा कर सकता है; या

ख) वह कम्पनी के प्रवर्तन, गठन, निगमन, एकीकरण, पुनर्निर्माण, पुनर्गठन या कम्पनी के समापन से सम्बन्धित कार्यों के लिए अपनी सेवाएं प्रदान कर सकता है; या

ग) वह ऐसी सेवाएं करने का प्रस्ताव कर सकता है या ऐसी सेवाएं प्रदान कर सकता है जो निम्नलिखित के द्वारा की जाती हैं :

   i) वह कम्पनी के द्वारा व कम्पनी के लिए, अधिकृत प्रतिनिधि के रूप में विभिन्न दस्तावेज़ों (फार्म, आवेदन पत्र तथा रिटर्न सहित) को फाईल करने, पंजीकरण करने, प्रस्तुत करने, सत्यापित करने या प्रमाणित करने का कार्य कर सकता है;

   ii) शेयर हस्तांतरण एजेंट के रूप में;

   iii) एक निर्गमन संस्था के रूप में;

   iv) शेयर तथा स्टॉक ब्रोकर के रूप में;

   v) सचिवीय अंकेक्षण या सलाहकार;

   vi) कम्पनी को प्रबन्ध सम्बन्धी विषयों पर परामर्शदाता के रूप में, इसमें पूंजी निर्गमन (नियन्त्रण) अधिनियम, 1947; उद्योग (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1951; कम्पनी अधिनियम, 1956; प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956; के अन्तर्गत समस्त कानूनी व कार्यविधि विषयों पर, किसी मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज द्वारा बनाये गये नियम या उप-नियमों का, एकाधिकार तथा अवरोधक व्यापारिक व्यवहार अधिनियम, 1969, विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम, 1973 या उस समय प्रचलित किसी अन्य कानून के विषयों व कार्य-विधि के मामले शामिल हैं।

   vii) किसी कम्पनी की ओर से या कम्पनी के कार्यों के लिए प्रमाण-पत्र जारी करने का कार्य; या

घ) वह स्वयं को जनता के सामने प्रैक्टिस करने वाला कम्पनी सचिव प्रकट करता है; या

ङ) वह व्यावसायिक सेवाएं प्रदान करता है या कम्पनी सचिव के पेशे की प्रैक्टिस से सम्बन्धित मामलों में सहायता प्रदान करता है; या

च) वह ऐसी कोई अन्य सेवाएं प्रदान करता है, जो कौंसिल की राय में, प्रैक्टिस करने वाले सचिव द्वारा प्रदान की जाती हैं या की जा सकती हैं।

कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 ने कुछ और क्षेत्र भी निर्धारित किए हैं, जहां पर पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाले कम्पनी सचिव द्वारा प्रमाणन को मान्यता दी गई है, जैसे :

अ) कम्पनी अधिनियम की धारा 33 (2) के अन्तर्गत, कम्पनी (केन्द्र सरकार) सामान्य नियम तथा फार्म, 1956 के फार्म नं. 1 पर यह घोषणा कि कम्पनी के निगमन सम्बन्धी समस्त कानूनी औपचारिकताएं पूर्ण कर ली गई हैं पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव भी कर सकता है।

ब) कम्पनी अधिनियम की धारा 149 के अनुसार, शेयर पूंजी वाली ऐसी कम्पनी जिसने जनता को कम्पनी के शेयर खरीदने के लिए निमन्त्रण देने के लिए प्रविवरण-पत्र जारी किया है, ऐसी कम्पनी तब तक व्यापार आरम्भ नहीं कर सकती जब तक कि पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाले सचिव द्वारा सत्यापित घोषणा रजिस्ट्रार के पास फाइल नहीं कर दी जाती कि समस्त आवश्यक औपचारिकताओं को पूर्ण कर दिया गया है।

स) धारा 161 के अनुसार, ऐसी कम्पनी के वार्षिक विवरण पर, जिसके शेयर किसी मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज में सूचीयत हैं, निदेशक तथा प्रबन्धक के अतिरिक्त पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाले कम्पनी सचिव के हस्ताक्षर भी आवश्यक हैं।

द) कम्पनी अधिनियम की धारा 269 को अनुसूची XIII के साथ पढ़ते समय, प्रबन्ध निदेशक या पूर्ण-कालिक निदेशक या प्रबन्धक की नियुक्ति के सम्बन्ध में यह सांविधिक घोषणा कि समस्त आवश्यक नियमों का पालन कर लिया गया है, अब यह घोषणा पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाले कम्पनी सचिव द्वारा की जा सकती है।

12.5 सचिव की नियुक्ति

आप पढ़ चुके हैं कि ऐसी प्रत्येक कम्पनी के लिए, जिसकी प्रदत्त शेयर पूंजी 25 लाख रुपये या उससे अधिक हो, एक पूर्ण-कालिक सचिव नियुक्त करना अनिवार्य बना दिया गया है। इस निर्धारित राशि से कम राशि वाली प्रदत्त शेयर पूंजी वाली कम्पनियों के लिए पूर्ण-कालिक सचिव नियुक्त करना अनिवार्य नहीं है। परन्तु, व्यवहार में प्रायः सभी कम्पनियां सचिव की नियुक्ति करती हैं तथा इस आशय का प्रावधान कम्पनी के अन्तर्नियमों में किया जाता है।

कम्पनी के प्रथम निदेशकों की तरह, प्रथम सचिव की नियुक्ति भी प्रवर्तकों द्वारा की जा सकती है। ऐसा व्यक्ति (सचिव) कम्पनी के निर्माण से सम्बन्धित आरंभिक कार्यों में प्रवर्तकों की सहायता करता है। ऐसे सचिव को प्रायः प्रो-टेम सचिव (कुछ समय के लिए सचिव) कहा जाता है। कई बार, प्रथम सचिव का नाम अन्तर्नियमों में दिया जा सकता है, परन्तु ऐसा होने पर उस व्यक्ति को सचिव के पद पर नियुक्त किए जाने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता है। यदि उस व्यक्ति को बाद में निदेशक मंडल द्वारा सचिव नियुक्त नहीं किया जाता, तो वह कम्पनी के विरुद्ध मुकदमा नहीं कर सकता। कम्पनी को उत्तरदायी ठहराने के लिए कम्पनी और अन्तर्नियमों में नामित व्यक्ति में एक स्वतन्त्र अनुबन्ध अवश्य होना चाहिए। इसलिए, प्रवर्तकों द्वारा नियुक्त प्रथम सचिव को, कम्पनी के निगमन के पश्चात् कम्पनी के साथ एक नया अनुबन्ध अवश्य करना चाहिए।

साधारणतः, निदेशक मंडल द्वारा अपनी प्रथम सभा में एक प्रस्ताव पारित करके, सचिव की नियुक्ति की जाती है। कम्पनी और सचिव के मध्य एक सेवा का अनुबन्ध निष्पादित किया जाता है, जिसमें नियुक्ति की शर्तें, पारिश्रमिक आदि का विवरण दिया होता है। बड़े आकार वाली कम्पनियों में, निदेशक मंडल, सचिव नियुक्त करने के अधिकार को प्रबन्ध निदेशक को सौंप सकता है।

निदेशक को, एक व्यक्ति के रूप में सचिव नियुक्त किया जा सकता है, परन्तु इसके लिए विशेष प्रस्ताव पारित करके कम्पनी की अनुमति प्राप्त करना आवश्यक है। परन्तु यदि किसी कम्पनी के निदेशक मंडल में केवल दो निदेशक हों तो उनमें से किसी को भी कम्पनी का सचिव नियुक्त नहीं किया जा सकता।

कम्पनी अधिनियम की धारा 303 के अनुसार, सचिव पद पर नियुक्त किए गये व्यक्ति से सम्बन्धित विवरण को निदेशकों/प्रबन्धक/सचिव के रजिस्टर में दर्ज किया जाना चाहिए, तथा इस नियुक्ति से सम्बन्धित समस्त विवरण, नियुक्ति के 30 दिनों के अन्दर, निर्धारित फार्म में, दो प्रतिलिपियां कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास जमा करानी चाहिए।

यहां पर आपको यह याद रखना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति किसी ऐसी कम्पनी में, जिसकी प्रदत्त शेयर पूंजी 25 लाख रुपये या इससे अधिक है, एक से अधिक कम्पनी में सचिव के पद पर कार्य नहीं कर सकता। यदि सचिव के पद पर नियुक्त व्यक्ति, किसी अन्य कम्पनी में भी सचिव के पद पर नियुक्त है, तो उसे अपनी नियुक्ति के 20 दिनों के अन्दर

दूसरी कम्पनी को सूचित करना चाहिए। इसके अतिरिक्त यदि किसी निदेशक के रिश्तेदार को कम्पनी के सचिव के पद पर नियुक्त करना हो तो इस नियुक्ति के लिए कम्पनी की साधारण सभा में विशेष प्रस्ताव पारित करना आवश्यक है [धारा 314]।

बोध प्रश्न क

1) कम्पनी सचिव की परिभाषा कीजिए।

....

....

....

2) कम्पनी का सचिव कौन नियुक्त हो सकता है?

....

....

....

3) कम्पनी सचिव की नियुक्ति कौन करता है?

....

....

....

4) कम्पनी सचिव की चार महत्वपूर्ण योग्यताओं को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

5) पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाले सचिव से आपका क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

6) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत :
   i) केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित योग्यताएं रखने वाले व्यक्ति को कम्पनी का सचिव नियुक्त किया जा सकता है।
   ii) निगमित संस्था को कम्पनी का सचिव नियुक्त किया जा सकता है।
   iii) प्रत्येक ऐसी कम्पनी, जिसकी प्रदत्त शेयर पूंजी 25 लाख रु. या इससे अधिक है, को पूर्ण-कालिक सचिव की नियुक्ति करना अनिवार्य है।
   iv) वाणिज्य में स्नातक की उपाधि रखने वाले व्यक्ति को कम्पनी का सचिव नियुक्त किया जा सकता है।
   v) ऐसी कम्पनी जिसके दो निदेशक हैं, वह उनमें से किसी को भी सचिव के पद पर नियुक्त नहीं कर सकती।
   vi) प्रवर्तकों द्वारा नियुक्त सचिव को, कम्पनी का प्रथम नियमित सचिव मान लिया जाता है।
   vii) सचिव की नियुक्ति सम्बन्धी विवरण, निर्धारित फार्म में, नियुक्ति की तिथि के 21 दिनों के भीतर रजिस्ट्रार के पास फाईल कर देना चाहिए।
   viii) यदि किसी निदेशक के सम्बन्धी को सचिव नियुक्त करना हो तो इस नियुक्ति के लिए कम्पनी की साधारण सभा में विशेष प्रस्ताव पारित किया जाना चाहिए।

12.6 सचिव को पद से हटाना

यह तो आप जानते ही हैं कि निदेशक मंडल के एक प्रस्ताव के द्वारा कम्पनी के सचिव की नियुक्ति की जाती है, अतः निदेशक मंडल द्वारा उसे पद से हटाया भी जा सकता है अथवा निदेशक मंडल द्वारा अभिकृत किए जाने पर, प्रबन्ध निदेशक भी सचिव को हटा सकता है।

जब सचिव की नियुक्ति की जाती है, तो उसकी सेवा सम्बन्धी शर्तें, सेवा या नौकरी के अनुबन्ध में लिखी जाती है। सेवा अनुबन्ध में प्रायः यह वाक्य (clause) भी शामिल होता है जिसमें उसे पद से हटाने का तरीका लिखा होता है। सचिव, कम्पनी का कर्मचारी भी होता है अतः वह कम्पनी का सेवक होता है तथा उसे उसके पद से हटाने के सम्बन्ध में स्वामी तथा सेवक के सम्बन्धों को नियमित करने वाले सामान्य नियम उस पर लागू होती हैं। परन्तु, सचिव को पद से हटाने से पहले, सेवा सम्बन्धी अनुबन्ध की शर्तों के अनुसार उसे पूर्व सूचना अवश्य दी जानी चाहिए। यदि सेवा अनुबन्ध में सूचना की अवधि नहीं बताई गई है, तब भी उचित सूचना अवश्य दी जानी चाहिए, अन्यथा कम्पनी क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी होगी। यदि कम्पनी सचिव को किसी निश्चित अवधि के लिए नियुक्त किया हो, तब भी कम्पनी उसे निश्चित अवधि से पहले उचित सूचना दे कर पद से हटा सकती है।

परन्तु सचिव को, जान-बूझकर अवहेलना करने, दुराचरण, लापरवाही, अयोग्यता या स्थायी अक्षमता होने पर बिना किसी सूचना के पद से हटाया जा सकता है। जब न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश देता है, तो यह आदेश कम्पनी के अन्य कर्मचारियों को पद मुक्त करने के साथ-साथ सचिव पर भी लागू होता है अर्थात् सचिव भी पद मुक्त हो जाता है।

12.7 कम्पनी सचिव की स्थिति

गत कुछ वर्षों में कम्पनी सचिव की स्थिति में भारी परिवर्तन हुए हैं। अब वह क्लर्क की स्थिति से उठकर निगमित ढांचे में एक अपरिहार्य स्थिति पर पहुंच गया है। परन्तु कम्पनी सचिव की स्थिति को स्पष्ट करना काफी कठिन है। कम्पनी अधिनियम ने सचिव की सही स्थिति को परिभाषित नहीं किया है। कम्पनी सचिव की स्थिति को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत स्पष्ट कर सकते हैं :

i) **कम्पनी के सेवक के रूप में : Barnett Hoares & Co. V. The South London Tramways Co. Ltd.** के केस में निर्णय देते हुए Lord Esher ने कहा कि **सचिव केवल सेवक मात्र है। उसकी स्थिति ऐसी है कि उसे जो कहा जाए वह वही करे**। कम्पनी और सचिव के मध्य एक सेवा का अनुबन्ध होता है, और इस अनुबन्ध की शर्तों से उसकी नौकरी नियमित होती है, इस प्रकार वह कम्पनी का कर्मचारी मात्र होता है। उसे निदेशक मंडल के नियन्त्रण में कार्य करना होता है। उसे निदेशकों के आदेशों का पालन करना पड़ता है। निदेशक मंडल द्वारा निधारित प्रबन्धकीय नीतियों को प्रभावकारी ढंग से कार्यरूप देने की जिम्मेदारी सचिव की होती है। सचिव को जो भी कार्य सौंपा जाता है, उसे करने के लिए उसे पूर्ण स्वतन्त्र अधिकार नहीं होते हैं, उसे जो भी अधिकार प्राप्त होते हैं वे निदेशक मंडल द्वारा ही प्रदान किए जाते हैं।

ii) **कम्पनी के एजेंट के रूप में :** क्योंकि सचिव कम्पनी के प्रशासनिक कार्यों से सम्बन्धित होता है, अतः वह कम्पनी की ओर से कार्य करता है। सचिव के कर्तव्य लिपिकीय तथा प्रशासनिक प्रकृति के होते हैं। कम्पनी के नैत्यक कार्यों की देखभाल सचिव द्वारा की जाती है। उसे कर्मचारियों, मजदूरों, ट्रेड यूनियनों, शेयरधारियों तथा बाह्य व्यक्तियों के साथ व्यवहार करना पड़ता है। अतः इन मामलों से सम्बन्धित बातों पर उसे अपने विवेक के अनुसार कार्य करना पड़ता है। वह कम्पनी और बाह्य व्यक्तियों के मध्य एक महत्वपूर्ण कड़ी है। सचिव ही नीति सम्बन्धी निर्णयों को कर्मचारियों तथा बाह्य व्यक्तियों तक पहुंचाता है, इस प्रकार वह कम्पनी के एजेंट के रूप में कार्य करता है।

iii) **कम्पनी के अधिकारी रूप में :** सही अर्थ में देखा जाए तो सचिव प्रबन्धकीय अधिकारी नहीं होता है, परन्तु कम्पनी अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का पालन करने के लिए उसे कम्पनी का मुख्य अधिकारी माना जाता है। विभिन्न अधिनियमों के अंतर्गत वैधानिक औपचारिकताओं को पालन करने का दायित्व सचिव का होता है। कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 ने कम्पनी सचिव को विशेष तौर से प्रबन्धकीय अधिकारियों, निदेशकों सहित, के समकक्ष रखा है तथा कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन करने पर उसे कारावास की सज़ा या दण्ड या अन्य प्रकार से दंडित करने की व्यवस्था की है।

   कम्पनी सचिव को रजिस्ट्रार के पास जमा कराने वाले वार्षिक विवरण पर हस्ताक्षर करने होते हैं [धारा 161 (1)], व्यापार आरम्भ करने से सम्बन्धित घोषणा करनी होती है [धारा 149], तुलन-पत्र तथा लाभ-हानि खाते को सत्यापित करना होता है [धारा 215], तथा धारा 33 (2) के अन्तर्गत उसे यह घोषणा करनी होती है कि कम्पनी के पंजीकरण से सम्बन्धित अधिनियम की सभी औपचारिकताओं का पालन कर दिया गया है। भारतीय स्टाम्प अधिनियम, एकाधिकार तथा अवरोधक व्यापारिक व्यवहार अधिनियम, आयकर अधिनियम, विक्रय कर अधिनियम आदि के अन्तर्गत सचिव को कम्पनी का "मुख्य अधिकारी" माना गया है।

iv) **निदेशक मंडल के सलाहकार के रूप में :** सचिव की महत्वपूर्ण भूमिका होती है तथा कम्पनी के प्रबन्ध में उसका विशेष स्थान होता है। यद्यपि कम्पनी की नीतियां निदेशकों द्वारा निर्धारित की जाती हैं, परन्तु क्योंकि उसे कम्पनी के सभी आन्तरिक मामलों की जानकारी होती है तथा सरकारी नीतियों में होते रहने वाले परिवर्तनों की भी उसे जानकारी होती है, अतः वह निदेशक मंडल को आवश्यक सूचनाएं व सलाह देने की श्रेष्ठ स्थिति में होता है। वह निदेशक मंडल को विभिन्न कानूनी विषयों पर महत्वपूर्ण सलाह प्रदान करता है। इसलिए सचिव को निदेशक मंडल का मार्ग-दर्शक भी कहा जाता है।

उपर्युक्त विवरण से यह तो आपको स्पष्ट हो गया होगा कि गत कुछ वर्षों में सचिव की स्थिति में महान परिवर्तन हुए हैं। यद्यपि सचिव को कोई प्रबन्धकीय कार्य नहीं करने होते हैं, परन्तु क्योंकि उसे कम्पनी का जिम्मेदार अधिकारी माना गया है, वह कम्पनी का मुख्य प्रशासनिक अधिकारी होता है। हम यह कह सकते हैं कि निदेशक कम्पनी का मस्तिष्क होते हैं तो सचिव, कम्पनी के कान, आंख और हाथ होता है।

12.8 सचिव के कर्तव्य

कम्पनी सचिव के कर्तव्य अलग-अलग कम्पनियों में भिन्न तरह के होते हैं और यह कम्पनी के आकार, प्रबन्धकीय ढांचे तथा सचिव की व्यक्तिगत योग्यताओं पर निर्भर करते हैं। भारतवर्ष में, निजी तथा संयुक्त दोनों ही क्षेत्रों में, कम्पनी सचिव को सचिवीय कार्यों के अतिरिक्त कानूनी, प्रशासनिक तथा प्रबन्धकीय कार्य भी सौंपे जाते हैं। बड़े आकार वाली कम्पनियों में, लेखों, विधि तथा कर्मचारी आदि कार्यों को करने के लिए पृथक-पृथक प्रबन्धक होते हैं, जो अपने-अपने विभाग के काम-काज की देखभाल करते हैं। परन्तु ऐसी स्थिति में भी सचिव के समन्वयक (co-ordinator) के रूप में कार्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता। इस प्रकार से यह कहा जा सकता है कि सचिव तीन तरह की स्थिति में कार्य करता है — निदेशक मंडल एजेंट के रूप में, कम्पनी से सम्बन्धित सचिवीय कार्य के अध्यक्ष के रूप में तथा कम्पनी के मुख्य प्रशासनिक अधिकारी के रूप में।

कम्पनी सचिव के कर्तव्यों को दो मुख्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है — (अ) वैधानिक कर्तव्य, तथा (ब) सामान्य कर्तव्य। वैधानिक कर्तव्यों को पुनः दो भागों में बांटा जा सकता है — कम्पनी अधिनियम के अधीन कर्तव्य तथा अन्य अधिनियमों के अधीन कर्तव्य।

12.8.1 वैधानिक कर्तव्य (Statutory Duties)

कम्पनी अधिनियम के अधीन कम्पनी सचिव के कुछ वैधानिक कर्तव्य निम्नलिखित हैं:

i) धारा 54 के अन्तर्गत किसी दस्तावेज या कार्यवाही पर हस्ताक्षर करना या प्रमाणीकरण करना।
ii) कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास आवश्यक दस्तावेज़ तथा विवरण जमा कराने का कार्य जैसे शेयरों के आबंटन का विवरण, वार्षिक विवरण, वार्षिक लेखे आदि।
iii) धारा 97 के अन्तर्गत शेयर पूंजी में वृद्धि करने सम्बन्धी सूचना रजिस्ट्रार को देने का कार्य।
iv) धारा 113 के अन्तर्गत आबंटन की तिथि के 3 माह के अन्दर और हस्तांतरण के पंजीयन की तिथि के दो माह के अन्दर शेयर प्रमाण-पत्र दे देना।
v) धारा 115 के अन्तर्गत शेयर वारंट ज़ारी किए जाने पर सदस्यों के रजिस्टर में आवश्यक प्रविष्टियां करना।
vi) रजिस्ट्रार के पास प्रभारों का विवरण जमा कराना।
vii) कम्पनी के प्रत्येक कार्यालय के बाहर या व्यापार करने के स्थान के बाहर, कम्पनी का नाम लिखवाना चाहिए तथा कम्पनी की सील पर कम्पनी का नाम खुदवाना (अंकित) करवाना चाहिए [धारा 147]।
viii) व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के लिए सांविधिक घोषणा करनी पड़ती है [धारा 149]।
ix) सदस्यों के रजिस्टर को निरीक्षण के लिए उपलब्ध कराने तथा उसकी प्रतियां देने का कार्य [धारा 163]।
x) कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को साधारण सभा की सूचना भेजना [धारा 171]।
xi) कुछ विशेष करारों व प्रस्तावों को रजिस्ट्रार के पास जमा कराना [धारा 192]।
xii) कम्पनी की साधारण सभाओं, निदेशक मंडल की सभाओं तथा अन्य सभाओं की कार्यवाही का विवरण रखना।
xiii) सांविधिक पुस्तकें तथा अन्य रजिस्टर रखना, जैसे सदस्यों का रजिस्टर, निदेशकों का रजिस्टर, प्रभार का रजिस्टर आदि।

इन अनेक कर्तव्यों में यदि सचिव अधिनियम के प्रावधानों का पालन करने में त्रुटि करता है, तो सचिव को दोषी अधिकारी के रूप में उत्तरदायी ठहराया जाता है। धारा 5 के अनुसार, अन्य के साथ सचिव को दोषी अधिकारी परिभाषित किया है।

अन्य अधिनियमों के अधीन कर्तव्य : कम्पनी सचिव को यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि अन्य अधिनियमों के प्रावधानों का भी पालन किया जाए। आयकर अधिनियम के अनुसार, कम्पनी के कर्मचारियों में से आयकर काटने तथा उसे सरकारी खज़ाने में जमा कराने के लिए, मुख्य अधिकारी के रूप में सचिव उत्तरदायी है।

भारतीय स्टाम्प अधिनियम के अधीन, सचिव को यह ध्यान रखना चाहिए कि स्टाम्प अधिनियम के नियमों के अनुसार विभिन्न दस्तावेज़ों जैसे शेयर प्रमाण-पत्र, हस्तांतरण फार्म आदि पर उचित मूल्य के स्टाम्प लगे होने चाहिए।

सचिव को विभिन्न श्रम तथा औद्योगिक कानूनों, जैसे कारखाना अधिनियम, औद्योगिक विवाद अधिनियम, न्यूनतम मज़दूरी अधिनियम आदि के प्रावधानों का पालन करना पड़ता है।

12.8.2 सामान्य कर्तव्य (General Duties)

उपर्युक्त वर्णित वैधानिक कर्तव्यों के अतिरिक्त, सचिव को अनेक सामान्य प्रकार के कार्य भी करने पड़ते हैं, ये सामान्य कर्तव्य निम्नलिखित हैं:

i) निदेशक मंडल के आदेशों का पालन करना।
ii) नीति सम्बन्धी निर्णयों को करने में निदेशक मंडल की सहायता करना।
iii) कम्पनी से सम्बन्धित आन्तरिक व गोपनीय सूचनाओं को प्रकट नहीं करना।
iv) अपनी स्थिति का उपयोग करते हुए कोई गुप्त लाभ अर्जित नहीं करना।
v) कम्पनी तथा बाहरी व्यक्तियों के मध्य एक साधन व कड़ी के रूप में काम करना।
vi) शेयरधारियों को आवश्यक सूचनाएं उपलब्ध कराना।
vii) कार्यालय के कार्य को संगठित करने, नियन्त्रित करने व समन्वित करना।

12.9 सचिव के दायित्व

आपने पढ़ा कि सचिव का यह कर्तव्य एवं दायित्व होता है वह यह ध्यान रखे कि कम्पनी का कारोबार कम्पनी अधिनियम तथा अन्तर्नियमों के अनुसार चलाया जाए। यदि अधिनियम के किसी प्रावधान का पालन करने में त्रुटि की जाती है, तो कम्पनी का अधिकारी होने के कारण, सचिव को सजा या जुर्माने से दंडित किया जाता है।

कम्पनी सचिव के दायित्वों की दो शीर्षकों के अन्तर्गत चर्चा की जा सकती है— सांविधिक दायित्व तथा अनुबन्ध जनित दायित्व।

सांविधिक दायित्व (Statutory Liabilities)

यह तो आप जानते ही हैं कि सचिव, कम्पनी का एक महत्वपूर्ण अधिकारी होता है तथा उसे केवल इसी बात का ध्यान नहीं रखना पड़ता कि कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों का पालन किया जाए बल्कि उसे यह भी देखना पड़ता है कि अन्य अधिनियम जैसे भारतीय आयकर अधिनियम, भारतीय स्टाम्प अधिनियम, श्रम एवं औद्योगिक कानूनों के प्रावाधानों का भी पालन किया जाए। कम्पनी सचिव को निम्नलिखित के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है :

i) सांविधिक सभा बुलाने या सांविधिक रिपोर्ट को रजिस्ट्रार के पास भेजने में त्रुटि [धारा 165]।
ii) वार्षिक साधारण सभा बुलाने में त्रुटि [धारा 168]।
iii) शेयरों के आवंटन सम्बन्धी विवरण जमा करने में त्रुटि [धारा 75]।
iv) आवंटन के तीन माह के अन्दर तथा हस्तांतरण के पंजीयन की तिथि के दो माह के अन्दर शेयर प्रमाण-पत्र तैय्यार करने में त्रुटि [धारा 113]।
v) सदस्यों के रजिस्टर को रखने में त्रुटि [धारा 150]।
vi) यदि सदस्यों ने किसी प्रस्ताव की सूचना कम्पनी को दे दी है तो उस प्रस्ताव को प्रसारित करने में त्रुटि [धारा 188]।
vii) कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय तथा प्रत्येक कार्यालय या व्यापार करने के स्थान के बाहर कम्पनी का नाम रंग से लिखने में त्रुटि तथा कम्पनी की सील (सार्वमुद्रा) पर कम्पनी का नाम खुदाने में त्रुटि [धारा 147]।
viii) वार्षिक विवरण जमा करने में त्रुटि [धारा 162]।
ix) शेयरधारियों की सभाओं व निदेशक मंडल की सभाओं की कार्यवाही का विवरण लिखने में त्रुटि [धारा 193]।
x) कुछ करार व प्रस्ताव, जिनका पंजीकरण कराना आवश्यक है, उनका पंजीकरण कराने में त्रुटि [धारा 192]।
xi) निदेशकों के रजिस्टर को रखने में त्रुटि [धारा 303]।
xii) सांविधिक रजिस्टरों, जैसे सदस्यों के रजिस्टर की सूची, ऋण रजिस्टर, प्रभार रजिस्टर आदि, रखने में त्रुटि।
xiii) कोई असत्य या भ्रामक कथन करने पर दायित्व।

सचिव अपने दायित्व से केवल तभी बच सकता है यदि वह यह सिद्ध कर सके कि कानून द्वारा या अन्तर्नियमों द्वारा या कम्पनी के किसी प्रस्ताव द्वारा उसके दायित्व को स्पष्टतः समाप्त कर दिया गया था। उसे उस स्थिति में भी उत्तरदायी नहीं ठहराया जाता यदि वह न्यायालय को सन्तुष्ट कर देता है कि उन परिस्थितियों में उसने पूर्ण ईमानदारी व अपनी योग्यतानुसार कार्य किया है। कम्पनी अधिनियम के अधीन दायित्वों के अतिरिक्त, यदि सचिव आयकर कानून, भारतीय स्टाम्प अधिनियम, विक्रय-कर अधिनियम तथा अन्य श्रम व औद्योगिक कानूनों के प्रावधानों का पालन नहीं करता, तो उसे जुर्माने या सज़ा से दंडित किया जा सकता है।

अनुबन्धात्मक दायित्व (Contractual Liabilities)

विभिन्न सांविधिक दायित्वों के अतिरिक्त, कम्पनी सचिव के अनेक अनुबन्धात्मक दायित्व भी होते हैं जो सेवा (service) अनुबन्ध से उत्पन्न होते हैं। ये दायित्व निम्नलिखित हैं :

i) अपने कर्तव्यों का पालन करने में जान-बूझकर की गई असावधानी या लापरवाही के परिणामस्वरूप यदि कम्पनी को कोई हानि या क्षति होती है, तो उसकी पूर्ति करने का दायित्व।
ii) यदि सचिव अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य करता है तो उसके लिए वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है।
iii) कम्पनी के सचिव के पद पर बने रहने के कारण यदि वह कोई गुप्त लाभ अर्जित करता है, तो उसे वापिस लौटाने के लिए वह उत्तरदायी होता है।

iv) कम्पनी से सम्बन्धित कोई गोपनीय सूचना प्रकट करने से यदि कम्पनी को कुछ हानि होती है, तो उस हानि की पूर्ति करने का दायित्व।

v) अपने कार्य-काल के दौरान वह कम्पनी के प्रति किए गये कपट या गलत कार्य के लिए उत्तरदायी होता है।

12.10 सचिव के अधिकार

सचिव को कुछ अधिकार अधिनियम द्वारा दिए गये हैं तो कुछ निदेशक मंडल तथा शेयरधारियों की साधारण सभा द्वारा दिए गये हैं। कम्पनी के साथ किए गये सेवा अनुबन्ध से भी उसे कुछ अधिकार प्राप्त होते हैं। सचिव को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं:

i) अपने विभाग की गतिविधियों पर नियन्त्रण व देखभाल करने का अधिकार;

ii) कम्पनी द्वारा सत्यापित आवश्यक होने पर दस्तावेज़ों पर हस्ताक्षर करने का अधिकार;

iii) अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए यदि उसे कोई हानि या क्षति होती है, तो क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार;

iv) पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार।

परन्तु कम्पनी सचिव को कम्पनी के नाम में ऋण लेने या शेयर आबंटित करने या निदेशक मंडल से स्पष्ट अधिकार या अनुमति प्राप्त किए बिना शेयरों के हस्तांतरण को पंजीकरण करने का अधिकार नहीं होता है। उसे कम्पनी की सभा बुलाने का भी अधिकार नहीं है।

उपर्युक्त से आपको यह भली भांति स्पष्ट हो गया होगा कि सचिव, कम्पनी का एक महत्वपूर्ण व जिम्मेदार अधिकारी है तथा उसके अनेक सांविधिक तथा अनुबन्धात्मक दायित्व होते हैं। परन्तु उसे सदैव निदेशक मंडल के आदेशानुसार कार्य करना पड़ता है।

12.11 सचिव की भूमिका

कम्पनी के प्रशासन में कम्पनी सचिव की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कम्पनी के आकार एवं प्रकृति पर उसकी भूमिका का क्षेत्र निर्भर करता है। वह केवल कम्पनी के प्रति ही उत्तरदायी नहीं है बल्कि वह शेयरधारियों, लेनदारों, कर्मचारियों तथा समाज के प्रति भी उत्तरदायी होता है।

उपर्युक्त चर्चा के आधार पर हम सचिव की तीन प्रकार की भूमिका पाते हैं— सांविधिक अधिकारी के रूप में, एक समन्वयक के रूप में तथा एक प्रशासनिक अधिकारी के रूप में।

i) **सांविधिक अधिकारी (Statutory Officer):** कम्पनी के मुख्य अधिकारी के रूप में, कम्पनी अधिनियम तथा अन्य अधिनियमों के विभिन्न प्रावधानों का कठोरता से पालन करने के लिए कम्पनी सचिव उत्तरदायी होता है। वह लेखा पुस्तकें तथा अन्य रजिस्टरों को ठीक से रखने के लिए उत्तरदायी है। उसे अनेक प्रकार के दस्तावेज़ों, जैसे वार्षिक विवरण, आबंटन विवरण, व्यापार आरम्भ करने की घोषणा आदि पर, हस्ताक्षर करने होते हैं। वह तुलन पत्र तथा लाभ-हानि खाते को प्रमाणित करने के लिए, शेयरधारियों तथा निदेशक मंडल की सभाओं को करने तथा इन सभाओं का ठीक-ठीक कार्य विवरण रखने के लिए उत्तरदायी है।

ii) **समन्वयक (Co-ordinator)** कम्पनी सचिव, निदेशक संडल तथा कम्पनी के अन्य अधिकारियों के बीच एक कड़ी का कार्य करता है। निद्रेशक मंडल नीति सम्बन्धी निर्णय लेते हैं, परन्तु उन्हें कार्य-रूप देने का कार्य कम्पनी सचिव ही करता है। वह एक तरफ निदेशक मंडल, प्रबन्ध संचालक तथा अध्यक्ष और दूसरी तरफ कम्पनी के कर्मचारियों के बीच कड़ी का कार्य करता है। एक ऐसी कम्पनी में जहां अनेक स्वतन्त्र विभाग हैं जैसे विक्रय, क्रय, कर्मचारी आदि तो कम्पनी सचिव इन विभिन्न विभागों के अधिकारियों के कार्यों को समन्वित करता है ताकि नीति सम्बन्धी निर्णयों का ठीक से पालन किया जा सके। यदि फिर भी कुछ विषय ऐसे हैं जिन पर और सोच-विचार करने की आवश्यकता है तो सचिव उन विषयों को निदेशक मंडल के समक्ष पेश करेगा तथा बोर्ड का जो भी निर्णय होगा, वह सम्बन्धित विभाग को बता देगा।

कम्पनी सचिव, ट्रेड यूनियन के अधिकारियों, अंकेक्षकों, कम्पनी के शेयरधारियों, सरकार तथा समाज के साथ समन्वयक के रूप में कार्य करता है। उसे यह सुनिश्चित करना है कि कम्पनी अधिनियम तथा अन्य अधिनियमों के प्रावधानों का पालन किया जा रहा है। सचिव को यह भी देखना होता है कि कम्पनी इस प्रकार से कार्य करे जिससे कि सरकार के घोषित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि समाज के प्रति भी कम्पनी की कई जिम्मेदारियां हैं। सचिव ऐसे अनेक विषयों पर निदेशक मंडल को परामर्श दे सकता है जिससे कम्पनी समाज के कल्याण के लिए कुछ कार्य कर सके।

iii) **प्रशासनिक अधिकारी (Administrative Officer):** वह मुख्य प्रशासनिक अधिकारी होने के नाते, कम्पनी के कुशल प्रशासन के लिए उत्तरदायी है। उसे विभिन्न विभागों, जैसे वित्त, कर्मचारी, संगठन के कार्यों की देखभाल, नियन्त्रण तथा उनमें समन्वय स्थापित करना होता है। उसे एक सुदृढ़ एवं कुशल संगठन के ढांचे का निर्माण करना होता है। वह कम्पनी की परिसम्पत्तियों एवं जायदाद को सुरक्षित तथा ठीक ढंग से रखने के लिए उत्तरदायी है। उसे यह भी सुनिश्चित करना है कि उनका दुरुपयोग न हो। कम्पनी के समस्त रिकार्डों को ठीक प्रकार से रखने का उत्तरदायित्व कम्पनी सचिव का होता है। जो परिवर्तन तेजी से निरन्तर हो रहे हैं, उसमें कम्पनी के प्रशासन में कम्पनी सचिव से और भी अधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने की अपेक्षा की जाती है। वह निदेशक मंडल को नीति निर्धारित करने में तथा सरकार व अन्य वित्तीय संस्थाओं से व्यवहार करने में सहायता प्रदान करता है।

बोध प्रश्न ख

1) कम्पनी सचिव को किस प्रकार पद से हटाया जा सकता है?

....

....

....

2) सचिव के चार महत्वपूर्ण कर्तव्यों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

3) कम्पनी सचिव के तीन सांविधिक कर्तव्य गिनाइए।

....

....

....

4) सचिव की तीन प्रकार की भूमिका से आपका क्या आशय है?

....

....

....

5) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत :

i) उचित सूचना दे कर सचिव को उसके पद से हटाया जा सकता है।

ii) जान-बूझकर दुराचरण, लापरवाही या स्थायी अक्षमता होने पर सचिव को पद से हटाने के लिए सूचना देना आवश्यक नहीं है।

iii) निश्चित अवधि के लिए नियुक्त सचिव को उस अवधि की समाप्ति से पहले पद से नहीं हटाया जा सकता।

iv) सचिव साधारण सभा बुला सकता है, शेयरों का आबंटन कर सकता है तथा शेयरों के हस्तांतरण को पंजीकृत कर सकता है।

v) कम्पनी अधिनियम तथा देश के अन्य कानूनों के प्रावधानों को पालन कराने के लिए कम्पनी सचिव उत्तरदायी होता है।

vi) कम्पनी सचिव केवल निदेशकों के प्रति उत्तरदायी है शेयरधारियों के प्रति नहीं।

vii) निदेशक मंडल कुछ प्रबन्धकीय अधिकार सचिव को सौंप सकता है।

viii) सचिव अपने पद का उपयोग करके लाभ अर्जित कर सकता है।

ix) कम्पनी सचिव को यह सुनिश्चित करना है कि कम्पनी की परिसम्पत्तियां सुरक्षित रहें।

12.12 सारांश

कम्पनी सचिव शब्द से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जो भारतीय इन्सटीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी का सदस्य है। प्रत्येक ऐसी कम्पनी के लिए, जिसकी प्रदत्त शेयर पूंजी 25 लाख रुपये या इससे अधिक है, पूर्ण-कालिक सचिव रखना अनिवार्य है। उक्त राशि से कम राशि की शेयर पूंजी वाली कम्पनी भी ऐसा सचिव नियुक्त कर सकती है जिसके पास सचिव नियुक्त होने के लिए एक या अधिक निर्धारित योग्यताएं हैं।

कम्पनी अधिनियम ने पूर्ण-कालिक प्रैक्टिस करने वाले कम्पनी सचिव की अवधारणा को अब मान्यता प्रदान की है, इससे हमारा आशय ऐसे सचिव से है जो पूर्ण-कालिक सेवा में नहीं लगा हुआ है। जो सचिव इन्सटीट्यूट से प्रैक्टिस करने का लायसेंस प्राप्त करते हैं, केवल वही प्रैक्टिस कर सकते हैं।

सामान्यतः, सचिव को निदेशक मंडल द्वारा नियुक्त किया जाता है। उसे मंडल द्वारा पारित प्रस्ताव के द्वारा अथवा यदि बोर्ड ने प्रबन्ध निदेशक को अधिकृत किया हो तो उसके द्वारा, पद से हटाया जा सकता है। सचिव को हटाने से पहले उसे इसकी उचित सूचना अवश्य दी जानी चाहिए। परन्तु, जान-बूझकर दुराचरण, लापरवाही या स्थायी अक्षमता की स्थिति में सूचना देना भी आवश्यक नहीं है।

कम्पनी के प्रशासन में कम्पनी सचिव की स्थिति अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उसकी स्थिति एक एजेंट, सेवक तथा कम्पनी के अधिकारी की होती है। उसके अनेक सांविधिक तथा अन्य कर्तव्य हैं। कम्पनी का अधिकारी होने के नाते, यदि कम्पनी अधिनियम या किसी अन्य कानून के नियमों का पालन नहीं किया जाता, तो उसे जुर्माने या सज़ा से दंडित किया जा सकता है। क्योंकि सचिव की स्थिति वैश्वासिक होती है अतः गुप्त लाभ अर्जित करने के लिए उसे अपनी स्थिति का उपयोग नहीं करना चाहिए। उसे कम्पनी से सम्बन्धित विषयों को अपने तक ही रखना चाहिए। सचिव तीन प्रकार की भूमिका निभाता है—सांविधिक अधिकारी की, समन्वयक की तथा कम्पनी के प्रशासनिक अधिकारी की।

12.13 शब्दावली

सचिव (Secretary): ऐसा व्यक्ति जो इन्सटीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी का सदस्य हो।

प्रैक्टिस करने वाला सचिव (Practicing Secretary): ऐसा व्यक्ति जो इन्सटीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी का सदस्य है तथा जिसने कौंसिल से प्रैक्टिस करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त किया हो।

सांविधिक कर्तव्य (Statutory duties): कानून द्वारा निर्धारित कर्तव्य।

कर्तव्य भंग (Breach of duty): अनुबन्धात्मक या सांविधिक कर्तव्यों का पालन नहीं करना।

प्रो-टेम (Pro-tem): उस समय के लिए।

अनुबन्धात्मक कर्तव्य (Contractual duties): अनुबन्ध से उत्पन्न होने वाले कर्तव्य।

12.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 6	i) सही	ii) गलत	iii) सही	iv) गलत	v) सही
	vi) गलत	vii) गलत	viii) सही		
ख 5	i) सही	ii) सही	iii) गलत	iv) गलत	v) सही
	vi) गलत	vii) सही	viii) गलत	ix) सही	

12.15 स्वपरख प्रश्न

1) कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत 'सचिव' शब्द की परिभाषा कीजिए। कम्पनी का सचिव किसे नियुक्त किया जा सकता है?

2) कम्पनी के सचिव की नियुक्ति कैसे होती है? बताइए कि उसे किस प्रकार पद से हटाया जा सकता है?

3) कम्पनी सचिव की क्या योग्यताएं हैं, स्पष्ट कीजिए।

4) कम्पनी सचिव की वैधानिक स्थिति बताइए तथा उसके मुख्य कार्य लिखिए।

5) कम्पनी सचिव के कर्तव्यों को स्पष्ट कीजिए।

6) कम्पनी सचिव के सांविधिक तथा अनुबन्धात्मक दायित्वों की व्याख्या कीजिए।

7) (अ) सांविधिक अधिकारी; (ब) समन्वयक; तथा (स) प्रशासनिक अधिकारी के रूप में कम्पनी सचिव की भूमिका की चर्चा कीजिए।

8) "निदेशक मंडल तथा कम्पनी के शेयरधारियों के बीच सचिव कड़ी का काम करता है।" स्पष्ट कीजिए।

नोट : इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 13 सभाएँ एवं प्रस्ताव (Meetings and Resolutions)

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य
13.1 प्रस्तावना
13.2 सभाओं का अर्थ एवं उनका महत्व
13.3 सभाओं के प्रकार
13.4 सांविधिक सभा
- 13.4.1 सांविधिक सभा का उद्देश्य
- 13.4.2 सांविधिक सभा की सूचना
- 13.4.3 सांविधिक रिपोर्ट

13.5 वार्षिक साधारण सभा
13.6 असाधारण सामान्य सभा
13.7 वैध सभा के आवश्यक लक्षण
13.8 सभाओं की सूचना
13.9 सभाओं के लिए कोरम
13.10 प्रॉक्सी
13.11 मतदान
13.12 सभापति
13.13 प्रस्ताव
- 13.13.1 साधारण प्रस्ताव
- 13.13.2 विशेष प्रस्ताव
- 13.13.3 विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव

13.14 विवरण
13.15 सारांश
13.16 शब्दावली
13.17 बोध प्रश्नों के उत्तर
13.18 स्वपरख प्रश्न

13.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- कम्पनी की सभाओं का अर्थ स्पष्ट कर सकें;
- कम्पनी की सभाओं के महत्व का वर्णन कर सकें;
- सभाओं के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकें;
- वैध सभा के आवश्यक लक्षणों को सूचीबद्ध कर सकें;
- सूचना एवं कोरम से सम्बन्धित नियमों का वर्णन कर सकें, और
- प्रस्तावों के विभिन्न प्रकार तथा उन्हें किन-किन कार्यों के लिए पारित किया जाता है, यह स्पष्ट कर सकें ;

13.1 प्रस्तावना

कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति होने के कारण, प्राकृतिक व्यक्ति की तरह स्वयं कोई कार्य नहीं कर सकती। कम्पनी का कारोबार निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा चलाया जाता है, जिन्हें 'निदेशक' कहते हैं। निदेशक मंडल की सभाओं में निदेशक निर्णय लेते हैं। परन्तु वे कम्पनी के कारोबार से सम्बन्धित समस्त विषयों पर निर्णय नहीं ले सकते। कुछ विषय ऐसे हैं, जिनके लिए समस्त शेयरधारियों द्वारा निर्णय करना आवश्यक होता है, क्योंकि शेयरधारी ही कम्पनी के स्वामी होते हैं। इनके लिए शेयरधारियों की सभा बुलाई जाती है, जिसमें शेयरधारियों द्वारा प्रस्ताव पारित करके निर्णय लिए जाते हैं। इस इकाई में आप सभाओं के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन करेंगे तथा यह भी पढ़ेंगे कि इन सभाओं में क्या-क्या कार्यवाही की जाती है। कम्पनी अधिनियम में इन सभाओं को बुलाने व संचालन करने के सम्बन्ध में नियम दिए गये हैं। आप प्रस्तावों के विभिन्न प्रकारों का तथा उनकी आवश्यकता किन-किन कार्यों के लिए होती है, इसका भी अध्ययन करेंगे।

13.2 सभाओं का अर्थ एवं उनका महत्व

सभा की सामान्य परिभाषा हम इस प्रकार कर सकते हैं, किसी वैध व्यापार को करने के लिए दो या अधिक व्यक्तियों के इकट्ठा होने, सभा करने या भीड़ को सभा कहते हैं। कम्पनी के कारोबार को कुशल ढंग से चलाने के लिए यह आवश्यक है कि कम्पनी के शेयरधारी समय-समय पर सभाएं करते रहें तथा पारस्परिक हितों से सम्बन्धित विषयों पर महत्वपूर्ण निर्णय लेते रहें। सभा ऐसा मंच प्रदान करती है जहां पर सभी व्यक्ति स्वतन्त्रपूर्वक अपने विचार प्रकट कर सकते हैं, तथा खुले ढंग से बहस कर सकते हैं। सभाओं में लिए गये निर्णय सभी को सामान्यतः स्वीकार होते हैं तथा उनका फिर विरोध नहीं किया जाता।

किसी भी वैध सभा के लिए कम से कम दो व्यक्ति अवश्य ही होने चाहिए, क्योंकि एक अकेला व्यक्ति कोई सभा नहीं कर सकता। परन्तु कुछ ऐसी परिस्थितियां भी हैं जब एक अकेला व्यक्ति वैध सभा कर सकता है, ये इस प्रकार हैं :

क) जब किसी वर्ग के समस्त शेयर किसी एक व्यक्ति के पास हैं, तो वह अकेला व्यक्ति उस वर्ग की सभा कर सकता है;

ख) जब कम्पनी लॉ बोर्ड के आदेश पर सभा बुलाई जाती है, तो वह यह आदेश दे सकता है कि एक सदस्य के व्यक्तिगत रूप से अथवा प्रॉक्सी द्वारा उपस्थित होने पर वैध सभा हो सकती है।

निर्णय लेने की प्रक्रिया में कम्पनी की सभाओं का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इनके द्वारा शेयरधारियों को कम्पनी की गतिविधियों की समीक्षा करने तथा नीति सम्बन्धी निर्णय लेने का अवसर प्राप्त होता है, इस प्रकार वे निदेशक मंडल पर नियन्त्रण रख सकते हैं। शेयरधारियों की साधारण सभाओं में लिए गये निर्णयों का पालन करने के लिए निदेशक कर्तव्यबद्ध होते हैं। कम्पनी संगठन के प्रबन्ध एवं प्रशासन में सभाओं का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

13.3 सभाओं के प्रकार

कम्पनी की सभाओं को मोटे तौर पर निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है :

1) **शेयरधारियों की सभाएं :** इस प्रकार की सभाओं को सदस्यों की साधारण सभा भी कहा जाता है तथा इसमें वे अपने सामूहिक अधिकारों का प्रयोग करते हैं। शेयरधारियों की सभाओं के भी निम्नलिखित चार प्रकार होते हैं :
   - क) सांविधिक सभा (statutory meeting)
   - ख) वार्षिक साधारण सभा (annual general meeting)
   - ग) असाधारण सामान्य सभा (extraordinary general meeting)
   - घ) वर्गीय सभा (class meeting)

2) **निदेशकों की सभाएं :** निदेशक सामूहिक रूप से एक मंडल के रूप में कार्य करते हैं तथा निदेशक मंडल की सभाओं में निर्णय लिए जाते हैं। वे सभाएं भी दो प्रकार की होती हैं :
   - क) निदेशक मंडल की सभाएं; तथा
   - ख) निदेशकों की समिति की सभाएं।

3) **अन्य सभाएं :** ये सभाएं निम्नलिखित में से कोई भी हो सकती हैं :
   - क) ऋण-पत्रधारियों की सभाएं;
   - ख) लेनदारों की सभाएं; तथा
   - ग) कम्पनी के समापन के समय लेनदारों तथा अंशदाताओं की सभाएं।

चित्र 13.1 को देखने से आपको सभाओं के प्रकार को समझने में सहायता मिलेगा :

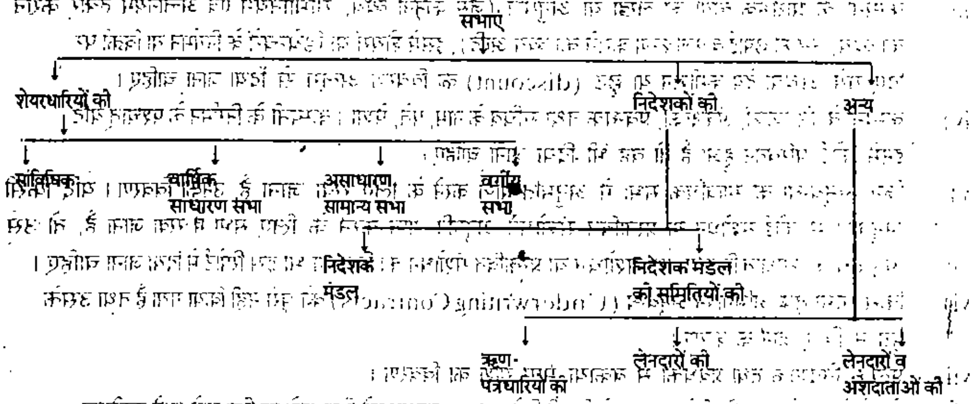

13.4 सांविधिक सभा (Statutory Meeting)

सार्वजनिक कम्पनी के शेयरधारियों की यह पहली सभा होती है तथा सार्वजनिक कम्पनी के जीवन के दौरान यह सभा एक बार ही होती है। कम्पनी अधिनियम की धारा 165 के अनुसार शेयरों द्वारा सीमित प्रत्येक कम्पनी तथा शेयर पूंजी रखने वाली गारंटी द्वारा सीमित कम्पनी द्वारा व्यापार आरम्भ करने की अनुमति प्राप्त करने की तिथि से कम से कम एक माह पश्चात् तथा अधिक से अधिक छः माह के भीतर कम्पनी के सदस्यों की एक साधारण सभा बुलानी चाहिए। इस सभा को 'सांविधिक सभा' कहते हैं तथा सभा बुलाने की सूचना में यह विशेष तौर से स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए। एक निजी कम्पनी के लिए यह सभा बुलानी आवश्यक नहीं है।

13.4.1 सांविधिक सभा का उद्देश्य

सांविधिक सभा बुलाने के मुख्य उद्देश्य शेयरधारियों को कम्पनी के निर्माण से सम्बन्धित तथ्यों की सूचना देना है, इस सभा में यह बताया जाता है कि कितने शेयर लिए गये हैं, उन पर कितनी राशि प्राप्त हुई है, क्या अनुबन्ध किए गये हैं, प्रारंभिक व्यय आदि। इस सभा के द्वारा शेयरधारियों को कम्पनी के गठन से सम्बन्धित विषयों पर चर्चा करने का अवसर प्राप्त होता है। इससे उनको कम्पनी की स्थिति तथा भावी सम्भावनाओं को समझने में सहायता मिलती है। इस सभा के माध्यम से शेयरधारी कम्पनी के निदेशकों से मिलते हैं तथा इस बात के लिए आश्वासित होते हैं कि उनके द्वारा विनियोजित धन का सदुपयोग किया जा रहा है।

13.4.2 सांविधिक सभा की सूचना

सांविधिक सभा को साधारण सभा ही माना जाता है अतः इस सभा के लिए कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को सभा की तिथि से कम से कम 21 पूर्ण दिनों की लिखित सूचना भेजी जानी चाहिए। 21 दिनों की गणना करते समय सूचना भेजने का दिन व सभा की तिथि को शामिल नहीं किया जाता है। इस अवधि से कम दिनों की सूचना भी वैध होती है यदि प्रदत्त-पूंजी (Paid-up Capital) के 95 प्रतिशत पर मताधिकार रखने वाले सदस्यों अथवा कुल मत शक्ति के 95 प्रतिशत धारक सदस्य इसके लिए सहमत हों। कम अवधि की सूचना के लिए सदस्यों की सहमति सभा में अथवा उससे पहले प्राप्त की जा सकती है।

सभा बुलाने की सूचना में यह स्पष्टतः लिख दिया जाना चाहिए यह कम्पनी की सांविधिक सभा है। इस सूचना के साथ सांविधिक रिपोर्ट भी भेजी जानी चाहिए।

13.4.3 सांविधिक रिपोर्ट (Statutary Report)

निदेशक मंडल द्वारा एक रिपोर्ट तैयार की जाती है, इसे 'सांविधिक रिपोर्ट' कहते हैं। आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि इस सभा को बुलाने की सूचना के साथ ही सांविधिक रिपोर्ट भी प्रत्येक सदस्य को भेजी जानी चाहिए। यदि सांविधिक रिपोर्ट बाद में भेजी जाती है, तो इसे तब भी वैध माना जाएगा यदि सभा में भाग लेने व मतदान का अधिकार रखने वाले सभी सदस्य इसके लिए सहमत हो जाते हैं।

सांविधिक रिपोर्ट की विषय-सामग्री : कम्पनी अधिनियम की धारा 165 (3) के अनुसार, सांविधिक रिपोर्ट में निम्नलिखित विषयों के बारे में सूचना दी जानी चाहिए :

i) आबंटित शेयरों की कुल संख्या, इसमें पूर्ण-दत्त तथा अंश-दत्त शेयरों की संख्या अलग-अलग बताई जानी चाहिए। यदि शेयरों को नकद प्रतिफल के बदले किसी अन्य के बदले ज़ारी किया गया है तो उसका विवरण अलग से दिया जाना चाहिए। कुल प्राप्त नकद राशि का विवरण भी दिया जाना चाहिए।

ii) रिपोर्ट की तिथि से एकदम पहले सात दिनों के भीतर किसी तिथि तक प्राप्त कुल प्राप्तियों एवं भुगतानों का

विवरण तथा शेष नकद राशि लिखी जानी चाहिए।

iii) कम्पनी के प्रारंभिक व्ययों का लेखा या अनुमान (जैसे कानूनी व्यय, सीमानियम एवं अन्तर्नियम तैयार कराने का व्यय, उनकी छपाई व पंजीकरण कराने का व्यय आदि), इसमें शेयरों या डिबेन्चरों के निर्गमन या बिक्री पर दिए गये अथवा देय कमीशन या छूट (discount) का विवरण अलग से दिया जाना चाहिए।

iv) कम्पनी के निदेशकों, अंकेक्षकों, प्रबन्धक तथा सचिव के नाम, पते, पेशा। कम्पनी के निर्गमन के पश्चात् यदि इनमें कोई परिवर्तन हुआ है तो वह भी दिया जाना चाहिए।

v) जिन अनुबन्धों को सांविधिक सभा में अनुमति प्राप्त करने के लिए रखा जाना है, उनका विवरण। यदि किसी अनुबन्ध में कोई संशोधन या प्रस्तावित संशोधन अनुमति प्राप्त करने के लिए सभा में रखा जाना है, तो उस अनुबन्ध का संक्षिप्त विवरण तथा संशोधन या प्रस्तावित संशोधन का विवरण भी इस रिपोर्ट में दिया जाना चाहिए।

vi) किस सीमा तक अभिगोपन अनुबन्ध (Underwriting Contracts) को पूरा नहीं किया गया है तथा उसके पूरा न किए जाने के कारण।

vii) प्रत्येक निदेशक तथा प्रबंधकों से बकाया मांग राशि का विवरण।

viii) शेयरों के निर्गमन या विक्री के सम्बन्ध में किसी निदेशक या प्रबन्धक को दिए गये या दिए जाने वाले कमीशन या दलाली का विवरण।

सांविधिक रिपोर्ट की सत्यता कम से कम दो निदेशकों द्वारा, जिनमें से एक प्रबंध निदेशक हो, प्रमाणित की जानी चाहिए। कम्पनी द्वारा निर्गमित शेयरों के बारे में, उन पर प्राप्त हुई नकद राशि तथा प्राप्ति एवं भुगतान खाता, अंकेक्षक द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए। सदस्यों को सांविधिक रिपोर्ट भेजने के पश्चात् उसकी एक प्रमाणित प्रति (certified copy) रजिस्ट्रार के पास भी भेजी जानी चाहिए। सांविधिक सभा आरम्भ होने के समय, निदेशक मंडल द्वारा कम्पनी के सदस्यों की सूची प्रस्तुत की जानी चाहिए, इस सूची में उनके नाम, पते एवं पेशे के साथ-साथ प्रत्येक सदस्य द्वारा लिये गये शेयरों की संख्या भी दी जानी चाहिए। सभा की कार्यवाही के दौरान प्रत्येक सदस्य द्वारा निरीक्षण के लिए यह सूची खुली रखी जानी चाहिए।

सभा में उपस्थित सदस्य कम्पनी के गठन अथवा सांविधिक रिपोर्ट से सम्बन्धित किसी भी विषय पर चर्चा करने के लिए स्वतन्त्र होते हैं, चाहे इसकी कोई पूर्व सूचना दी गई हो या नहीं। परन्तु केवल वही प्रस्ताव पारित किए जा सकते हैं जिनके विषय में कम्पनी अधिनियम के अनुसार पूर्व-सूचना दे दी गई हो। यदि सांविधिक सभा बुलाने अथवा सांविधिक रिपोर्ट भेजने में कोई त्रुटि की जाती है, तो प्रत्येक निदेशक तथा दोषी अधिकारी पर 500 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, यदि सांविधिक सभा नहीं बुलाई जाती अथवा रजिस्ट्रार के पास सांविधिक रिपोर्ट की प्रति नहीं भेजी जाती तो सदस्यों को अधिकार है कि वे न्यायालय से कम्पनी के अनिवार्य समापन (compulsory winding up) के लिए आवेदन कर सकते हैं।

बोध प्रश्न क

1) सभा की परिभाषा कीजिए।

....

....

....

....

2) शेयरधारियों की सभाओं के विभिन्न प्रकारों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

3) सांविधिक सभा क्या होती है?

....

....

....

....

4) कम्पनी की सांविधिक सभा कब करनी आवश्यक होती है?

....

....

....

....

5) सांविधिक सभा के लिए सूचना देने की अवधि के सम्बन्ध में क्या कानूनी नियम हैं?

....

....

....

....

6) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही है अथवा गलत :

i) प्रत्येक कम्पनी द्वारा सांविधिक सभा अवश्य बुलाई जानी चाहिए।

ii) सार्वजनिक कम्पनी के निगमन की तिथि के छः माह के भीतर सांविधिक सभा बुलाई जानी चाहिए।

iii) सांविधिक सभा की सूचना के साथ-साथ सांविधिक रिपोर्ट की एक प्रति भी भेजी जानी चाहिए।

iv) सांविधिक रिपोर्ट की सत्यता कम से कम दो निदेशकों द्वारा प्रमाणित की जानी चाहिए जिनमें से एक प्रबन्ध निदेशक होना चाहिए।

v) सांविधिक सभा में उपस्थित सदस्य, कम्पनी से सम्बन्धित किसी भी विषय पर चर्चा कर सकते हैं।

vi) सदस्यों को सांविधिक रिपोर्ट की प्रति भेजने से पहले, उसकी एक प्रति रजिस्ट्रार के पास फाइल करनी चाहिए।

vii) सांविधिक रिपोर्ट से एकदम पहले सात दिन के भीतर किसी तिथि तक आबंटित शेयरों एवं उन पर प्राप्त राशि तथा प्राप्ति एवं भुगतान खाते को अंकेक्षक द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए।

viii) यदि सांविधिक सभा बुलाने में त्रुटि की जाती है तो सदस्यों को अधिकार है कि वे न्यायालय से कम्पनी के अनिवार्य समापन के लिए आवेदन कर सकते हैं।

13.5 वार्षिक साधारण सभा (Annual General Meeting)

कम्पनी के शेयरधारी, वार्षिक साधारण सभा के माध्यम से कम्पनी पर नियन्त्रण रखने के अपने अधिकार का उपयोग करते हैं। इसी सभा में निदेशक रिटायर होते हैं तथा उन्हें पुनः निर्वाचित किया जाता है। कम्पनी के शेयरधारियों को पूरे वर्ष के दौरान कम्पनी के कार्य व गतिविधियों की समीक्षा एवं मूल्यांकन करने का अवसर प्राप्त होता है। शेयरधारी अपने विचारों को प्रबन्धकों के समक्ष रख सकते हैं तथा जिन मामलों के बारे में वे सन्तुष्ट नहीं हैं, उनके बारे में स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं। अतः आपने यह देखा कि वार्षिक साधारण सभा कितनी महत्वपूर्ण होती है। सांविधिक सभा जो कम्पनी के जीवन काल के दौरान केवल एक बार ही बुलाई जाती है, उसके विपरीत वार्षिक साधारण सभा प्रत्येक वर्ष बुलाई जाती है।

प्रत्येक कम्पनी, चाहे वह सार्वजनिक है या निजी, उसे प्रत्येक कलेंडर वर्ष में किसी अन्य सभा के अतिरिक्त एक वार्षिक साधारण सभा बुलानी होती है, तथा उस सभा को बुलाने की सूचना में यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि यह वार्षिक साधारण सभा है।

वार्षिक साधारण सभा बुलाना एक वैधानिक आवश्यकता (statutory requirement) है। वार्षिक साधारण सभा के सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम हैं :

i) कम्पनी की पहली वार्षिक साधारण सभा, कम्पनी की निगमन की तिथि के 18 माह के भीतर बुलाई जानी चाहिए तथा यदि उक्त अवधि के भीतर यह साधारण सभा आयोजित कर ली जाती है, तो निगमन के वर्ष में अथवा उसके बाद वाले वर्ष में कम्पनी के लिए यह सभा बुलानी आवश्यक नहीं होती। उदाहरण के लिए, कम्पनी का निगमन 5 अक्तूबर 1989 को हुआ तथा इसने अपनी पहली वार्षिक साधारण सभा 10 मार्च 1991 (निगमन की तिथि के 18 माह के भीतर) को आयोजित की, वर्ष 1990 तथा 1991 में कोई अन्य वार्षिक साधारण सभा बुलाना आवश्यक नहीं रहता। परन्तु 1992 के वर्ष से, इसे प्रत्येक वर्ष यह सभा बुलानी पड़ेगी।

ii) किन्हीं दो वार्षिक साधारण सभाओं के बीच 15 महीनों से अधिक का अन्तर नहीं होना चाहिए। कोई विशेष परिस्थिति होने पर, रजिस्ट्रार उपयुक्त अवधि को अधिक से अधिक तीन माह तक बढ़ा सकता है।

iii) कम्पनी के प्रत्येक शेयरधारी, निदेशक तथा अंकेक्षकों को वार्षिक साधारण सभा की लिखित सूचना कम से कम 21 दिन पहले दी जानी चाहिए। मतदान का अधिकार रखने वाले सभी सदस्यों की सहमति से सूचना की उक्त अवधि को कम भी किया जा सकता है।

iv) कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा किसी भी काम के दिन एवं काम के समय में कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में अथवा उस शहर में किसी अन्य स्थान पर आयोजित की जा सकती है जिस शहर में पंजीकृत कार्यालय स्थित है।

इस प्रकार, कोई भी सभा सार्वजनिक छुट्टी के दिन आयोजित नहीं की जा सकती, जैसे 15 अगस्त, 2 अक्तूबर तथा 26 जनवरी को सभा नहीं बुलाई जा सकती। यदि वार्षिक साधारण सभा को बुलाने के सम्बन्ध में सूचना

भेज दिये जाने के बाद केन्द्र सरकार किसी दिन को सार्वजनिक छुट्टी का दिन घोषित करती है, तो उस दिन को सार्वजनिक छुट्टी का दिन नहीं माना जाएगा तथा पूर्वनिर्धारित सूचना के अनुसार उस दिन वार्षिक साधारण सभा की जा सकती है।

v) किसी निश्चित तिथि को बुलाई गई वार्षिक साधारण सभा को निदेशक मंडल रद्द या स्थगित कर सकता है, परन्तु निदेशक मंडल द्वारा इस अधिकार का उपयोग सदनिष्ठा एवं उचित कारण होने पर ही किया जाना चाहिए। किन्तु निदेशक मंडल के लिए यह उचित होगा कि वह बुलाई गई सभा को आयोजित करे तथा उसे रद्द करने या स्थगित करने का निर्णय सभा में ही लिया जाए।

वार्षिक साधारण सभा न बुलाने के परिणाम

आपने पढ़ा कि वार्षिक साधारण सभा आयोजित करना वैधानिक आवश्यकता है। कम्पनी अधिनियम की धारा 166 के अनुसार यदि कोई कम्पनी वार्षिक साधारण सभा बुलाने में त्रुटि करती है, तो इसके निम्नलिखित दो परिणाम होते हैं :

i) कम्पनी का कोई भी सदस्य, कम्पनी लॉ बोर्ड से यह सभा बुलाने के लिए आवेदन कर सकता है। इस प्रकार से आवेदन प्राप्त होने पर, कम्पनी लॉ बोर्ड यह सभा बुलाने का आदेश दे सकता है अथवा कम्पनी को यह सभा बुलाने का निर्देश दे सकता है तथा इस निर्देश में यह निर्देश भी शामिल हो सकता है कि व्यक्तिगत रूप से उपस्थित या प्रॉक्सी के द्वारा उपस्थित एक सदस्य वार्षिक साधारण सभा कर सकता है। कम्पनी लॉ बोर्ड के आदेश पर बुलाई गई सभा को कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा माना जाता है।

ii) कम्पनी तथा उसके प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 5,000 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है तथा यदि यह त्रुटि चलती रहती है तो त्रुटि के प्रथम दिन के बाद के प्रत्येक दिन के लिए 250 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है।

वार्षिक साधारण सभा में किया जाने वाला कारोबार : कम्पनी अधिनियम की धारा 173 के अनुसार, वार्षिक साधारण सभा में केवल सामान्य कार्य ही किए जाते हैं। सामान्य कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्य भी वार्षिक साधारण सभा में किए जा सकते हैं, परन्तु ऐसे कार्यों को 'विशेष कार्य' कहा जाएगा। इस प्रकार, कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में सामान्य तथा विशेष दोनों ही प्रकार के कार्य किए जा सकते हैं। वार्षिक साधारण सभा में सामान्यतः निम्नलिखित सामान्य कार्य किए जाते हैं :

i) वार्षिक खातों, तुलन पत्र, निदेशक मंडल तथा अंकेक्षकों की रिपोर्टों पर विचार;

ii) लाभांश की घोषणा;

iii) रिटायर होने वाले निदेशकों के स्थान पर नियुक्ति; तथा

iv) अंकेक्षकों की नियुक्ति तथा उसके पारिश्रमिक का निर्धारण।

यदि किसी वार्षिक साधारण सभा में उपर्युक्त सामान्य कार्य के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य भी करना हो तो उसे विशेष कार्य माना जाएगा। यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों द्वारा विशेष कार्य की मनाही नहीं की गई है तो वार्षिक साधारण सभा में विशेष कार्य किए जा सकते हैं, परन्तु इसके लिए सभा बुलाने की सूचना में विशेष कार्यों को स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए।

यहां पर यह स्मरण रहे कि सामान्य कार्यों के लिए साधारण प्रस्ताव आवश्यक होता है जबकि विशेष कार्यों के लिए साधारण प्रस्ताव अथवा अधिनियम द्वारा निर्दिष्ट विशेष प्रस्ताव आवश्यक होता है। आप सामान्य तथा विशेष प्रस्तावों के बारे में विस्तृत जानकारी इसी इकाई में 13.12 में प्राप्त करेंगे।

13.6 असाधारण सामान्य सभा (Extraordinary General Meeting)

सांविधिक सभा तथा वार्षिक साधारण सभाओं के अतिरिक्त कम्पनी की अन्य सामान्य सभाएं 'असाधारण सभाएं' होती हैं। असाधारण सामान्य सभा ऐसी सभा है जो दो वार्षिक साधारण सभाओं के बीच बुलाई जाती है। आपातकालीन परिस्थितियों में या किसी विशेष कार्य के लिए यह सभा बुलाई जाती है। यह सभा ऐसे किसी आवश्यक कार्य को करने के लिए बुलाई जाती है जिन्हें अगली वार्षिक साधारण सभा तक स्थगित नहीं किया जा सकता, जैसे, सीमानियम या अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने के लिए, पूंजी में कमी करने के लिए, डिबेन्चर जारी करने के लिए आदि। ऐसी सभा में किए जाने वाले समस्त कार्यों को विशेष कार्य माना जाता है।

असाधारण सामान्य सभा निम्नलिखित व्यक्तियों द्वारा बुलाई जा सकती है :

क) स्वयं निदेशक मंडल द्वारा;

ख) शेयरधारियों द्वारा मांग करने पर निदेशक मंडल द्वारा;

ग) स्वयं मांगकर्ताओं द्वारा; अथवा

घ) कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा।

क) **निदेशक मंडल द्वारा :** तालिका A के वाक्य 48 के अनुसार, "निदेशक मंडल, जब भी उचित समझे, असाधारण सामान्य सभा बुला सकता है।" परन्तु इस प्रकार की सभा बुलाने के लिए निदेशक मंडल को एक प्रस्ताव पारित करना होगा।

ख) **मांग करने पर निदेशक मंडल द्वारा :** अधिनियम की धारा 169 के अनुसार, निर्धारित संख्या में सदस्यों द्वारा मांग करने पर, निदेशक मंडल को कम्पनी की असाधारण सामान्य सभा अवश्य ही बुलानी चाहिए। इस प्रकार

की सभा बुलाने के मांग पत्र पर, प्रदत्त पूंजी का कम से कम 1/10 भाग रखने व मतदान का अधिकार रखने वाले सदस्यों के हस्ताक्षर होने चाहिए। यदि कम्पनी शेयर पूंजी वाली नहीं है, तो कुल मत-शक्ति के 1/10 भाग रखने वाले सदस्यों द्वारा मांग-पत्र पर हस्ताक्षर किए जाने चाहिए।

मांगकर्ताओं को उन विषयों का वर्णन इस मांग-पत्र में करना चाहिए जिनके लिए वह इस सभा की मांग कर रहे हैं तथा यह मांग-पत्र कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में जमा किया जाना चाहिए। यहां यह ध्यान रहे कि इस प्रकार से आयोजित असाधारण सभा में केवल उन्हीं विषयों पर चर्चा की जा सकती है जो मांग-पत्र में निर्दिष्ट हैं।

वैध मांग-पत्र प्राप्त होने पर, निदेशक मंडल द्वारा 21 दिन के भीतर सभा बुलाने के सम्बन्ध में कार्यवाही आरम्भ कर देनी चाहिए तथा मांग-पत्र प्राप्त होने के 45 दिनों के भीतर यह सभा बुला लेनी चाहिए। असाधारण सामान्य सभा के लिए भी कम से कम 21 दिन की स्पष्ट सूचना सदस्यों को दी जानी चाहिए। सभा में किए जाने वाले प्रत्येक विशेष कार्य के लिए निदेशक मंडल को सूचना के साथ ही सम्बन्धित व्याख्यात्मक विवरण भी भेज देना चाहिए जिससे कि सदस्य उस विषय पर निर्णय ले सकें।

ग) **मांगकर्ताओं द्वारा :** यदि मांग-पत्र जमा कराने की तिथि के 21 दिन के भीतर निदेशक मंडल सभा बुलाने की कार्यवाही नहीं आरम्भ करता या मांग-पत्र जमा कराने के 45 दिनों के भीतर यह सभा नहीं बुलाई जाती है तो मांगकर्ता स्वयं इस सभा को बुला सकते हैं। परन्तु मांग-पत्र जमा कराने की तिथि के तीन माह के भीतर ही मांगकर्ता यह सभा बुला सकते हैं अर्थात् तीन माह की अवधि व्यतीत हो जाने पर वे यह सभा नहीं बुला सकते। यह सभा मांगकर्ताओं द्वारा, जहां तक सम्भव हो, ठीक उसी तरह बुलाई जानी चाहिए, जिस प्रकार निदेशक मंडल बुलाता। जब मांगकर्ता स्वयं इस सभा को बुलाते हैं, तो वे इस सभा के लिए जो भी खर्च करते हैं, उन्हें कम्पनी से वसूल कर सकते हैं और कम्पनी यह रकम उन दोषी निदेशकों को देय पारिश्रमिक में से काट सकती है।

यदि मांगकर्ताओं द्वारा यह सभा आयोजित की जाती है, तो इस सभा में केवल वही विशेष कार्य किए जा सकते हैं, जिनके लिए स्पष्टतः यह सभा बुलाई गयी थी। मांगकर्ताओं द्वारा बुलाई गई सभा में जो भी प्रस्ताव विधिवत् पारित किए जाते हैं, वे कम्पनी पर बाध्य होते हैं।

घ) **कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा :** जब किसी कारणवश कम्पनी की असाधारण सामान्य सभा को बुलाना या उसका संचालन करना असम्भव हो तो अधिनियम की धारा 186 के अन्तर्गत, कम्पनी लॉ बोर्ड को यह सभा बुलाने तथा संचालन करने का अधिकार है। 'असम्भव' शब्द से आशय है कि कम्पनी अधिनियम तथा अन्तर्नियमों के अनुसार सभा बुलाना सम्भव नहीं, उदाहरण के लिए, यदि दो गुटों की प्रतिद्वन्द्विता के कारण सभा नहीं बुलाई जा सकती।

कम्पनी लॉ बोर्ड स्वयं या कम्पनी के किसी निदेशक के आवेदन पर या कम्पनी के किसी ऐसे सदस्य के आवेदन पर जिसे सभा में मतदान करने का अधिकार हो, इस असाधारण सभा को बुलाने, आयोजित करने तथा संचालित करने का आदेश दे सकता है। कम्पनी लॉ बोर्ड को इस शक्ति का उपयोग कभी-कभी ही यह सन्तुष्ट होने पर करना चाहिए कि यह कम्पनी के हित में है। सभा बुलाने का आदेश देते समय, कम्पनी लॉ बोर्ड ऐसे आवश्यक निर्देश दे सकता है जो वह उचित समझे। इन निर्देशों में यह भी निर्देश हो सकता है कि उक्त सभा में उपस्थित एक सदस्य, चाहे व्यक्तिगत रूप से या प्रॉक्सी के द्वारा, सभा का कोरम होगा।

किसी अन्य साधारण सभा की तरह, असाधारण सभा बुलाने के लिए भी सभा की तिथि से पहले कम से कम 21 दिन की सूचना दी जानी चाहिए, इस सूचना में सभा की तिथि, समय तथा स्थान निर्दिष्ट किया जाना चाहिए। इस सूचना में उन विशेष कार्यों का भी उल्लेख होना चाहिए जो उस सभा में किए जाएंगे। यहां पर आप यह याद रखें कि वार्षिक साधारण सभा की तरह, असाधारण सामान्य सभा को किसी काम के दिन ही बुलाना आवश्यक नहीं है, यह किसी भी दिन, यहां तक सार्वजनिक छुट्टी के दिन भी बुलाई जा सकती है। यह सभा कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान पर अथवा उस शहर से बाहर कहीं अन्यत्र बुलाई जा सकती है जहां पर पंजीकृत कार्यालय स्थित है।

बोध प्रश्न ख

1) वार्षिक साधारण सभा क्या होती है?

....

....

....

....

2) वार्षिक साधारण सभा आयोजित करने का क्या उद्देश्य है?

....

....

....

....

3) वार्षिक साधारण सभा में प्रायः क्या कार्य किए जाते हैं?

....

....

....

....

4) असाधारण सामान्य सभा क्या होती है?

....

....

....

....

5) असाधारण सामान्य सभा कौन बुला सकता है?

....

....

....

....

6) सदस्यों की वह न्यूनतम संख्या बताइये जो असाधारण सामान्य सभा बुलाने की मांग कर सकते हैं?

....

....

....

....

7) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत :

i) दो वार्षिक साधारण सभाओं के बीच समय का अन्तर 15 माह से अधिक नहीं होगा।

ii) कम्पनी के निगमन की तिथि के 15 माह के भीतर प्रथम वार्षिक साधारण सभा बुलाई जानी चाहिए।

iii) वार्षिक साधारण सभा को 21 दिन से कम अवधि की सूचना देकर भी बुलाया जा सकता है बशर्ते मतदान का अधिकार रखने वाले सभी सदस्य इसके लिए सहमत हों।

iv) लाभांश की घोषणा करना एक सामान्य कार्य है।

v) कम्पनी के सौ सदस्य असाधारण सभा की मांग कर सकते हैं।

vi) कम्पनी की असाधारण सामान्य सभा में किए जाने वाले सभी कार्यों को विशेष कार्य समझा जाता है।

vii) कम्पनी के पास मांग-पत्र जमा कराने की तिथि के छः माह के भीतर मांगकर्ता स्वयं ही असाधारण सभा आयोजित कर सकते हैं।

viii) असाधारण सामान्य सभा किसी सार्वजनिक छुट्टी के दिन तथा कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान पर बुलाई जा सकती है।

13.7 वैध सभा के आवश्यक लक्षण (Requisites of a Valid Meeting)

साधारण सभा में लिए गये निर्णय केवल तभी बाध्यकारी एवं वैध होते हैं जब सभा को उचित ढंग से बुलाया व संचालित किया जाए। सभा बुलाने या संचालित करने में की गई कोई भी अनियमितता उस सभा की कार्यवाही को अमान्य बना देती हैं। कम्पनी की सभाओं को कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों (धारा 171 के 186) तथा अन्तर्नियमों के अनुसार ही आयोजित करना चाहिए। वैध सभा के आवश्यक लक्षण निम्नलिखित हैं :

1) **उचित प्राधिकार (Proper authority):** सभा केवल तभी वैध होती है जब इसे सभा बुलाने के लिए अधिकृत व्यक्ति द्वारा बुलाया जाए। सभा बुलाने के लिए कम्पनी का निदेशक मंडल ही उचित रूप से अधिकृत है। सभा बुलाने के लिए निदेशक मंडल को अपनी सभा में प्रस्ताव पारित करना चाहिए, अन्यथा सभा बुलाने

की सूचना अमान्य होगी तथा सभा में की गई कार्यवाही भी प्रभावकारी नहीं होगी [Harben V. Phillips]। इस प्रकार निदेशक मंडल द्वारा प्रस्ताव पारित किए बिना यदि कम्पनी का सचिव सभा बुलाने की सूचना भेजता है तो वह पूर्णतः अवैध होती है।

यद्यपि साधारण सभा को बुलाने का अधिकार कम्पनी के निदेशक मंडल को है, परन्तु कुछ परिस्थितियों में यह सभाएं मांगकर्ताओं द्वारा अथवा कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा भी बुलाई जा सकती हैं।

2) **उचित सूचना (Proper Notice):** सूचना का अर्थ है कि सभा की तिथि से पहले सम्बन्धित व्यक्तियों को सूचित करना ताकि वह स्वयं को तैयार कर सकें। सभा की सूचना, प्रत्येक सदस्य को, अंकेक्षकों को, कम्पनी के निदेशकों को तथा प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को दी जानी चाहिए जिसे सभा में भाग लेने का अधिकार है। यह सूचना स्पष्ट होनी चाहिए तथा इसमें वह उद्देश्य वर्णित होना चाहिए जिसके लिए सभा बुलाई जा रही है। सूचना सदैव लिखित में तथा सभा की तिथि से कम से कम 21 दिन पहले की जानी चाहिए।

इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि यदि एक या अधिक सदस्यों को जान-बूझकर सभा की सूचना देने में भूल की जाती है, तो इससे वह सभा अवैध बन जाती है। परन्तु संयोगवश सूचना देने में त्रुटि हो गई है, तो सभा अवैध नहीं होती है। इसी प्रकार, यदि किसी व्यक्ति को सभा की सूचना प्राप्त नहीं होती, तो भी सभा की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सभा बुलाने की सूचना में सभा की तिथि, समय तथा स्थान लिखा जाना चाहिए।

3) **कोरम (Quorum):** कोरम से तात्पर्य सभा में उपस्थित सदस्यों की उस न्यूनतम संख्या से है जो सभा की कार्यवाही के लिए आवश्यक है। कोरम के अभाव में कोई भी सभा की कार्यवाही नहीं की जा सकती। कोरम के अभाव में यदि कोई प्रस्ताव पारित किया जाता है तो वह अमान्य होता है।

4) **सभापति (Chairman):** कम्पनी की प्रत्येक साधारण सभा का एक सभापति होना आवश्यक है। सभापति का होना इसलिए आवश्यक है क्योंकि वह सभा की कार्यवाही का संचालन सुचारू ढंग से करता है। अन्तर्नियमों में सभापति नियुक्त करने का ढंग प्रायः निर्धारित किया हुआ होता है।

यदि अन्तर्नियमों में अन्य प्रावधान न हो तो सभा में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित सदस्य अपने में से किसी एक को सभा का अध्यक्ष निर्वाचित कर सकते हैं। अध्यक्ष को पूर्ण सद्निष्ठा से कम्पनी के हित के लिए कार्य करना चाहिए, उसे निष्पक्ष रहकर कार्य करना चाहिए।

5) **उचित संचालन :** यह भी आवश्यक है कि सभा में किया जाने वाला कार्य नियमानुसार किया जाना चाहिए। कम्पनी की सभाएं कम्पनी के कारोबार से सम्बन्धित किसी विशेष विषय पर चर्चा करने तथा निर्णय लेने के लिए बुलाई जाती हैं। सम्बन्धित विषय को एक प्रस्ताव के रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए, उस पर अच्छी तरह से बहस होनी चाहिए, संशोधनों पर अच्छी तरह से विचार करना चाहिए, और अन्त में हाथ खड़ा करके या मतदान करके चुनाव करना चाहिए।

6) **उचित रिकार्ड :** सभा की कार्यवाही का उचित रिकार्ड 'विवरण पुस्तक' (Minute Book) में रखा जाना चाहिए। प्रत्येक कम्पनी को अपनी प्रत्येक साधारण सभा तथा निदेशक मंडल की सभाओं व उनकी समितियों की सभाओं का विवरण उचित ढंग से रखना चाहिए। जब सभा की कार्यवाही के विवरण की पुष्टि कर दी जाती है और अध्यक्ष उन पर हस्ताक्षर कर देता है, तो उन्हें न्यायालय में कार्यवाही का प्रमाण माना जाता है।

13.8 सभाओं की सूचना (Notice of Meeting)

सार्वजनिक कम्पनी के शेयरधारियों की किसी भी सभा के लिए यह सामान्य नियम है कि 21 दिन की सूचना दे कर सभा बुलाई जा सकती है। परन्तु एक निजी कम्पनी अपने अन्तर्नियमों में इससे कम अवधि की सूचना की व्यवस्था कर सकती है। एक वैध सूचना के निम्नलिखित लक्षण होते हैं :

क) सूचना में सभा की तिथि, समय एवं स्थान को स्पष्टतः लिखा जाना चाहिए तथा सभा का उद्देश्य भी लिखना चाहिए।
ख) निदेशक मंडल के प्रस्ताव द्वारा अधिकृत किए जाने पर ही सभा बुलाने की सूचना जारी की जानी चाहिए।
ग) निदेशक मंडल द्वारा प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा सूचना पर हस्ताक्षर किए जाने चाहिए। सामान्यतः निदेशक मंडल का कोई निदेशक या कम्पनी का सचिव इस सूचना पर हस्ताक्षर करते हैं।
घ) सभा की सूचना उन सभी व्यक्तियों को भेजी जानी चाहिए जो सूचना प्राप्त करने के हकदार हैं।

"पूर्ण दिनों की सूचना" (clear days notice) का अर्थ है कि सूचना प्राप्त करने का व सभा करने का दिन शामिल नहीं किया जाता। अतः 21 दिनों की गणना करते समय आमतौर से इन्हें 23 दिन माना जाता है। इसके अतिरिक्त यदि सूचना को डाक से भेजा जाता है, तो उक्त 23 दिनों में 48 घंटे और जोड़ देने चाहिए। इस प्रकार, सभा की तिथि से कम से कम 25 दिन पहले यह सूचना भेज दी जानी चाहिए।

उपर्युक्त समय से कम अवधि की सूचना भी दी जा सकती है। वार्षिक साधारण सभा की स्थिति में सभी सदस्यों की सहमति से कम समय की सूचना दी जा सकती है। अन्य सभाओं की स्थिति में, प्रदत्त पूंजी के 95 प्रतिशत पर अधिकार रखने वाले सदस्यों या 95 प्रतिशत मतों पर अधिकार रखने वाले सदस्यों की सहमति आवश्यक है। यह सहमति सभा

के आरम्भ होने से पहले या सभा में ही दी जा सकती है; परन्तु यह निर्धारित प्रारूप में होनी चाहिए।

सूचना प्राप्त करने के हकदार व्यक्ति

कम्पनी की किसी भी साधारण सभा की सूचना निम्नलिखित व्यक्तियों को दी जानी चाहिए :

क) कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को;

ख) किसी सदस्य की मृत्यु या दिवालिए होने के कारण उसके शेयर प्राप्त करने वाले व्यक्ति को;

ग) कम्पनी के वर्तमान अंकेक्षकों को;

घ) सार्वजनिक न्यासी को, जिस पर धारा 153 B लागू होती है।

इसके अतिरिक्त, यदि सूचना किसी वर्ग के शेयरधारियों की सभा के लिए है, तो यह सूचना केवल उसी वर्ग के समस्त शेयरधारियों को भेजी जानी चाहिए।

13.9 सभाओं के लिए कोरम

कोरम से तात्पर्य सदस्यों की उस न्यूनतम संख्या से है जिनके उपस्थित होने पर ही वैध सभा की जा सकती है। यदि किसी सभा में कोरम नहीं है, तो वह सभा वैध नहीं होगी तथा उस सभा में की गई कार्यवाही भी अमान्य होगी। कोरम उपस्थित होने का मुख्य उद्देश्य यह है कि किसी सभा में उपस्थित कुछ व्यक्ति ऐसे निर्णय न ले सकें जो अधिकांश सदस्यों को स्वीकार न हों। कोरम उपस्थित नहीं होने पर सभा नहीं की जा सकती।

सामान्यतः कम्पनी के अन्तर्नियमों में कोरम निश्चित किया जाता है। कम्पनी अधिनियम की धारा 174 के अनुसार, यदि अन्तर्नियमों में इससे अधिक संख्या निर्धारित न की हो, तो सार्वजनिक कम्पनी में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित (प्रॉक्सी द्वारा नहीं) पांच व्यक्ति तथा अन्य किसी कम्पनी में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित दो व्यक्ति, कम्पनी की साधारण सभा का कोरम होते हैं।

यदि सदस्यों की मांग पर सभा बुलाई गई है तथा सभा के लिए निश्चित समय के पश्चात् आधे घंटे के अंदर यदि कोरम पूरा नहीं होता, तो उस सभा को भंग हुआ माना जाएगा [धारा 174 (3)]।

अन्य परिस्थितियों में, सभा के लिए निश्चित समय के पश्चात् यदि आधे घंटे के अंदर कोरम पूरा नहीं होता, तो यह सभा अगले सप्ताह के उसी दिन, उसी समय एवं उसी स्थान पर किए जाने के लिए अथवा निदेशक मंडल द्वारा निश्चित दिन, समय एवं स्थान के लिए स्थगित कर दी जाएगी।

यदि स्थगित सभा में भी सभा आरम्भ होने के निश्चित समय के आधे घंटे के भीतर कोरम पूरा नहीं होता, तो उपस्थित सदस्यों को ही कोरम मान लिया जाता है। परन्तु आपको यह याद रखना चाहिए कि किसी भी सभा को करने के लिए कम से कम दो व्यक्ति अवश्य होने चाहिए। यदि अन्तर्नियमों में कोई विपरीत प्रावधान न हो, तो उपर्युक्त नियम निजी कम्पनी पर भी लागू होते हैं।

तालिका A के अनुच्छेद 49 के प्रावधान के अनुसार सभा की कार्यवाही आरम्भ करने समय कोरम की उपस्थिति अनिवार्य है। इसका यह अर्थ हुआ कि सभा के आरम्भ में कोरम उपस्थित होना चाहिए तथा सभा के दौरान या किसी प्रस्ताव पर मतदान करते समय कोरम होना आवश्यक नहीं है। परन्तु निदेशक मंडल की सभाओं में, सभा के दौरान हर समय कोरम उपस्थित होना चाहिए। यह भी ध्यान रहे कि जब तक किसी सभा में कोरम सम्बन्धी आपत्ति न की जाए, तब कोरम उपस्थित माना जाता है।

13.10 प्रॉक्सी (Proxy)

'प्रॉक्सी' शब्द का प्रयोग, कम्पनी की सभा में किसी अन्य व्यक्ति की ओर से कार्य करने या उसकी ओर से मतदान करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति, तथा ऐसा प्रलेख जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को किसी अन्य व्यक्ति के लिए कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है, दोनों के लिए किया जाता है।

कम्पनी अधिनियम की धारा 176 के अनुसार, कम्पनी का ऐसा कोई भी सदस्य जिसे कम्पनी की सभा में भाग लेने व मतदान करने का अधिकार है, वह किसी अन्य व्यक्ति को अपने स्थान पर सभा में भाग लेने व मतदान करने का अधिकार दे सकता है। इस प्रकार से नियुक्त व्यक्ति को 'प्रॉक्सी' कहते हैं। इस प्रकार किसी भी व्यक्ति को प्रॉक्सी नियुक्त किया जा सकता है, भले ही वह कम्पनी का सदस्य हो या नहीं।

जब तक अन्तर्नियमों में अन्यथा प्रावधान न हो : (क) बिना शेयर पूंजी वाली कम्पनी में प्रॉक्सी की नियुक्ति नहीं की जा सकती; तथा (ख) किसी निजी कम्पनी का एक सदस्य एक ही समय पर एक से अधिक प्रॉक्सी नियुक्त नहीं कर सकता।

प्रॉक्सी नियुक्त करने वाला प्रलेख लिखित होना चाहिए तथा उस पर नियुक्त करने वाले व्यक्ति के या उसके अधिकृत

अर्द्धांनी के हस्ताक्षर होने चाहिए तथा उस पर स्टाम्प भी लगे होने चाहिए। प्रॉक्सी नियुक्त करने वाला प्रलेख सभा आरम्भ होने के समय से 48 घंटे पहले कम्पनी में जमा कर दिया जाना चाहिए। कम्पनी के अन्तर्नियमों में यदि कोई ऐसा प्रावधान है जिसके अनुसार 48 घंटे से पहले प्रॉक्सी जमा कराने का नियम हो, तो यह अमान्य होता है।

प्रॉक्सी को सभा में बोलने का अधिकार नहीं होता, परन्तु वह अध्यक्ष को लिखित रूप में अपने प्रश्न भेज सकता है। प्रत्येक सभा के लिए पृथक प्रॉक्सी की आवश्यकता होती है। प्रॉक्सी चुनाव की मांग कर सकता है तथा जब तक अन्तर्नियमों में अन्य कोई नियम नहीं हो, तब प्रॉक्सी को चुनाव (poll) के अतिरिक्त अन्य किसी भी प्रकार से मतदान करने का अधिकार नहीं होता।

सभा बुलाने के लिए जारी की गई सूचना में यह बात स्पष्ट तौर से लिख देनी चाहिए कि सदस्य प्रॉक्सी नियुक्त कर सकते हैं तथा यह भी कि प्रॉक्सी के लिए कम्पनी का सदस्य होना आवश्यक नहीं है। यदि इन नियमों का पालन करने में त्रुटि की जाती है, तो प्रत्येक दोषी अधिकारी पर 500 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है। परन्तु कम्पनी के खर्चे पर किसी व्यक्ति को प्रॉक्सी के रूप में नियुक्त करने के लिए निमन्त्रण नहीं दिया जा सकता तथा यदि ऐसा कोई निमन्त्रण जारी किया जाता है, तो दोषी अधिकारी पर 1,000 रुपये तक जुर्माना किया जा सकता है।

कम्पनी की सभा में मतदान करने का अधिकार रखने वाला प्रत्येक सदस्य, कम्पनी के पास जमा की गई प्रॉक्सियों को किसी भी समय काम के समय निरीक्षण कर सकता है। आपको यह सदैव याद रखना चाहिए कि प्रॉक्सी खंडनीय होती है, परन्तु प्रॉक्सी द्वारा मतदान करने से पहले ही इसका खंडन किया जा सकता है। प्रॉक्सी का खंडन करने के लिए कम्पनी को सूचना दी जानी चाहिए। प्रॉक्सी नियुक्त करने वाले व्यक्ति की मृत्यु या पागल हो जाने पर प्रॉक्सी खंडित हो जाती है, परन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि कम्पनी को उचित सूचना दी जाए। यदि प्रॉक्सी नियुक्त करने वाला व्यक्ति स्वयं व्यक्तिगत रूप से सभा में उपस्थित हो कर मतदान करता है तो प्रॉक्सी स्वतः ही समाप्त हो जाती है।

13.11 मतदान (Voting)

यह तो आप जानते ही हैं कि कम्पनी का कारोबार सभा में किया जाता है। जब किसी प्रस्ताव को सभा में विधिवत ढंग से पारित कर दिया जाता है, तो वह 'प्रस्ताव' (resolution) बन जाता है। शेयरधारियों को प्रस्तावित प्रस्ताव पर चर्चा या बहस करने का पूर्ण अधिकार है तथा वह उसमें संशोधन करने के लिए भी कह सकते हैं। जब प्रस्ताव पर बहस पूर्ण हो जाती है तब उस पर मतदान कराया जाता है। मतदान (क) हाथ उठाकर अथवा (ख) मत-पत्र डालकर किया जा सकता है।

क) हाथ उठाकर : किसी भी साधारण सभा में मतदान के लिए रखे गये प्रस्ताव पर सबसे पहले हाथ उठाकर मतदान किया जाता है। ऐसे मतदान में प्रत्येक सदस्य का केवल एक मत ही होता है। यदि कम्पनी के अन्तर्नियमों में अन्य प्रावधान न हो तो ऐसे मतदान में प्रॉक्सीयों को मत देने का अधिकार नहीं होता है। सभापति उस प्रस्ताव के पक्ष में और विपक्ष में उठाए गये हाथों की गणना करके, परिणाम घोषित कर देता है। सभापति की घोषणा को जब विवरण में लिख दिया जाता है, तो यह उसका अन्तिम प्रमाण होती है। परन्तु असन्तुष्ट शेयरधारी उस प्रस्ताव की वैधता को न्यायालय में चुनौती दे सकते हैं अथवा वे मत-पत्र डालकर मतदान की मांग कर सकते हैं।

ख) मत-पत्र डालकर : यदि हाथ उठाकर मतदान कराने से शेयरधारी सन्तुष्ट नहीं हैं, तो वे मत-पत्र डालकर मतदान की मांग कर सकते हैं। मत-पत्र डालकर मतदान की मांग स्वयं सभापति द्वारा की जा सकती है। किसी भी प्रस्ताव पर हाथ उठाकर किए गये मतदान के परिणाम की घोषणा से पहले ही मत-पत्र डालकर मतदान की मांग की जा सकती है।

शेयर पूंजी वाली सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में, मत-पत्र डालकर मतदान कराने की मांग किसी भी ऐसे सदस्य द्वारा की जा सकती है जो या तो स्वयं या प्रॉक्सी के द्वारा सभा में उपस्थित है तथा जिसके पास कुल मतों के कम से कम 1/10 भाग पर अधिकार हो अथवा उसके पास ऐसे शेयर हों जिन पर कम से कम 50,000 रुपये दिए जा चुके हैं।

शेयर पूंजी वाली निजी कम्पनी की स्थिति में, यदि सभा में सात सदस्य व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हैं, तो कोई भी एक सदस्य जो व्यक्तिगत रूप से या प्रॉक्सी के द्वारा उपस्थित है, मत-पत्र डालकर मतदान की मांग कर सकता है। यदि सभा में सात से अधिक सदस्य व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हैं तो दो सदस्यों द्वारा यह मांग की जा सकती है। यहां पर यह ध्यान रहे कि जैसे ही मत-पत्र डाल कर मतदान की मांग की जाती है, तो हाथ उठाकर मतदान के द्वारा किए गये सभी निर्णय रद्द हो जाते हैं।

मत-पत्र डालकर मतदान कराने की स्थिति में सदस्यों का मताधिकार, कम्पनी की दत्त इक्विटी पूंजी में सदस्यों के अनुपात में होता है। यदि अन्तर्नियमों में प्रावधान हो, तो ऐसे सदस्य जिनके शेयरों पर मांग राशि अभी बकाया है या जिन पर कम्पनी का ग्रहणाधिकार है, उन्हें मत-पत्र डालकर मतदान में भाग लेने की अनुमति नहीं दी जाती।

मत-पत्र डालकर मतदान की मांग करने वाले व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा अपनी मांग को कभी भी वापस ले सकते हैं। जब एक से अधिक प्रस्तावों पर मतदान की मांग की जाती है, तो प्रत्येक प्रस्ताव पर अलग-अलग मत-पत्र डालकर मतदान कराना चाहिए। सभा के स्थगन के प्रश्न पर यदि मत-पत्र डालकर मतदान की मांग की जाती है, तो यह तत्काल किया जाना चाहिए तथा अन्य स्थितियों में, मांग करने के 48 घण्टों के भीतर सभापति द्वारा मत-पत्र डालकर मतदान कराना चाहिए।

मत-पत्र डालकर मतदान की स्थिति में मतों की जांच करने के लिए सभापति द्वारा दो निरीक्षक नियुक्त किए जाते हैं, जो मतों की जांच करके सभापति को अपनी रिपोर्ट देते हैं। इन दो निरीक्षकों में से कम से कम एक कम्पनी का सदस्य होना चाहिए, परन्तु वह कम्पनी का अधिकारी या कर्मचारी नहीं होना चाहिए। मत-पत्र डालकर मतदान कराने के पश्चात् जो निर्णय होता है, उसे सम्बन्धित प्रस्ताव पर सभा का निर्णय माना जाता है।

13.12 सभापति (Chairman)

सभापति वह व्यक्ति होता है, जिसे किसी सभा की कार्यवाही का संचालन करने व अध्यक्ष के रूप में काम करने के लिए मनोनीत या निर्वाचित किया जाता है। सभा की कार्यवाही को सुचारू रूप से चलाने के लिए सभापति का होना आवश्यक है। वह सभा का मुख्य अधिकारी होता है, वह बहस का निर्णायक होता है तथा वह सभा की कार्यवाही को नियमित करता है।

कम्पनी के अन्तर्नियमों में सामान्यतः सभापति नियुक्त करने का तरीका वर्णित होता है। परंन्तु यदि अन्तर्नियमों में कोई प्रावधान नहीं हो, तो सभा में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित सदस्य अपने में से किसी एक को सभा का सभापति निर्वाचित कर सकते हैं। यदि सभा के सभापति के चुनाव के लिए मत-पत्र डालकर मतदान की मांग की जाती है तो वह तत्काल किया जाना चाहिए तथा इस प्रकार से मतदान कराने के लिए सभापति निर्वाचित किया जाना चाहिए। यहां पर आप यह स्मरण रखें कि धारा 175 में दिए गये ये नियम केवल तभी लागू होते हैं जब अन्तर्नियमों में इसके सम्बन्ध में कोई नियम न दिए गये हों।

तालिका A के 50 से 52 तक नियम, सभापति की नियुक्ति से सम्बन्धित हैं। अन्तर्नियमों में सामान्यतः यह व्यवस्था होती है कि यदि कम्पनी के निदेशक मंडल का कोई अध्यक्ष है, तो वह कम्पनी की साधारण सभाओं में सभापति का कार्य करेगा। यदि ऐसा कोई अध्यक्ष नहीं हो या सभा आरम्भ होने के निश्चित समय के 15 मिनट के भीतर वह उपस्थित नहीं होता अथवा वह सभा की अध्यक्षता करने के लिए सहमत नहीं होता, तो वहां जो निदेशक उपस्थित हैं वे अपने में से किसी एक सदस्य को सभा का सभापति निर्वाचित कर लेंगे।

यदि किसी सभा में, कोई भी निदेशक सभापति के रूप में कार्य करने के लिए सहमत न हो, अथवा सभा आरम्भ होने के निश्चित समय के 15 मिनट के भीतर कोई भी निदेशक उपस्थित नहीं होता, तो सभा में उपस्थित सदस्य अपने में से किसी एक सदस्य को उस सभा का सभापति चुन लेंगे।

सभापति के सभा में उठने वाले सभी प्रश्नों पर, जिन पर तुरन्त निर्णय करने की आवश्यकता हो, निर्णय देने का प्रथम दृष्ट्या अधिकार होता है। उसे व्यवस्था सम्बन्धी प्रश्नों पर अपना निर्णय देने का अधिकार होता है, वह किसी अनुशासनहीन सदस्य को निष्कासित कर सकता है, यदि सभा का सुचारु ढंग से संचालन करना असम्भव हो जाए तो वह सभा को स्थगित कर सकता है, वह मत-पत्र डालकर मतदान की प्रक्रिया को नियमित कर सकता है, वह सभा की कार्यवाही के विवरण पर तिथि डालकर अपने हस्ताक्षर कर सकता है। यदि किसी प्रस्ताव के पक्ष और विपक्ष में बराबर-बराबर मत हैं, तो यदि अन्तर्नियम अधिकार दें, सभापति अपने निर्णायक (casting) मत का प्रयोग कर सकता है।

सभापति को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सभा की कार्यवाही नियमानुसार चलाई जाए, सभा में पूर्ण अनुशासन बना रहे, सदस्यों को अपने-अपने विचार प्रकट करने का उचित अवसर दिया जाना चाहिए। उसे इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि मतदान स्वतन्त्र रूप से हो तथा प्रत्येक प्रस्ताव पर सभा में उपस्थित सदस्यों की राय जाननी चाहिए। उसे सदैव सद्निष्ठा से तथा कम्पनी के हित के लिए कार्य करना चाहिए।

13.13 प्रस्ताव (Resolution)

साधारण सभा में सदस्यों के निर्णयों को 'प्रस्ताव' के द्वारा व्यक्त किया जाता है। सभा में सुनिश्चित प्रस्ताव को एक 'सुझाव' (motion) के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, उस पर अच्छी तरह से चर्चा की जाती है और अन्त में उस पर मतदान किया जाता है। जब सुझाव, बहुमत से पारित हो जाता है, तो यह प्रस्ताव कहलाता है। सरल शब्दों में, सभा में लिए गये निर्णयों को प्रस्ताव कहते हैं।

कम्पनी अधिनियम में तीन प्रकार के प्रस्तावों का प्रावधाव किया गया है जो कि किसी भी साधारण सभा में पारित किए जा सकते हैं, ये हैं: (1) साधारण प्रस्ताव; (2) विशेष प्रस्ताव; तथा (3) विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव।

13.13.1 साधारण प्रस्ताव (Ordinary Resolution)

साधारण प्रस्ताव, साधारण सभा में साधारण बहुमत से पारित किया जाता है, अर्थात् प्रस्ताव के पक्ष में डाले गये मत, उसके विपक्ष में डाले गये मतों से अधिक हैं। उदाहरण के लिए, मान लीजिए किसी साधारण सभा में 81 सदस्य इस

प्रकार से मतदान करते हैं कि 41 मत प्रस्ताव के पक्ष में हैं और 40 मत विपक्ष में, तो ऐसी स्थिति में साधारण प्रस्ताव पारित माना जाएगा। मतदान हाथ उठाकर या मत-पत्र डालकर किया जा सकता है। वार्षिक लेखों को पास करने, लाभांश की घोषणा करने, अंकेक्षक नियुक्त करने, निदेशक निर्वाचित करने, शेयरों को जारी करने आदि के लिए साधारण प्रस्ताव की आवश्यकता होती है।

13.13.2 विशेष प्रस्ताव (Special Resolution)

विशेष प्रस्ताव वह होता है जो किसी विशेष कार्य को करने के लिए आवश्यक है तथा जो तीन-चौथाई बहुमत से पारित किया जाता है। मतदान हाथ उठाकर या मत-पत्र डालकर किया जा सकता है। तीन-चौथाई बहुमत का निर्णय करते समय सदस्यों के द्वारा डाले गये सभी मतों, चाहे वह व्यक्तिगत रूप से डाले गये हैं या प्रॉक्सी द्वारा, की गणना की जाती है।

कम्पनी अधिनियम की धारा 189(2) के अनुसार, कोई प्रस्ताव, विशेष प्रस्ताव उस समय होता है जब :

i) प्रस्ताव को विशेष प्रस्ताव के रूप में प्रस्तुत करने का इरादा सभा बुलाने की सूचना में स्पष्ट तौर से प्रकट कर दिया गया है;

ii) साधारण सभा के लिए आवश्यक सूचना दे दी गई है; तथा

iii) प्रस्ताव के पक्ष में डाले गये मत उसके विपक्ष में डाले गये मतों के तीन गुने से कम नहीं होने चाहिए।

किसी महत्वपूर्ण कार्य को करने के लिए विशेष प्रस्ताव की आवश्यकता होती है। कम्पनी के अन्तर्नियमों में उन विशिष्ट कार्यों का वर्णन हो सकता है जिनके लिए विशेष प्रस्ताव आवश्यक है। कम्पनी अधिनियम द्वारा भी कुछ ऐसे विषय बताए गये हैं जिनके लिए विशेष प्रस्ताव पारित करना आवश्यक है। निम्नलिखित कुछ विषय ऐसे हैं जिनके लिए विशेष प्रस्ताव की आवश्यकता होती है :

i) सीमानियम में परिवर्तन करने के लिए;

ii) अन्तर्नियमों में परिवर्तन करने के लिए;

iii) रिजर्व पूंजी का निर्माण करने के लिए;

iv) शेयर-पूंजी में कटौती करने के लिए;

v) पूंजी में से ब्याज का भुगतान करने के लिए;

vi) किसी निदेशक को कम्पनी में लाभ के किसी पद पर बने रहने की अनुमति देने के लिए

vii) कम्पनी के स्वैच्छिक समापन के लिए।

13.13.3 विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव (Resolution Requiring Special Notice)

विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव, वास्तव में प्रस्ताव का प्रकार नहीं है, बल्कि यह एक प्रकार का साधारण प्रस्ताव है जिसको प्रस्तुत करने के इरादे की कम्पनी को पूर्व सूचना देनी आवश्यक होती है। कुछ विषय ऐसे हैं जिनको किसी सभा में प्रस्तुत करने के लिए विशेष सूचना दी जानी आवश्यक होती है। जब कम्पनी अधिनियम या अन्तर्नियमों द्वारा किसी प्रस्ताव के लिए विशेष सूचना देनी आवश्यक बताई गई हो, तो प्रस्ताव प्रस्तुत करने के इरादे की सूचना सभा की तिथि से कम-से-कम 14 दिन पहले दी जानी चाहिए।

ऐसा प्रस्ताव प्रस्तुत करने के इरादे की सूचना प्राप्त होने पर, कम्पनी सभा की तिथि से कम-से-कम सात दिन पहले ऐसे प्रस्ताव की सूचना अपने सदस्यों को देगी। यह सूचना सभी सदस्यों को अलग-अलग दी जा सकती है अथवा उचित प्रसारण वाले समाचार-पत्र में विज्ञापन के द्वारा या अन्तर्नियमों द्वारा निर्धारित किसी अन्य तरीके से दी जा सकती है।

कम्पनी अधिनियम के अनुसार, निम्नलिखित कार्यों को करने के लिए विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव की आवश्यकता होती है :

i) किसी निदेशक को उसका कार्यकाल समाप्त होने से पहले हटाने के लिए;

ii) रिटायर होने वाले अंकेक्षक के स्थान पर नये अंकेक्षक को नियुक्त करने के लिए;

iii) पद से हटाए गये निदेशक के स्थान पर नये निदेशक को नियुक्त करने के लिए;

iv) यह संकल्प पास करने के लिए कि रिटायर होने वाले अंकेक्षक को पुनः नियुक्त नहीं किया जाएगा।

13.14 विवरण (Minutes)

कम्पनी अधिनियम के अनुसार प्रत्येक कम्पनी को अपनी विभिन्न सभाओं की कार्यवाही का विवरण रखना आवश्यक

है तथा इस विवरण में सभा की कार्यवाही का उचित तथा सही सारांश दिया जाना चाहिए। सभा की कार्यवाही का विवरण सभा की समाप्ति से 30 दिनों के भीतर एक पुस्तक में लिखा जाना चाहिए, इस पुस्तक को 'विवरण पुस्तक' या मिनट्स रजिस्टर कहते हैं। विवरण पुस्तिका के प्रत्येक पृष्ठ पर लघु हस्ताक्षर (initials) होने चाहिए तथा अन्तिम पृष्ठ पर सभा के सभापति के हस्ताक्षर व तिथि लिखी जानी चाहिए। सभा के विवरण पर जब सभापति के हस्ताक्षर हो जाते हैं तो यह उस सभा के सम्बन्ध में प्रमाण मान लिया जाता है कि सभा को विधिवत् ढंग से बुलाया गया था तथा सभा में समस्त कार्यवाही नियमित ढंग से की गई। विवरण-पुस्तिका को इस प्रकार से सुरक्षित तरीके से रखा जाना चाहिए जिससे कि उसमें कोई परिवर्तन या हेर-फेर न की जा सके। साधारण सभा के विवरण पर, सभा की समाप्ति के 30 दिनों के भीतर, उस सभा के सभापति के अथवा किसी अन्य अधिकृत व्यक्ति के हस्ताक्षर होने चाहिए। साधारण सभाओं की विवरण पुस्तिका प्रतिदिन कम-से-कम दो घंटे के लिए सदस्यों द्वारा निरीक्षण के लिए निःशुल्क खुली रखी जानी चाहिए।

यदि कोई सदस्य इस सम्बन्ध में आवेदन करता है, तो उसे आवेदन करने की तिथि से 7 दिनों के भीतर, साधारण सभा की कार्यवाही का विवरण प्राप्त करने का अधिकार है। इसके लिए उसे प्रति 100 शब्दों (या उसके भाग) के लिए निर्धारित राशि की दर से भुगतान करना होगा।

बोध प्रश्न ग

1) सभा की 'सूचना' से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

2) सभा की सूचना किनको भेजी जानी चाहिए?

....

....

....

3) 'कोरम' की परिभाषा कीजिए।

....

....

....

4) सदस्यों की साधारण सभा के लिए कितना कोरम होता है।

....

....

....

5) 'प्रॉक्सी' से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

6) कम्पनी के पास 'प्रॉक्सी' कब जमा करा देनी चाहिए?

....

....

....

7) मत-पत्र द्वारा मतदान क्या होता है?

....

....

....

8) 'प्रस्ताव' क्या होता है?

....

....

....

9) विशेष प्रस्ताव किसे कहते हैं?

....

....

....

10) उन तीन परिस्थितियों को सूचीबद्ध कीजिए जिनके लिए विशेष प्रस्ताव आवश्यक है।

....

....

....

11) विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव क्या होते हैं?

....

....

....

12) कम्पनी की सभा के लिए सभापति का होना क्यों आवश्यक है?

....

....

....

13) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत :

i) सार्वजनिक कम्पनी की साधारण सभा के लिए तीन सदस्यों का व्यक्तिगत रूप से उपस्थिति होना तथा निजी कम्पनी में दो सदस्यों की व्यक्तिगत उपस्थिति, कोरम होता है।

ii) कोरम के लिए, व्यक्तिगत रूप से उपस्थित सदस्यों की ही गिनती की जाती है, प्रॉक्सी की नहीं।

iii) किसी भी परिस्थिति में एक व्यक्ति किसी सभा का कोरम नहीं हो सकता।

iv) प्रॉक्सी कम्पनी का सदस्य होना चाहिए।

v) प्रॉक्सी साधारण सभा में बोल सकता है तथा हाथ उठाकर मतदान कर सकता है।

vi) साधारण सभा में किसी भी प्रस्ताव पर सबसे पहले हाथ उठाकर मतदान कराया जाता है।

vii) कम्पनी के कोई भी दस सदस्य मत-पत्र डालकर मतदान की मांग कर सकते हैं।

viii) साधारण प्रस्ताव केवल साधारण बहुमत से पास होता है।

ix) विशेष प्रस्ताव दो-तिहाई बहुमत से पास होता है।

x) कम्पनी के नाम में परिवर्तन करने के लिए विशेष प्रस्ताव की आवश्यकता होती है।

xi) शेयरों को छूट पर ज़ारी करने के लिए साधारण प्रस्ताव आवश्यक है।

xii) पद से हटाए गये निदेशक के स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को निदेशक नियुक्त करने के लिए विशेष सूचना वाला प्रस्ताव आवश्यक है।

13.15 सारांश

कम्पनी के कार्य-संचालन में सदस्यों की साधारण सभाओं का बहुमत महत्व है। साधारण सभा में सदस्य, कम्पनी के निदेशकों को कम्पनी का कारोबार चलाने के सम्बन्ध में दिशा निर्देश देते हैं।

सदस्यों की सभाएं तीन प्रकार की होती हैं : (क) सांविधिक सभा; (ख) वार्षिक साधारण सभा; तथा (ग) असाधारण सामान्य सभा।

सार्वजनिक कम्पनी के शेयरधारियों की प्रथम सांविधिक सभा होती है तथा यह कम्पनी के जीवन-काल में केवल एक बार बुलाई जाती है। व्यापार आरम्भ करने की अनुमति प्राप्त होने की तिथि के एक माह बाद, परन्तु छः माह के पहले यह सभा आयोजित की जानी चाहिए। इस सभा के लिए सब सदस्यों को पूरे 21 दिन की सूचना दी जानी चाहिए, तथा

सूचना के साथ-साथ सांविधिक रिपोर्ट भी भेजना चाहिए। इस रिपोर्ट में कम्पनी के गठन से सम्बन्धित सभी आवश्यक विषयों का ब्यौरा दिया होता है। इस सभा को बुलाने का मुख्य उद्देश्य शेयरधारियों को शेयरों के आबंटन की प्रगति तथा कम्पनी की स्थिति से अवगत कराना है।

प्रत्येक वर्ष, साधारण कार्य करने के लिए वार्षिक साधारण सभा बुलाई जाती है, जैसे अंकेक्षित लेखों को पास करने, लाभांश घोषित करने, निदेशकों तथा अंकेक्षक की नियुक्ति करने के लिए। कम्पनी की पहली वार्षिक साधारण सभा, कम्पनी के निगमन की तिथि के 18 माह के भीतर बुलाई जानी चाहिए। दो वार्षिक साधारण सभाओं में समय का अन्तर 15 माह से अधिक नहीं होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति, जिसे सूचना प्राप्त करने का अधिकार है, उसे सभा की तिथि से कम-से-कम पूरे 21 दिन पहले सूचना मिल जानी चाहिए।

सांविधिक सभा तथा वार्षिक साधारण सभा के अतिरिक्त सदस्यों की अन्य सभा को असाधारण सामान्य सभा कहते हैं। यह सभा किसी भी समय, किसी ऐसे महत्वपूर्ण कार्य को करने के लिए बुलाई जा सकती है, जिसे अगली वार्षिक साधारण सभा तक स्थगित नहीं किया जा सकता। इस प्रकार की सभा निदेशक स्वयं ही बुला सकते हैं या सदस्यों द्वारा मांग करने पर बुला सकते हैं। निदेशक मंडल द्वारा सभा नहीं बुलाने पर मांगकर्ता स्वयं ही इस सभा का आयोजन कर सकते हैं अथवा कम्पनी लॉ बोर्ड भी यह सभा बुला सकता है।

जब तक अन्तर्नियमों में अधिक संख्या न दी गई हो, तब निजी कम्पनी की स्थिति में दो सदस्यों की व्यक्तिगत उपस्थिति तथा सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में पांच सदस्यों की व्यक्तिगत उपस्थिति, सभा का कोरम होती है।

शेयर पूंजी वाली कम्पनी के सदस्यों को प्रॉक्सी नियुक्त करने का सांविधिक अधिकार होता है। प्रॉक्सी के लिए कम्पनी का सदस्य होना आवश्यक नहीं है। प्रॉक्सी सभा में बोल नहीं सकता परन्तु वह मत-पत्र द्वारा मतदान में भाग ले सकता है। साधारण सभा में मतदान या तो हाथ उठाकर या फिर मत-पत्र द्वारा किया जाता है।

सभाओं में निर्णय 'प्रस्ताव' के रूप में लिए जाते हैं। संकल्प तीन प्रकार के होते हैं: (i) साधारण; (ii) विशेष; तथा (iii) विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव।

सभा में उपस्थित सदस्यों द्वारा बहुमत से जो प्रस्ताव पास किया जाता है, वह साधारण प्रस्ताव होता है। साधारण कार्यों को करने के लिए साधारण संकल्प की आवश्यकता होती है, जैसे वार्षिक लेखों को पास करने, लाभांश की घोषणा करने के लिए आदि।

विशेष प्रस्ताव वह होता है जब सभा बुलाने की सूचना में ही उसे स्पष्ट कर दिया जाए। इस प्रकार का प्रस्ताव तीन-चौथाई बहुमत से ही पास होता है। सीमानियम में परिवर्तन करने, शेयरपूंजी को कम करने, रिजर्व पूंजी का निर्माण करने, पूंजी में से ब्याज का भुगतान करने के लिए विशेष प्रस्ताव की जरूरत होती है।

विशेष सूचना चाहने वाला प्रस्ताव वह होता है जब प्रस्ताव प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति सभा की तिथि से कम से कम 14 दिन पहले कम्पनी को प्रस्ताव प्रस्तुत करने के अपने इरादे की सूचना दे देता है। किसी निदेशक को उसके कार्यकाल की अवधि की समाप्ति से पहले पद से हटाने के लिए, हटाए गये निदेशक के स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को निदेशक के पद पर नियुक्त करने के लिए, यह निर्णय करने के लिए कि रिटायर होने वाले अंकेक्षक को फिर से नियुक्त नहीं किया जाएगा, विशेष सूचना की आवश्यकता होती है।

13.16 शब्दावली

सभा (Meeting): किसी वैध कार्य को करने के लिए दो या अधिक व्यक्तियों का एकत्रित होना।

सांविधिक रिपोर्ट (Statutory report): कम्पनी के निर्माण से सम्बन्धित महत्वपूर्ण सूचना देने वाली रिपोर्ट।

सूचना (Notice): सभा की तिथि, स्थान तथा समय के सम्बन्ध में लिखित सूचना।

कोरम (Quorum): किसी वैध कार्य को करने के लिए उपस्थित सदस्यों की न्यूनतम संख्या।

कार्यसूची (Agenda): सभा में विचार के लिए विषय।

सभापति (Chairman): ऐसा व्यक्ति जो सभा का अध्यक्ष होता है।

सुझाव (Motion): सभा में विचार के लिए प्रस्तुत प्रस्ताव।

प्रस्ताव (Resolution): जब कोई सुझाव विधिवत् तरीके से पास हो जाता है तो वह प्रस्ताव या निर्णय बन जाता है।

प्रॉक्सी (Proxy): किसी अन्य व्यक्ति का सभा में प्रतिनिधित्व करने व मतदान करने का अधिकार।

मत-पत्र द्वारा मतदान (Poll): मतदान की वह विधि जिसमें सदस्यों के मतदान का अधिकार उनके पास शेयरों की संख्या के अनुपात में होता है।

विवरण (Minutes): सभा की कार्यवाही का लिखित रिकार्ड।

13.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

क	6	i) गलत	ii) गलत	iii) सही	iv) सही	
		v) गलत	vi) गलत	vii) सही	viii) सही	
ख	7	i) सही	ii) गलत	iii) सही	iv) सही	
		v) गलत	vi) सही	vii) गलत	viii) सही	
ग	13	i) गलत	ii) सही	iii) गलत	iv) गलत	v) गलत
		vi) सही	vii) गलत	viii) सही	ix) गलत	x) सही
		xi) सही	xii) सही।			

13.18 स्वपरख प्रश्न

1) कम्पनी की सभाएँ कितने प्रकार की होती है? इन सभाओं को करने के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।
2) वैध सभा के आवश्यक लक्षण क्या हैं?
3) सांविधिक सभा क्या होती है? यह कब बुलाई जाती है? इस सभा में क्या कार्य किया जाता है?
4) सांविधिक रिपोर्ट क्या है? इसमें क्या शामिल होना चाहिए?
5) सभा की 'सूचना' से क्या तात्पर्य है? साधारण सभा की सूचना से सम्बन्धित नियमों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
6) वार्षिक साधारण सभा का क्या महत्व है? इस सभा में सामान्यतः क्या-कया कार्य किए जाते हैं?
7) असाधारण सामान्य सभा किस प्रकार बुलाई जाती है?
8) 'विशेष प्रस्ताव' क्या है? यह प्रस्ताव किन-किन कार्यों के लिए आवश्यक है?
9) क्या 'विशेष प्रस्ताव' तथा 'विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव' एक ही समान है? वे चार परिस्थितियां बताइए जब विशेष सूचना आवश्यक होती है।
10) 'कोरम' से आप क्या समझते हैं? यदि किसी सभा में कोरम नहीं होता तब क्या होता है?
11) 'प्राक्सी' पर एक विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

नोट : इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 14 समापन (Winding Up)

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य
14.1 प्रस्तावना
14.2 समापन का अर्थ
14.3 समापन एवं विघटन
14.4 समापन के प्रकार
14.5 अनिवार्य समापन
14.5.1 अनिवार्य समापन के आधार
14.5.2 याचिका कौन प्रस्तुत कर सकता है?
14.5.3 समापन का आरम्भ
14.5.4 समापन आदेश के परिणाम
14.5.5 समापन प्रक्रिया का कार्य-संचालन
14.6 स्वैच्छिक समापन
14.6.1 सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन
14.6.2 लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन
14.6.3 स्वैच्छिक समापन के परिणाम
14.7 सदस्यों द्वारा तथा लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन में अन्तर
14.8 न्यायालय के निरीक्षण में समापन
14.9 सारांश
14.10 शब्दावली
14.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
14.12 स्वपरख प्रश्न

14.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- समापन का अर्थ स्पष्ट कर सकें;
- समापन तथा विघटन में अन्तर बता सकें;
- समापन के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकें;
- अनिवार्य समापन के आधारों को सूचीबद्ध कर सकें;
- समापन के परिणामों का वर्णन कर सकें;
- स्वैच्छिक समापन से सम्बन्धित नियमों की चर्चा कर सकें; और
- सदस्यों द्वारा तथा लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन में अन्तर स्पष्ट कर सकें।

14.1 प्रस्तावना

आप पढ़ चुके हैं कि कम्पनी कानून द्वारा निर्मित कृत्रिम व्यक्ति है और इसी कारण इसका जीवन कानूनी प्रक्रिया के द्वारा समाप्त किया जा सकता है। समापन ऐसी विधि है जिसके द्वारा कम्पनी विघटित या समाप्त हो जाती है। विघटन से कम्पनी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। कानून की दृष्टि में तीन विधियां हैं जिनके द्वारा कम्पनी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, ये इस प्रकार हैं :

क) पुनर्निर्माण या विलय की योजना के अन्तर्गत, कम्पनी के समापन के बिना, न्यायालय के आदेश द्वारा कम्पनी को समाप्त किया जा सकता है [धारा 394];

ख) किसी कम्पनी के निष्क्रिय (defunct) हो जाने पर, रजिस्ट्रार उस कम्पनी का नाम कम्पनियों के रजिस्ट्रार से काट सकता है [धारा 560];

ग) समापन प्रक्रिया के द्वारा।

इस इकाई में आप समापन के विभिन्न प्रकारों, समापन के आधार तथा समापन के परिणामों के बारे में अध्ययन करेंगे।

14.2 समापन का अर्थ

समापन ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा कम्पनी का जीवन समाप्त किया जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान कम्पनी अपना सामान्य कारोबार करना बन्द कर देती है, कम्पनी की परिसम्पत्तियों को बेचा जाता है तथा प्राप्त राशि से कम्पनी के लेनदारों तथा अन्य देयताओं का भुगतान किया जाता है। यदि इसके बाद कुछ राशि बचती है तो यह राशि सदस्यों द्वारा खरीदे गये शेयरों के अनुपात में को वापस लौटा दी जाती है। एक प्रशासक (administrator), जिसे समापक (liquidator) कहते हैं, की नियुक्ति की जाती है और वह कम्पनी का सारा कारोबार व परिसम्पत्तियों को अपने नियन्त्रण में ले लेता है, परिसम्पत्तियों को बेचकर कम्पनी के ऋणों का भुगतान करता है, तथा यदि कुछ राशि शेष बचती है तो उसे सदस्यों में बांट देता है। इस प्रकार, समापन होने पर कम्पनी एक चलती रहने वाली संस्था नहीं रहती बल्कि इसके समस्त कार्य एकदम रुक जाते हैं। यहां पर आप यह याद रखें कि समापन की प्रक्रिया केवल तभी आरम्भ होती है जब न्यायालय समापन का आदेश जारी करता है अतः जब तक समापन आदेश पास नहीं किया जाता कम्पनी का समापन नहीं होता।

यद्यपि कम्पनी अपने ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ हो सकती है, परन्तु इसे दिवालिया घोषित नहीं किया जा सकता क्योंकि दिवालियापन सम्बन्धी कानून कम्पनियों पर लागू नहीं होता है। व्यक्तियों को ही केवल दिवालिया घोषित किया जा सकता है, निगमित संस्थाओं को नहीं। इस प्रकार, कम्पनी का केवल समापन ही किया जा सकता है।

14.3 समापन एवं विघटन (Winding Up and Dissolution)

कम्पनी का समापन एवं विघटन एक ही चीज़ नहीं हैं। समापन की प्रक्रिया आरम्भ होने पर, कम्पनी का तत्काल ही विघटन नहीं हो जाता। समापन पहली प्रक्रिया है, इसके बाद ही विघटन की स्थिति होती है। कम्पनी के विघटन पर, रजिस्ट्रार कम्पनी का नाम कम्पनियों के रजिस्टर से काट देता है अर्थात् कम्पनी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। इसके विपरीत, समापन होने पर कम्पनी का नाम कम्पनियों के रजिस्टर से नहीं काटा जाता है। समापन प्रक्रिया आरम्भ होने के पश्चात् भी कम्पनी का वैधानिक अस्तित्व बना रहता है, तथा कम्पनी के विरुद्ध न्यायालय में मुकदमा किया जा सकता है। कम्पनी की समापन प्रक्रिया का अन्तिम चरण विघटन होता है। परन्तु कुछ परिस्थितियों में, जैसे जब इसका दूसरी कम्पनी से विलय होता है, कम्पनी का समापन किए बिना भी उसका विघटन किया जा सकता है।

कम्पनी के समापन एवं विघटन में मुख्य अन्तर निम्नलिखित हैं :

i) समापन की स्थिति में, परिसम्पत्तियों को बेचकर प्राप्त राशि से कम्पनी के ऋणों तथा अन्य देयताओं का भुगतान किया जाता है। कम्पनी के जीवन को समाप्त करने की यह प्रथम अवस्था है। जबकि विघटन अन्तिम अवस्था है, इसके बाद कम्पनी का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है।

ii) समापन की कार्यवाही कम्पनी के समापक (liquidator) द्वारा की जाती है जबकि विघटन की स्थिति में ऐसी कोई कार्यवाही नहीं की जाती।

iii) समापन में कम्पनी के लेनदार अपने ऋणों को सिद्ध कर सकते हैं परन्तु कम्पनी के विघटन पर ऐसा नहीं हो सकता।

iv) समापन के लिए, न्यायालय से आदेश प्राप्त करना सदैव आवश्यक नहीं होता क्योंकि स्वैच्छिक समापन हो सकता है, परन्तु कम्पनी के विघटन के लिए न्यायालय का आदेश सदैव आवश्यक है।

उपर्युक्त चर्चा से आपको यह भली-भांति स्पष्ट हो गया होगा कि कम्पनी का समापन तथा कम्पनी का विघटन एक समान ही नहीं है बल्कि इन दोनों में पर्याप्त अन्तर है।

14.4 समापन के प्रकार

कम्पनी अधिनियम की धारा 425 के अन्तर्गत, निम्नलिखित किसी भी तरीके से कम्पनी का समापन किया जा सकता है :

1) न्यायालय द्वारा अनिवार्य समापन।

2) स्वैच्छिक समापन। यह दो प्रकार का होता है :
   क) सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन, अथवा
   ख) लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन।

3) न्यायालय के निरीक्षण में स्वैच्छिक समापन।

आइए, अब इन विभिन्न प्रकारों का विस्तार से वर्णन करते हैं।

14.5 अनिवार्य समापन (Compulsory Winding Up)

न्यायालय के आदेश द्वारा कम्पनी के समापन को अनिवार्य समापन कहते हैं। अधिनियम की धारा 433 में उन परिस्थितियों का वर्णन किया गया है, जब न्यायालय को आवेदन किये जाने पर वह कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है।

14.5.1 अनिवार्य समापन के आधार (Grounds for Compulsory Winding Up)

निम्नलिखित परिस्थितियों में न्यायालय द्वारा कम्पनी का समापन किया जा सकता है :

i) **कम्पनी द्वारा विशेष प्रस्ताव पारित करने पर (Special Resolution by the Company):** यदि कम्पनी ने इस आशय का कोई विशेष प्रस्ताव पारित किया है कि कम्पनी का न्यायालय द्वारा समापन किया जाए। प्रस्ताव किसी भी कारण से पारित किया जा सकता है। ऐसी परिस्थिति में, न्यायालय को आवेदन या याचिका प्रस्तुत करने पर, न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है। परन्तु न्यायालय का यह अधिकार विवेकलक्षी (discretionary) या उसकी इच्छा पर निर्भर करता है, अर्थात् कम्पनी द्वारा इस प्रकार का प्रस्ताव पारित कर दिए जाने पर भी न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश जारी करने से इंकार कर सकता है यदि उसकी राय में समापन, कम्पनी अथवा जनता के हितों के प्रतिकूल है।

   समापन का यह तरीका अधिक लोकप्रिय नहीं है क्योंकि सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन को वह श्रेष्ठ समझते हैं क्योंकि तब न्यायालय का हस्तक्षेप सबसे कम होता है।

ii) **सांविधिक सभा बुलाने में त्रुटि करने पर (Default in Holding Statutory Meeting):** आप जानते ही हैं कि व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के छः माह के भीतर सार्वजनिक कम्पनी के लिए सांविधिक सभा बुलानी आवश्यक है तथा रजिस्ट्रार के पास सांविधिक रिपोर्ट जमा करानी भी अनिवार्य है। यदि कोई सार्वजनिक कम्पनी सांविधिक सभा बुलाने अथवा रजिस्ट्रार के पास सांविधिक रिपोर्ट जमा कराने में त्रुटि करती है, तो रजिस्ट्रार अथवा किसी अंशदाता द्वारा याचिका प्रस्तुत करने पर न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है। यदि याचिका किसी अन्य व्यक्ति द्वारा, जैसे लेनदार, द्वारा प्रस्तुत की जाती है तो वह सांविधिक सभा बुलाने की तिथि समाप्त होने के पश्चात् 14 दिन के अन्दर प्रस्तुत कर दी जानी चाहिए [धारा 439(7)]। परन्तु इस आधार पर समापन का आदेश देने के लिए न्यायालय बाध्य नहीं है। इसके स्थान पर न्यायालय कम्पनी को सांविधिक सभा बुलाने अथवा सांविधिक रिपोर्ट जमा कराने के लिए आदेश दे सकता है।

iii) **व्यापार आरम्भ न करने पर (Failure to Commence Business):** यदि निगमन के एक वर्ष के भीतर कम्पनी व्यापार आरम्भ नहीं करती, अथवा पूरे एक वर्ष के लिए व्यापार करना स्थगित कर देती है तो न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश केवल तभी देगा जब वह सन्तुष्ट हो जाए कि कम्पनी का व्यापार आरम्भ करने का कोई इरादा नहीं है अथवा कम्पनी के लिए व्यापार करना सम्भव नहीं है। यदि किन्हीं अस्थायी कारणों से व्यापार आरम्भ करने में देर हुई है अथवा व्यापार को स्थगित किया गया है तथा उचित समय के भीतर कम्पनी के व्यापार आरम्भ करने की युक्तिसंगत सम्भावना है, तो न्यायालय समापन का आदेश जारी नहीं करेगा।

कई बार कम्पनी अनेक प्रकार का व्यापार करती है, ऐसी स्थिति में एक दिलचस्प प्रश्न यह उठ सकता है कि यदि कम्पनी कई व्यापारों में से किसी एक व्यापार को बंद कर देती है तो क्या समापन के लिए यह वैध आधार होगा? यह निर्णय करना न्यायालय का कार्य है। यदि सभी इकाइयों में व्यापार स्थगित या बन्द कर दिया गया है, तो भी न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश देने से मना कर सकता है यदि वह इस बात से सन्तुष्ट है कि कम्पनी के शीघ्र ही व्यापार आरम्भ करने की सम्भावना है।

iv) **सदस्यों की संख्या में कमी (Reduction in Membership):** सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में यदि किसी भी समय, सदस्यों की संख्या सात से कम हो जाती है तथा निजी कम्पनी में दो से कम सदस्य रह जाते हैं, तो न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है।

v) **ऋण चुकाने में असमर्थता (Inability to Pay Debt):** ऋण चुकाने में असमर्थता का अर्थ है कि कम्पनी अपने वित्तीय वादों को पूर्ण करने की स्थिति में नहीं है अर्थात् कम्पनी की मौजूदा परिसम्पत्तियां उसकी मौजूदा

देयताओं को चुकाने के लिए अपर्याप्त हैं। ऐसी स्थिति में, न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है।

कम्पनी अधिनियम की धारा 434 के अनुसार, निम्नलिखित परिस्थितियों में कम्पनी को अपने ऋण चुकाने में असमर्थ मान लिया जाता है :

क) यदि कम्पनी के किसी 500 रुपये से अधिक के लेनदार ने कम्पनी से अपनी रकम लौटाने के लिए मांग की सूचना कम्पनी को दी है, तथा उसके पश्चात् तीन सप्ताह बाद तक कम्पनी ने न तो रकम वापस की है तथा न ही उसे किसी अन्य प्रकार से सन्तुष्ट किया है। तीन सप्ताह की अवधि की गणना करते समय मांग सूचना भेजने वाला दिन तथा सूचना प्राप्ति के दिन को शामिल नहीं किया जाता; अथवा

ख) यदि किसी लेनदार ने, न्यायालय से अपने पक्ष में कम्पनी के विरुद्ध डिकरी (decree) प्राप्त कर ली है, तथा लेनदार के पक्ष में जारी की गई इस डिगरी (decree) का पूर्ण रूप से पालन करने में कम्पनी असमर्थ है; अथवा

ग) यदि कम्पनी की सांयोगिक तथा भावी देनदारियों को ध्यान में रखते हुए न्यायालय इस बात से सन्तुष्ट हो जाता है कि कम्पनी अपने ऋणों को चुकाने में असमर्थ है। इससे हमारा तात्पर्य कम्पनी के व्यापारिक दिवालियापन से है अर्थात् ऐसी स्थिति जब कम्पनी अपनी वर्तमान या चालू देयताओं को पूर्ण करने में असमर्थ है। केवल इस बात से कि कम्पनी को हानि हो रही है या वह निरन्तर हानि में चल रही है, यह नहीं कहा जा सकता कि वह अपने ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ है। इसी प्रकार, कम्पनी की देयताएं उसकी परिसम्पत्तियों से अधिक होने पर यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि कम्पनी अपने ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ है।
इस आधार पर न्यायालय समापन का आदेश केवल तभी देगा जब :

i) कम्पनी द्वारा देय ऋण विवादास्पक नहीं हो तथा उसकी राशि निश्चित व तुरन्त देय हो;
ii) ऋण की राशि के लिए लेनदार का अधिकार स्पष्ट है तथा विवादग्रस्त नहीं है; तथा
iii) कम्पनी ने बिना किसी पर्याप्त कारण या आधार के राशि का भुगतान करने में लापरवाही बरती हो।

जब याचिका प्रस्तुत करने का मुख्य उद्देश्य कम्पनी पर ऋण चुकाने के लिए दबाव डालना हो, तो न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश नहीं देगा।

vi) **न्यायोचित एवं सम्यक् (Just and Equitable):** यदि किसी मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए न्यायालय इस बात से सन्तुष्ट हो जाता है कि कम्पनी का समापन न्यायोचित एवं सम्यक् है, तो वह कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है। इस वाक्य के अन्तर्गत न्यायालय को विस्तृत विवेकाधिकार दिए गये हैं। 'न्यायोचित एवं सम्यक्' क्या है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों व परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

'न्यायोचित एवं सम्यक्' के आधार पर न्यायालय ने जब समापन का आदेश दिया है, उनके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं :

i) जब कम्पनी का मुख्य उद्देश्य ही निष्फल हो गया है अथवा उसको प्राप्त करना पूर्ण रूप से असम्भव हो गया है।

ii) जब कम्पनी के प्रबन्ध में पूर्णतः गतिरोध उत्पन्न हो गया हो, जैसे, समान मताधिकार रखने वाले दो निदेशक, एक-दूसरे के इतने शत्रु हो गये हैं कि वे एक-दूसरे से बात भी नहीं करते, तो इसे प्रबन्ध में गतिरोध उत्पन्न हुआ माना जाएगा।

iii) जब बहुमताधिकार रखने वाले शेयरधारी, अल्पसंख्यक शेयरधारियों के प्रति अत्याचारपूर्ण नीति अपनाते हैं।

iv) जब जिस उद्देश्य के लिए कम्पनी का निर्माण किया गया था वह कपटपूर्ण या अवैधानिक है या निर्माण के पश्चात् अवैधानिक हो जाता है।

v) जब व्यापार हानि के अतिरिक्त न चलाया जा सकता हो, अर्थात् जब व्यापार को लाभ पर चलाने की जरा सी भी आशा न हो।

vi) जब कम्पनी केवल एक बुलबुला कम्पनी है और इसके पास व्यापार चलाने के लिए न तो कोई सम्पत्ति है और न व्यापार।

vii) जब किसी निजी कम्पनी के निदेशकों ने कुप्रबन्ध किया हो तथा कम्पनी के धन का पूर्ण दुरुपयोग किया हो अथवा कम्पनी के प्रबन्ध में विश्वास पूर्णतः समाप्त हो गया हो।

इस सम्बन्ध में आपको यह स्मरण रखना चाहिए कि 'न्यायोचित एवं सम्यक्' के आधार पर राहत प्राप्त करने का अधिकार अन्तिम उपचार की प्रकृति का है अर्थात् जब अन्य उपाय प्रभावशाली न रहें व कम्पनी के सामान्य हितों की रक्षा न की जा सके, केवल तभी इस 'वाक्य' का उपयोग किया जाना चाहिए।

14.5.2 याचिका कौन प्रस्तुत कर सकता है? (Who Can File a Petition)

कम्पनी अधिनियम की धारा 439 के अनुसार, कम्पनी के अनिवार्य समापन के लिए, निम्नलिखित में से कोई भी व्यक्ति याचिका प्रस्तुत कर सकता है :

i) **कम्पनी द्वारा :** जब कम्पनी की साधारण सभा में इस आशय का विशेष प्रस्ताव पारित कर दिया जाता है, तो

कम्पनी स्वयं ही समापन के लिए याचिका प्रस्तुत कर सकती है। इस प्रकार, कम्पनी के निदेशक अथवा प्रबन्ध निदेशक, स्वयं इस प्रकार की याचिका प्रस्तुत नहीं कर सकते।

ii) **लेनदारों द्वारा :** कोई भी लेनदार समापन के लिए याचिका प्रस्तुत कर सकता है यदि वह यह सिद्ध कर दे कि कम्पनी से मांग किए जाने के पश्चात् वह उसका 500 रुपये या अधिक का ऋण तीन सप्ताह तक भुगतान नहीं कर सकी है। 'लेनदार' शब्द में सुरक्षित लेनदार, ऋणपत्रधारक, सम्भाव्य लेनदार तथा केन्द्र सरकार या कोई भी राज्य सरकार या स्थानीय प्राधिकरण को शामिल किया जाता है जिसे कम्पनी ने कोई कर चुकाना है। यदि किसी ऐसे सुरक्षित लेनदार द्वारा याचिका प्रस्तुत की जाती है जिसके पास पर्याप्त मात्रा में प्रतिभूतियां हैं, तो जब तक अन्य लेनदारों द्वारा याचिका प्रस्तुत न की जाए, वह समापन का आदेश प्राप्त करने में सफल नहीं होगा।
यदि परिसीमा अधिनियम के अन्तर्गत किसी लेनदार का कोई ऋण अवधि वर्जित हो गया है, तब भी उसकी याचिका को स्वीकार नहीं किया जाएगा।

iii) **अंशदाताओं द्वारा :** 'अंशदाता' शब्द से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है, जो कम्पनी के समापन की दशा में कम्पनी की सम्पत्ति में अंशदान करने के लिए उत्तरदायी होता है। अंशदाता को कम्पनी के समापन के लिए याचिका प्रस्तुत करने का पूर्ण अधिकार है भले ही वह पूर्ण-दत्त शेयरों का धारक हो या कम्पनी के पास कोई भी सम्पत्ति न हो, या देयताओं का भुगतान करने के पश्चात् सदस्यों में बांटने के लिए कम्पनी के पास कोई सम्पत्ति न बची हो।

यदि कम्पनी के सदस्यों की न्यूनतम संख्या, वैधानिक सीमा से किसी भी समय कम हो जाती है, तो इस आधार पर कोई भी अंशधारी कम्पनी के समापन के लिए याचिका प्रस्तुत कर सकता है। परन्तु किसी अन्य आधार पर समापन के लिए याचिका केवल निम्नलिखित द्वारा प्रस्तुत की जा सकती है : (क) मूल आबंटिती,या जिसने पारेषण (transmission) के द्वारा शेयर प्राप्त किए हों अथवा (ख) वह व्यक्ति याचिका प्रस्तुत करने से एकदम पहले के अठारह महीने की अवधि में से कम से कम छः माह तक उन शेयरों का पंजीकृत शेयरधारी था।

iv) **रजिस्ट्रार द्वारा :** केन्द्र सरकार से पूर्व-अनुमति प्राप्त करके, रजिस्ट्रार कम्पनी के समापन के लिए, निम्नलिखित आधार पर याचिका प्रस्तुत कर सकता है :

क) यदि सांविधिक सभा बुलाने या सांविधिक रिपोर्ट जमा करने में त्रुटि करती है;

ख) यदि कम्पनी, निगमन की तिथि से एक वर्ष के भीतर व्यापार आरम्भ नहीं करती अथवा पूरे एक वर्ष के लिए व्यापार स्थगित कर देती है;

ग) यदि कम्पनी के सदस्यों की संख्या न्यूनतम वैधानिक संख्या से कम हो जाती है;

घ) यदि कम्पनी अपने ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ है;

ङ) यदि न्यायालय की राय में यह न्यायोचित एवं सम्यक् है।

कम्पनी अपना ऋण चुकाने में असमर्थ है, इस आधार पर रजिस्ट्रार केवल तभी याचिका प्रस्तुत कर सकता है जब उसे कम्पनी के तुलन-पत्र या विशेष अंकेक्षक या निरीक्षक की रिपोर्ट से ऐसा प्रतीत होता हो कि कम्पनी अपने ऋण चुकाने में असमर्थ है।

v) **केन्द्र सरकार द्वारा अधिकृत व्यक्ति द्वारा :** कम्पनी के मामलों की जांच करने के लिए नियुक्त निरीक्षक की रिपोर्ट से यदि यह प्रकट होता है कि कम्पनी का कारोबार, लेनदारों या सदस्यों या किसी अन्य व्यक्ति को धोखा देने के लिए किया जा रहा है, तो केन्द्र सरकार किसी भी व्यक्ति को कम्पनी के समापन के लिए याचिका प्रस्तुत करने के लिए अधिकृत कर सकती है। याचिका प्रस्तुत करने का अधिकार प्रायः रजिस्ट्रार को दिया जाता है।

14.5.3 समापन का आरम्भ

जब किसी कम्पनी के समापन का आदेश न्यायालय द्वारा दिया जाता है, तो समापन उक्त आदेश की तिथि से आरम्भ नहीं होता है, बल्कि उससे पहले की किसी तिथि से आरम्भ होता है। कम्पनी अधिनियम की धारा 441 के अनुसार, न्यायालय द्वारा कम्पनी का समापन उस समय से आरम्भ माना जाएगा, जब समापन के लिए याचिका प्रस्तुत की गई थी। परन्तु यदि समापन के लिए न्यायालय में याचिका प्रस्तुत करने से पहले ही कम्पनी ने समापन के लिए विशेष प्रस्ताव पारित कर लिया था, तो विशेष प्रस्ताव पारित करने के समय से ही कम्पनी का समापन आरम्भ हुआ माना जाएगा।

यदि एक से अधिक याचिकाओं के आधार पर समापन का आदेश दिया गया है, तो समापन सर्वप्रथम याचिका प्रस्तुत करने की तिथि से आरम्भ हुआ माना जाएगा।

कई बार न्यायालय में कम्पनी के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही चल रही होती है, ऐसी स्थिति में कम्पनी या किसी लेनदार या अंशदाता द्वारा आवेदन करने पर, न्यायालय समापन का आदेश पारित करने से पहले, ऐसी शर्तों पर जो वह उचित समझे, इन कार्यवाहियों पर रोक लगाने का आदेश दे सकता है। यदि सुप्रीम कोर्ट या किसी हाई कोर्ट में कम्पनी के विरुद्ध मुकदमा या कानूनी कार्यवाही चल रही है, तो स्थगन आदेश प्राप्त करने के लिए उसी सम्बन्धित कोर्ट में आवेदन करना होगा जहां पर मुकदमा या कार्यवाही चल रही है।

याचिका की सुनवाई के पश्चात् न्यायालय के अधिकार : कम्पनी अधिनियम की धारा 443 के अनुसार, याचिका की सुनवाई करने के पश्चात, न्यायालय :

क) लागत सहित या लागत रहित याचिका खारिज कर सकता है; या
ख) शर्त सहित या बिना किसी शर्त के सुनवाई को स्थगित कर सकता है; या
ग) अपने विवेकानुसार कोई अन्तरिम आदेश दे सकता है; या
घ) लागत सहित या लागत रहित, कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है, अथवा जो वह उचित समझे वह आदेश दे सकता है।

14.5.4 समापन आदेश के परिणाम

i) न्यायालय द्वारा समापन का आदेश दिए जाने के पश्चात्, उसे इस बात की सूचना तुरन्त सरकारी समापक और रजिस्ट्रार के पास भेजनी चाहिए।

ii) न्यायालय द्वारा समापन आदेश जारी करने की तिथि के पश्चात् 30 दिनों के अन्दर, याचिका प्रस्तुत करने वाले व्यक्ति तथा कम्पनी को इस आदेश की प्रमाणित प्रतिलिपि रजिस्ट्रार के पास जमा करानी चाहिए। तत्पश्चात्, रजिस्ट्रार सरकारी गजट में सूचना देगा कि समापन का आदेश जारी कर दिया गया है।

iii) समापन आदेश कम्पनी के अधिकारियों तथा कर्मचारियों को नौकरी से हटाने की सूचना जैसा माना जाता है अर्थात् उन्हें अलग से सूचना देनी आवश्यक नहीं होती। परन्तु यह नियम तभी लागू होता है जब कम्पनी का व्यापार आगे न चलाया जाए।

iv) समापन आदेश दिए जाने के पश्चात् कम्पनी के विरुद्ध कोई मुकदमा या अन्य कानूनी कार्यवाही न्यायालय की अनुमति के बिना न तो आरम्भ की जा सकती है और न ही उस पर आगे सुनवाई की जा सकती है। ऐसी अनुमति देते समय न्यायालय, जो भी उचित समझे, शर्तें लगा सकता है।

v) समापन आदेश कम्पनी के समस्त लेनदारों तथा अन्य अंशदाताओं के पक्ष में समान रूप से प्रभावी होगा जैसे वह याचिका उन सबके द्वारा संयुक्त रूप से प्रस्तुत की गई हो।

vi) कम्पनी के निदेशक मंडल के समस्त अधिकार समाप्त हो जाते हैं तथा अब वे सरकारी समापक को प्राप्त हो जाते हैं। सरकारी समापक, अपने पद के कारण, कम्पनी का समापक बन जाता है।

vii) भविष्य में किसी तिथि पर देय ऋण सहित, समस्त ऋण तत्काल देय हो जाते हैं।

viii) कम्पनी के समापन का आदेश जारी करने वाले न्यायालय को कम्पनी के विरुद्ध किए गये किसी नये मुकदमे या कार्यवाही का निपटारा करने का अधिकार होता है। किसी अन्य न्यायालय में चल रहे मुकदमे या कानूनी कार्यवाही को भी उसी न्यायालय में निपटारे के लिए हस्तांतरित कर दिया जाता है, जिसने समापन का आदेश जारी किया है।

ix) कम्पनी की समस्त सम्पत्ति, समापक के अधिकार व नियन्त्रण में हो जाती है।

14.5.5 समापन प्रक्रिया का कार्य-संचालन

सरकारी समापक द्वारा समापन की कार्यवाही की जाती है तथा उसके अधिकार न्यायालय के नियन्त्रण के अन्तर्गत होते हैं। वह समापन से सम्बन्धित किसी विषय पर न्यायालय से निर्देश प्राप्त करने के लिए आवेदन कर सकता है।

समापन आदेश की तिथि से 21 दिनों के भीतर अथवा न्यायालय द्वारा बढ़ाई गई अवधि के भीतर जो 3 माह से अधिक नहीं हो सकती, कम्पनी को एक स्थिति-विवरण देना होता है। इस स्थिति विवरण में कम्पनी की परिसम्पत्तियों के बारे में, इसके ऋण व देयताओं का विवरण, लेनदारों का प्रतिभूति सहित विवरण तथा कम्पनी के प्राप्य ऋणों का विवरण दिया जाता है। यह स्थिति विवरण किसी एक या अधिक निदेशकों द्वारा तथा कम्पनी के प्रबन्धक, सचिव अथवा मुख्य अधिकारी द्वारा शपथ-पत्र द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए। स्थिति विवरण प्राप्त होने पर उसके आधार पर सरकारी समापक एक प्रारम्भिक रिपोर्ट भेजेगा।

एक बार कम्पनी की समस्त सम्पत्ति बेचकर तथा अंशदाताओं से सम्पूर्ण राशि प्राप्त हो जाती है, तब फिर कम्पनी की देयताओं का भुगतान किया जाता है। कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, सबसे पहले अभिभावी अधिमान्य भुगतान किए जाने चाहिए, उसके बाद अधिमान्य भुगतान तथा उसके पश्चात् अन्य लेनदारों को भुगतान करना चाहिए। समस्त ऋणों व देयताओं का भुगतान करने के पश्चात् यदि कुछ राशि शेष बचती है तो यह अंशदाताओं में आनुपातिक आधार पर बांट दी जाती है।

'अंशदाता' से तात्पर्य प्रत्येक ऐसे व्यक्ति से है जो कम्पनी के समापन की दशा में कम्पनी की सम्पत्तियों में अंशदान करने के लिए उत्तरदायी होता है तथा इसमें पूर्ण-दत्त शेयरों के धारक भी शामिल हैं, यद्यपि अंशदाता का दायित्व उसके द्वारा लिए गये शेयरों पर बकाया राशि तक ही सीमित होता है।

सरकारी समापक को कम्पनी के सम्बन्ध में जो भी धन प्राप्त होगा उसके सम्बन्ध में वर्ष में दो बार प्राप्तियों एवं भुगतानों का विवरण न्यायालय को देना होगा। इसके अतिरिक्त, समापक प्रत्येक वर्ष समापन की स्थिति तथा लेखों का अंकेक्षित विवरण भी न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करेगा।

जब कम्पनी के कारोबार का पूर्णतः समापन हो जाता है अथवा जब न्यायालय के विचार में, धन या सम्पत्तियों के अभाव में अथवा किसी अन्य कारणों से समापन की प्रक्रिया को और आगे चलाना सम्भव नहीं रहता, तो न्यायालय कम्पनी के विघटन या समाप्ति का आदेश जारी कर देगा।

विघटन होने पर कम्पनी का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है तथा रजिस्ट्रार, कम्पनियों के रजिस्टर में से कम्पनी का नाम काट देता है। न्यायालय द्वारा आदेश जारी किए जाने की तिथि से कम्पनी को विघटित या समाप्त माना जाता है।

बोध प्रश्न क

1) कम्पनी के 'समापन' से आपका क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

2) कम्पनी के विघटन का क्या अर्थ है?

....

....

....

....

3) सार्वजनिक कम्पनी के समापन के विभिन्न तरीकों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

4) वे चार आधार बताइए जिनके आधार पर कम्पनी को 'न्यायोचित एवं सम्यक्' आधार पर समापन किया जा सके।

....

....

....

....

5) अनिवार्य समापन कब आरम्भ होता है?

....

....

....

....

6) कम्पनी के अधिकारियों एवं कर्मचारियों पर समापन आदेश का क्या प्रभाव पड़ता है?

....

....

....

....

7) अंशदाता कौन होता है?

....

....

....

....

8) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत :

i) यदि कम्पनी के सदस्य इस आशय का साधारण प्रस्ताव पारित करते हैं, तो कम्पनी का समापन किया जा सकता है।

ii) यदि कोई कम्पनी सांविधिक सभा बुलाने में त्रुटि करती है तो न्यायालय को समापन का आदेश अवश्य दे देना चाहिए।

iii) यदि कम्पनी अपने ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ है तो न्यायालय समापन का आदेश दे सकता है।

iv) यदि निगमन की तिथि के एक वर्ष के भीतर कम्पनी व्यापार आरम्भ नहीं करती तो न्यायालय को समापन का आदेश अवश्य दे देना चाहिए।

v) यदि कम्पनी के सदस्यों की संख्या वैधानिक न्यूनतम सीमा से कम हो जाती है, तो न्यायालय समापन का आदेश दे सकता है।

vi) कम्पनी के कर्मचारी भी कम्पनी के समापन के लिए न्यायालय में याचिका प्रस्तुत कर सकते हैं।

vii) यदि 500 रुपये से अधिक राशि के लेनदार द्वारा भुगतान के लिए मांग करने पर, तीन सप्ताह के भीतर भुगतान नहीं किया जाता तो कम्पनी को ऋण चुकाने में असमर्थ समझा जाता है।

viii) सुरक्षित लेनदार कम्पनी के समापन के लिए याचिका प्रस्तुत नहीं कर सकता।

ix) समापन आदेश की तिथि से समापन आरम्भ होता है।

x) समापन आदेश दे दिए जाने के पश्चात्, न्यायालय की अनुमति के बिना कम्पनी के विरुद्ध कोई मुकदमा या कानूनी कार्यवाही आरम्भ नहीं की जा सकती।

14.6 स्वैच्छिक समापन (Voluntary Winding Up)

आप न्यायालय के आदेश के द्वारा कम्पनी के समापन के बारे में पढ़ चुके हैं। न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना भी कम्पनी का समापन किया जा सकता है और इसे 'स्वैच्छिक समापन' कहते हैं। स्वैच्छिक समापन का अर्थ ऐसे समापन से है जो न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना, लेनदारों या सदस्यों द्वारा स्वयं ही किया जाता है। स्वैच्छिक समापन की स्थिति में, सदस्यों व लेनदारों को अपने मामले न्यायालय में ले जाए बिना, स्वयं ही निपटाने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है। परन्तु आवश्यकता पड़ने पर वे आदेशों या निर्देशों के लिए न्यायालय से आवेदन कर सकते हैं।

कम्पनी अधिनियम की धारा 484 में उन परिस्थितियों का वर्णन किया गया है जबकि कम्पनी का स्वैच्छिक समापन किया जा सकता है। ये इस प्रकार हैं :

1) निम्नलिखित परिस्थितियों में साधारण प्रस्ताव पारित करके :
   अ) जब अन्तर्नियमों द्वारा कम्पनी के लिए एक निश्चित अवधि निर्धारित की गई है तथा वह अवधि समाप्त हो गई हो; अथवा
   ब) जब अन्तर्नियमों में यह व्यवस्था हो कि किसी घटना के घटित होने पर कम्पनी का समापन किया जाएगा, तो उस घटना के घटित होने पर।
2) एक विशेष प्रस्ताव पारित करके कम्पनी का स्वैच्छिक समापन किया जा सकता है। जब सदस्य कम्पनी के समापन के लिए विशेष प्रस्ताव पारित करते हैं, तो उनके लिए समापन का कारण बताना आवश्यक नहीं है। जब कोई कम्पनी स्वैच्छिक समापन के लिए विशेष प्रस्ताव पारित करती है, तो प्रस्ताव पारित करने के 14 दिनों के भीतर कम्पनी को यह सूचना विज्ञापन के रूप में सरकारी गजट में प्रकाशित करानी चाहिए तथा जिस ज़िले में कम्पनी का पंजीकृत कार्यालय स्थित है, उस ज़िले में प्रचलित किसी समाचार-पत्र में भी यह सूचना विज्ञापन के रूप में प्रकाशित करानी चाहिए।

यहां पर यह ध्यान रखें कि स्वैच्छिक समापन उस तिथि से आरम्भ हुआ माना जाता है, जबकि स्वैच्छिक समापन के लिए प्रस्ताव पारित किया गया था [धारा 486]।

कम्पनी का स्वैच्छिक समापन दो प्रकार का होता है,

क) सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन; तथा

ख) लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन।

आइए अब इनका बारी-बारी से विस्तार से अध्ययन करते हैं।

14.6.1 सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन (Member's Voluntary Winding Up)

सदस्यों द्वारा कम्पनी का स्वैच्छिक समापन केवल तभी सम्भव है जबकि कम्पनी सम्पन्न है अर्थात् वह अपने ऋणों को

पूर्णतः चुकाने में समर्थ है। सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन उसी परिस्थिति में सम्भव है जब कम्पनी द्वारा शोधन-क्षमता की घोषणा (declaration of solvency) की जाती है तथा पंजीकरण के लिए रजिस्ट्रार को दी जाती है।

शोधन-क्षमता की घोषणा (Declaration of Solvency)
जब कम्पनी का स्वैच्छिक समापन किया जाना है तो सभी निदेशकों द्वारा (यदि केवल दो ही निदेशक हैं तो) अथवा निदेशक मंडल द्वारा बहुमत से (यदि दो से अधिक निदेशक हैं तो) शोधन-क्षमता की घोषणा की जानी चाहिए। यह घोषणा निदेशक मंडल की सभा में की जानी चाहिए तथा एक शपथ-पत्र द्वारा सत्यापित की जानी चाहिए।

इस घोषणा में यह लिखा होना चाहिए कि निदेशकों ने कम्पनी के मामलों की अच्छी तरह से जांच कर ली है तथा उनके मतानुसार कम्पनी को कोई ऋण नहीं चुकाना है, या कि वह समापन आरम्भ होने की तिथि के तीन वर्ष के भीतर अपने सभी ऋण पूर्णतः चुकाने में समर्थ होगी।

यह घोषणा केवल तभी प्रभावी होगी जबकि कम्पनी के स्वैच्छिक समापन के प्रस्ताव पारित होने की तिथि के तुरंत पहले वाले पांच सप्ताहों के भीतर यह कर दी जाती है तथा उस तिथि से पहले यह रजिस्ट्रार के पास पंजीकरण के लिए भेज दी जाती है। इस घोषणा के साथ कम्पनी के लाभ-हानि लेखे तथा तुलन-पत्र के सम्बन्ध में अंकेक्षक की रिपोर्ट भी नत्थी की जानी चाहिए, तथा घोषणा करने से पहले की किसी अंतिम व्यावहारिक तिथि के दिन कम्पनी की परिसम्पत्तियों व देयताओं का स्थिति विवरण भी नत्थी किया जाना चाहिए।

समापन का संचालन (Conduct of Winding Up)
कम्पनी अपनी साधारण सभा में एक या अधिक समापकों की नियुक्ति करती है तथा समापकों का पारिश्रमिक निश्चित करती है। इस प्रकार से पारिश्रमिक निश्चित किए जाने के बाद ही समापक अपने पद का कार्य-भार संभालते हैं। समापक की नियुक्ति की तिथि से 10 दिनों के भीतर कम्पनी को यह सूचना रजिस्ट्रार को दे देनी चाहिए।

समापक की नियुक्ति होने पर निदेशक मंडल के समस्त अधिकार समाप्त हो जाते हैं, परन्तु कम्पनी या समापक की अनुमति से यह अधिकार बने भी रह सकते हैं।

यदि कम्पनी ऋणों का भुगतान नहीं करती या समापक की राय में शोधन-क्षमता की घोषणा में निर्धारित अवधि के भीतर कम्पनी ऋणों का भुगतान करने में समर्थ नहीं होगी, तो समापक को तत्काल लेनदारों की एक सभा बुलानी चाहिए तथा उनके समक्ष कम्पनी की सम्पत्तियों व देयताओं के सम्बन्ध में विवरण प्रस्तुत करना चाहिए। ऐसी परिस्थितियों में समापन सम्बन्धी कार्यवाही उसी प्रकार चलेगी जैसे कि लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन की दशा में होती है।

यदि समापन का कार्य एक वर्ष से अधिक तक चलता है, तो समापक का यह कर्तव्य है कि वह प्रत्येक वर्ष के अन्त में शेयरधारियों की एक सभा बुलाए तथा उनके समक्ष पिछले वर्ष के अपने कार्यों, व्यवहारों तथा समापन कार्यवाही की प्रगति का ब्यौरा प्रस्तुत करे।

जब समापन में गई कम्पनी अपना व्यापार या सम्पत्ति किसी अन्य कम्पनी को बेचना चाहती है तथा प्रतिफलस्वरूप उस दूसरी [हस्तांतरिती (transferee)] कम्पनी से शेयर या अन्य हित इस इरादे से स्वीकार करना चाहती है कि वह उन्हें अपने [हस्तांतरक कम्पनी (transferor)] सदस्यों में विभाजित कर देगी, तो समापक उस दूसरी कम्पनी के शेयर या अन्य हित केवल तभी स्वीकार कर सकेगा जब इसके लिए कम्पनी ने विशेष प्रस्ताव पारित करके उसे अधिकार दिया हो। यदि हस्तांतरक कंम्पनी का कोई भी सदस्य इस विशेष प्रस्ताव पर अपनी सहमति नहीं देता तो वह समापक को उक्त प्रस्ताव का क्रियान्वन करने से रोक सकता है या अपना हित निश्चित मूल्य पर क्रय करने के लिए समापक को कह सकता है।

अन्तिम सभा एवं विघटन (Final Meeting and Dissolution)
जब कम्पनी के कार्यों का पूर्णतः समापन हो जाता है अर्थात् जब समस्त परिसम्पत्तियों को बेचकर जो राशि वसूल होती है उसमें से समस्त ऋण व देयताओं का भुगतान कर दिया जाता है, तो समापक को कम्पनी की साधारण सभा बुलानी चाहिए तथा सभा में समापन सम्बन्धी लेखे प्रस्तुत करने चाहिए जिससे सदस्यों को यह पता चले कि समापन कार्यवाही कैसे की गई है तथा कम्पनी की सम्पत्तियों का किस प्रकार निपटारा किया गया है। यह सभा कम्पनी की अन्तिम सभा होती है।

सभा के होने के एक सप्ताह के भीतर इन लेखों की प्रति सरकारी समापक तथा रजिस्ट्रार के पास भेजी जानी चाहिए। तब सरकारी समापक कम्पनी की लेखा पुस्तकों तथा अन्य दस्तावेजों की जांच-पड़ताल करेगा और अपनी रिपोर्ट न्यायालय को देगा। यदि सरकारी समापक की रिपोर्ट यह बताती है कि कम्पनी के व्यापार का संचालन ठीक तरह से हुआ है, तो रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने की तिथि से कम्पनी समाप्त या विघटित समझी जाएगी।

यदि रिपोर्ट से यह पता चलता है कि समापन सम्बन्धी कार्यवाही सदस्यों के हितों व जनहित के प्रतिकूल की गई है, तो न्यायालय सरकारी समापक को और विस्तार से जांच-पड़ताल करने का आदेश देगा। सरकारी समापक की रिपोर्ट पर न्यायालय या तो कम्पनी को समाप्त कर देगा या फिर जैसा वह उचित समझे अन्य कोई आदेश दे सकता है।

14.6.2 लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन (Creditor's Voluntary Winding Up)

इस प्रकार का समापन तब किया जाता है जब कम्पनी अपने ऋणों को पूर्णतः चुकाने की स्थिति में नहीं है तथा जब

शोधन-क्षमता सम्बन्धी घोषणा नहीं की गई है। इस प्रकार के समापन में, क्योंकि लेनदारों का हित जुड़ा होता है, इसलिए कम्पनी के समापन की देखभाल व नियन्त्रण करने का अधिकार लेनदारों को ही दिया जाता है।

इस प्रकार के समापन से सम्बन्धित सांविधिक प्रावधानों को हम निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत अध्ययन कर सकते हैं :

लेनदारों की सभा (Meeting of Creditors)

जिस दिन कम्पनी की साधारण सभा में स्वैच्छिक समापन सम्बन्धी प्रस्ताव रखा जाना है, उसी दिन या उससे अगले दिन, कम्पनी को अपने लेनदारों की सभा बुलानी चाहिए। इस सभा में निदेशक मंडल कम्पनी की स्थिति का पूर्ण विवरण लेनदारों के समक्ष प्रस्तुत करता है। इस विवरण के साथ वह लेनदारों की सूची एवं उनके दावों की अनुमानित राशि सम्बन्धी सूचना भी प्रस्तुत करता है।

समापक की नियुक्ति (Appointment of Liquidator)

कम्पनी के सदस्य एवं लेनदार अपनी-अपनी सभाओं में क्रमशः समापक को मनोनीत करते हैं। यदि कम्पनी के सदस्य समापक को मनोनीत नहीं करते हैं, तो लेनदारों द्वारा मनोनीत समापक ही, समापक माना जाएगा। यदि सदस्यों तथा लेनदारों द्वारा भिन्न-भिन्न व्यक्ति मनोनीत किए जाते हैं, तो लेनदारों द्वारा मनोनीत समापक ही, समापक माना जाएगा।

निरीक्षण समिति (Committee of Inspection)

लेनदार अपनी सभा में एक निरीक्षण समिति की नियुक्ति कर सकते हैं जिसके सदस्यों की संख्या पांच से अधिक नहीं होनी चाहिए। इस समिति में कम्पनी भी अपने पांच सदस्य नियुक्त कर सकती है। यदि निरीक्षण समिति के सदस्यों के बारे में विचारों में मतभेद है, तब न्यायालय इस विषय का निपटारा करेगा। निरीक्षण समिति या लेनदार समापक का पारिश्रमिक निश्चित करते हैं, यदि वे ऐसा नहीं करते तब न्यायालय पारिश्रमिक निश्चित करता है।

समापक की नियुक्ति होते ही निदेशक मंडल के अधिकार समाप्त हो जाते हैं। परन्तु निरीक्षण समिति या निरीक्षण समिति के न होने पर, लेनदार अपनी साधारण सभा में निदेशक मंडल के अधिकारों के बने रहने की अनुमति दे सकते हैं।

समापन कार्यवाही ठीक उसी प्रकार चलेगी जैसे कि सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन में चलती है। सदस्यों की अन्तिम सभा के अतिरिक्त, कम्पनी के समाप्त होने से पहले लेनदारों की एक सभा भी बुलाई जानी चाहिए।

सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन तथा लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन से सम्बन्धित साधारण प्रावधान

स्थिति विवरण (Statement of Affairs)

कम्पनी के निदेशक मंडल को कम्पनी के व्यापार की स्थिति के सम्बन्ध में एक स्थिति विवरण, समापक को देना चाहिए। यह स्थिति विवरण एक या अधिक निदेशकों, प्रबन्धक या सचिव या किसी अन्य प्रधान अधिकारी द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए तथा इसमें निम्नलिखित विवरण दिया जाना चाहिए :

i) कम्पनी की सम्पत्तियों, रोकड़ तथा बैंक में जमा राशि तथा परक्राम्य प्रतिभूतियों को अलग-अलग दिखाना चाहिए।
ii) कम्पनी के ऋण एवं दायित्व।
iii) लेनदारों के नाम व पते तथा यह भी दिखाना जाना चाहिए कि जमानती ऋण कितने हैं और और गैर-जमानती कितने।
iv) कम्पनी को प्राप्त होने वाले ऋणों का विवरण, किन व्यक्तियों से रकम प्राप्त करनी है तथा वसूली योग्य राशि का विवरण।
v) इसके अतिरिक्त कोई अन्य सूचना जो मांगी जाए।

समापक के अधिकार (Liquidator's Power)

समापक को वही अधिकार प्राप्त हैं, जो कि अनिवार्य समापन में सरकारी समापक को प्राप्त होते हैं। कुछ परिस्थितियों में सरकारी समापक को न्यायालय से अनुमति लेनी पड़ती है जबकि सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन की स्थिति में समापक को सदस्यों या कम्पनी की अनुमति लेनी पड़ती है तथा लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन की स्थिति में न्यायालय अथवा निरीक्षण समिति या लेनदारों से अनुमति प्राप्त करनी पड़ती है।

इसके अतिरिक्त, समापक को अंशदाताओं की सूची निश्चित करने, शेयरों पर देय बकाया राशि की मांग करने तथा कम्पनी की साधारण सभा बुलाने का न्यायालय का अधिकार भी होता है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे, कि समापक अपने अधिकारों का प्रयोग न्यायालय की देखरेख व नियन्त्रण में ही करता है।

समापन का कार्य-संचालन (Conduct of Winding Up)

न्यायालय को, समापक को हटाने तथा उसके स्थान पर सरकारी समापक को अथवा किसी अन्य व्यक्ति को समापक नियुक्त करने का अधिकार है। इस सम्बन्ध में यह याद रहे कि स्वैच्छिक समापन की स्थिति में किसी निगमित संस्था को समापक नियुक्त नहीं किया जा सकता।

समापक अपनी नियुक्ति के 30 दिनों के भीतर सरकारी गज़ट में अपनी नियुक्ति के बारे में सूचना प्रकाशित करेगा तथा निर्धारित फार्म में अपनी नियुक्ति की सूचना रजिस्ट्रार को पंजीकरण के लिए भेजेगा।

समापक या कोई भी अंशदाता या कोई भी लेनदार, कम्पनी के समापन से सम्बन्धित उत्पन्न प्रश्नों के लिए न्यायालय से निर्देश मांगने के लिए आवेदन कर सकता है।

स्वैच्छिक समापन की स्थिति में, समापक, शेयरधारियों या लेनदारों का न्यासी नहीं बल्कि वह कम्पनी का एजेंट होता है। वह कम्पनी की सम्पत्तियों का संरक्षक होता है।

समापक का कर्तव्य है कि वह कम्पनी की समस्त परिसम्पत्तियों को अपने अधिकार में ले ले, उन्हें बेचे, कम्पनी के नाम से तथा कम्पनी की ओर से मुकदमा करने तथा बचाव पक्ष प्रस्तुत करने, वह उचित पुस्तकों को रखे तथा सभाओं की कार्यवाही का ठीक-ठीक विवरण रिकार्ड करे, उन लेखा पुस्तकों का अंकेक्षण भी कराना चाहिए, उसे निरीक्षण समिति की, सदस्यों तथा लेनदारों की सभाएं भी बुलानी चाहिए। कोई भी शेयरधारी या लेनदार समापक के विरुद्ध कम्पनी के एजेंट के रूप में कार्य करते हुए उस पर देर से भुगतान करने के लिए दावा नहीं कर सकता। यह दावा केवल तभी किया जा सकता है जब वह जानबूझकर दुराचरण का दोषी हो। उसके आचरण के सम्बन्ध में उचित यही रहता है कि न्यायालय से इसके सम्बन्ध में निर्देश प्राप्त करे।

14.6.3 स्वैच्छिक समापन के परिणाम

यह तो आपको ज्ञात ही है कि स्वैच्छिक समापन उस तिथि से आरम्भ होता है जब इस आशय का प्रस्ताव पारित किया जाता है। यह तिथि इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि इसकी सहायता से कम्पनी के भूतपूर्व सदस्यों का दायित्व निर्धारित किया जाता है। स्वैच्छिक समापन के परिणामों को संक्षेप में निम्नलिखित प्रकार से वर्णन किया जा सकता है :

i) समापन-कार्यवाही आरम्भ होते ही, कम्पनी व्यापार करना बन्द कर देती है। परन्तु यदि लाभकारी समापन के लिए यह आवश्यक लगे तो कम्पनी व्यापार को जारी रख सकती है। इसका यह अर्थ हुआ कि कम्पनी के विघटन या समाप्ति के समय तक कम्पनी का निगमित अस्तित्व बना रहता है।
ii) समापक की नियुक्ति होने पर, निदेशक मंडल, प्रबन्धक या पूर्णकालिक निदेशक के समस्त अधिकार समाप्त हो जाते हैं। परन्तु साधारण सभा या समापक या लेनदारों या निरीक्षण समिति की अनुमति से निदेशक आदि अपने अधिकारों का प्रयोग करते रह सकते हैं।
iii) स्वैच्छिक समापन का सदैव यही अर्थ नहीं है कि उसके कर्मचारियों की सेवाएं समाप्त हो जाएं, उदाहरण के लिए, यदि समापन किसी अन्य कम्पनी के साथ विलय या एकीकरण के लिए किया जाता है तो कर्मचारियों की नौकरियां समाप्त नहीं होंगी। परन्तु यदि दिवालिएपन के आधार पर कम्पनी का समापन किया जाता है तो उसके कर्मचारियों की नौकरियां भी समाप्त हो जाएंगी।
iv) समापन का आदेश दिए जाने पर, कम्पनी के विरुद्ध कोई मुकदमा या अन्य कानूनी कार्यवाही आरम्भ नहीं की जा सकती तथा यदि समापन के आदेश की तिथि पर कोई कार्यवाही किसी न्यायालय में चल रही है वह न्यायालय की अनुमति के बिना आगे नहीं चलाई जा सकती।
v) कम्पनी का समापन आरम्भ होने के पश्चात् कम्पनी के किसी भी शेयरों का हस्तांतरण तथा कम्पनी के सदस्यों की स्थिति में परिवर्तन पूर्णतः व्यर्थ होगा, परन्तु यदि समापक की अनुमति से यह किया जाता है तो यह वैध होगा।
vi) कम्पनी द्वारा या कम्पनी की ओर से या कम्पनी के समापक द्वारा भेजे जाने वाले प्रत्येक नोटिस, बीजक, आर्डर या व्यापारिक-पत्र पर इस आशय का विवरण अवश्य दिया जाना चाहिए कि कम्पनी का समापन हो रहा है।

14.7 सदस्यों द्वारा तथा लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन में अन्तर

निम्नलिखित तालिका से आप सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन तथा लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन के अन्तर को भली-भांति समझ सकेंगे :

	सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन		लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन
1)	यह केवल तभी होता है जब कम्पनी अपने ऋणों का भुगतान करने की स्थिति में होती है।	1)	यह केवल उसी परिस्थिति में होता है जब कम्पनी अपने ऋणों का भुगतान करने की स्थिति में नहीं होती है।
2)	निदेशकों को रजिस्ट्रार के पास 'शोधन-क्षमता की घोषणा' फाइल करनी पड़ती है।	2)	निदेशकों को ऐसी कोई घोषणा जमा करने की आवश्यकता नहीं पड़ती।
3)	सदस्यों की साधारण सभा ही केवल बुलाई जाती है।	3)	सदस्यों की सभा के तुरन्त बाद लेनदारों की सभा अवश्य बुलाई जानी चाहिए।
4)	सदस्यों द्वारा समापक की नियुक्ति की जाती है।	4)	यदि लेनदार और कम्पनी भिन्न-भिन्न समापक नियुक्त करते हैं, तो लेनदारों द्वारा नियुक्त समापक ही समापक माना जाता है।
5)	कोई निरीक्षण समिति नियुक्त नहीं की जाती।	5)	समापक की सहायता के लिए प्रायः एक निरीक्षण समिति नियुक्त की जाती है।

6) कम्पनी द्वारा पारित विशेष प्रस्ताव की अनुमति से समापक अपने अधिकारों का प्रयोग कर सकता है।	6) न्यायालय, या निरीक्षण समिति या लेनदारों की सभा में अनुमति प्राप्त करके समापक अपने अधिकारों का प्रयोग कर सकता है।
7) सदस्यों द्वारा समापन कार्यवाही पर नियन्त्रण रखा जाता है।	7) समापन कार्यवाही पर लेनदारों का पूर्ण नियन्त्रण होता है।
8) समापन कार्यवाही पूर्ण होने पर सदस्यों की सभा बुलाई जाती है।	8) समापन कार्यवाही पूर्ण होने पर सदस्यों तथा लेनदारों की सभाएं बुलाई जाती हैं।

14.8 न्यायालय के निरीक्षण में समापन (Winding Up under Supervision of The Court)

आप पढ़ चुके हैं कि न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना कम्पनी का समापन हो सकता है, परन्तु स्वैच्छिक समापन न्यायालय के निरीक्षण में हो सकता है। कम्पनी द्वारा स्वैच्छिक समापन के लिए प्रस्ताव करने के बाद न्यायालय किसी भी समय यह आदेश जारी कर सकता है कि स्वैच्छिक समापन चलता रहेगा, किन्तु वह न्यायालय के निरीक्षण में होगा।

जब स्वैच्छिक समापन चल रहा हो और कोई भी लेनदार या अंशदाता या समापक इससे सन्तुष्ट नहीं है, तो वे न्यायालय के निरीक्षण में समापन करने के लिए आवेदन कर सकते हैं। न्यायालय यह आदेश, निम्नलिखित किसी भी आधार पर दे सकता है :

अ) समापक पक्षपाती है अथवा सम्पत्तियों को एकत्रित करने में लापरवाह रहा है; या
ब) बहुसंख्यक, अल्पसंख्यकों से कपट कर रहे हैं; या
स) कम्पनी के समापन से सम्बन्धित नियमों का पूर्णतः पालन नहीं किया जा रहा है।

इन परिस्थितियों में, न्यायालय यह आदेश दे सकता है कि कम्पनी का समापन चलता रहेगा परन्तु अब यह न्यायालय के निरीक्षण में तथा उन शर्तों के अधीन होगा जो न्यायालय की राय में उचित में हों। निरीक्षण आदेश का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव यह होता है कि इससे अनिवार्य समापन की स्थिति की तरह, सभी मुकदमें तथा कानूनी कार्यवाही न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में आ जाती है।

स्वैच्छिक समापन के लिए नियुक्त किए गये समापक को ही प्रायः कार्य करते रहने दिया जाता है, परन्तु न्यायालय एक या एक से अधिक अतिरिक्त समापकों को भी नियुक्त कर सकता है। न्यायालय इस प्रकार से नियुक्त समापक को हटा सकता है तथा किसी समापक की मृत्यु, पद से हटाए जाने या त्याग पत्र देने के कारण रिक्त स्थानों को भर भी सकता है। इस सम्बन्ध में रजिस्ट्रार द्वारा आवेदन करने पर, न्यायालय समापक को नियुक्त या पद से हटा सकता है। इस प्रकार से नियुक्त समापक के वही अधिकार एवं कर्तव्य होते हैं जो कि स्वैच्छिक समापन में नियुक्त समापक को प्राप्त होते हैं।

अनिवार्य समापन में न्यायालय को जो अधिकार प्राप्त होते हैं, वे समस्त अधिकार इस स्थिति में भी न्यायालय को प्राप्त होते हैं, जैसे, मुकदमों तथा अन्य कानूनी कार्यवाही पर रोक, शेयरों पर बकाया राशि मांगने का अधिकार आदि, परन्तु यह समापन स्वैच्छिक समापन ही रहता है।

कम्पनी अधिनियम की धारा 527 के अन्तर्गत, आवश्यकता पड़ने पर, न्यायालय अपने निरीक्षण में समापन के आदेश को रद्द करके, कम्पनी के अनिवार्य समापन का आदेश दे सकता है।

न्यायालय के निरीक्षण में समापन की स्थिति में जब कम्पनी के सभी मामलों का पूर्णतः समापन हो जाता है तथा समापक ने न्यायालय को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी है जिसमें कम्पनी को विघटित करने की सिफारिश की गई है, तो न्यायालय कम्पनी के विघटन का आदेश जारी कर देगा। न्यायालय द्वारा जारी किए गये इस प्रकार के आदेश की तिथि से कम्पनी को विघटित या समाप्त माना जाता है।

बोध प्रश्न ख

1) स्वैच्छिक समापन से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

....

....

....

3) 'शोधन-क्षमता की घोषणा' से क्या आशय है?

....

....

....

....

4) स्वैच्छिक समापन कब आरम्भ होता है?

....

....

....

....

5) लेनदारों द्वारा **स्वैच्छिक समापन का क्या अर्थ है?**

....

....

....

....

6) सदस्यों द्वारा तथा लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन के दो महत्वपूर्ण अन्तर बताइए।

....

....

....

....

7) न्यायालय के निरीक्षण में समापन क्या होता है?

....

....

....

....

....

....

....

8) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत :

i) निदेशक मंडल की सभा में प्रस्ताव पारित करके कम्पनी का स्वैच्छिक समापन किया जा सकता है।

ii) कम्पनी, किसी भी समय विशेष प्रस्ताव पारित करके, स्वैच्छिक समापन का निर्णय ले सकती है।

iii) यदि अन्तर्नियमों द्वारा कम्पनी के लिए कोई समय सीमा निश्चित की है, तो उक्त अवधि के व्यतीत होने पर कम्पनी अपने आप समाप्त हो जाती है।

iv) लेनदारों की सभा में कम्पनी के स्वैच्छिक समापन के सम्बन्ध में पारित प्रस्ताव की प्रति, प्रस्ताव पारित करने की तिथि के 14 दिनों के भीतर रजिस्ट्रार के पास भेज दी जानी चाहिए।

v) स्वैच्छिक समापन उस तिथि से आरम्भ हुआ माना जाता है जब इस आशय का प्रस्ताव पारित किया जाता है।

vi) स्वैच्छिक समापन की स्थिति में, समापक के पारिश्रमिक को किसी भी हालत में बढ़ाया नहीं जा सकता।

vii) लेनदार, यदि ठीक समझें तो वे निरीक्षण समिति नियुक्त कर सकते हैं जिसके सदस्य 5 से अधिक नहीं होने चाहिए।

viii) न्यायालय के निरीक्षण में समापन में यह मान्यता है कि कम्पनी का स्वैच्छिक समापन हो रहा है।

14.9 सारांश

कम्पनी कानून के द्वारा निर्मित होती है अतः कानूनी प्रक्रिया द्वारा ही इसे समाप्त किया जा सकता है। इस प्रक्रिया को समापन कहते हैं। कम्पनी का निम्नलिखित किसी भी तरह से समापन किया जा सकता है :

i) न्यायालय द्वारा समापन;
ii) स्वैच्छिक समापन; तथा
iii) न्यायालय के निरीक्षण में स्वैच्छिक समापन।

स्वैच्छिक समापन या तो (अ) सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन अथवा (ब) लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन हो सकता है।

न्यायालय द्वारा कम्पनी का अनिवार्य समापन किया जा सकता है (i) यदि इस आशय का एक विशेष प्रस्ताव पारित किया जाता है; (ii) यदि सांविधिक सभा बुलाने या सांविधिक रिपोर्ट जमा करने में त्रुटि की जाती हैं; (iii) यदि निगमन के एक वर्ष के भीतर व्यापार आरम्भ नहीं किया जाता; (iv) यदि सदस्यों की संख्या वैधानिक न्यूनतम संख्या से कम हो जाती है; (v) यदि कम्पनी अपने ऋणों का भुगतान करने में असमर्थ है; (vi) किसी भी अन्य आधार पर जो न्यायोचित एवं सम्यक् हो।

समापन के लिए याचिका इनके द्वारा प्रस्तुत की जा सकती है : (क) कम्पनी द्वारा; या (ख) लेनदारों द्वारा; या (ग) अंशदाताओं द्वारा; या (घ) रजिस्ट्रार द्वारा; या (ङ) केन्द्र सरकार द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति के द्वारा।

स्वैच्छिक समापन की स्थिति में, कम्पनी और उसके लेनदारों को अपने मामले निपटाने के लिए न्यायालय में गये बिना पूरी तरह से स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है। परन्तु आवश्यकता पड़ने पर वे न्यायालय से निर्देश प्राप्त करने के लिए आवेदन कर सकते हैं।

कम्पनी का स्वैच्छिक समापन (i) साधारण प्रस्ताव पारित करके; या (ii) विशेष प्रस्ताव पारित करके किया जा सकता है।

सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन की स्थिति में, निदेशक मंडल बहुमत से शपथ-पत्र पर शोधन-क्षमता सम्बन्धी घोषणा करता है कि कम्पनी के कोई ऋण नहीं हैं या समापन आरम्भ होने के तीन वर्षों के भीतर कम्पनी अपने ऋणों का पूर्ण भुगतान करने में समर्थ होगी।

लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन की स्थिति में शोधन-क्षमता घोषणा की कोई आवश्यकता नहीं होती तथा लेनदारों द्वारा समापन का प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाता है। यह प्रायः उस स्थिति में किया जाता है जब कम्पनी अपने ऋणों को चुकाने में असमर्थ हो।

जब कम्पनी का स्वैच्छिक समापन चल रहा हो तथा कोई लेनदार या अंशदाता या समापक, समापन की कार्यवाही से सन्तुष्ट नहीं हो, तो वह न्यायालय में आवेदन कर सकते हैं कि न्यायालय के निरीक्षण में समापन किया जाए।

14.10 शब्दावली

समापन (Winding Up) : ऐसी प्रक्रिया जिससे कम्पनी का जीवन समाप्त होता है।

विघटन (Dissolution) : कम्पनी का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है।

न्यायोचित एवं सम्यक् (Just and equitable) : न्यायालय के विचार में ऐसा कोई भी आधार जो सम्बन्धित पक्षकारों के हित के लिए उचित है।

स्थिति विवरण (Statement of Affairs) : ऐसा विवरण जिसमें कम्पनी की परिसम्पत्तियों, लेनदारों, देनदारों आदि का विवरण दिया जाता है।

समापक (Liquidator): ऐसा व्यक्ति जो समापन कार्यवाही में न्यायालय की सहायता करता है।

निरीक्षण समिति (Committee of Inspection) : समापक के साथ कार्य करने के लिए नियुक्त समिति।

शोधन-क्षमता की घोषणा (Declaration of Solvency) : निदेशक मंडल की सभा में बहुमत से यह घोषणा कि कम्पनी को कोई ऋण नहीं चुकाना है अथवा वह समापन कार्यवाही आरम्भ होने के तीन वर्ष के अन्दर समस्त ऋण चुकाने में समर्थ होगी।

14.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

क	8i)	गलत	ii)	गलत	iii)	सही	iv)	गलत	v)	सही
	vi)	गलत	vii)	सही	viii)	गलत	ix)	गलत	x)	सही
ख	8i)	गलत	ii)	सही	iii)	गलत	iv)	गलत	v)	सही
	vi)	सही	vii)	सही	viii)	सही				

14.12 स्वपरख प्रश्न

1) कम्पनी के समापन से आप क्या समझते हैं? यह कम्पनी के विघटन से किस प्रकार भिन्न है?
2) अनिवार्य समापन क्या है? किन परिस्थितियों में न्यायालय द्वारा कम्पनी का अनिवार्य समापन किया जा सकता है?
3) समापन के लिए याचिका कौन प्रस्तुत कर सकता है?
4) न्यायालय के आदेश पर समापन के क्या परिणाम होते हैं?
5) 'शोधन-क्षमता की घोषणा' से क्या तात्पर्य है?
6) कम्पनी का स्वैच्छिक समापन कब और कैसे किया जा सकता है? इस प्रकार के समापन के परिणाम संक्षेप में लिखिए।
7) उन परिस्थितियों का वर्णन कीजिए जब न्यायालय कम्पनी के समापन को न्यायोचित एवं सम्यक् समझता है।
8) लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन पर लागू होने वाले कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
9) समापन आदेश के क्या परिणाम होते हैं?
10) सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन तथा लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन में अन्तर को स्पष्ट कीजिए।
11) निरीक्षण समिति पर एक टिप्पणी लिखिए।

टिप्पणी : इन प्रश्नों की सहायता से आप इस इकाई को भली प्रकार समझ पायेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु विश्वविद्यालय को ये उत्तर न भेजिए। ये प्रश्न आपके अभ्यास के लिए दिए जा रहे हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एन. डी. कपूर, दिनकर पगारे एवं भारत भूषण : *कम्पनी अधिनियम* (नई दिल्ली : सुल्तान चन्द एण्ड सन्स, 1990) अध्याय 14, 15, और 21

एम. सी. कुच्छल : *आधुनिक भारतीय कम्पनी अधिनियम*, (दिल्ली : श्री महावीर बुक डिपो 1989) अध्याय 11, 17